मिज़ो विद्रोह केंद्रित उपन्यास ‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ का हिन्दी अनुवाद और विश्लेषण

(MIZO VIDROH KENDRIT UPANYAS ‘NGHILH HAR KAN TUAR’ KA HINDI ANUVAD AUR VISHLESHAN)

[मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइजोल के हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध]

A THESIS SUBMITTED IN PARTIAL FULFILLMENT OF THE REQUIREMENTS FOR THE DEGREE OF DOCTOR OF PHILOSOPHY

जुदिथ ज़ोपारी

JUDITH ZOPARI

MZU REGD. NO.: 1600684

Ph.D. REGD. NO.: MZU/Ph.D./2201 OF 29.08.2022

हिन्दी विभाग

शिक्षा एवं मानविकी संकाय

DEPARTMENT OF HINDI

SCHOOL OF HUMANITIES AND LANGUAGES

मार्च, 2026

MARCH, 2026

मिज़ो विद्रोह केंद्रित उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' का हिन्दी अनुवाद और विश्लेषण

(MIZO VIDROH KENDRIT UPANYAS 'NGHILH HAR KAN TUAR' KA HINDI ANUVAD AUR VISHLESHAN)

प्रस्तुतकर्ता

जुदिथ ज़ोपारी

हिन्दी विभाग

By

JUDITH ZOPARI

DEPARTMENT OF HINDI

शोध-निर्देशक

डॉ. अमिष वर्मा

हिन्दी विभाग

SUPERVISOR

DR. AMISH VERMA

DEPARTMENT OF HINDI

मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइजोल के शिक्षा एवं मानविकी संकाय के अंतर्गत हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि के लिए अपेक्षित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध

Submitted in partial fulfilment of the requirement of the degree of Doctor of Philosophy in Hindi of Mizoram University, Aizawl.

डॉ. अमिष वर्मा
सह आचार्य
हिंदी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आइजोल-796004

केंद्रीय विश्वविद्यालय
A Central University
(Accredited by NAAC with 'A+' Grade)

Dr. Amish Verma
Associate Professor
Department of Hindi
Mizoram University
Aizawl-796004

Mobile No.- 09436334432 Email: mzut141@mzu.edu.in Website: www.mzu.edu.in

---

दिनांक: 02.03.2026

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **जुदिथ ज़ोपारी** ने मेरे निर्देशन में मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइजोल की **डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.- हिन्दी)** की उपाधि हेतु **'मिज़ो विद्रोह केंद्रित उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' का हिन्दी अनुवाद और विश्लेषण'** विषय पर शोध कार्य किया है। प्रस्तुत शोध कार्य शोधार्थी की अपनी निजी गवेषणा का फल है। यह इनका मौलिक कार्य है। जहाँ तक मेरी जानकारी है, प्रस्तुत शोध-प्रबंध या इसके किसी भी अंश को किसी विश्वविद्यालय या संस्थान में किसी प्रकार की उपाधि हेतु अद्यावधि प्रस्तुत नहीं किया गया है।

मैं प्रस्तुत शोध-प्रबंध को मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइजोल की **डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.- हिन्दी)** की उपाधि हेतु मूल्यांकन के लिए प्रस्तुत करने की संस्तुति करता हूँ।

(डॉ. अमिष वर्मा)
शोध-निर्देशक

हिन्दी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आइज़ोल

मार्च, 2026

घोषणा पत्र

मैं **जुदिथ ज़ोपारी** एतद् द्वारा घोषित करती हूँ कि प्रस्तुत शोध-प्रबंध की विषय-सामग्री मेरे द्वारा किए गए शोध कार्य का सुपरिणाम है। इस शोध-सामग्री के आधार पर न तो मुझे और जहाँ तक मुझे ज्ञात है, न किसी अन्य को कोई उपाधि प्रदान की गई है और न ही यह शोध-प्रबंध मेरे द्वारा कोई अन्य उपाधि प्राप्त करने के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय या संस्थान में प्रस्तुत किया गया है। इस शोध-प्रबंध के लेखन के दौरान जिन ग्रंथों की सहायता ली गयी है, उन्हें समुचित रूप से उद्धृत किया गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइजोल के सम्मुख हिन्दी विषय में **डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.- हिन्दी)** की उपाधि के लिए प्रस्तुत किया जाता है।

(जुदिथ ज़ोपारी)
शोधार्थी

(प्रो. संजय कुमार)
अध्यक्ष

(डॉ. अमिष वर्मा)
शोध-निर्देशक

भूमिका

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' की नींव रखते हुए स्पष्ट किया था कि "प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है।" यह सिद्धांत साहित्य और समाज के अटूट संबंध को रेखांकित करता है। साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं, बल्कि उसकी स्मृतियों का संरक्षक भी होता है। साहित्य एक ऐसा महत्त्वपूर्ण माध्यम है जो समाज और संस्कृति के विभिन्न पहलुओं तथा तत्वों को प्रस्तुत करता है। मिज़ो साहित्य पूर्वोत्तर भारत के मिज़ोरम राज्य से जुड़ा है जो वहाँ के आदिवासी समुदायों के जीवन, उनके संघर्षों, उनकी परंपराओं और उनके धार्मिक विश्वासों को प्रतिबिंबित करता है। मिज़ो साहित्य मिज़ो समाज का एक जीवंत प्रतिबिंब है जो मौखिक परंपराओं जैसे लोककथाएँ, लोकगीत आदि से होते हुए एक सशक्त आधुनिक साहित्यिक रूप में विकसित हो गया है। 1893 के बाद ईसाई मिशनरियों द्वारा मिज़ो लिपि उपलब्ध कराए जाने के बाद मिज़ो साहित्य के लिखित रूप का विकास तीव्र गति से होने लगा।

मिज़ो साहित्य के हिन्दी अनुवाद से मिज़ो समाज की संस्कृति, संवेदनाओं, विचारों, इतिहास तथा जीवन-दर्शन का प्रसार होता है। यह साहित्य केवल मिज़ो भाषा-भाषी समाज तक ही सीमित रहा है। लेकिन, जब मिज़ो साहित्य का हिन्दी में अनुवाद किया जाता है, तब वे बृहत्तर हिन्दी समाज के लिए उपलब्ध होता है और हिन्दी पाठकों के सामने एक नया अनुभव संसार प्रस्तुत करता है। मिज़ो साहित्य का हिन्दी अनुवाद केवल शब्दों का भाषांतरण नहीं है, बल्कि दोनों भाषाओं और संस्कृतियों के बीच यह सेतु का काम करता है।

1966 से 1986 के बीच के लगभग बीस वर्षों तक मिज़ोरम में राजनीतिक असंतोष, जनजातीय अस्मिता और स्वायत्तता की माँग के कारण भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों और भारत सरकार के बीच भयावह तनाव की स्थिति बनी रही। इन बीस वर्षों के समय को 'मिज़ो रमबुआई का काल' या 'मिज़ोरम में अशांति का काल' कहा जाता है जो मिज़ो इतिहास का अत्यंत महत्त्वपूर्ण हिस्सा बन गया है। जब भी किसी समाज में कोई ऐतिहासिक विद्रोह होता है, तब देर-सबेर उसका प्रभाव वहाँ के

साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। ‘मिज़ो विद्रोह’ ने भी मिज़ो साहित्य के अंतर्गत ‘रमबुआई साहित्य’ नामक एक महत्त्वपूर्ण एवं नई साहित्यिक कोटि को जन्म दिया। यह साहित्य 1966 से 1986 के बीच घटित भयावह मिज़ो संघर्ष और उथल-पुथल और अशांत वातावरण का चित्रण करता है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध में मिज़ो विद्रोह पर केंद्रित माफेली द्वारा रचित मिज़ो उपन्यास ‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ का अनुवाद और विश्लेषण किया गया है। ‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ उपन्यास माफेली का चौथा और अंतिम उपन्यास है, जो 2010 में समारितन प्रिंटर्स, आईज़ोल से प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में लेखिका ने मिज़ोरम के ईस्ट लुङदार गाँव को केंद्र में रखते हुए रमबुआई के सबसे काले और अंधकारपूर्ण समय का तथ्यपरक वर्णन किया है। पीड़ितों के दृष्टिकोण से लिखे गये इस उपन्यास में विद्रोह के दौरान भारतीय सेना और भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों (एम.एन.एफ.) द्वारा सामान्य मिज़ो जनता पर किये गये अत्याचारों का मार्मिक वर्णन किया गया है। इस उपन्यास के शीर्षक का हिन्दी अनुवाद है –‘दर्द जिसे भूलना मुश्किल है’।

मैं स्वयं मिज़ोरम से हूँ और मिज़ो जनजाति की सदस्य हूँ। अपनी पीएच.डी के दौरान मुझे इस बात का एहसास हुआ कि अपनी संस्कृति, अपने इतिहास और अपने साहित्य को हिन्दी तथा अन्य भाषा-भाषी समाजों तक पहुँचाना कहीं-न-कहीं मेरी भी जिम्मेदारी है। बचपन से ही मेरे माता-पिता ने मुझे रमबुआई के दौरान आई कठिनाईयों के बारे में बताया था। मेरे शोध-निर्देशक डॉ. अमिष वर्मा ने मुझे मिज़ो विद्रोह पर आधारित उपन्यास के अनुवाद पर काम करने का सुझाव दिया। जब मैंने माफेली का मिज़ो उपन्यास ‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ पढ़ा तो इस उपन्यास ने मेरे दिल को छू लिया और मुझे उस समय के दौरान हमारी मिज़ो जाति के लोगों के संघर्षों को महसूस कराया। इसलिए अनुवाद और विश्लेषण के लिए मैंने प्रस्तुत उपन्यास का चयन किया।

मेरे शोध-प्रबंध का विषय है- **मिज़ो विद्रोह केंद्रित उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' का हिन्दी अनुवाद और विश्लेषण।** अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत शोध–प्रबंध को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है।

शोध-प्रबंध का पहला अध्याय **मिज़ो उपन्यास का विकास तथा 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की लेखिका का परिचय** है। इस अध्याय का पहला उप-अध्याय **मिज़ो उपन्यास का उद्भव और विकास** है जिसके अंतर्गत मिज़ो उपन्यास के ऐतिहासिक विकास-क्रम को स्पष्ट करने के साथ-साथ मिज़ो साहित्य में 'रमबुआई उपन्यास' की स्थिति को भी समझने का प्रयास किया गया है। इस अध्याय के दूसरे उप-अध्याय **उपन्यासकार माफेली का परिचय** में उपन्यासकार माफेली का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है।

शोध-प्रबंध का दूसरा अध्याय **मिज़ो विद्रोह का स्वरूप** है। इसके अंतर्गत मिज़ो विद्रोह के संक्षिप्त इतिहास पर प्रकाश डाला गया है। इसके साथ ही गहराई से मिज़ो विद्रोह के स्वरूप का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

शोध-प्रबंध का तीसरा अध्याय **'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास का हिन्दी अनुवाद** है। इस अध्याय में मिज़ो उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' (दर्द, जिसे भूलना मुश्किल है) का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास में कुल 15 अध्याय हैं और मूल सामग्री 173 पृष्ठों की है, जिसका अनुवाद लगभग 141 पृष्ठों में हो पाया है।

शोध-प्रबंध का चौथा अध्याय **मिज़ो से हिन्दी अनुवाद की समस्याएँ** है। इस अध्याय के अंतर्गत दो उप-अध्याय रखे गए हैं। प्रथम उप-अध्याय **भाषिक भिन्नता: मिज़ो तथा हिंदी भाषा की भिन्न प्रकृति** है। इस उप-अध्याय के अंतर्गत मिज़ो और हिन्दी भाषा की भाषिक भिन्नता के कारण अनुवाद में आने वाली समस्याओं का विवेचन किया गया है। मिज़ो और हिंदी भाषा की प्रकृति एक दूसरे से काफी भिन्न है। दोनों भाषाओं की वाक्य संरचना, ध्वन्यात्मकता में भिन्नता के

साथ-साथ स्थानीय भाषा के प्रयोग के कारण भाव और अर्थ को पूरी तरह से संरक्षित करते हुए मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद करना अनुवादक के लिए चुनौती भरा काम बन जाता है और समस्याएं उत्पन्न होती हैं। इस अध्याय का दूसरा उप-अध्याय **सांस्कृतिक भिन्नता: रचना की संवेदना के अनुवाद की समस्या** है। इसके अंतर्गत मिज़ो–हिन्दी समाज की भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक संरचना के कारण रचना की संवेदना के अनुवाद की समस्याओं को विवेचित किया गया है।

इस शोध-प्रबंध का पाँचवा अध्याय **'उपन्यास का विश्लेषण'** है। इस अध्याय के अंतर्गत पाँच उप-अध्याय रखे गए हैं। इस अध्याय का प्रथम उप-अध्याय **मिज़ो विद्रोह के प्रति विद्रोहियों और सामान्य जनता का नजरिया** है जिसमें अपने (मिज़ो) राज्य की स्वतंत्रता के लिए भारतीय सेना से लड़ने वाली मिज़ो सेना के विद्रोह और इस विद्रोह में पिसने वाली सामान्य मिज़ो जनता के संघर्षों पर प्रकाश डाला गया है। साथ ही विद्रोह के प्रति विद्रोहियों एवं आम मिज़ो जनता के दृष्टिकोण को समझने का प्रयास किया गया है। इस अध्याय का द्वितीय उप-अध्याय **विद्रोह और मिज़ो स्त्री का संघर्ष** है, जिसमें मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो स्त्रियों की स्थिति और उनके संघर्षों को विवेचित किया गया है। इस अध्याय का तृतीय उप-अध्याय **मिज़ो विद्रोह और भारतीय सेना** है, जिसमें मिज़ो विद्रोह के प्रति भारतीय सेना के नजरिए और उनकी कार्रवाईयों का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय का चतुर्थ उप-अध्याय **उपन्यास का कला-पक्ष** है। इसके अंतर्गत मूल मिज़ो उपन्यास के कथा-शिल्प और भाषिक विशिष्टताओं का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। इस अध्याय का पंचम उप-अध्याय **अन्य विविध-पक्ष** है। इसके अंतर्गत अनूदित उपन्यास में अभिव्यक्त अन्य पक्षों का अध्ययन-विश्लेषण किया गया है, जैसे मिज़ो समाज में चोरी का जन्म, मिज़ो लोगों के बीच प्रतिशोध, मिज़ो समाज में विधवा और गरीब की स्थिति, मिज़ो समाज पर इसाईयत का प्रभाव आदि।

अंत में **उपसंहार** है जिसमें शोध के निष्कर्षों का समाहार प्रस्तुत किया गया है।

शोध कार्य के दौरान मैंने स्वयं लेखिका से मुलाकात की और उनका साक्षात्कार लिया। चूँकि वह हिन्दी पढ़ने और लिखने में असमर्थ हैं, इसलिए मैंने उनके उत्तरों का हिन्दी में अनुवाद किया है। हिन्दी में अनूदित साक्षात्कार को शोध-प्रबंध में परिशिष्ट के अंतर्गत रखा गया है। मैं उनकी बहुत आभारी हूँ कि उन्होंने उनके उपन्यास का अनुवाद करने की अनुमति दी और साक्षात्कार के लिए अपना कीमती समय निकाला।

मैं परमेश्वर की आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे इस कार्य को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए शक्ति और दृढ़ता प्रदान की।

मैं अपने शोध-निर्देशक डॉ. अमिष वर्मा, सह आचार्य, हिन्दी विभाग, मिज़ोरम विश्वविद्यालय के प्रति उनके प्रोत्साहन और असीम धैर्य के लिए अपना सच्चा और विनम्र आभार व्यक्त करती हूँ। उनके मार्गदर्शन, सहयोग और आशीर्वाद के बिना मेरा यह शोध-प्रबंध कभी पूरा नहीं हो पाता। मुझे जो प्रेरणा और ज्ञान उनसे प्राप्त हुआ है, उसके लिए मैं उनको हृदय से धन्यवाद देती हूँ।

हिन्दी विभाग, मिज़ोरम विश्वविद्यालय के अपने सभी गुरुजन विभागाध्यक्ष प्रो. संजय कुमार, प्रो. सुशील कुमार शर्मा, डॉ. सुषमा कुमारी और डॉ. अखिलेश कुमार शर्मा जी को भी मैं हृदय से धन्यवाद देती हूँ जिनके आशीर्वाद और सहयोग से मेरा शोध-प्रबंध पूरा हो पाया है।

अपनी माँ और स्वर्गीय पिता के लिए आभार शब्द बहुत छोटा होगा। उनके आशीर्वाद की आकांक्षी हूँ। अपने परिवार के सभी सदस्यों तथा अपने मित्र देविद ललरोउह्लुआ के प्रति भी उनके समर्थन, प्रोत्साहन और प्रार्थनाओं के लिए आभार व्यक्त करती हूँ। उनकी सहनशीलता के बिना यह शोध-प्रबंध पूरा नहीं हो पाता।

अंत में मैं अपने मित्रों ललरेमरुआता, जुडिथ ललरेमसाङी डारङोन, लिज़ी ललनुनकिमी और अमित कुमार लोहार के प्रति भी आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने इस शोध-प्रबंध की प्रूफ रीडिंग की और इसे समय पर पूरा करने में मेरा बहुत सहयोग किया।

02 मार्च, 2026 **जुदिथ ज़ोपारी**
मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आइज़ोल

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

भूमिका **i - v**

अध्याय 1: मिज़ो उपन्यास का विकास तथा 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की लेखिका का परिचय **1 - 25**

1.1 मिज़ो उपन्यास का उद्भव एवं विकास

1.2 उपन्यासकार माफेली का परिचय

अध्याय 2: मिज़ो विद्रोह का स्वरूप **26 - 66**

अध्याय 3: 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास का हिन्दी अनुवाद **67 - 206**

अध्याय 4: मिज़ो से हिन्दी अनुवाद की समस्याएँ **207 - 223**

4.1 भाषिक भिन्नता: मिज़ो तथा हिन्दी भाषा की भिन्न प्रकृति

4.2 सांस्कृतिक भिन्नता: रचना की संवेदना के अनुवाद की समस्या

अध्याय 5: उपन्यास का विश्लेषण **224 - 297**

5.1 मिज़ो विद्रोह के प्रति विद्रोहियों और सामान्य जनता का नजरिया

5.2 विद्रोह और मिज़ो स्त्री का संघर्ष

5.3 मिज़ो विद्रोह और भारतीय सेना

5.4 उपन्यास का कला पक्ष

5.5 अन्य विविध पक्ष

उपसंहार **298 - 308**

परिशिष्ट **309 - 312**

माफेली का साक्षात्कार

संदर्भ ग्रंथ सूची **313 - 318**

बायो डाटा

अनुसंधित्सु का विवरण

अध्याय-1

मिज़ो उपन्यास का विकास तथा 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की लेखिका का परिचय

1.1 मिज़ो उपन्यास का उद्भव एवं विकास

1.2 उपन्यासकार माफेली का परिचय

1.1 मिज़ो उपन्यास का उद्भव एवं विकास

समाज के साथ साहित्य का गहरा संबंध होता है। विश्व के विभिन्न समाज के साहित्य में पद्य और गद्य विधाओं में लेखन की परंपरा रही हैं, जिसमें गद्य विधा में उपन्यास को प्रमुख माना जाता है। विश्व के विभिन्न समाजों की साहित्य की तरह मिज़ो समाज में भी साहित्य की गद्य विधा के अंतर्गत उपन्यास लेखन की शुरुआत 20वीं सदी में हुई। अन्य समाज और भाषाओं के साहित्य के विपरीत, मिज़ो साहित्य के शुरुआती दौर में कहानी और उपन्यास में अधिक अंतर नहीं किया गया था, परंतु मिज़ो साहित्य के इतिहासकार डॉ. के.सी.वानङ्हाका ने अपनी पुस्तक '**Literature Zungzam**' के तीसरे अध्याय '**Mizo Novel Tobul leh Hmasawn Dan (मिज़ो उपन्यास का उद्भव और विकास)**' में उपन्यास को कहानी से अलग करते हुए 'थोंथू फुअःथर'[1] की संज्ञा दी और बी. ललथङलिआना ने अपनी पुस्तक जिसे मिज़ो साहित्य के इतिहास की पहली पुस्तक माना जाता है '**Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature**' के '**Mizo Novel**' अध्याय में उपन्यास को 'थोंथू सेई'[2] की संज्ञा दी है। हिन्दी और दुनिया की कई दूसरी भाषाओं में उपन्यास का उद्भव 18वीं-19वीं शताब्दी से माना जाता है, परंतु 1893 में मिज़ोरम में ईसाई मिशनरियों के आने और फिर उनके द्वारा मिज़ो भाषा के लिए लिपि तैयार करने के बाद ही मिज़ो साहित्य का लिखित रूप सामने आना शुरू हुआ। ऐसे में मिज़ो साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा 'उपन्यास' का जन्म 20वीं सदी में जाकर हुआ। आगे चलकर मिज़ो उपन्यास के महत्व को पहचाना गया और इसे मिज़ो साहित्य के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान दिया गया।

मिज़ो साहित्य का आरंभिक रूप मौखिक परंपराओं में था जिसमें लोककथाएं, गीत एवं कहानियाँ शामिल थी। लेकिन 1893 के बाद ईसाई मिशनरियों द्वारा मिज़ो भाषा के लिए लिपि उपलब्ध कराए जाने के बाद लिखित रूप में भी सामने आने लगीं। उपन्यास समाज की संस्कृति, दर्शन और मनोविज्ञान की शिक्षा के लिए जानकारी का एक महत्त्वपूर्ण स्त्रोत माना जाता है। मिज़ो का पहला उपन्यास *'होइलोउपारी'* (एक प्रकार का मिज़ो फूल का नाम) माना जाता है जो एल.

बिआकलिआना द्वारा 1936 में कॉटन कॉलेज, गुवाहाटी से आई.ए. की पढ़ाई करते हुए लिखी गई थी। अतः एल. बिआकलिआना को प्रथम मिज़ो उपन्यासकार माना जाता है। *'होईलोउपारी'* उपन्यास में उपन्यासकार ने मिज़ो लोगों द्वारा कहे जाने वाले शब्द 'त्लोमङाइह्वा' अर्थात दूसरों की सेवा करने का निस्वार्थ भाव, को बहुत ही अच्छे ढंग से चित्रित किया है। इसके साथ ही उपन्यासकार ने माता-पिता के सख्त अधिकार से महिलाओं की मुक्ति को भी स्पष्ट रूप से उजागर किया और उन्होंने महिलाओं को अपनी पसंद से शादी करने की स्वतंत्रता देने का भी प्रस्ताव रखा।[3] उन्होंने (एल. बिआकलिआना) ने 1937 में *'लली (ललओमपुई)'* (मिज़ो स्त्री का नाम) नामक कहानी की भी रचना की। 'लली' को लेकर मिज़ो साहित्य का इतिहास स्पष्ट नहीं है कि इसे कहानी माना जाए या उपन्यास। कहानी होते हुए भी इसे मिज़ो साहित्य में द्वितीय उपन्यास का स्थान दिया जाता है। *'ललो'* उपन्यास (यदि इसे उपन्यास माना जाए तो) ईसाई प्रेम कहानी है। यह उपन्यास 1939-40 में मिज़ो छात्र संघ द्वारा आयोजित "समाज में मिज़ो महिलाओं की स्थिति और भाग्य" पर कहानी लेखन प्रतियोगिता के लिए लिखा गया था और प्रथम पुरस्कार भी जीता। इस कहानी में यह चित्रित किया गया है कि शुरुआती मिज़ो युवक-युवतियों का एक-दूसरे के प्रति सच्चा और पवित्र प्रेम, हमारे पूर्वजों के समय महिलाओं की निम्न स्थिति, किस प्रकार पिता, भाई उन्हें जानवरों और वस्तुओं की तरह बेचते थे, और कैसे महिलाएं अपने पसंद का पति नहीं चुन सकती थीं। लेकिन इसके साथ ही, यह उपन्यास इस बात को भी दर्शाता है कि जो मुश्किल समय और दुःख में भी परमेश्वर पर भरोसा करते हैं, उनकी हमेशा मदद करता है।[4] इस प्रकार, मिज़ो साहित्य के पहले दो उपन्यास एल. बिआकलिआना द्वारा लिखे गए हैं।

एल. बिआकलिआना के बाद तछीप गाँव का कापह्लेइआ आते हैं, जिन्होंने 1939 में मिज़ोरम के पूर्व और पश्चिम के मिज़ो प्रमुखों के बीच युद्ध में, उपन्यासकार के गाँव के एक युवा द्वारा मार डाली गई रुआनज़ोल गाँव की एक खूबसूरत युवती छीङपुई पर आधारित *'छीङपुई'* नामक उपन्यास लिखा। 'छीङपुई' उपन्यास को तीसरा मिज़ो उपन्यास माना जाता है। यह एक ऐतिहासिक

उपन्यास होने के साथ-साथ रोमांटिक त्रासदी उपन्यास है। उन्होंने 1939 के अंत में अपना दूसरा उपन्यास *'खोङलुङरून'* लिखा।[5] *'खोङलुङरून'* उपन्यास एक ऐतिहासिक उपन्यास है जिसमें खोङलुङ गाँव में 1750 में घटित एक त्रासिक युद्ध को चित्रित किया गया है। अतः उक्त तीन उपन्यास ही 1940 से पहले लिखे गए उपन्यास थे और इसलिए मिज़ो साहित्य में इन्हें महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। प्रथम दो मिज़ो उपन्यास लेखक एल. बिआकलिआना और कापह्लेइआ, दोनों खतरनाक बिमारी टी.बी. के शिकार होने के कारण एल. बिआकलिआना की मृत्यु 1941 में और कापह्लेइआ की मृत्यु 1940 में हो गई। उनकी असमय मृत्यु और उस समय मिज़ो के बीच प्रिंटिंग प्रेस की कमी के कारण, उक्त तीन उपन्यासों को उनके मरणोपरांत प्रकाशित किया गया था। शुरुआत में मिज़ो प्रथम तीन उपन्यास केवल पांडुलिपि के रूप में थी। 1963 में जे. मलसोमअ द्वारा संकलित पुस्तक *'ज़ोउनुन'* में *"लली"* और *"छीङपुई"* उपन्यास को प्रकाशित किया गया, और यहीं से लोगों की पहचान इन उपन्यासों से हुई। 1983 में *'होईलोउपारी'* उपन्यास को प्रकाशित किया गया।[6]

तीसरा मिज़ो उपन्यासकार के रूप में 1940-41 के आसपास ललज़ुईथङा आते हैं जिन्होंने अपने पूर्व लेखकों से अलग फेंटसी, जासूसी जैसे अनेक प्रकार के उपन्यास लिखने शुरू किए। 1940-41 में उनके द्वारा लिखे गए उपन्यास *'थ्लश्राङ'* (अर्थ- भूत) को चौथा मिज़ो उपन्यास माना जा सकता है। इस उपन्यास को 'घोस्टली फिक्शन'[7] या 'जासूसी उपन्यास'[8] कहा जा सकता है। उनके अन्य उपन्यास हैं – *'फिरा लेह ङूरथनपारी', 'चरहुआई इ ह्लाउ लोम नी'(1941)*। अतः इन तीन प्रथम उपन्यास लेखकों, एल. बिआकलिआना, कापह्लेइअ और ललज़ुईथङा ने तीन चरणों में मिज़ो उपन्यास लेखन की शुरुआत की।

मिज़ो साहित्य के इतिहासकार बी. ललथङलिआना ने अपनी पुस्तक **'Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature'** (जिसे प्रथम मिज़ो इतिहास पुस्तक माना जाता है) में लिखा है कि "जिस तरह अंग्रेजी साहित्य में रिचर्डसन, हेनरी फील्डिंग, लॉरेंस स्टर्न और तोबीयस जी. स्मॉलेट को अंग्रेजी उपन्यास के चार पहिए माना गया है, उसी प्रकार मिज़ो साहित्य में इन तीन

उपन्यासकारों, एल. बिआकलिआना, कापह्लेइआ और ललजुईथङा को मिज़ो उपन्यास के तीन पहिए माना जा सकता है।"[9]

1945 में सी. ठुआमलुआइअ ने *'एङतिन ओम त ज़ेल अङ'* उपन्यास लिखा। इसके साथ ही उन्होंने *'स्यालतोन ऑफिशियल'(1952-1958)* और *'पु हाङा लेईलेत वेङ'* जैसे काल्पनिक लघु कथाएँ भी लिखी जो पश्चिमी काल्पनिक कथाओं से मिलती जुलती हैं। 1946 में, कैप्टन चललिआनखूमआ(1914-1990), बर्मा में सेवारत सेना अधिकारी ने मिज़ो सेना युवक और बर्मीस युवती के बीच प्रेम कहानी को उजागर करने वाली *'मेयम्यो सनापुई'* नामक उपन्यास लिखी जिसे 1950 में बर्मा लुशाई एसोसिएशन द्वारा प्रकाशित किया गया था। इसे संभवतः पहली प्रकाशित मिज़ो उपन्यास माना जाता है। उन्होंने *'छीङखुआल लुङदी'(1950)* और *'इन इन चु क इन अ नी'(1963)* जैसे उपन्यास भी लिखे। स्वतंत्रता के बाद के युग की अग्रणी मिज़ो कथा लेखक होने के कारण मिज़ो कथा साहित्य के उपन्यासकारों में कैप्टन चललिआनखूमआ का स्थान महत्त्वपूर्ण हैं। उनका प्रथम उपन्यास प्रेस में छाप पहला मिज़ो उपन्यास होने के कारण मिज़ो उपन्यासकार के रूप में उनका स्थान ऊंचा माना जाता है।[10] चूँकि पहला प्रकाशित मिज़ो उपन्यास बर्मा में प्रकाशित हुआ था, मिज़ोरम मे पुस्तक के रूप में प्रकाशित होने वाला पहला मिज़ो उपन्यास दारह्लीरअ द्वारा लिखा गया *'खोलकिल बूङह्लुआई'* था। इसे 1975 में प्रकाशित किया गया था लेकिन 1971 में लिखा गया था।[11]

1958 में के.सी.ललवुङा उर्फ ज़ीकपुई पा द्वारा लिखित उनका पहला उपन्यास *'सिल्वरथङी'* प्रकाशित हुआ। मिज़ो उपन्यास में उनका बड़ा योगदान रहा है। वे निबंधकार, कथा लेखक, आलोचक और कवि थे। उनका साहित्यिक जीवन छियालीस वर्षों से अधिक समय तक चला। मिज़ो साहित्य में उनके योगदान को देखते हुए, मिज़ो अकादमी ऑफ लेटर्स ने 1995 में उन्हें अकादमी पुरस्कार (मरणोपरांत) से सम्मानित किया। इसके अलावा, उन्हें वर्ष 2000 में मिज़ोरम राज्य सरकार द्वारा शताब्दी के लेखक (राइटर ऑफ द सेन्चरी) से सम्मानित भी किया गया। उनके

द्वारा लिखा गया उपन्यास हैं - *'क्रॉस बुलअः चुआन'(1959), 'हॉस्टल ओमतू'(1959), 'सी. सी कॉइ नं 27'(1963), 'ललरमलिआनअ'(1950-1993)* और *'नुनना कोङ ठूआमपुईअः'(1989)*। *हॉस्टल ओमतू'* उपन्यास 1959 में गुवाहाटी में लिखी गई थी और इस उपन्यास में हॉरर उपन्यास के कुछ तत्व निहित हैं। नासिक, महाराष्ट्र में रहते हुए ज़ीकपुई पा ने 1963 में *'सी. सी कॉइ नं 27'* उपन्यास लिखा। यह उनके एक शक्तिशाली रचना थी। यह उपन्यास रालकापज़ाउअ के जीवन इतिहास के बारे में है जो मिज़ोरम के सुदूर पूर्वी भाग के निवासी था। *'ललरमलिआनअ'* उपन्यास ज़ीकपुई पा का पहला उपन्यास प्रतीत होता है, लेकिन उनकी पत्नी से यह ज्ञात होता है कि इसे पूरा करने में उन्हें पैंतालीस साल से ज्यादा का समय लगा। *'नुनना कोङ ठूआमपुईअः'* उपन्यास उनका अंतिम और सर्वश्रेष्ठ में से एक है तथा यह उनकी एक शक्तिशाली कृति है।[12] यह उपन्यास प्रेम कहानी होने के साथ-साथ उपन्यास की पृष्ठभूमि मिज़ोरम विद्रोह के समय की है। मिज़ो कथा साहित्य के लेखकों में ज़ीकपुई पा सबसे महान और प्रतिभाशाली लेखकों में से एक माने जाते है। 1965 में वानललरौपुईअ का *'चोङपुई अ ति वोल वोल ठ्रीन'* उपन्यास प्रकाशित हुआ जो एक ऐतिहासिक उपन्यास है। यह उपन्यास केवल 38 पृष्ठों का था।

1977 और 1978 के बीच जेम्स डौखूमा का *'थ्ला ह्लेईङा ज़ान'* उपन्यास प्रकाशित हुआ जो 1968 में लिखा गया था जब वह पॉलिटिक्स के कारण नाउगोंग जैल और गुवाहाटी डिस्ट्रिक्ट जैल में था। जेम्स डौखूमा के प्रमुख उपन्यास हैं – *'खोहर इन'(1970), 'रिनओमीन'(1970), 'तुमपाङ चल ङे साईथङपुई'(1981), ह्माङाईःना थूचः'(1982), 'इरावादी लूइ कमः'(1982), 'सिलाईमू ङाईःओम'(1992)* और *'खम कार सेनह्री'(1995)*। साहित्य के क्षेत्र में जेम्स डौखूमा को लगभग आधा दर्जन पुरस्कार मिले है। वे एक निबंधकार, कवि, नाटककार, इतिहासकार, कोशकार एवं कथाकार भी थे। साहित्य के क्षेत्र में उनके योगदान को न केवल भारत बल्कि विदेशों ने भी मान्यता दी है।[13]

1970 से 1980 के बीच अधिकतर अंग्रेजी उपन्यासों का अनुवाद साइक्लोस्टाइल में प्रकाशित किया जाता था। 1990 में सी. लाईज़ोना द्वारा लिखित उपन्यास *'ह्माङाइ:ज़ुआली'* प्रकाशित हुआ जिसे उसी वर्ष मिज़ो अकादमी ऑफ लेटर्स ने 'बुक ऑफ द ईयर' से सम्मानित किया। 1991 से 2000 के बीच उपन्यासों का लेखन एवं प्रकाशन अधिक संख्या में हुआ। 2001-2010 के बीच लगभग नब्बे (90) उपन्यासों का प्रकाशन हुआ।[14]

मिज़ो साहित्य के इतिहास में मिज़ो कथा का कोई व्यवस्थित एवं कालानुक्रमिक अध्ययन नहीं किया गया है, लेकिन डॉ. ज़ोरमदिनथरा ने अपनी पुस्तक **'Mizo Fiction : Emergence and Development'** में मिज़ो साहित्य के इतिहास के अंतर्गत मिज़ो कथा के विकास को अध्ययन की सुविधा के लिए तीन खंडों में विभाजित करने का निम्न प्रकार से प्रयास किया है -

1. स्वतंत्रता पूर्व मिज़ो कथा साहित्य: 1936 – 1946 (Pre Independence Mizo Fiction: 1936 – 1946)
2. स्वातंत्र्योत्तर मिज़ो कथा साहित्य: 1947 – 1986 (Post-Independence Mizo Fiction: 1947 – 1986)
3. आधुनिक मिज़ो कथा साहित्य: 1986 – 2000 (Modern Mizo Fiction: 1986 – 2000)

1. स्वतंत्रता पूर्व मिज़ो कथा साहित्य: 1936 – 1946 (Pre Independence Mizo Fiction: 1936 – 1946)

डॉ. ज़ोरमदिनथरा लिखते हैं कि "1936 से 1946 के बीच की अवधि मिज़ो कथा साहित्य के इतिहास में पहली महत्त्वपूर्ण अवधि है। यह 'मिज़ो कथा' नामक एक नयी रचना पद्धति की शुरुआत का प्रतीक है।"[15] डॉ. ज़ोरमदिनथरा ने स्पष्ट करते हुए लिखा हैं कि "मिज़ोरम में वेल्श मिशनरी के आने के बाद ईसाई धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए कविता और नाटक को एक महत्त्वपूर्ण माध्यम के रूप में प्रयोग करने लगे। यही कारण है कि मिज़ो साहित्य में कथा साहित्य के उद्भव से

पहले नाटक और कविता का उद्भव और विकास हुआ।"[16] कुछ आगे वे पुनः लिखते हैं- "साहित्यिक दृष्टि से मिज़ो कथा साहित्य की स्थापना इस काल के साहित्यिक इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है। इस काल के बीच की अवधि ने मिज़ो कथा साहित्य के लिए एक नए युग की शुरुआत की है।" मिज़ो साहित्य के प्रसिद्ध कवि, नाटककार और लेखक ललत्लुआङलिआना खिअङते ने भी इस युग को "साहित्य में उल्लेखनीय उपलब्धि के लिए मिज़ो साहित्य का स्वर्णिम काल" कहा है।" एल. बिआकलिआना, कापह्लेइआ और ललज़ुईथङआ जैसे प्रथम तीन मिज़ो उपन्यासकारों को डॉ. ज़ोरमदिनथरा ने इसी काल के अंतर्गत रखा है, जिन्होंने मिज़ो साहित्य की इस नयी विधा को सामने लाया।

2. स्वातंत्र्योत्तर मिज़ो कथा साहित्य: 1947 – 1986
(Post-Independence Mizo Fiction: 1947 – 1986)

डॉ. ज़ोरमदिनथरा के अनुसार इस काल की शुरुआत 1947 में भारत की स्वतंत्रता के साथ और इस काल की समाप्ति 1986 में मिज़ोरम शांति समझौते के साथ मानते हैं। इस काल के अंतर्गत 1947 से लेकर 1986 के बीच के कथा साहित्य के विकसित रूप को रेखांकित किया गया है। डॉ. ज़ोरमदिनथरा के अनुसार इस काल के दौरान "द्वितीय विश्व युद्ध, 1966 के मिज़ोरम विद्रोह और मिज़ो डिस्ट्रिक्ट काउंसिल के लिए केंद्र शासित प्रदेश के प्रावधान जैसी ऐतिहासिक घटनाओं ने मिज़ो लोगों के सामाजिक जीवन को गहराई से प्रभावित किया, जिसके परिणामस्वरूप इस युग का साहित्यिक आंदोलन आगे बढ़ा। साहित्यिक दृष्टिकोण से इन घटनाओं ने मिज़ो कथा साहित्य के विषय में कुछ बदलाव लाए और इस काल के कथाकारों ने युद्ध, विद्रोह और राज्य के राजनीतिक उथल-पुथल के प्रभाव पर जोर दिया। इस युग के मिज़ो उपन्यासों में लेखकों ने युद्ध, विद्रोह और राजनीतिक परिवर्तनों के कारण होने वाली अनेक कठिनाइयों का यथार्थ रूप प्रस्तुत किया है। अभिव्यक्ति का एक लोकप्रिय माध्यम होने के कारण उपन्यास ने इस काल में सामाजिक यथार्थ को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया। इस युग ने सी. ठुआमलुआइआ, कैप्टन सी. खूमा, के.सी.ललवुङा (ज़ीकपुई पा), रेव. ज़ोउकिमा, जेम्स दोउखूमा, ललएङमोइआ रालते आदि अनेक

मिज़ो कथाकारों को जन्म दिया।"[17] इसके साथ ही इस युग ने महिला कथाकारों जैसे खोलकूडी और के. ललदोङलिआनी को भी जन्म दिया जिन्होंने मिज़ो कथा साहित्य में उल्लेखनीय योगदान दिया है।

3. आधुनिक मिज़ो कथा साहित्य: 1986 – 2000
(Modern Mizo Fiction: 1986 – 2000)

डॉ. ज़ोरमदिनथरा ने अपनी पुस्तक 'Mizo Fiction: Emergence and Development' में लिखा है कि "1987 से 2000 के बीच का काल मिज़ोरम के इतिहास में सबसे उल्लेखनीय कालों में से एक है और यह मिज़ोरम के इतिहास का एक नया अध्याय है।"[18] यह सामाजिक परिवर्तन का युग था। इस युग के कथाकार सामाजिक यथार्थ के प्रति आकर्षित हुए। इस युग के कथाकारों ने यथार्थवादी ढंग से समाज को सुधारने के उद्देश्य से समाज में व्याप्त बुराइयों को चित्रित करने का प्रयास किया। इस काल के दौरान शिक्षा की प्रगति तेजी से होने लगी जिससे विशाल पाठक वर्ग तैयार हुई और फलस्वरूप मिज़ो कथा साहित्य का भी अधिक विकास हुआ और यह साहित्य की सबसे लोकप्रिय विधा बन गया।[19] इस युग के प्रमुख कथाकार हैं - सी. लाइज़ोना, ललरुआली, ललह्मिङलिआना साइओई, डॉ. एच. लललुङमुआना, एच. ललङूरलिआनी, ज़ालोमा, ललजुईअ कोलनी, सी. हरमना, बी. पोलथङा आदि।

मिज़ो साहित्य में पारंपरिक मिज़ो उपन्यास का उद्देश्य है सामाजिक मूल्यों को पहचानने और बनाए रखना। इस दौर के लेखकों ने अपने उपन्यासों में 'त्लोमङाइह्वा' के दो अलग-अलग पक्षों को रेखांकित किया है - पहला मिज़ो त्लोमङाइह्वा, जो एक महत्त्वपूर्ण मिज़ो सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य है और जिसका अर्थ है दूसरों की नि:स्वार्थ सेवा या परोपकार और दूसरा त्लोमङाइह्वा या भाईचारे की ईसाई अवधारणा।[20] समकालीन उपन्यास स्पष्ट रूप से इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि ईसाई धर्म के माध्यम से समाज में परिवर्तन और सुधार हुआ है। उपन्यासों में ईसाई धर्म के सकारात्मक परिणामों पर जोर दिया गया है जैसे बेहतर शिक्षा, चर्च द्वारा विवाह को मान्यता दिया जाना, महिलाओं के खिलाफ भेदभाव धीरे-धीरे समाप्त होना, स्त्रियों के लिए शिक्षा का द्वार खोल दिया

जाना, आदि।[21] मिज़ो उपन्यास के शुरुआती दौर में उपन्यासकारों ने आमतौर पर अपने समय की मिज़ो जीवनशैली और संस्कृति का वर्णन करते थे। सन् 1980 के बाद कई तरह के उपन्यास लिखे जाने लगे। आधुनिक मिज़ो उपन्यासकार जैसे के.सी.ललवुङा (ज़ीकपुई पा) पारंपरिक मिज़ो उपन्यासकारों की तरह केवल ऐतिहासिक उपन्यासकार न होकर, मनोवैज्ञानिक उपन्यास के लेखकों के रूप में भी सामने आने लगे। इस प्रकार आधुनिक मिज़ो उपन्यासकारों के विषय में बदलाव दिखने लगा, उनके लेखन में समाज के साथ-साथ व्यक्ति भी महत्त्वपूर्ण होने लगा। आधुनिक मिज़ो उपन्यासकारों ने कथानक और पत्रों के माध्यम से मिज़ो समाज को प्रस्तुत करने का प्रयास किया। आधुनिक मिज़ो उपन्यास अधिक यथार्थवादी होने लगे। इन उपन्यासों में समकालीन जीवन के अच्छे और बुरे दोनों पक्षों को चित्रित करने का प्रयास किया गया। "मिज़ो उपन्यासकारों के अधिकांश लेखन को सामाजिक और नैतिक उत्थान का माध्यम माना जा सकता है, क्योंकि प्रारंभ से ही हमारे उपन्यासों की एक सामान्य विशेषता है कि यह समाज को दिशा दिखाने वाला एक माध्यम है, न कि स्वांतः सुखाय लिखी जाने वाली एक कलात्मक रचना मात्र।"[22]

रमबुआई साहित्य :

मिज़ो कथा साहित्य के अंतर्गत भयानक रमबुआई ने रमबुआई साहित्य नामक एक नई साहित्यिक शैली को जन्म दिया। यह उभरती हुई साहित्यिक शैली 1966 में घटित भारत से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए मिज़ो विद्रोह और उस अवधि के दौरान मिज़ोरम के अशांत माहौल को संबोधित करती है। रमबुआई साहित्य मिज़ो साहित्य के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस मिज़ो विद्रोह ने मिज़ो कविता, नाटक, कथा साहित्य आदि साहित्य की विभिन्न विधाओं को अधिक प्रभावित किया है। दो दशकों (1966-1986) तक चलने वाली विद्रोह का समय मिज़ो लोगों के लिए संकटपूर्ण और संघर्ष का समय था। मारगरेट चो. ज़ामा और सी. ललओमपुईआ वानचिअऊ द्वारा

लिखे गए किताब 'आफ्टर देकेड्स ऑफ साइलन्स, वॉइसेस फ्रॉम मिज़ोरम: अ ब्रीफ़ रिव्यू ऑफ मिज़ो लिटरचर' में रमबुआई साहित्य को इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

"रमबुआई साहित्य का शाब्दिक अनुवाद है 'अशांत भूमि का साहित्य'... अर्थात् मिज़ो नैशनल फ्रन्ट मूवमेंट के अशांत इतिहास से उत्पन्न कथा, गैर-कथा, गीत और कविताएँ, चाहे वे एम.एन.एफ. या गैर-एम.एन.एफ. कथाएँ हो, वे इस शैली की रचना में शामिल हैं जो बढ़ रही है और आने वाले वर्षों में ऐसा करना जारी रखने की संभावना है।"[23]

मिज़ो कथा साहित्य के अंतर्गत रचनात्मक लेखन के रूप में, रमबुआई साहित्य मिज़ोरम के 20 काले और अंधेरे वर्षों को प्रस्तुत करता है, जिसमें एम.एन.एफ. और गैर-एम.एन.एफ. दोनों दृष्टिकोणों से कथाएँ मौजूद हैं। रमबुआई के प्रभाव से रचे गए सभी साहित्यिक कृतियों में, चाहे वे एम.एन.एफ. या गैर-एम.एन.एफ. कथाएँ हो, उनका मुख्य विषय राष्ट्रवादी भावनाओं का उभरना, एम.एन.एफ. विचारधाराएँ, एम.एन.एफ. वॉलन्टियर्स की शहादत और गाँव के समूहों की पीड़ा और कठोर यादें, बलात्कार, गाँवों को जलाना और गाँव समूहिकरण हैं।

1966 से पूर्व पार्टी प्रचार पुस्तिकाएं और विद्रोह से पहले लिखी गई कुछ व्यक्तिगत कविताओं को 'रमबुआई साहित्य' का अग्रदूत माना जा सकता है। जैसे कि – मिज़ो यूनियन का पैम्फ्लिट "पॉलिटिक्स कल सुआल लकह फीमखुर अ ङाई" (गलत राजनीति से सावधान रहें) और "इंडिपेंडेंट थू आ मिज़ो यूनियन थुपुआन" (मिज़ो यूनियन की स्वतंत्रता की घोषणा)[1963],एम.एन.एफ. अध्यक्ष ललदेङा द्वारा लिखा गया "ज़लेनना थुचः नं. 1"[1962] और "ज़लेनना थुचः नं. 2"[1963] (स्वतंत्रता संदेश 1&2)।[24]

1973 में ललदेङा द्वारा लिखी गई "मिज़ोरम मार्चेस टूवर्ड्स फ्रीडम" और त्लाङछुआका द्वारा लिखी गई "मिज़ोरम पोलिटिकल चनचिन" (मिज़ोरम राजनीतिक के बारे में) प्रकाशित हुई। फरवरी,1969 में दम्पा साप्ताहिक पत्रिका में "पीस मैकिंग इन मिज़ोरम" को प्रकाशित किया गया। 2013 में डॉ. जे.वी.ह्लुना ने ललह्मिङथङा के 'राजनीतिक लेखन' संग्रह को "प्रॉब्लेम ऑफ पीस मैकिंग इन मिज़ोरम" (मिज़ोरम में शांति निर्माण की समस्या) को उसका मूल शीर्षक के साथ एक

नया जीवन दिया, जिसे पहले एम.एन.एफ. अध्यक्ष ललदेङा के गुस्सा होने के कारण दफनाया गया था। 1965 में ललह्मिङथङअ ने एम.एन.एफ. विचारधारा की नींव "एक्सोडस पॉलिटिक्स" प्रकाशित की। रक्षा मंत्री आर.ज़मोइअ द्वारा लिखा गया पुस्तक "ज़ौफाते ज़िनकोङः" मिज़ो विद्रोह से संबंधित सुविख्यात पुस्तक है। पी.बी. रौसाङा ने "इन्सर्जन्सी इन मिज़ोरम", बिआकछूङा ने "ह्नम कलसिआम", आर.साङकोईअ ने "ज़ौफा ज़लेनना सुआलतूते लमत्लुआङ" और चोङज़ुआला ने "क शिङनुन ज़िनकोङ" नामक रमबुआई साहित्य लिखें। एम.एन.एफ. अध्यक्ष ललदेङा के निजी सचिव, बाद में उप-अध्यक्ष ज़ौरमथङा ने 1980 में "ज़ोउरम ज़लेनना लुङफूम" और बाद में "मिज़ो नैशनल मूवमेंट" का प्रकाशन किया। 1981 में "मिज़ो ह्नम ह्लाबू" (मिज़ो जाति गीत पुस्तक) को प्रचार मंत्रालय, मिज़ोरम सरकार द्वारा प्रकाशित किया गया था।[25] इसके बाद भी मिज़ोरम विद्रोह से संबंधित कई किताबें प्रकाशित हुई।

एम.एन.एफ. के उपाध्यक्ष ललनुनमोइअ की डायरी जिसे तीन खंडों में विभाजित किया गया था – 'ज़ालेनना चाउः', 'ईस्ट पाकिस्तान' और '1971' को 2022 में प्रकाशित किया गया। वित्त मंत्री सी.ललखोलिआना ने भी अपनी डायरी के आधार पर 'मिज़ो नैशनल मूवमेंट' भी प्रकाशित किया। सेनटर बुआलशाङा ने 'खुआरेइ सूलह्नू' लिखा और ज़ौरमथङा, एम.पी का 'ज़ोरम ज़लेन नान ह्मिङ क साइन' प्रकाशित किया।

रमबुआई से संबंधित कुछ पत्रिका भी निकाले गए थे। रमबुआई से पूर्व पॉल ज़खूमअ द्वारा प्रकाशित 'आइजल डेली न्यूज़' ने कुछ समय के लिए रमबुआई के संघर्ष पर प्रकाश डाला। 1964 में प्रकाशित किया गया 'मिज़ो ओ' पत्रिका बीच में रुककर 1972 में पुनः प्रकाशित हुआ। 2 नवम्बर 1968 से 'तोरःबोम' पत्रिका प्रकाशित किया गया।

मिज़ो साहित्य के विकास में इस मिज़ो विद्रोह का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है, विशेष रूप से मिज़ो विद्रोह (रमबुआई) से संबंधित कथा साहित्य में। मिज़ो साहित्य के क्षेत्र में पहले कविताओं पर रमबुआई का प्रभाव पड़ा, परंतु आगे चलकर कविता की तुलना में कथा साहित्य में इसका प्रभाव

बहुत अधिक है। जहाँ कविता और नाटक के क्षेत्र में रमबुआई का प्रभाव धीरे-धीरे कम होता गया, वहीं कथा साहित्य में इसका प्रभाव 1976 में प्रथम रमबुआई कथा (उपन्यास) के प्रकाशित होने के बाद से आज तक लगातार बढ़ रहा है और यह प्रभाव इतना अधिक है कि मिज़ो साहित्य में 'रमबुआई उपन्यास' को एक उप-विधा भी माना जाने लगा है।

प्रथम प्रकाशित मिज़ो विद्रोह आधारित कथा के संबंध में अलग-अलग मतभेद हैं। ललओमपुईआ वानचिअऊ ने अपने पुस्तक 'रमबुआई लिटरेचर' में यह उल्लेख किया है कि '1975 में मिज़ोरम विधानसभा के पूर्व उपाध्यक्ष वानललडेना द्वारा लिखा गया 'क दी वे खा' (Ka Di Ve Kha) उपन्यास जो 'साइक्लोस्टाइल' में प्रकाशित हुआ था, रमबुआई से संबंधित सबसे पहला उपन्यास माना जाता है।'[26] परंतु गवर्नमेंट शाङबाना कॉलेज द्वारा आयोजित सेमिनार पेपर, 'रमबुआई लिटरेचर' के संकलन में लललिआनज़ुआला का कहना है कि "वर्ष 1976 से पहले मिज़ो उपन्यास जिनका आधार रमबुआई था, शायद प्रिन्ट में उपलब्ध नहीं हैं, लेकिन यह सच है कि रचना मौजूद थी। क्योंकि हम अशांत क्षेत्र के रूप में घोषित हुए थे, इसलिए रमबुआई से पहले प्रकाशित प्रेम कहानियाँ कभी-कभार ही प्रकाशित होती थीं। लेकिन जेम्स डौखूमा द्वारा लिखा गया 'रिनओमइन' उपन्यास को पहला रमबुआई संबंधित प्रकाशित उपन्यास माना जा सकता है, जिसे डेविड मेमोरियल प्रेस, थकथीङ बाज़ार, आइज़ोल द्वारा दो खंडों में प्रकाशित किया गया था।"[27]

अतः वानललडेना द्वारा लिखा गया उपन्यास 'क दी वे खा' (Ka Di Ve Kha), जेम्स डौखूमा के उपन्यास 'रिनओमइन'(1970) से एक वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था। लेकिन अब इस उपन्यास की प्रति उपलब्ध नहीं होने के कारण, मिज़ो विद्रोह पर आधारित उपन्यास के रूप में जेम्स डौखूमा के 'रिनओमइन' उपन्यास को पहला प्रकाशित उपन्यास माना जा सकता है।

जेम्स डौखूमा का उपन्यास 'रिनओमइन' 1970 में सिलचर जेल में लिखा गया था, जिसे 2015 में आर.ललरोना द्वारा गिलजोम ऑफ्सेट में प्रकाशित किया गया था। अपने उपन्यास की प्रस्तावना में, उपन्यासकार जेम्स डौखूमा ने उल्लेख किया है कि यह जेल में बिताए गए समय की

याद में था। यह उपन्यास 1966 के मिज़ोरम विद्रोह पर आधारित है, जिसमें 1965 एम.एन.एफ. विशेष असेम्बली से लेकर 1968 तक की मुख्य घटनाएँ प्रस्तुत की गई है। यह रमह्लुनी और रोउज़ुआला की प्रेम कहानी है और विद्रोह के कारण उन्होंने किन समस्याओं का सामना करना पड़ा था। यह उपन्यास 1966 के मिज़ो विद्रोह का एक अच्छा प्रतिबिंब है जिसने यह दिखाया कि विद्रोह के दौरान एक जोड़े के साथ क्या हो सकता है और समाज और परिवारों पर इसका क्या प्रभाव पड़ता है। इस उपन्यास को मिज़ो विद्रोह पर आधारित लिखे गए उपन्यासों में से सबसे अच्छा उपन्यास भी माना जाता है। 'रिनओमइन' उपन्यास में मिज़ो यूनियन और एम.एन.एफ. के बीच संबंधों की सच्ची तस्वीर को चित्रित किया गया है, गाँव के बीच कोकतू (मुखबिर) के कारण एम.एन.एफ. वॉलन्टियरों की पीड़ा और एम.एन.एफ. सेना ने उनके खिलाफ कैसे कार्रवाई की, इसका भी वर्णन है।[28]

'रिनओमइन' उपन्यास के प्रकाशन के 12 साल बाद 1982 में प्रमोद भटनागर द्वारा लिखित 'ज़ौरमथङः डॉटर ऑफ द हिल्स' को विक्रांत प्रेस, दिल्ली द्वारा प्रकाशित किया गया था। यह उपन्यास अंग्रेजी में लिखी गई और पहला मिज़ो विद्रोह संबंधित उपन्यास है जिसे गैर-मिज़ो लेखक द्वारा लिखा गया था। इस उपन्यास का लेखक, प्रमोद भटनागर मिज़ो ज़िले के केंद्र शासित प्रदेश बनने के बाद, मिज़ोरम में काम कर रहे थे। रमबुआई के वर्षों की पृष्ठभूमि पर आधारित इस उपन्यास की कहानी ज़ौरमथङी और अजय कपूर की है, जो पंजाब का एक पुलिस अधिकारी है और कहानी की अंत में उसकी मृत्यु हो जाती है। ज़ौरमथङइ के मामा एक भूमिगत वीर है, जिन पर 10,000/- रुपये का इनाम है, लेकिन लुङदाई गाँव में उनके घर को एम.एन.एफ. द्वारा जला दिया जाता है, और उनके पिता साङज़ुआला उनके द्वारा मार दिया जाता है।

मिज़ोरम शांति समझौते पर हस्ताक्षर होने से ठीक पहले 1985 में आधुनिक मिज़ो कथा साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखने वाले सी. लाईज़ोना का 'थुरुक' उपन्यास प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास को लघु उपन्यास भी कहा जा सकता है जो मिज़ो विद्रोह के प्रारम्भिक काल से संबंधित है।

इस प्रकार मिज़ो विद्रोह के इस पहले दशक के दौरान उक्त चार उपन्यास प्रकाशित हुए जिसे मिज़ो साहित्य एक बड़ी उपलब्धि माना जा सकता हैं।

के.सी.ललवुङा उर्फ ज़ीकपुई पा ने 1989 में रमबुआई पर आधारित '*नुनना कोङ ठूआमपुईअः*' उपन्यास लिखा। इस उपन्यास में सेना के अहंकार और मिज़ो महिलाओं पर उनके द्वारा किये गए अत्याचार को स्पष्ट रूप से दर्शाया गया है। उपन्यासकार ने अपने इस उपन्यास के माध्यम से यह दिखाया है कि कैसे सेना ने विवाहित महिलाओं और युवतियों को चर्च और स्कूलों में कैद करके उनके साथ क्रूर सामूहिक बलात्कार किया था। उपन्यास की एक पात्र पी कूङलिआनी ने लगातार क्रूर सामूहिक बलात्कार के कारण खुद को फांसी लगा ली और उन तीन महिलाओं को मिज़ो सेना द्वारा गोली मार दी गई क्योंकि उन्हें गलत तरीके से यह प्रचारित किया था कि सेना द्वारा किए गए बलात्कार में कुछ महिलाओं को मज़ा आ रहा था तथा उनका मज़ाक उड़ाया जा रहा था। ये सभी घटनाएँ ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित थे।

डॉ. ललत्लुआङलिआना खिअङते द्वारा संकलित 'ए स्टडी ऑफ मिज़ो नॉवेल' में वानङ्हाका ने अपने 'ए क्रिटिकल स्टडी ऑफ द डेवलपमेंट ऑफ मिज़ो नोवेल्स' लेख के अंतर्गत 1960 से 1970 वर्षों के बारे में इस तरह लिखा है कि "तत्कालीन मिज़ो ज़िले में विद्रोह ने इस समय के दौरान पूर्ण उपन्यासों के लिए कई गुंजाइश नहीं छोड़ी, इसलिए 'मिज़ो साहित्य का अंधकार युग' भी कहा जा सकता है।"[29] यह सच हैं कि मिज़ो विद्रोह (रमबुआई) का समय मिज़ो लोगों के लिए एक संकटपूर्ण और अराजक का समय था, जिसने कई पहलुओं में मिज़ो साहित्य के विकास में अधिक बाधा तो डाली थी लेकिन मिज़ो साहित्य के विकास को प्रतिकूल रूप से भी प्रभावित किया था। मिज़ो विद्रोह के समय मिज़ो कथाकार अपनी भावनाओं और दृष्टिकोणों को अपने लेखन में अपनी इच्छा के अनुसार व्यक्त नहीं कर सकते थे। एम.एन.एफ. मूवमेंट के प्रति उनका अपना दृष्टिकोण, खास तौर पर उनकी प्रगति या निंदा के बारे में लिखना उनके लिए खतरे से कम नहीं था। मिज़ो कथा लेखकों के साथ-साथ स्थानीय समाचार पत्रिका के संपादकों के लिए भी खतरा कम नहीं

था। पी. ललनिथङा, आईएएस(सेवानिवृत्त) ने अपनी किताब ईमर्जन्स ऑफ मिज़ोरम में उल्लेखित किया है कि 1982 के मई में विधायक पु ज़ादिङा और छोरपिआल स्थानीय समाचार पत्र के संपादक पु ज़ेट.ए.कापमोइअ को गोली मारकर उनकी हत्या कर दी गई थी।[30]

मिज़ो कथा साहित्य के क्षेत्र में मिज़ो विद्रोह का अधिक प्रभाव पड़ रहा है और इसके साथ ही अधिक-से-अधिक जड़े जमा रही हैं। ललओमपुईआ वानचिअऊ ने अपने पुस्तक 'रमबुआई लिटरेचर' में कहा है कि "रमबुआई से संबंधित सभी मिज़ो कथा साहित्य को रमबुआई कथा साहित्य कहा जा सकता है।"[31] मिज़ो कथा साहित्य में मिज़ो विद्रोह की प्रकृति और महत्त्व भिन्न है, इसलिए मिज़ो साहित्य में मिज़ो विद्रोह से संबन्धित उपन्यासों को दो आधारों पर विभाजित किया जा सकता है– पहला है मिज़ो विद्रोह पर आधारित उपन्यास और दूसरा है मिज़ो विद्रोह से संबंधित उपन्यास।

मिज़ो विद्रोह से संबंधित उपन्यासों में उपन्यासकारों ने रमबुआई के माहौल और उससे जुड़े पहलुओं को दर्शाया है। ऐसे उपन्यासों में रमबुआई के कुछ मुद्दों को पात्रों के माध्यम चित्रित किया जाता है, लेकिन उनमें रमबुआई का गहरा प्रभाव नहीं होता। कुछ लेखक उपन्यास को और रोचक बनाने के लिए केवल रमबुआई के संदर्भ का प्रयोग करते हैं। जैसे ललह्मिङलिआना साईओई द्वारा लिखा गया *'केईमः यूनियनलिआना'*, ललशिआता द्वारा लिखा गया *'ह्माङाइहना ज़ूङज़ाम'* उपन्यास को श्रेणी के अंतर्गत रखा जा सकता है।

मिज़ो विद्रोह पर आधारित उपन्यासों में उपन्यासकार, उपन्यास की कथावस्तु के रूप में मिज़ो विद्रोह(रमबुआई) का प्रयोग करते है और किस प्रकार रमबुआई ने पात्रों के जीवन पर प्रभाव डाला हैं। रमबुआई के दौरान संकटपूर्ण और उदासीन माहौल में रहने के कारण पात्रों पर निश्चित रूप से सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। वास्तविक जीवन से पात्रों और कथावस्तु को चित्रित किया जाता है और इसके साथ ही ऐतिहासिक तथ्यों को महत्त्व दिया जाता हैं। जेम्स डौखूमा का उपन्यास *'रिनओमइन'(1976)*, *'सिलाइमु ङाई:ओम'(1992)*, *'खाम कार सेनह्री'(2005);* के.सी.ललवुङा उर्फ ज़ीकपुई पा का उपन्यास *'नुनना कोङ ठूआमपुईअः'(1989);* ज़ौथनसाङी पा

का उपन्यास *'मित्तुई कारअ ह्माङाइहना'(1995);* ललरेममोइअ साइलोउ का उपन्यास *'ह्माङइहतू तुआरना'(2001);* के.होलला साइलोउ का उपन्यास *'मिज़ो ङाई:दान देक चे थम'(2001)* (आत्मकथानक उपन्यास)*;* माफेली का उपन्यास *'ङ्हिल्ह हर कन तुआर'(2010);* समसोन थनरूमा का उपन्यास *'बेइसेईना मिततुई'(2010);* सी. छुआनवोरअ का *'रिनपुई लेह सेईज़ीका'(2011);* ललएङज़ाउअ का उपन्यास *'फलुङ'(2019)* आदि को मिज़ो विद्रोह (रमबुआई) पर आधारित उपन्यास के अंतर्गत रखा जा सकता हैं।

अतः यह माना जा सकता है कि अधिकांश मिज़ो उपन्यासकारों ने रमबुआई संबंधित उपन्यास न लिखकर रमबुआई आधारित उपन्यास लिखे हैं। उक्त उपन्यासकारों में से जेम्स डोउखूमा, के.होलला साइलोउ और सी. छुआनवोरा व्यक्तिगत रूप से एम.एन.एफ. आंदोलन में शामिल थे। मिज़ो विद्रोह से जुड़े अधिकांश उपन्यासकारों का एम.एन.एफ. या रमबुआई आंदोलन से कोई संबंध नहीं था। उन्होंने अपने लेखन के माध्यम से मिज़ो राष्ट्रवाद और मिज़ोरम के प्रति अपने प्रेम को बाहर निकालने का प्रयास किया हैं।

रमबुआई और उससे संबंधित पहलू जो मिज़ो उपन्यासों में परिलक्षित हैं, मिज़ो साहित्य की समृद्धि में योगदान देते हैं। इसके साथ ही, रमबुआई की उपनयस लिखने वाले मिज़ो कथा साहित्य के महत्व को बढ़ाने में भी योगदान देते हैं।

मिज़ो विद्रोह आधारित और उससे संबंधित उपन्यास पुरुषों द्वारा अधिक लेखन हुआ हैं। लेकिन उनमें से तीन महिला उपन्यासकार हैं जिन्होंने रमबुआई और उससे संबंधित पहलुओं पर लेखन कार्य किया है। वे हैं – माफेली द्वारा लिखित *'ङ्हिल्ह हर कन तुआर'(2010);* मलसोमी द्वारा लिखित *'ज़ौरमी'(2015)* और हन्ना ललह्लनपुई द्वारा लिखित *'व्हेन ब्लैक बर्ड फ्लाई'(2019)*। इनमें से केवल माफेली एकमात्र लेखिका हैं जिन्होंने रमबुआई आधारित मिज़ो में उपन्यास लिखा है।

मिज़ो साहित्य के अलावा हिन्दी कथा साहित्य के क्षेत्र में मिज़ोरम के विद्रोह और उस संकटपूर्ण समय में मिज़ोरम में खुफिया बलों के प्रमुख के रूप में तैनात और भारत सरकार के साथ शांति के लिए बातचित करने के लिए मिज़ो भूमिगत नेताओं को मनाने में शामिल श्री प्रकाश मिश्र ने 1996 में हिन्दी में मिज़ो विद्रोह आधारित उपन्यास *'जहाँ बाँस फूलते हैं'* लिखा। यह उनका पहला उपन्यास था और इस उपन्यास में 1959 के 'माउताम' और उसके बाद ललदेङा के नेतृत्व में भारतीय राज्य से अलग होने के लिए सशस्त्र विद्रोह की पृष्ठभूमि को प्रस्तुत किया है।

यह कहा जा सकता है कि मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो लोगों द्वारा झेली गई निजी पीड़ा और सामाजिक कठिनाइयों ने ही मिज़ो साहित्य के अंतर्गत रमबुआई कथा साहित्य को जन्म दिया है। अधिकांश रमबुआई आधारित उपन्यास आमतौर पर मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना, एम.एन.एफ. भूमिगत वॉलन्टियरों और व्यक्तिगत ईर्ष्या के कारण मिज़ो लोगों की दर्दनाक पीड़ा और संकटपूर्ण स्थिति को प्रस्तुत करती हैं।

मिज़ो कथा साहित्य के अंतर्गत रमबुआई उपन्यास के उदय का श्रेय राष्ट्रवादी भावना को भी माना जा सकता है। इस तरह की राष्ट्रवाद की भावनाओं का उल्लेख पहले कभी मिज़ो उपन्यास में नहीं किया गया था। केवल रमबुआई आधारित और उससे संबंधित उपन्यासों में इस तरह की घटनाओं का उल्लेख किया गया हैं। जेम्स डोउखूमा द्वारा लिखित 'रिनओमइन' उपन्यास राष्ट्रवादी भावना से संबंधित पहला मिज़ो विद्रोह पर आधारित उपन्यास है।

रमबुआई उपन्यास मिज़ो विद्रोह और संघर्ष के प्रभाव में लिखी गई किसी भी अन्य साहित्यिक कृति से कम नहीं है। रमबुआई कथा साहित्य निर्दोष नागरिकों के बीच की हिंसा, उनकी पीड़ा और परेशानियों का गवाह है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह विद्रोह के समय मिज़ो महिलाओं की खामोश पीड़ा, निर्दोष नागरिकों की भारतीय सेना और मिज़ो भूमिगत सेनाओं के बीच पिसे रहने को दर्ज करता है। रमबुआई उपन्यास क्रूर राजनीतिक उथल-पुथल का यथार्थवादी और सीधा चित्रण प्रस्तुत करता है।

ललओमपुईआ वानचिअऊ ने अपने पुस्तक ‘रमबुआई लिटरेचर’ में 1986 से 2022 के बीच 66 प्रकाशित रमबुआई कथा साहित्य और उससे संबंधित लघु कथा का उल्लेख करते हुए यह भी कहते है कि “अगर हम और अधिक विस्तार से खोजे तो, यह संभव है कि रमबुआई फिक्शन की कम से कम 70 पुस्तकें उपलब्ध हों।”[32] दो दशकों तक चलने वाली मिज़ो विद्रोह के गंभीर परिस्थिति के बाद भी मिज़ो साहित्य के अंतर्गत मिज़ो कथा साहित्य का अधिक विकास हुआ, खास तौर पर रमबुआई आधारित उपन्यास के क्षेत्र में। उन दो दशकों के दौरान पीड़ा, वेदना, संकट आदि अनुभवों को रमबुआई आधारित उपन्यासों में मार्मिक रूप से चित्रित किया जाता है। 20 वर्षों तक चलने वाली मिज़ो विद्रोह, मिज़ो साहित्य के लिए एक छिपे हुए वरदान की तरह बन गया है और इससे संबंधित अनेक उपन्यासों का प्रकाशित होना निश्चित रूप से एक उपलब्धि माना जा सकता हैं।

1.2 उपन्यासकार माफेली का परिचय

मिज़ो विद्रोह (रमबुआई) आधारित और उससे संबंधित उपन्यास लिखने वाली महिला उपन्यासकारों में माफेली ने अपने लिए एक विशिष्ट स्थान बनाया है। माफेली एकमात्र लेखिका हैं जिन्होंने रमबुआई आधारित उपन्यास मिज़ो भाषा में लिखा है। उनका पूरा नाम ललरेममोई है परंतु उन्हें प्यार से माफेली बुलाया जाता है। उनका जन्म मिज़ोरम के मुआलफेङ गाँव, आइज़ोल ज़िला में 21 मार्च, 1982 को हुआ था। वह चार भाई-बहनों में सबसे छोटी हैं। 2 साल की उम्र से ही उनको बोन मैरो की बीमारी होने के कारण वह शारीरिक रूप से अक्षम हो गयीं। इस बीमारी के कारण उन्होंने अपनी बचपन का ज्यादा समय अस्पतालों में बिताया, जहाँ उनकी माँ ने उन्हें पढ़ना-लिखना सिखाया। दुर्भाग्यवश, 7 साल की उम्र में उन्होंने अपने पिता को खो दिया। अपनी इस बीमारी के कारण उन्होंने 12 वर्ष की उम्र में स्कूल जाना शुरू किया लेकिन केवल आठवीं कक्षा तक की शिक्षा प्राप्त कर पाई, क्योंकि उनकी दवाओं के साइड इफेक्ट के कारण वह अपनी पढ़ाई आगे जारी नहीं रख पायीं। अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए उन्होंने मिज़ो उपन्यास पढ़ना शुरू किया और वहीं से उन्हें लेखन में रुचि हुई। वह वर्तमान में मिज़ोरम टीवी केबल नेटवर्क एल पी एस विज़न के लिए अनुवादक के रूप में काम कर रहीं हैं।

सम्मान :

माफेली को उनके उपन्यास ‘कन्फेशन’ के लिए 2006 में ‘ज़ोनेट अवार्ड, 2006’ से सम्मानित किया गया तथा 2018 में मिज़ोरम सरकार के समाज कल्याण विभाग द्वारा विकलांग महिलाओं के बीच उच्च उपलब्धि के लिए *‘आइज़ोल डिस्ट्रिक्ट अवार्ड फॉर हाई आचीवर अमंग वीमेन विद डिसेबिलिटी सर्टिफिकेट’* से भी सम्मानित किया गया।

रचनाएँ :

मिज़ो उपन्यासों की एकरसता से ऊब जाने के कारण लेखिका माफेली में कुछ नया लिखने की इच्छा पैदा हुई। अतः उन्होंने 2006 में अपना पहला उपन्यास *'कन्फेशन'* (Confession) लिखना शुरू किया। लेकिन पारिवारिक जीवन की कठिनाईयों और नयी लेखिका होने के कारण अपनी पुस्तक को प्रकाशित करने में वह हिचकिचाने लगीं। इस समय एक प्रेस ने उनकी मदद की और उनके उपन्यास को प्रकाशित किया। प्रकाशन के 29 दिन बाद ही उस उपन्यास का दूसरा संस्करण निकाला गया और उसकी 6000 प्रतियाँ बिक गयीं। इसके बाद उन्होंने 2007 में *'बोईह'* (Bawih) और 2009 में *'अगोनी'* (Agony) उपन्यास लिखा। *'ङ्हिल्ह हर कन तुआर'* उपन्यास 2010 में प्रकाशित हुआ और यह उनका चौथा और अभी तक का अंतिम उपन्यास है। माफेली ने उपन्यास के साथ-साथ कहानी और लेख भी लिखे हैं, लेकिन इनका अलग से प्रकाशन नहीं किया गया है। इन्होंने 2010-2012 के बीच मिज़ोरम ब्लाइंड सोसाइटी की सहायता करने के लिए सोसाइटी द्वारा निकलने वाली मासिक पत्रिका के लिए अनेक लेखों का अनुवाद किया।

(i) ***'कन्फेशन'* (Confession):**

'कन्फेशन' उपन्यासकार माफेली का पहला उपन्यास है। इसका प्रकाशन 2006 में जे.पी. ऑफसेट, आइज़ोल से हुआ था। यह उपन्यास 202 पृष्ठों का है और मात्र 26 दिनों में पूरा किया। यह उपन्यास प्रतिशोध पर आधारित एक काल्पनिक उपन्यास है। यह उपन्यास एक ऐसी लड़की की कहानी पर आधारित है जो बिना शादी के पैदा हुई थी। एक दिन उसे अपनी माँ ज़ौरेममोईई की गुप्त डायरी मिलती है जहाँ उसे पता चलता है कि उसे बिन माँ के पालने वाले पिता उसकी असली पिता नहीं है, बल्कि उसकी जैविक पिता कौन है? और उसे यह भी पता चलता है कि उसकी माँ को दुःख देने वाला और उनकी मौत का कारण उसकी असली पिता है, और कैसे उसने अपने असली पिता से बदला लिया। इस उपन्यास में, स्त्री के बीच प्रेम संबंध के कुछ दृश्य भी हैं जो मिज़ो उपन्यास में पहली

बार दर्शाया गया है। इस उपन्यास का कथानक एक नया कथानक है जो मिज़ो साहित्य में पहले कभी नहीं देखा गया था। शीर्षक 'कन्फेशन' उस गुप्त डायरी का एक संकेत है।

(ii) ***'बोईह'* (Bawih):**

'बोईह' माफेली का दूसरा उपन्यास है जो 2007 में जे.पी. ऑफसेट, आइज़ोल से प्रकाशित हुआ था। उनके पहले उपन्यास 'कन्फेशन' की तरह इस उपन्यास को भी प्रथम-व्यक्ति शैली में प्रस्तुत किया गया है किन्तु नायक द्वारा नहीं। इस उपन्यास का कथावाचक एक अशरीरी भटकती आत्मा है, जिसकी मौत अपनी प्रेमिका ज़ोउदिनपुई से विवाह करने से पहले ही हो जाती है। उपन्यास में एक और पात्र आज़ुआला आता है जो तयशुदा विवाह के अधीन होने के बजाय मरना बेहतर समझता है। लेखिका के अनुसार इस उपन्यास का कोई परिकथा जैसा अंत नहीं है।[33] यह उपन्यास पूर्णतः कल्पना पर आधारित है। इस उपन्यास में परलोक और स्वर्ग का एक संक्षिप्त वर्णन मिलता है जो ईसाई विचारधारा के प्रतिकूल है, इसी कारण इस उपन्यास की आलोचना भी हुई है।

(iii) ***'अगोनी'* (Agony):**

माफेली का तीसरा उपन्यास 'अगोनी' है जो 2009 में जे.पी. ऑफसेट, आइज़ोल से प्रकाशित हुआ था। यह उपन्यास एक काल्पनिक त्रासदी उपन्यास है जिसे युवा पीढ़ी को आकर्षित करने के लिए लिखा गया है। इस उपन्यास का घटनाक्रम मिज़ोरम और शिलांग में रखा गया है तथा मिज़ो और खासी जाति के बीच प्रेम संबंध का भी चित्रण किया गया है। यह उपन्यास जीवन से निराश एक किशोरी के बारे में है जिसे चर्च और समाज द्वारा चरित्रहीन माना गया है।

(iv) ***'ङ्हिल्ह हर कन तुआर'* (2012):**

माफेली का चौथा और अंतिम उपन्यास *'ङ्हिल्ह हर कन तुआर'* है जो 2010 में समारितन प्रिंटर्स, आईज़ोल से प्रकाशित हुआ। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास 1966 से लेकर 1986 तक चली मिज़ो विद्रोह पर केंद्रित उपन्यास है। इसके साथ ही उपन्यास में लेखिका ने मिज़ोरम

के ईस्ट लुङदार गाँव में रमबुआई के सबसे काले और अंधेरे समय का तथ्यपरक वर्णन किया है तथा महिलाओं की आवाज को उठाया है जो उस दौर में अत्याचारों की सबसे बुरी शिकार रहीं। लेखिका ने भारतीय सेना और भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों, दोनों के हमलों के कारण ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों की पीड़ा का भी मार्मिक वर्णन किया है। इसके साथ ही यह उपन्यास मिज़ोरम रमबुआई की पृष्ठभूमि पर आधारित एक प्रेम कहानी भी है। यह उपन्यास रमबुआई पर आधारित एक महत्वपूर्ण उपन्यास है जो केवल नायक-नायिका की पीड़ा को ही नहीं, बल्कि आम मिज़ो लोगों की पीड़ा को भी व्यक्त करता है। लेखिका ने इस उपन्यास में विद्रोह के दौरान होने वाले अत्याचारों, मिज़ो विद्रोहियों और भारतीय सेना के जवानों के प्रति गाँव वासियों के मतों का व्यापक चित्रण किया है। इस तरह उन्होंने मिज़ो विद्रोह के कारण मिज़ो लोगों की दुर्दशा और उनके जीवन की वास्तविकता को व्यक्त करने का प्रयास किया है। लेखिका ने मिज़ो विद्रोह के इतिहास के साथ विद्रोह के चश्मदीद बुज़ुर्गों से साक्षात्कार लेकर इस उपन्यास को इतिहास और कल्पना के मेल से गढ़ा है और मिज़ो विद्रोह के दौरान लोगों की पीड़ा को चित्रित करने की पूरी कोशिश अपने उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' में की है।

माफेली द्वारा लिखे गए उपन्यास सच्ची कहानियाँ न होते हुए भी उनके अपने जीवन की त्रासदियों, गरीबी, परिवार के टूटने और विश्वासघात के अनुभवों पर आधारित हैं। यह कहा जा सकता है कि उनके पहले तीन उपन्यासों के प्रत्येक पात्र के चरित्र-चित्रण में लेखिका का अपना अनुभव छिपा हुआ है। अर्थात उनके उपन्यासों में यथार्थ को कल्पना के साथ खूबसूरती से मिलाया गया है। यही कारण है कि पहले के मिज़ो उपन्यासों के विपरीत, जिनमें अक्सर एक आदर्श नायिका, एक अच्छा कहानीकार होता था, माफेली के उपन्यास एक नई शैली लेकर आए। इसी वजह से लेखिका को प्रशंसा के साथ-साथ कई आलोचनाओं का सामना भी करना पड़ा।

संदर्भ

[1] Dr. K.C. Vannghaka, Literature Zungzam, पृष्ठ सं.25 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[2] B. Lalthangliana, Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature, पृष्ठ सं. 181 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[3] Dr. K.C. Vannghaka, Mizo Novel Zirchianna (A critical Study of Mizo Novel), पृष्ठ सं .91 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[4] Dr. K.C. Vannghaka, Literature Zungzam, पृष्ठ सं .25 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[5] Dr. Zoramdinthara, Mizo Fiction: Emergence and Development, पृष्ठ सं. 48 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[6] Lal Rinawma, Mizo Novel lo chhuah leh than zel dan Thu leh Hla, A monthly Literary Journal of the Mizo Academy of Letters, January, 2012, पृष्ठ सं. 21 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[7] Dr. Laltluangliana Khiangte, A study of Mizo Novel, पृष्ठ सं. 4 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[8] R. Lalianzuala, Mizo Novel Golden Jubilee (1937-1987) Souvenier, पृष्ठ सं. 96 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[9] B. Lalthangliana, Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature, पृष्ठ सं. 207 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[10] Dr. Zoramdinthara, Mizo Fiction: Emergence and Development, पृष्ठ सं. 88 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[11] B. Lalthangliana, Mizo novel lo chhuah tan dan leh hmasawn zel thu (history of Mizo Novel 1937-87) R. Lalianzuala, Mizo Novel Golden Jubilee (1937-1987) Souvenier, पृष्ठ सं. 102 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[12] Dr. Zoramdinthara, Mizo Fiction: Emergence and Development, पृष्ठ सं. 20 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[13] वही, पृ. 123 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[14] Dr. Laltluangliana Khiangte, Mizo thu leh hla chanchin, Department of Mizo, Mizoram University, 2022, पृष्ठ सं. 231-237 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[15] Dr. Zoramdinthara, Mizo Fiction: Emergence and Development, पृष्ठ सं. 20 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[16] वही, पृ. 24 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[17] वही, पृ. 75-76 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[18] वही, पृ. 184 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[19] वही, पृ. 185-186 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[20] Mizo Studies, July – September 2012, Department of Mizo, Mizoram University, pp.41 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[21] वही, पृ. 46 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[22] वही, पृ. 51 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[23] Margaret Ch. Zama & C. Lalawmpuia Vanchiau, After Decades of Silence, Voices from Mizoram, A brief Review of Mizo Literature, 2016, पृष्ठ सं. 57 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[24] C. Lalawmpuia Vanchiau, Rambuai Literature, Lengchhawn Press, पृष्ठ सं. 37-38 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[25] वही, पृ. 41-43, (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[26] वही, पृष्ठ सं. 109 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[27] Mizo Studies, July – September 2020, Department of Mizo, Mizoram University, पृष्ठ सं. 355 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[28] K.C Lalthansanga, Women's perspective of Mizo Insurgency in Rinawmin and Silaimu Ngaihawm by James Dokhuma, Published Ph.D Thesis submitted to MZU, Aizawl, 2018

[29] Dr. Laltluangliana Khiangte, A study of Mizo Novel, पृष्ठ सं. 19 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[30] P. Lalnithanga, Emergence of Mizoram (Third Edition), पृष्ठ सं. 97

[31] C. Lalawmpuia Vanchiau, Rambuai Literature, पृष्ठ सं. 104 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[32] वही, पृष्ठ सं. 131 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[33] https://www.oneindia.com/2007/08/26/physically-challenged-novelist-to-publish-second-masterpiece-1188126392.html

अध्याय- 2

मिज़ो विद्रोह का स्वरूप

2. मिज़ो विद्रोह का स्वरूप

मिज़ोरम के इतिहास में 1966 से 1986 अर्थात् दो दशकों की अवधि को 'मिज़ो रमबुआई का काल' अर्थात् 'मिज़ो विद्रोह/अशांति का काल' माना जाता है। 'मिज़ो विद्रोह' मिज़ो इतिहास की सबसे महत्त्वपूर्ण एवं भयावह घटना है। 1 मार्च, 1966 को मिज़ोरम के एक नये राजनीतिक दल 'मिज़ो नैशनल फ्रन्ट' (एम.एन.एफ.) के अध्यक्ष पु ललदेङा के नेतृत्व में भारतीय संघ से मिज़ोरम की पूरी तरह स्वतंत्रता की घोषणा के साथ विद्रोह की शुरुआत हुई। 30 जून, 1986 को नयी दिल्ली में भारत सरकार और एम.एन.एफ. के बीच शांति समझौते (Mizoram Peace Accord) पर हस्ताक्षर के साथ मिज़ो विद्रोह का अंत हुआ। असल में मिज़ोरम के इस विद्रोह की संभावना 1940 के दशक में ब्रिटिश राज़ से भारत की स्वतंत्रता की घोषणा के साथ ही दिखायी पड़ने लगती है। 'लुशाई हिल्स की प्रशासनिक रिपोर्ट 1945-1946' के अनुसार "भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के साथ ही लुशाई हिल्स में राजनीतिक ताकतें जागृत होने लगी।"[1]

मिज़ोरम पर ब्रिटिश के आगमन एवं शासन से पूर्व, मिज़ो लोगों के अलग-अलग गाँव में उनके अपने 'मुखिया' होते थे, जिसे मिज़ो में 'लल' कहा जाता था, जिसका अर्थ है 'राजा' या 'स्वामी'। वे अपने व्यक्तिगत गुणों के आधार पर अपनी स्थिति बनाए रखते थे। इन मुख्यों के अपने अधिकार क्षेत्र पर अधिक शक्ति थी, साथ ही राजनीतिक, न्यायपालिका, धर्म सहित परंपराओं और रीति-रिवाजों में उनका अपना प्रशासन था। परंतु ब्रिटिश के आगमन के बाद उनके सारे अधिकार और प्रशासन समाप्त होने लगे। मिज़ो नैशनल फ्रंट के जनरल हेडक्वार्टर, आइज़ोल मिज़ोरम द्वारा 30 अक्टूबर, 1965 को भारत के प्रधानमंत्री को सौंपे गए मेमोरेंडम के अनुसार –

"अति प्राचीन काल से मिज़ो लोग विदेशी हस्तक्षेप के बिना पूर्ण स्वतंत्रता में रहते थे, विभिन्न कुलों के प्रमुख सर्वोच्च अधिकार के साथ अलग-अलग पहाड़ियों और घाटियों पर शासन करते थे और उनका प्रशासन बहुत हद तक अतीत के ग्रीक शहर-राज्य की तरह था। उनके क्षेत्र या उसके किसी भी हिस्से पर उनके पड़ोसी राज्य द्वारा कभी भी विजय या अधीनता नहीं की गई थी।

हालांकि, पड़ोसी राज्य के साथ सीमा विवाद और सीमावर्ती संघर्ष के कारण अंततः 1844 में ब्रिटिश सरकार को इस मामले में हस्तक्षेप करना पड़ा।"[2]

मिज़ोरम राज्य को पहले 'लुशाई हिल्स' के नाम से जाना जाता था। पहला ब्रिटिश आगमन 1871 से 1872 के बीच हुआ जिसे अंग्रेजों ने 'द लुशाई एक्सपेदिशोन,1871-1872' नाम दिया। इस दौरान सीमावर्ती क्षेत्रों में अपेक्षाकृत शांति बनी रही लेकिन उसके साथ-साथ छोटे-मोटे हमले भी हुए। परंतु 1888 में हमले अधिक बढ़ने लगी, जिसके कारण 1889 में फिर से अंग्रेजों का आगमन हुआ जिसे 'द चीन-लुशाई एक्सपेदिशोन,1889-90' नाम दिया। मिज़ोरम को पूर्ण रूप से 1895 से ब्रिटिश शासन के अधीन लाया गया, परंतु इसके सटीक समय में मतभेद हैं। जे.वी.ह्लुना की पुस्तक 'द मिज़ो अपराइज़िंङ' में 6 सितंबर, 1895 दिया गया है - *"मिज़ोरम को औपचारिक रूप से 6 सितंबर 1895 को ब्रिटिश प्रशासन के अधीन लाया गया था।"*[3] जबकि मिज़ो नैशनल फ्रंट के जनरल हेडक्वार्टर, आइज़ोल मिज़ोरम द्वारा 30 अक्टूबर, 1965 को भारत के प्रधान मंत्री को सौंपे गए मेमोरेंडम के अनुसार 'दिसंबर,1895' दिया गया है - *"दिसम्बर 1895 में मिज़ो को ब्रिटिश राजनीतिक नियंत्रण में लाया गया, जब देश के आधे से थोड़ा अधिक हिस्से को मनमाने ढंग से अलग कर दिया गया और उसका नाम लुशाई हिल्स (अब मिज़ो जिला) रख दिया गया तथा उनकी शेष भूमि को उनकी इच्छा या सहमति प्राप्त किए बिना, केवल प्रशासनिक सुविधा के उद्देश्य से, उनके हाथों से छीनकर आसपास के लोगों को दे दिया गया।"*[4] अतः अंग्रेज 1889 से लेकर 1947 में भारत के ब्रिटिश शासन से आज़ाद होने तक मिज़ोरम में रहें।

भारत को 1947 में ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता प्राप्त हुई और इसके साथ मिज़ो जिला, पहले जिसे लुशाई हिल्स जिला कहा जाता था, भारत के असम राज्य सरकार का एक स्वायत्त जिला बन गया। इस स्वतंत्रता प्राप्ति ने मिज़ो लोगों के शिक्षित वर्ग के मन को प्रभावित किया और परिणाम यह हुआ कि उनमें राष्ट्रवाद और देशभक्ति की भावनाएँ जागृत हुई और उसके साथ राजनीतिक चेतना उत्पन्न हुआ। भारत सरकार अधिनियम, 1919 के तहत लुशाई हिल्स और लगभग सभी पहाड़ी

जिलों को 'पिछड़ा क्षेत्र' घोषित कर दिया। इसके बाद, लुशाई हिल्स को भारत सरकार अधिनियम, 1935 के तहत 'बहिष्कृत क्षेत्र' में रखा गया, जिसने मिज़ो लोगों को भारत के अन्य लोगों से अलग कर दिया इसके साथ ही मिज़ो की अलग संस्कृति, रीति-रिवाज, भाषा और परंपराएँ थी जो भारतीय लोगों की संस्कृति से बहुत ही अलग थी। इसलिए प्रशासन के संदर्भ में मिज़ो हिल्स के भविष्य को तैयार करने की आवश्यकता महसूस की गई।[5] भारत के साथ घनिष्ठ संपर्क के दौरान मिज़ो लोग भारतीयों के साथ या भारत में घर जैसा महसूस नहीं कर पायें।[6]

भारत की स्वतंत्रता से उभरी राजनीतिक चेतना के उदय के साथ ही मिज़ो राजनीतिक नेताओं के बीच अलग-अलग विचार उभरने लगे और राजनीतिक भ्रम की स्थिति पैदा हो गयी। कुछ लोग भारत के बजाय बर्मा में शामिल होना चाहते थे, जबकि अन्य लोग भारत का हिस्सा बने रहना चाहते थे। वहीं, कुछ लोग भारतीय संघ का हिस्सा बने रहने के बजाय स्वनिर्धारित होना चाहते थे।[7] कुछ लोग पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में शामिल होना चाहते थे क्योंकि उनका कहना था कि यह मिज़ोरम के निकट है और आसानी से उपयोगी चीजें एकत्रित की जा सकती हैं। कुछ लोगों का मानना था कि ब्रिटिश सरकार के अधीन एक 'क्राउन कॉलोनी' के रूप में रहना भी अच्छा होगा।[8] मिज़ो यूनियन मेमोरेंडम, 26 अप्रैल, 1947 के अनुसार 'उस समय की एक बड़ी राजनीतिक दल, मिज़ो यूनियन के अधिकांश नेता भारत में शामिल होने के पक्ष में थे' जबकि अन्य स्वतंत्रता के पक्ष में थे। मिज़ो यूनियन के प्रभाव में, सभी प्रतिनिधियों और प्रमुख नेताओं ने इस शर्त पर भारतीय संघ में शामिल होने का निर्णय लिया कि मिज़ो को 'यदि वे चाहें तो 10 वर्षों के बाद भारतीय संघ से बाहर निकलने का अधिकार होगा।'[9] सी. पाह्लीरा, जो कभी उस दल के नेता थे, ने बाद में अपना विचार प्रकट करते हुए कहा कि "ईश्वर हमें सहीं समय पर स्वतंत्रता देगा; हम इसे हिंसा के माध्यम से प्राप्त नहीं कर सकते।"[10] इसी प्रकार उनमें से कई का मानना था कि 'कई वर्षों के बाद, उन्हें भारतीय संघ से स्वतंत्रता प्राप्त करने का मौका मिल सकता है'। अतः उन्होंने मिज़ोरम की बहतर भविष्य के लिए पहले भारत में शामिल होने का फैसला किया।[11] लेकिन, मिज़ो हिल्स को बहिष्कृत क्षेत्र में रखने के करने, भारत के संविधान का निर्माण करने वाली संविधान सभा में कोई मिज़ो प्रतिनिधि नहीं था,

इसलिए मिज़ो के लिए, यह संविधान एक "थोपा हुआ संविधान" के रूप में माना गया और यहीं मिज़ोरम संघर्ष का एक मुख्य कारण भी था।[12] एम.एन.एफ. पार्टी बनाने वालों में से एक श्री सी. हरमना थे, जिनके अनुसार, "मैं सपनों में विश्वास रखने वाला हूँ। सपने में मुझे एक ऐसी भूमि दिखी जो स्वतंत्र और स्वनिर्धारित थी और मुझे उस स्वप्नलोक में रहने की बहुत इच्छा हुई। मैंने सोचा और देखा कि हम सब ईसाई होने के नाते बाइबल को अपने संविधान के रूप में उपयोग करेंगे।"[13] राजनीतिक चेतना से प्रेरित राष्ट्रवाद और देशभक्ति से राजनीतिक स्वनिर्मित की पुकार अब लोगों की एकमात्र इच्छा और प्रेरणा हो गई थी।[14]

मिज़ो और अन्य पहाड़ी जनजातियाँ भारतीय संविधान की छठी अनुसूची के प्रावधानों से असन्तुष्ट थे। असम के राजनेताओं के बीच खासी और मिज़ो जनजाति के लिए विशेष प्रावधानों को हटाने के लिए राय व्यक्त किया गया था क्योंकि उन्हें शेष भारत के साथ समान स्तर पर आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त रूप से उन्नत माना जाता था। इसके साथ ही 1960 में, असम विधानसभा के आधिकारिक भाषा अधिनियम पारित किया गया, जिसने असमिया भाषा को आधिकारिक भाषा घोषित कर दिया। सरकारी नौकरियों के उम्मीदवारों के लिए भाषा का ज्ञान अनिवार्य हो गया था। मिज़ो जनजाति ने महसूस किया कि यह अधिनियम उन्हें सरकारी भागीदारी से बाहर करने का एक माध्यम था।[15] इसी कारण मिज़ो लोगों में अलगाववादी भावना अधिक बढ़ गया।

1950 से लेकर 1960 के बीच भारतीय राष्ट्रवाद और संस्कृति ने मिज़ो के मन को गहरी तरह प्रभावित किया। उस समय के युवा पीढ़ी, जो पढ़ाई के लिए बाहर जाते थे, वे मिज़ो संस्कृति और रीति-रिवाजों का तिरस्कार करने लगे तथा गैर मिज़ो के व्यवहार और रहन-सहन की नकल करने लगे थे इसलिए मिज़ो संस्कृति और परंपराओं की रक्षा के लिए 1958 में 'मिज़ो कल्चर सोसाइटी' का गठन किया गया और इसका मुख्य उद्देश्य युवा पीढ़ी में राष्ट्रवादी भावना को विकसित करना था।[16] इस दौरान मिज़ोरम में 'माउताम' नामक भीषण अकाल फिर से आने वाला था, जिसकी खबर असम सरकार को दी गई। मिज़ो लोगों का मानना था कि मिज़ोरम में 'माउताम' नामक 'भीषण

अकाल' 50 वर्ष के अंतराल में आता है। 'माउताम' अकाल पहली बार 1861 और दूसरी बार 1911 में हुआ था। चूँकि माउताम 50 वर्ष के अंतराल में आता है, इसलिए यह निश्चित था कि तीसरा माउताम 1961 में आएगा। परंतु असम सरकार और भारतीय राजनेताओं को उनपर विश्वास नहीं हुआ और उन्हें लगा कि यह सब केवल मिज़ो लोगों के अंधविश्वास थी।[17] इस कारण मिज़ो डिस्ट्रिक्ट काउन्सल द्वारा असम राज्य सरकार से प्रारम्भिक उपायों के लिए 1,50,000 रुपयों[18] की अनुदान के लिए किए गए अनुरोध को अस्वीकार कर दिया गया।

1959 में पूरे मिज़ोरम में 'माउताम' नामक भीषण अकाल पड़ा। मिज़ो इसे 'माउताम ट्रामपुई' कहते हैं। 'माउताम' का अर्थ है 'बाँस के फूल का खिलना' और 'ट्रामपुई' का अर्थ है 'अकाल का कहर'। बाँस के इन फूलों और बीजों को खाने से चूहों की प्रजनन क्षमता बढ़ जाती है। परिणामतः चूहों की आबादी में भारी वृद्धि हो गई। ये असंख्य चूहे अनाज चट कर गये और फसलों को बर्बाद कर दिया। इससे मिज़ोरम में अकाल की स्थिति उत्पन्न हो गयी। अकाल अपने-आप में विद्रोह का कारण नहीं था। मिज़ोरम तब असम राज्य का हिस्सा था। अकाल की इस त्रासद स्थिति में असम सरकार की उपेक्षा से मिज़ो लोगों के मन में असंतोष पैदा हुआ तथा उनके भीतर अलगाववादी भावनाएँ बढ़ने लगीं। अकाल से पीड़ित मिज़ो लोगों की मदद के लिए 1960 में ललदेङा के नेतृत्व में मिज़ो नैशनल फैमिन फ्रन्ट (एम.एन.एफ.एफ.) नामक एक गैर-सरकारी संगठन की स्थापना की गयी। इस संगठन का मुख्य उद्देश्य 'माउताम' अकाल पीड़ित मिज़ो लोगों को सामग्री की आपूर्ति के लिए बहतर व्यवस्था स्थापित करना था। और इसके साथ ही इस संगठन के नाम में 'नैशनल' (राष्ट्रीय) शब्द को जानबूझकर इसलिए जोड़ दिया गया था ताकि मिज़ो लोगों के बीच राष्ट्रवाद की भावना को लोकप्रिय बनाया जा सके।[19] 1961 में जब 'माउताम' भीषण अकाल समाप्त हुआ, तब एम.एन.एफ.एफ. के नेताओं ने मिज़ो लोगों में अलगाववादी भावना को और अधिक बढ़ावा देना शुरू किया, इसलिए इस उद्देश्य से एम.एन.एफ.एफ. का नाम बदलकर मिज़ो नैशनल फ्रन्ट (एम.एन.एफ.) कर दिया गया और इसे एक राजनीतिक दल में रूपांतरित कर दिया।

एम.एन.एफ. के अध्यक्ष पु ललदेङा के अनुसार एम.एन.एफ. की स्थापना 22 अक्टूबर को हुई थी, जबकि एम.एन.एफ. के एक सदस्य आइजक ज़ोउलिआना ने इसकी तारीख 24 अक्टूबर बतायी है और ए. रोउह्लूना ने 21 अक्तूबर। आर.वानलोमा और सी. हरमना के अनुसार एम.एन.एफ. की स्थापना 28 अक्टूबर को हुई थी।[20]

शुरुआत में, एम.एन.एफ. का गठन एक क्षेत्रीय राजनीतिक दल के रूप में किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य मिज़ोरम और के पड़ोसी राज्य में रहने वाली सभी मिज़ो जातियों के लिए पूर्ण रूप से स्वतंत्रता प्राप्त करना था। लेकिन इसे लिखित रूप में रखने के लिए राजनीतिक आत्मनिर्णय का प्रयोग किया। 2-3 अप्रैल, 1962 को पहला एम.एन.एफ. सम्मेलन आयोजित किया गया।[21] इस सम्मेलन में उनके तीन मुख्य उद्देश्य तय किए गए –

(अ) सर्वोच्च संप्रभुता की सेवा करना और सभी मिज़ो को एक राजनीतिक सीमा के तहत रहने के लिए एकजुट करना।

(ब) मिज़ो स्थिति का उत्थान करना और इसे उच्चतम स्तर तक विकसित करना।

(स) ईसाई धर्म को संरक्षित और सुरक्षित रखना।[22]

एम.एन.एफ. के लोग अहिंसा का प्रयोग करके इन उद्देश्यों को प्राप्त करना चाहते थे। उनका उद्देश्य, विशेषकर सभी मिज़ो जनजातीय को एक ही राजनीतिक शासन के नीचे एकीकरण करने का उद्देश्य सभी मिज़ो उप-जनजातियों में बहुत ही लोकप्रिय हुई। इस कारण एम.एन.एफ. ने जल्द ही पूरे मिज़ोरम के हृदय पर कब्ज़ा कर लिया और एक दुर्जेय ताकत बन गए। एम.एन.एफ. की बढ़ती लोकप्रियता और उसके कुछ सदस्यों द्वारा अपनाई गई रणनीति ने कुछ प्रबद्ध मिज़ो लोगों के मन में भय पैदा भी किया। जनवरी 1963 में चुराचांदपुर, मणिपुर में तटस्थ मिज़ो लोगों का एक सम्मेलन बुलाया गया जिसमें मिज़ो यूनियन और एम.एन.एफ. दोनों के नेता मौजूद थे। इस सम्मेलन में मिज़ो यूनियन के नेताओं ने राज्य के लिए आंदोलन को स्थगित करने पर सहमति व्यक्त की और

एम.एन.एफ. ने भारतीय संघ से मिज़ो हिल्स को अलग करने की अपनी माँग को छोड़ने तथा अपने लक्ष्यों को रिपोर्ट करने के लिए संवैधानिक तरीके अपनाने पर सहमति व्यक्त की। इस सम्मेलन ने पूर्वोत्तर भारत में मिज़ो लोगों के रहने के क्षेत्रों के एकीकरण के लिए काम करने पर सहमति व्यक्त की गई और मिज़ो यूनियन ने अगस्त, 1965 में प्रधान मंत्री लाल बहादुर शास्त्री को मिज़ो राज्य के गठन के लिए एक मेमोरेंडम सौंपा। प्रधानमंत्री ने यह आश्वासन दिलाया कि वह हिल एरिया कमीशन (पटास्कर आयोग) के अध्यक्ष एच.वी. पटास्कर से बात करेंगे। लेकिन प्रधानमंत्री के अचानक निधन और पटास्कर द्वारा अलग राज्य की माँग को अस्वीकार करने के बाद मिज़ो यूनियन और एम.एन.एफ. दोनों फिर से सक्रिय हो गये। मिज़ो यूनियन ने पटास्कर आयोग का बहिष्कार किया और एम.एन.एफ. ने 30 अक्टूबर 1965 को प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी को एक मेमोरेंडम सौंपकर मिज़ो लोगों को स्वतंत्रता देने की माँग की।[23]

1966 का मिज़ो विद्रोह कई कारणों से हो सकता था। जब पु ललदेङा के नेतृत्व में एम.एन.एफ. ने भारत से मिज़ोरम की स्वतंत्रता की घोषणा की थी तब उन्हें यह महसूस हुआ कि भारत सरकार मिज़ोरम पर शासन करने के लिए योग्य नहीं है। एम.एन.एफ. द्वारा 'स्वतंत्रता की घोषणा' भारतीय सरकार के खिलाफ दो दशक लंबे संघर्ष की शुरुआत थी जिसमें मिज़ो की राष्ट्रीयता और भारत और भारतीयों से उनकी विशिष्टता पर जोर दिया गया था। स्वतंत्रता के अलावा, एम.एन.एफ. की विचारधारा 'ग्रेटर मिज़ोरम' के विचार पर भी आधारित थी, अर्थात् पड़ोसी देशों और राज्यों में बिखरे हुए विभिन्न मिज़ो 'जनजातियों' और कुलों को एक छत के नीचे लाना।[24] 'माउताम' अकाल के विनाशकारी प्रभावों ने मिज़ो लोगों को यह विश्वास दिलाया कि असम राज्य और भारत की केंद्र सरकार उनकी दुर्दशा के प्रति पूरी तरह उदासीन और उनकी पीड़ा के प्रति असंवेदनशील थी। एम.एन.एफ. द्वारा यह प्रचारित किया गया तथा उनके अध्यक्ष पु ललदेङा ने भी इस बात पर जोर दिया कि मिज़ो जाति भारत के नहीं हैं और मिज़ो एक अलग राष्ट्र हैं, भारत सरकार असम सरकार के माध्यम से हमें आत्मसात करने की कोशिश कर रही है और यहाँ तक कि हमारा ईसाई धर्म भी खतरे में हैं। इसके लिए उन्होंने बताया कि "भारतीय अधिकारी रविवार को

आधिकारिक यात्रा के लिए मिज़ो हिल्स आते थे ताकि मिज़ो ईसाईयों के पास ईश्वर की आराधना करने के लिए कम समय हो या बिल्कुल भी समय न हो। वे चाहते थे कि हम अपने पवित्र दिनों को कम महत्त्व दें।" एम.एन.एफ. ने धार्मिक मुद्दे को भी अपना हथियार बनाया और भारत को हिंदुओं का तथा मिज़ोरम को ईसाईयों का देश बताया।[25] इसके साथ कई अन्य कारकों ने विद्रोह की आग को भड़काने और मिज़ो लोगों के दिलों में असम और भारत के खिलाफ असंतोष की भावनाओं को तीव्र करने का काम किया। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, असमिया को आधिकारिक भाषा घोषित किया गया था। एक और कारण यह था कि 1964 में असम रेजिमेंट की मिज़ो-प्रभुत्व वाली दूसरी बटालियन का विघटन हुआ, जिसके कारण कई प्रशिक्षित सैनिक बेरोजगार और निराश हो गए थे। लेकिन बाद में सैनिकों का यह समूह मिज़ो नैशनल आर्मी (एम.एन.ए.) नामक एम.एन.एफ. के सशस्त्र विंग की रीढ़ बन गए।[26]

30 अक्टूबर, 1965 को भारत के प्रधानमंत्री को सौंप गया मेमोरेंडम यह समझने में मदद करती है कि एम.एन.एफ. (मिज़ो) ने अपनी पहचान को कैसे समझा है:

"अति प्राचीन काल से मिज़ो लोग विदेशी हस्तक्षेप के बिना पूर्ण स्वतंत्रता में रहते थे, विभिन्न कुलों के प्रमुख सर्वोच्च अधिकार के साथ अलग-अलग पहाड़ियों और घाटियों पर शासन करते थे और उनका प्रशासन बहुत हद तक अतीत के ग्रीक शहर-राज्य की तरह था। उनके क्षेत्र या उसके किसी भी हिस्से पर उनके पड़ोसी राज्य द्वारा कभी भी विजय या अधीनता नहीं की गई थी। हालांकि, पड़ोसी राज्य के साथ सीमा विवाद और सीमावर्ती संघर्ष के कारण अंततः 1844 में ब्रिटिश सरकार को इस मामले में हस्तक्षेप करना पड़ा। दिसम्बर 1895 में मिज़ो को ब्रिटिश राजनीतिक नियंत्रण में लाया गया, जब देश के आधे से थोड़ा अधिक हिस्से को मनमाने ढंग से अलग कर दिया गया और उसका नाम लुशाई हिल्स (अब मिज़ो जिला) रख दिया गया तथा उनकी शेष भूमि को उनकी इच्छा या सहमति प्राप्त किए बिना, केवल प्रशासनिक सुविधा के उद्देश्य से, उनके हाथों से छीनकर आसपास के लोगों को दे दिया गया। मिज़ो लोग बिखरे हुए हैं, क्योंकि वे विभाजित

हैं, वे अपनी परंपरा, रीति-रिवाज, संस्कृति, भाषा, सामाजिक जीवन और धर्म के मजबूत बंधन से अविभाज्य रूप से एक साथ जुड़े हुए हैं, चाहें वे कहीं भी हों। ब्रिटिश सरकार के आगमन से पहले भी मिज़ो एक अलग राष्ट्र के रूप में खड़ा था, जिसकी राष्ट्रीयता भारत से अलग थी। संक्षेप में, वे एक अलग जाति हैं, जिसे ईश्वर और प्रकृति ने बनाया, ढाला और पोषित किया है।"[27]

एम.एन.एफ. के नेता स्पष्ट रूप से इतिहास का सहारा लेते हुए स्वतंत्रता पर अपना अधिकार का दावा करते थे। अपने अतीत को ऐतिहासिक बनाने में 'मिज़ो' पहचान को परमेश्वर द्वारा दिया हुआ और 'आदिम' माना जाता था। विभिन्न कुलों के मुख्यों के बीच लड़ाईयों के पिछले इतिहासों को इनकार नहीं किया गया था, लेकिन इस बात पर जोर दिया गया था कि वे सभी स्वयं को 'मिज़ो' के रूप में मान्यता देते थे। यह दावा करते हुए कि औपनिवेशिक हस्तक्षेप ने उनके क्षेत्र को दो भागों में विभाजित कर दिया था, और वे अपने लिए एक प्राचीन क्षेत्रीय पहचान का भी दावा कर रहे थे जो राज्य के हस्तक्षेप द्वारा बनाई गयी सीमाओं को मान्यता नहीं देते थे, चाहे वे औपनिवेशिक हो या उत्तर-औपनिवेशिक। इस तरह बनाए गए विभिन्न टुकड़ों के बीच संबंध बनाए रखने में, उन्होंने अपनी 'एकजुट' पहचान की 'आदिमता' पर जोर देना चुना।[28]

एम.एन.एफ. अपने हिंसक गतिविधि शुरू करने से पहले अपने राजनीतिक आंदोलन के लिए विदेशी सहायता की तलाश में था। अशान्ति फैलने से पहले, 1963 में एम.एन.एफ. के नेता, ललदेङा , ललनूनमोईआ और साईङहूआका, राजनीतिक आंदोलन के समर्थन पाने के लिए पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) गए थे। उन्हें पाकिस्तानी एजेंटों द्वारा हथियारों और गोला-बारूद की आपूर्ति के साथ-साथ आवश्यकता के अनुसार हर संभव में मदद करने का आश्वासन दिया गया था और उन्होंने एम.एन.एफ. वॉलनटियरों को सशस्त्र प्रशिक्षण और आवश्यकता पड़ने पर आश्रय देने का भी आश्वासन दिया था।[29] यह ज्ञात होता है कि शुरुआत से ही अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एम.एन.एफ. ने सशस्त्र संघर्ष करने का प्रयास किया था लेकिन इसे खुले तौर पर वकालत नहीं की गयी थी। इसलिए लोकप्रिय समर्थन जुटाने के लिए भारतीय संविधान के तहत आयोजित चुनाव में

भाग लिए थे। 1965 में असम की अपनी यात्रा के दौरान प्रधानमंत्री लालबहादुर शास्त्री को सौंपे गए मेमोरेंडम में एम.एन.एफ. द्वारा लिखा गया था कि अपनी मांगों को पूरा करने के लिए अहिंसक तरीका अपनाएंगे। मेमोरेंडम में एम.एन.एफ. ने कहा हैं कि – "...एकमात्र आकांक्षा और राजनीतिक नारा मिज़ोरम का निर्माण है, एक स्वतंत्र और संप्रभु राज्य… मिज़ो लोग अपने संघर्ष में अहिंसक दल के लिए प्रतिबद्ध हैं और किसी अन्य तरीके का उपयोग करने का कोई इरादा नहीं है…"

1963 में एम.एन.एफ. की महासभा (जनरल असेंबली) ने घोषणा किया कि एम.एन.एफ. के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एम.एन.एफ. की स्वतंत्रता लड़ाई अहिंसक होगा और साधन के रूप में वॉलनटियरों की भी सिफारिश किया गया।[30] 22 अक्टूबर 1963 को मिज़ो नैशनल वॉलनटियर्स (एम.एन.वी) की स्थापना हुई और वॉलनटियर की भर्ती शुरू कर दी गयी जिसमें दोनों लड़के और लड़कियाँ शामिल थे। अहिंसक तरीकों को अपनाने की बात जारी रखते हुए वॉलनटियर्स की स्थापना के साथ सशस्त्र विद्रोह की तैयारी भी चल रही थी। वॉलनटियरों को जंगलों में हथियार चलाने का प्रशिक्षण दिया जाता था। इसके साथ ही उन्हें यह भी सिखाया गया कि भारत की स्वतंत्रता मिज़ो लोगों की आज़ादी का दिन न होकर, भारत की गुलामी होने की शुरुआत का दिन है। यह ऐसी सीख थी जो मिज़ो राष्ट्र की स्थापना के लिए महत्त्वपूर्ण थी।[31] एम.एन.एफ. वॉलनटियर्स को सेक्शन, प्लाटून, कंपनी और बटालियन में गठित किया गया था। आइज़ोल क्षेत्र के वॉलनटियर्स को 'पसलठ्रा (वीर) वानापा' के नाम पर 'वानापा' बटालियन कहा जाता है। 1965 के अंत में 'वी' बटालियन से स्पेशल फोर्स (एस एफ) का गठन किया गया और मेजर लललिआनअ, दुरत्लाङ मुख्य के वंश, बर्मा आर्मी सार्जेंट पेंशनर को कमांडर के रूप में नियुक्त किया गया था। स्पेशल फोर्स को कई सेक्शन में विभाजित किया गया। प्रत्येक सेक्शन में केवल चार सदस्य होते थे और सबसे निचला पद सार्जेंट होता था। यह माना जा सकता है कि लगभग मिज़ोरम के हर कोने में मिज़ोरम नैशनल वॉलनटियर बटालियन की स्थापना की गयी थी। इस प्रकार पचास से अधिक बटालियनों का गठन किया गया और 15000 वॉलनटियर्स थे।[32] यह बताया गया है कि अहिंसा के साधनों की वकालत करते हुए इस तरह की सशस्त्र तैयारी का कारण किसी भी स्थिति के लिए उनकी तैयारी थी।[33]

1965 में मुआललुङ गाँव के पु थङह्लेईआ को कथित तौर पर यह सपना आया कि यदि राजनीतिक नेता एकजुट नहीं हो सके तो मिज़ो हिल्स में रक्तपात होगा। इसलिए मिज़ो यूनियन, ई.आई.टी.यू.(पूर्वी भारत जनजातीय संघ) और एम.एन.एफ. के नेताओं के बीच 15-16 मार्च, 1965 को एक बैठक आयोजित किया गया जिसका उद्देश्य एक साथ काम करने का तरीका खोजना और उन चीजों से बचना था जो कई लोगों के अनुसार आगे चलकर और अधिक पीड़ा का कारण बन सकती हैं। मिज़ो यूनियन और ई.आई.टी.यू. के नेता एक साझा आधार खोजने के लिए तैयार थे लेकिन एम.एन.एफ. के अध्यक्ष पु ललदेङा इस बात पर आड़े थे कि उनकी पार्टी एक कदम भी पीछे नहीं हट सकती। इसके बाद एम.एन.एफ. वॉलन्टियर्स को यह विश्वास दिलाया गया कि यदि वे कम से कम 48 घंटे तक आइज़ोल में एम.एन.एफ. का झण्डा फहराते रहें, तो स्वतंत्र मिज़ोरम को अन्य विश्व शक्तियों द्वारा मान्यता दी जाएगी और उनके उद्देश्य को मजबूत करने के लिए सहायता भेजी जाएगी।[34]

एम.एन.एफ. के नेताओं द्वारा मिज़ो लोगों की इच्छाओं और मिज़ोरम की स्थिति को भारत सरकार के राजनीतिक नेताओं और अधिकारियों तक मौखिक रूप से स्पष्ट रूप से पहुँचाया गया। उन्होंने अपने बातों को शांतिपूर्ण तरीके से हल करने की कोशिश कि, लेकिन केंद्र सरकार ने उनके प्रति उदासीनता दिखाई। एम.एन.एफ. के साथ शांतिपूर्ण बातचित करने के बजाय भारत सरकार ने दुर्भाग्य से मिज़ो लोगों की राजनीतिक इच्छा को दबाने के लिए सैन्य शक्ति चुना। इसलिए एम.एन.एफ. ने अपने अधिकारियों और सम्मान की रक्षा के लिए आवश्यक अवधि के लिए सितंबर, 1965 को '**मिज़ोरम की अनंतिम सरकार**' की स्थापना किया गया।[35] इस अनंतिम सरकार के लिए एक संविधान तैयार किया गया जिसकी शुरुआती पंक्तियाँ इस प्रकार थी: "प्रभु यीशु मसीह मिज़ोरम के मुखिया हैं और पवित्र बाइबल उसके प्रशासन की नींव है।" मिज़ोरम की सरकार अमरीका सरकार के मॉडल पर आधारित थी, जिसमें राष्ट्रपति शासन प्रणाली अपनाई गयी थी। इसके साथ ही अपने ध्वज के रूप में, 'मिज़ोरम सरकार' ने नीले रंग की पृष्ठभूमि पर क्षैतिज रूप से चलने वाली सफेद बोर्डर वाले लाल क्रॉस को अपनाया। माना जाता है कि ध्वज के तीन रंग पिता, पुत्र और पवित्र

आत्मा का प्रतिनिधित्व करते हैं, और यह भी कि मसीह के मुखिया होने के कारण, मिज़ोरम न्याय, पवित्रता और प्रेम के साथ शासित होगा। नीला रंग मिज़ोरम और उसके लोगों का प्रतीक था, लाल रंग क्रूस पर मसीह के सर्वोच्च बलिदान का प्रतीक था और सफेद रंग पवित्र आत्मा की उपस्थिति और सहायता का प्रतीक था। 14 जनवरी, 1966 को मिज़ोरम की अनंतिम सरकार की एक बैठक में स्वतंत्रता की घोषणा करके मामलों को अपने हाथों में लेने का फैसला किया।[36]

भारत सरकार द्वारा अपने अतिक्रमण की नीति को अंजाम देने और मिज़ो लोगों को डराने के लिए मिज़ोरम में असम राइफल्स की 18वीं बटालियन को भेजा गया ताकि एम.एन.एफ. अपने राजनीतिक उद्देश्यों को त्याग दे। 18वीं असम राइफल्स 10 फरवरी, 1966 को आइज़ोल पहुँची और भारतीय सेना का एक और बैच 19 फरवरी, 1966 की रात को आइज़ोल पहुँचा।[37] 21 फरवरी, 1966 को एम.एन.एफ. का अध्यक्ष ललदेङा असम के मुख्यमंत्री से संपर्क करने की कोशिश की लेकिन असफल रहा। 22 फरवरी, 1966 को ललदेङा ने टेलीग्राम के माध्यम से असम के मुख्यमंत्री को संदेश भेजा कि मिज़ोरम से सभी भारतीय सेना के जवानों को वापस बुलाने का अनुरोध किया, जिसे ठुकरा दिया गया।

एक छोटा समुदाय होने के कारण एम.एन.एफ. को एहसास हुआ कि वे अपने उद्देश्य को हिंसा के बिना आसानी से प्राप्त नहीं कर पाएंगे। इसके साथ ही अपनी माँग को दबाने के लिए अधिक प्रभावी उपाय अपनाने के लिए मिज़ो वॉलनटियर्स की ओर से भी बहुत अधिक दबाव था। जैसे-जैसे स्थिति गंभीर होती गयी और पूरी तरह से मिज़ो जाति के नष्ट होने से बचाने के लिए उनके पास और कोई दूसरा चारा नहीं था। अतः भारतीय सेना के आक्रमण का प्रतिरोध करने के लिए एम.एन.एफ. मजबूर हो गए। इसलिए एम.एन.एफ. ने भारतीय सरकार के उत्पीड़न के खिलाफ खुद को मुक्त करने के लिए एक प्रतिरोध कार्रवाई शुरू करने का फैसला किया। जिसके लिए उन्होंने एक निश्चित समय, 28 फरवरी, 1966 - 12:00 मध्यरात्रि को ‘शून्य काल’ निर्धारित किया और उनका कोड नाम ‘मिज़ो’ था। लगभग 2000 मिज़ो वॉलनटियर्स ने इस प्रतिरोध में भाग लिए। एम.एन.एफ. का मानना

था कि स्वतंत्रता के लिए उनके संघर्ष के दौरान उन्हें केवल ईश्वर पर विश्वास करना था, इसलिए उनका आदर्श वाक्य भी **'परमेश्वर और हमारे देश के लिए'** था, अतः परमेश्वर को सबसे पहले रखना उनकी मुख्य प्राथमिकता थी। अल्पसंख्यक मिज़ो जाति यह जानते थे कि शक्तिशाली भारत को हराना आसान नहीं होगा, लेकिन वे यह भी जानते थे कि अपनी आजादी के लिए लड़ना जरूरी हैं। उन्हें विश्वास था कि परमेश्वर मिज़ो लोगों को शक्तिशाली भारतीय सरकार के हाथों से बच सकते हैं। इसलिए स्वतंत्रता के लिए एम.एन.एफ. विद्रोह शुरू करने के लिए सावधानीपूर्वक योजनाबद्ध कदम को **'ऑपरेशन जेरिको'**[38] नाम दिया गया था क्योंकि उन्हें केवल परमेश्वर की शक्ति से लड़ना था।[39] एम.एन.एफ. ऑपरेशन आदेश में यह भी लिखा है- *"उनकी मदद सांसारिक सैनिकों द्वारा की जाएगी, जबकि हमारी मदद जीवित परमेश्वर के सैनिकों द्वारा की जाएगी।"* 'ऑपरेशन जेरिको' नाम पवित्र बाइबल में एक ईसाई नामकरण से लिया गया था जो जोशुआ के नेतृत्व में इज़रायलियों द्वारा जेरिको के विध्वंस के बाइबल के विवरण पर आधारित था। चूँकि मिज़ो लोग ईसाई धर्म के है, उन्होंने इस नामकरण को चुना और अपने ऑपरेशन में कई अन्य ईसाई अवधारणाओं को भी अपनाया।[40]

'ऑपरेशन जेरिको' के लिए लंबे समय से योजनाएँ बनाई गयी थी। इस योजना के तहत आवश्यकतानुसार केवल आइज़ोल शहर ही नहीं मिज़ोरम के अन्य महत्त्वपूर्ण शहरों – लुङलेई, चम्फाई और जहाँ-जहाँ भारतीय सेना तथा पुलिस स्टेशन थे, उनपर हमला करने के लिए विभिन्न कमांड नियुक्त किए गए थे। लेकिन सब कुछ गुप्त रूप और सावधानी से योजना बनाई गयी थी।[41]

आइज़ोल शहर सबसे महत्त्वपूर्ण होने के कारण ऑपरेशन जेरिको के लिए भी सबसे अधिक तैयारी किया गया था। लेकिन 'शून्य काल से पाँच घंटे पूर्व आइज़ोल शहर में गलती से एक हैन्ड-ग्रेनेड के फट जाने के कारण एम.एन.एफ. के उपाध्यक्ष ललनुनमोईआ का छोटा भाई, रोउकिमआ, जो एक वॉलनटियर थे, की वहीं मौत हो गयी और दो अन्य घायल हो गए। इस घटना के कारण आइज़ोल शहर में ऑपरेशन की योजना बिगड़ गया क्योंकि मारे गए और घायल हुए लोगों को हमले के लिए विशेष रूप से प्रशिक्षित दिए गए थे और कोई भी उनकी जगह नहीं ले सकते थे।

'शून्य काल' आने पर वॉलनटियर्स तो आए लेकिन उनमें से कोई भी ऐसे नहीं थे जिन्हें लाइट मशीन गन, जो उनका मुख्य आधार था, का उपयोग करना जानते हो। इस कारण से और संभवतः असम राइफल्स के पास इस ऑपरेशन की जानकारी भी रही होंगी जिसके कारण वे पहले से हमले के लिए तैयार थे, आइज़ोल में पहला असम राइफल कैम्प पर कब्जा करने की योजना भी सफल नहीं हो पाया लेकिन सशस्त्र पुलिस कैम्प और मुख्य आइज़ोल कोषागार पर योजना के अनुसार कब्जा कर लिया गया। बाहरी दुनिया से सभी तरह का संचार बंद करने के लिए उन्होंने टेलीफोन एक्सचेंज पर भी हमला किया और टेलीफोन लाइनें भी काट दी थी।[42]

आइज़ोल में ऑपरेशन विफल होने के पश्चात भी 2 मार्च, 1966 की रात को कर्फ्यू के दौरान असम राइफल्स और पुलिस गश्त पर हमला किया गया। 3 मार्च, 1966 की रात को आइज़ोल शहर में गोलीबारी शुरू हो गयी। एम.एन.एफ. ने असम राइफल्स की पानी की आपूर्ति बंद कर दिया ताकि वे सरेंडर कर ले। उनके पास पानी न होने और गोली-बारूद कम होने के कारण असम राइफल्स सरेंडर करने के करीब थे। यदि सैनिकों ने सरेंडर नहीं किया तो एम.एन.एफ. के वॉलन्टियर्स ने 5 मार्च, 1966 (शनिवार) रात को हमला करने की योजना बनाया। लेकिन 5 मार्च, 1966 सुबह 10 बजे भारतीय वायुसेना के जेट फाइटर ने हमला कर दिया और जहाँ-जहाँ उन्हें लगा कि वॉलन्टियर्स के कैम्प हैं, उन जगहों पर बमबारी की। वॉलन्टियर्स के लिए उन क्षेत्रों को छोड़ने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था, इस प्रकार ऑपरेशन जेरिको आइजॉल शहर में विफल रहा।[43]

'ऑपरेशन जेरिको' के पूर्व योजना के अनुसार आइज़ोल, कोलासिब, चम्फाई, सेरछीप, लुङलेई और कई अन्य स्थानों पर एक साथ चलाया गया। लुङलेई पश्चिमी लुशाई हिल्स के सबसे महत्त्वपूर्ण शहरों में से एक है। अंग्रेजों द्वारा मिज़ोरम पर शासन करने के बाद, बर्मा और पूर्वी बंगाल (अब बांग्लादेश) के बीच एक महत्त्वपूर्ण मार्ग बनने के बाद इसे फोर्ट लुङलेई नाम दिया गया और दक्षिण लुशाई हिल्स की मुख्य राजधानी बन गया था। 1963 के मध्य में लुङलेई को एम.एन.एफ. उप- मुख्यालय में पदोन्नति भी किया गया था और दिसंबर 1964 में पूर्वी पाकिस्तान में सशस्त्र

प्रशिक्षण लेने के लिए लुङलेई से 7 वॉलन्टियर भी गए थे। इन सबके कारण आइज़ोल शहर के बाद लुङलेई शहर को महत्त्वपूर्ण शहर माना जाता हैं। असम राइफल्स के अलावा सशस्त्र पुलिस और बी.एस.एफ एडवांस हेडक्वार्टर लुङलेई में स्थित था। 28 फरवरी की रात को 'शून्य काल' पर लुङलेई पर हमला करने के लिए तकरीबन 400 वॉलन्टियर्स एकत्र हुए। वॉलन्टियर्स को दो टास्क फोर्स में बाँटा गया, पहला टास्क फोर्स असम राइफल्स पर हमला के लिए था और दूसरा टास्क फोर्स सशस्त्र पुलिस और बी.एस.एफ. पर बिना किसी हथियार के कब्जा करना था। लुङलेई सशस्त्र पुलिस के बीच उनके कुछ अपने लोग होने के कारण बिना किसी गोलीबारी के आसानी से उन पर कब्जा कर लिया। बी.एस.एफ. एडवांस हेडक्वार्टर पर भी कब्जा कर लिया। वॉलन्टियर में से एक ने शराब के नशे में गोली चलाया जिसके कारण बी.एस.एफ. भागने लगे और इस पर गोली चलने लगी, जिसमें एक की मौत हुई और दो घायल हो गए। इस गोलीबारी की आवाज़ ने असम राइफल्स सतर्क हो गए और असली गोलीबारी शुरू हो गयी। 1 मार्च को दिन-रात गोलीबारी जारी रही। गोलीबारी के शुरुआत में ही पानी की आपूर्ति को खराब कर दिया गया था इसलिए 2 मार्च को असम राइफल्स के पानी खत्म होने लगी। 4 मार्च को विमानों द्वारा पानी और गोला-बारूद गिराया गया लेकिन वॉलन्टियर्स के भारी बोलीबारी के कारण पर्याप्त मात्रा में नहीं गिराया जा सका। पानी और गोला-बारूद की कमी के कारण 5 मार्च (शनिवार) सुबह को उन्होंने एम.एन.एफ. वॉलन्टियर्स के हाथों में सरेंडर कर लिया। आइज़ोल शहर के विपरीत, लुङलेई में 'ऑपरेशन जेरिको' सफल रहा।[44]

वॉलन्टियरों में चम्फाई को ताईतेसेना बटालियन का मुख्यालय माना जाता था। 17 दिसंबर, 1965 को इस शहर को पूरे पूर्वी क्षेत्र का मुख्यालय बनाया गया। ऑपरेशन जेरिको चम्फाई में भी सफल रहा। चम्फाई की असम राइफल्स का केईफाङ पहाड़ियों पर कैम्प था। चम्फाई पोस्ट पर कब्जा करने के लिए ती.बटालियन के साथ पूर्वी क्षेत्र के हाथों सौंपा गया था। मिस्टर वालअ (पार्लियामेंट के सदस्य), कैप्टन साङलीआना और कैप्टन बिआकज़ामा ने सबसे पहले पुलिस थाने पर हमला किया और वहाँ से उन्होंने कुछ पुराने राइफल्स इकट्ठा किए और इसके साथ ही उन्होंने वहाँ के कैदियों को छुड़ाकर पुलिस वालों को बंद कर दिया। संतरी पोस्ट पर सीधा हमला करने के लिए 8 वॉलन्टियर्स

का एक सुइसाइड स्क्वाड चुना गया और हथियारों के साथ 10 वॉलन्टियर्स ने उनका पीछा किया। उन्हें ड्यूटी पर मौजूद संतरी को निहत्था करके ज़िंदा पकड़ना था। कैप्टन हाऊसिआमा और उनके टीम कॉर्टर-गार्ड पर हमला करने तकरीबन 100 वॉलन्टियर्स पूर्वी और उत्तर के तरफ से हमला के लिए तैयार थे। संतरी हमले पर 1 वॉलन्टियर और 1 राइफलमेन की मौत हुई और दो घायल हुए। कॉर्टर-गार्ड से जितने भी हथियार और गोला-बारूद मिल सके, वॉलन्टियर्स द्वारा उन्हें ले लिया गया और कई बंदूकें भी लूटी गयी। इस प्रकार 'ऑपरेशन जेरिको' चम्फाई में भी सफल रहा।[45]

ह्नाहथिआल गाँव बोर्डर रोड टास्क फोर्स (बी.आर.टी.एफ) का मुख्यालय है, जो आइजॉल और लुङलेई के बीच सड़कों का मुख्य निर्माता है। इसलिए, उनकी सुरक्षा के लिए यहाँ केन्द्रीय रिजर्व पुलिस फोर्स (सी.आर.पी.एफ) सशस्त्र सैनिकों की एक प्लाटून (लगभग 30) रखा गया। थिङसाई बटालियन के कोमानदिङ ऑफिसर एफ. पाज़ोनअ की बहादुरी के कारण बिना किसी गोलीबारी के ह्नाहथिआल बी.आर.टी.एफ मुख्यालय और उनकी सुरक्षा कर रही प्लाटून पोस्ट पर कब्जा कर लिया और इस तरह 'ऑपरेशन जेरिको' ह्नाहथिआल में भी सफल रहा।[46]

इन जगहों के अलावा 'ऑपरेशन जेरिको' को योजना के अनुसार सेरछीप, कोलासिब, वफाई, ह्नाहलान, त्लाबुङ, सङाउ और कई अन्य स्थानों पर भी एक साथ चलाया गया। परंतु असम राइफल्स ने सावधानीपूर्वक डेरा डाले हुए थे और उन्हें कब्जा करना मुश्किल था। इसके अलावा वॉलन्टियर के पास पर्याप्त हथियार नहीं थे और साथ ही जेट फाइटर के भारी जवाब देने के कारण वॉलन्टियर, कैम्प पर कब्जा नहीं कर सके जिस तरह उन्हें लगा था। सिलचर-आइज़ोल रास्ते पर पहला मिज़ो गाँव वाईरेङते में रहने वाले सभी गैर-मिज़ो को तुरंत मिज़ो हिल्स छोड़ने के लिए भी कहा गया। वॉलन्टियर्स ने वाईरेङते और लैलापूर के बीच दो पुलिया उड़ा दी जिसके कारण सड़क संचार पूर्ण रूप से बाधित हो गया।[47]

असम विधानसभा के बारहवें सत्र की बहस में 28 फरवरी, 1966 की रात को आइज़ोल, लुङलेई और मिज़ो हिल्स ज़िले के अन्य भागों में हुई घटनाओं के बारे में मुख्यमंत्री श्री बिमला प्रसाद चालिहा का वक्तव्य :

"28 फरवरी की रात को लगभग 20:30 बजे से एक मजबूत सशस्त्र गिरोह, जिसकी संख्या 500 से 1000 के बीच बताई जाति है, ने लुङलेह में सीमा सुरक्षा बाल के एक छोटे से शिविर पर हमला किया और उस पर कब्जा कर लॉय। इसके बाद उन्होंने असम राइफल्स के शिविर पर हमला किया, जहाँ कोषागार और स्थानीय उप-कोषागार स्थित थे। हमलावरों और शिविर के बीच 1 और 2 मार्च को रुक-रुक कर गोलीबारी होती रही। ऐसा प्रतीत होता है कि असम राइफल्स की चौकियों और उप-कोषागार के अलावा लुङलेह शहर के अधिकांश क्षेत्र मिज़ो नैशनल फ्रन्ट के नियंत्रण में हैं।...

...1 मार्च की सुबह करीब 2:30 बजे, मिज़ो नैशनल फ्रन्ट के हथियारबंद वॉलन्टियर्स के एक समूह ने आइज़ोल टेलीफोन एक्सचेंज में घुसकर और अन्य उपकारणों को क्षतिग्रस्त कर दिया, जिससे टेलीफोन संचार पूरी तरह से बाधित हो गया। इसके तुरंत बाद, तीन जीपों और पैदल आए एक हथियारबंद गिरोह ने आइज़ोल कोषागार पर हमला किया। उन्होंने ड्यूटी पर मौजूद संतरियों को काबू में कर लॉय और उनका मुँह बंद करके दस राइफलें और कुछ गोल-बारूद और एक लॉक में नकदी से भरे कुछ बक्से अपने कब्जे में ले लिए और शहर के दक्षिण की ओर भाग गए। वे डबल लॉक को तोड़ने में असमर्थ रहे और मुख्य कोषागार सुरक्षित है। तुरंत अलर्ट जारी किया गया और असम राइफल्स और पुलिस के जवानों ने शहर के अलग-अलग हिस्सों में मोर्चा संभाल लिया।...

...उसी रात आइज़ोल शहर के दूसरे हिस्से में मिज़ो नैशनल फ्रन्ट के वॉलन्टियर्स के एक स्वयंभू कैप्टन की हैन्ड ग्रेनेड के आकस्मिक विस्फोट में मौत हो गयी। बताया जा रहा है कि विस्फोट के कारण सात अन्य वॉलन्टियर्स में घायल हो गये।...

...सिलचर से लगभग 25 मील दूर आइज़ोल जाने वाली सड़क पर पहला द्वार वाईरेङते में, मिज़ो नैशनल फ्रन्ट के लगभग 150 लोगों की एक टुकड़ी ने लाठी-डंडों से लैस होकर Public Works Department Sub-Divisional Officer's Camp और पुलिस चौकी पर हमला किया और PWD के कर्मचारियों और दो-गैर मिज़ो कांस्टेबलों को वहाँ से जाने पर मजबूर कर दिया। विस्फोटकों और पेट्रोल के साथ PWD के स्टोर और PWD के उप-मण्डल अधिकारी की विभागीय जीप को मिज़ो नैशनल फ्रन्ट ने अपने कब्जे में ले लिया। लगभग उसी समय कछार में वाईरेङते और लैलापुर के बीच दो पुलियाओं को विस्फोटकों का उपयोग करके क्षतिग्रस्त कर दिया गया था।...

...कोलासिब के पुलिस थानों पर भी मिज़ो नैशनल फ्रन्ट ने कब्ज़ा कर लिया है और माना जाता है कि कर्मचारियों को उनके सशस्त्र पहरे में टाउन हॉल में कैद कर दिया गया है।

आइज़ोल से आने-जाने वाले सड़क संचार को अवरुद्ध कर दिया गया है और उसे बाधित कर दिया गया है।

1 मार्च की दोपहर के समय साईराङ पोस्ट ऑफिस और पुलिस आउट-पोस्ट पर हमला किया गया और पोस्ट ऑफिस की नकदी लूट ली गयी।

पाकिस्तान सीमा पर चोङते आउट-पोस्ट और बर्मा सीमा पर चम्फाई आउट-पोस्ट पर बड़े पैमाने पर हमले हुए। सबसे पहले सीमा सुरक्षा बाल ने हताहतों की संख्या के बाद हमले को खदेड़ दिया। चम्फाई पोस्ट पर अंधेरे की आड़ में भारी हमला किया गया था, हमलावरों ने स्थानीय पुलिस स्टेशन के साथ मिलकर उस पर कब्ज़ा कर लिया।...

...कई केंद्रों पर ये व्यवस्थित योजनाबद्ध और व्यापक हमले प्रशासन को अपने नियंत्रण में लेने, संचार को बाधित करने और प्रशासन के कामकाज को पंगु बनाने और साथ ही ज़िले से गैर-मिज़ो लोगों को बाहर निकालने की एक सुनियोजित योजना का संकेत देते हैं। यह मिज़ो ज़िले को

एक स्वततंत्र राज्य घोषित करने की योजना का भी हिस्सा लगता है, जिसे कुछ रेपोर्टों के अनुसार, एम.एन.एफ. के नेतृत्व द्वारा पहले ही घोषित किया जा चुका है जो अब भूमिगत हो गया है।

हालाँकि इन हमलों से उत्पन्न स्थिति गंभीर है, लेकिन शीर्ष सैन्य अधिकारियों द्वारा स्थिति का आकलन करने के बाद, इसमें कोई संदेह नहीं है कि स्थिति का सामना किया जाएगा और इस संबंध में आवश्यक कार्रवाई पहले ही शुरू कर दी गयी है।

...सरकार ने असम अशांत क्षेत्र अधिनियम, 1955 और सशस्त्र बाल (असम और मणिपुर) विशेष शक्तियाँ अधिनियम, 1958 को पूरे ज़िले में लागू कर दिया है। नागरिक शक्ति की सहायता के लिए सेना को बुलाया गया है। एम.एन.एफ. को अवैध संगठन घोषित करने का सवाल पर विचार किया जा रहा है।"[48]

भारतीय गृह मंत्री नंदा ने 3 मार्च, 1966 को भारतीय संसद में कहा है कि आइज़ोल, लुङलेई, वाईरेङते, चोङते और छिमलुआङ में विद्रोहियों की कुल संख्या 800-1300 थी।[49]

'शून्य काल' के कुछ समय बाद, एम.एन.एफ. ने 'मिज़ोरम स्वतंत्रता' की घोषणा कर दी। यह घोषणा अमेरिकी स्वतंत्रता की घोषणा शैली और विषय-वस्तु के समान प्रतीत हुई। इस घोषणा पर एम.एन.एफ. के 61 नेताओं ने हस्ताक्षर किए थे। घोषणा में लिखा है कि –

"मानव इतिहास के दौरान, मानव जाति के लिए अपनी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति को ग्रहण करना अनिवार्य हो गया है, जिसके लिए प्रकृति के नियम और प्रकृति के ईश्वर उन्हें हकदार बनाते हैं। हम इस सत्य को स्वयंसिद्ध मानते हैं कि सभी मनुष्य को समान बनाए गए हैं और उन्हें अविभाज्य मौलिक मानव अधिकार और मानव व्यक्ति की गरिमा प्रदान की गयी है; और इन अधिकारों को सुरक्षित करने के लिए, मनुष्यों के बीच सरकारें स्थापित की जाती हैं जो शासतों की सहमति से अपनी न्यायपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त करती हैं और जब भी सरकार का कोई एक रूप इस उद्देश्य के लिए विनाशकारी हो जाता है, तो लोगों का यह अधिकार है कि वे इसे बदलें, परिवर्तित

करें, संशोधित करें और समाप्त करें और एक नई सरकार की स्थापना करें जो सिद्धांतों पर अपनी नींव रखे और अपनी शक्तियों को ऐसे रूपों में संगठित करे जिसमें उनके अधिकारों और गरिमा को प्रभावित करने की सबसे अधिक संभावना हो। प्रकृति के ईश्वर द्वारा निर्मित और एक राष्ट्र के रूप में विकसित तथा पोषित मिज़ो लोगों पर भारत के लोगों द्वारा प्रकृति के नियमों को उल्लंघन करते हुए असहनीय रूप से प्रभुत्व जमाया गया है..."[50]

"...हमने स्पष्ट विश्व के समक्ष घोषणा की है कि भारत सभ्य मिज़ो लोगों पर शासन करने के लिए अयोग्य है, जिन्हें प्रकृति और प्रकृति के ईश्वर द्वारा एक राष्ट्र के रूप में निर्मित और दहला गया है और इस तरह से पोषित किया गया है तथा क्षेत्रीय अखंडता प्रदान की गयी है।

इसलिए, हम मिज़ो लोगों के प्रतिनिधि, हमारे प्रभु के वर्ष, 1966, में इस दिन, 1 मार्च को एकत्रित होकर... सत्यनिष्ठा से प्रकाशित एवं घोषणा करते हैं कि मिज़ोरम स्वतंत्र है और उसे स्वतंत्र होना चाहिए; कि वे भारत और उसकी संसद के प्रति सभी निष्ठाओं से मुक्त हैं...हम सभी स्वतंत्रता-प्रेमी राष्ट्रों और व्यक्तियों से मानव अधिकारों और गरिमा को बनाए रखने और आत्मनिर्णय की हमारी उचित और वैध माँग को साकार करने के लिए मिज़ो लोगों की सहायता करने की अपील करते हैं। हम सभी स्वतंत्र देशों से भी अपील करते हैं कि वे मिज़ोरम की स्वतंत्रता को मान्यता दें।"[51]

इस प्रकार एम.एन.एफ. द्वारा चलाया गया 'ऑपरेशन जेरिको' मिज़ो विद्रोह के दौरान की एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। एम.एन.एफ. ने असम ज़िले के लुशाई हिल्स के प्रमुख सरकारी प्रतिष्ठानों पर हमला किया, असम राइफल्स मुख्यालयों पर भारतीय ध्वज के स्थान पर एम.एन.एफ. ध्वज फहराया और इसके ज़रिए मिज़ोरम के जिले की अधिकांश बस्तियों पर उन्होंने कब्ज़ा कर लिया।[52] भारतीय सेना की टुकड़ी आने से पहले 'ऑपरेशन जेरिको' के बाद एम.एन.एफ. ने कुछ दिनों तक पूरे ज़िले पर नियंत्रित किया।

एम.एन.एफ. के 'ऑपरेशन जेरिको' शुरू होने के तुरंत बाद, मिज़ो जिले के डिप्टी कमिशनर टी.एस.गिल ने सुरक्षा के लिए असम राइफल कैम्प में शरण लिया और 1 मार्च, 1966 को उन्होंने जिले में कर्फ्यू की घोषणा भी की। लेकिन जब तक सुरक्षा बल नहीं आ जाते, असम राइफल्स कानून और व्यवस्था को लागू करने के स्थिति में नहीं थे, इसलिए कर्फ्यू की घोषणा प्रभावी नहीं हुई।[53]

स्वतंत्र भारत में पहले बार मिज़ो समस्या – आकाशवाणी, समाचार पत्रों और यहाँ तक कि भारतीय संसद में चर्चा का विषय बन गया, जिसे शायद पहले कहीं भी उल्लेख किया गया था। आकाशवाणी ने घोषणा की कि मिज़ो ज़िले और भारत को जोड़ने वाली एकमात्र सड़क को मिज़ो विद्रोहियों (वॉलन्टियर्स) ने काट दिया है, और इस वजह से भारतीय सैनिक एक सप्ताह तक मिज़ो हिल्स तक नहीं पहुँच सके क्योंकि उन्हें पैदल यात्रा करनी पड़ी। मिज़ोरम में हुई घटनाओं के बाद, केन्द्रीय गृह मंत्री ने संसद को इस प्रकार सूचित किया –

"28 फरवरी और 1 मार्च की रात को मिज़ो हिल्स जिले में गंभीर घटनाएं हुई हैं जिसमें कुछ आदिवासियों ने अराजकता के कृत्यों का सहारा लिया है… इन आदिवासियों का नेतृत्व मिज़ो नैशनल फ्रन्ट के चरमपंथी तत्व कर रहे हैं… परिणामस्वरूप, जिले में स्थिति से निपटने के लिए सेना को बुलाया गया है… सरकार आदेश के साथ अशान्ति को दबाने के लिए दृढ़ हैं…"[54]

जब भारत की केंद्र सरकार को वायरलेस संदेश के माध्यम से मिज़ो जिले में सशस्त्र विद्रोह की जानकारी मिली, तो तत्कालीन गृह मंत्री से पत्रकारों ने पूछा कि उन्हें मिज़ो हिल्स में विद्रोह की सशस्त्र तैयारी के बारे में जानकारी नहीं है। भारत सरकार ने मिज़ो ज़िले में एम.एन.एफ. आंदोलन का मुकाबला करने के लिए सैन्य बल भेजा।[55]

3 मार्च, 1966 को तकरीबन रात के 10 बजे मिज़ो स्वतंत्रता विद्रोहियों(वॉलन्टियर्स) ने असम राइफल्स पर अपना पहला बड़ा हमला शुरू किया और आइज़ोल शहर के केंद्र में स्थित उनके गढ़ पर गोलीबारी शुरू कर दी। जैसे ही मिज़ो विद्रोहियों ने गोलीबारी शुरू की, असम राइफल्स ने भी

भरी गोलीबारी के साथ जवाब देना शुरू किया और इस तरह स्वतंत्रता के लिए लड़ाई शुरू हुई जो आने वाले कई वर्षों तक जारी रही।[56]

तुईखुआहत्लाङ में स्थित जलाशय असम राइफल्स के लिए पानी का मुख्य स्रोत था। वहाँ से पाइप के ज़रिए उनके बैरकों तक पानी की आपूर्ति की जाती थी। मिज़ो वॉलन्टियर्स को इस बात की जानकारी थी इसलिए उन्होंने 4 मार्च, 1966 की सुबह पानी के पाइपों को तोड़ दिया। असम राइफल्स के एकमात्र पानी स्रोत बंद हो जाने के कारण उन्हें पानी की गंभीर समस्या का सामना करना पड़ा।[57]

3 मार्च,1966 की रात से लेकर 5 मार्च, 1966 की सुबह तक गोली चलने की आवाज बंद नहीं हुई। 4 मार्च, 1966 की सुबह आइज़ोल के निवासियों को शहर छोड़ने के लिए सड़कों पर भागते हुए देख वॉलन्टियर्स को डर था कि कहीं असम राइफल्स की गोलियों से नागरिक मारे जाएंगे। इसलिए उन्होंने असम राइफल्स को गोलीबारी बंद करने के लिए कहा। लेकिन, असम राइफल्स ने नागरिकों की जान की परवह नहीं की और उन्होंने चारों तरफ गोलीबारी जारी रखी। जैसे ही उनको डर था, दुर्भाग्य से कुछ नागरिकों को उनकी गोली लगी।

5 मार्च, 1966 को भारत सरकार के आदेश से 4 भारतीय वायु सेना ने आइज़ोल के ऊपर से उड़ान भरी और शहर के विभिन्न भागों पर क्रूरता से हवाई हमला करना शुरू किया। इस 4 जेट फाइटर ने नियमित क्रम में आइज़ोल शहर पर बमबारी की। केवल एम.एन.एफ. के वॉलन्टियर्स विद्रोहियों के ठिकानों पर ही नहीं बल्कि यहाँ-वहाँ नागरिक आवासों पर बम गिराते हुए अपनी भारी मशीनगनों से आइज़ोल शहर के हर हिस्से में गोलीबारी की। इस हवाई बमबारी के कारण पूरा आइज़ोल शहर आग के नरक जैसा लग रहा था जिसके ऊपर नरक जैसे काले धुएं की छतरी छाई हुई थी।[58]

इस विकट स्थिति में भी मिज़ो स्वतंत्रता विद्रोहियाँ हमला छोड़ना नहीं चाहते थे, इसलिए उन्होंने उस दिन 3 से 4 बार हमले किए। अगले दिन 6 मार्च, 1966 को फिर से भारतीय सेना ने जेट फाइटर से आइज़ोल शहर पर अपने क्रूर हवाई हमला शुरू किया। अब एम.एन.एफ. यह जान गए थे कि असम राइफल्स को भारतीय वायुसेना से हवाई समर्थन मिल रहा हैं और अब असम राइफल्स के कैम्प पर कब्ज़ा करना असंभव हो गया हैं, इसलिए उन्होंने पीछे हटने का फैसला किया और आसपास के गाँव में चले गये।[59]

1 मार्च, 1966 को एम.एन.एफ. द्वारा भारतीय संघ से मिज़ोरम की स्वतंत्रता की घोषणा के जवाब में 2 मार्च, 1966 को असम सरकार ने 'असम अशांत क्षेत्र अधिनियम, 1955' और 'सशस्त्र बल विशेष अधिकार अधिनियम, 1958' के तहत जिले को 'अशांत क्षेत्र' घोषित कर दिया था। 6 मार्च, 1966 को एम.एन.एफ. को 'भारत रक्षा नियम, 1962' के तहत 'गैरकानूनी संघ' घोषित कर दिया गया। अतः इस प्रकार 'ऑपरेशन जेरिको' का परिणाम शुरू हो गया और बहुत कुछ होना भी बाकी है।

जैसे कि ऊपर उल्लेख किया गया है कि 5 मार्च, 1966 को भारत सरकार के आदेश से 4 'तूफ़ानी' नामक भारतीय वायु सेना ने आइज़ोल के ऊपर से उड़ान भरी और क्रूरता से बमबारी करना शुरू किया, जो शायद देश के भीतर पहली बार भारतीय वायुसेना का प्रयोग किया गया था। भारतीय सेना को विभिन्न स्थानों पर हवाई जहाज से उतारा गया तथा हेलिकाप्टर से और भी सैनिक पहुँचें। सिलचर से पैदल चलकर आने वाली टुकड़ी भी मार्च के दूसरे हफ्ते में आइज़ोल शहर पहुँच गायें। आइज़ोल के कई इलाकों को पूरी तरह से ध्वस्त कर दिया गया, दुकानों में तोड़फोड़ की गयी और कई घरों को भारतीय सेना द्वारा जलाया गया।[60] आइज़ोल भारतीय सेना के नियंत्रण में आ गया।

आइज़ोल और मिज़ो हिल्स में अन्य स्थानों पर हवाई हमला का पहला उल्लेख 5 अप्रैल, 1966 को विधायक स्टेनली निकॉल्स-रॉय द्वारा असम विधानसभा में किया गया था, जो साथी

विधायक हूवर हिनीवटा और सांसद प्रोफ़ेसोर जी.जी.स्वेल के साथ मिज़ो हिल्स की यात्रा से लौटे थे :

"हालाँकि, महोदय, हमारे द्वारा एकत्र किए गए सभी साक्ष्यों से स्पष्ट है कि एक समय ऐसा आया जब आवश्यक बल से अधिक बल का प्रयोग किया गया। हमारा मानना है कि ऐसा 5 और 6 मार्च को हुआ, जब वायु सेना को काम में लाया गया और गोलीबारी और मशीन-गन का इस्तेमाल किया गया, और जहाँ तक हम समझ सकते हैं, आइज़ोल शहर पर बमबारी की गयी।"

लेकिन उस समय असम और दिल्ली दोनों सरकार ने शुरू में किसी भी तरह के अपराध में वायु सेना के प्रयोग से इनकार किया था, और कहा गया था कि वायु सेना को केवल सुदृढ़ीकरण की आपूर्ति के लिए बुलाया गया था। माननीय विधायक ने उल्लेख किया कि किस प्रकार भारत की तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने 9 मार्च, 1966 को 'हिंदुस्तान स्टैन्डर्ड' को दिए गए एक बयान में एक विदेशी संवाददाता द्वारा वायु सेना के प्रयोग के बारे में पूछने पर – प्रधानमंत्री ने कहा कि इसे लोगों और आपूर्ति को गिराने के लिए तैनात किया गया था।"[61]

भूमिगत एम.एन.एफ. सरकार के रक्षा मंत्री आर.ज़मोईआ ने अपनी पुस्तक 'ज़ोउफाते ज़िनकोङअः' में 4 और 5 मार्च के अपने अनुभव को इस प्रकार साझा किया है – "4 मार्च को आइज़ोल लगभग खाली हो गया थ क्योंकि एम.एन.एफ. बलों और असम राइफल्स के सैनिकों के बीच रुक-रुक कर गोलीबारी हो रही थी। गोलीबारी के दौरान, हमने लाउडस्पीकर का इस्तेमाल करके उन्हें सरेंडर करने के लिए कहा, लेकिन ऐसी पुकार के बाद ए.आर.कैम्प से गोलीबारी की एक नई लहर आई। दोपहर में, पाँच हेलिकाप्टर आइज़ोल के लिए उड़ान भरी और उतारने के प्रयास में परेड ग्राउन्ड के ऊपर मँडराया। हमारे बलों को आदेश दिया गया था कि वे उतारने से पहले गोली न चलाएँ। तीन हेलिकाप्टर दूसरों की तुलना में नीचे उड़े और बीच वाला उतरने की तैयारी कर रहा था, जब एम.एन.एफ. ने ज़मीन से पहली गोली चलायी। इसके बाद गोलियों की बौछार हुई और सभी हेलिकाप्टर बिना उतरे ही उड़ गए।

...जनरल सैम मानेकशॉ उस समय पूर्वी कामन के जी.ओ.सी. थे, और हालांकि यह एक गुप्त रहस्य था, जब हमें बाद में पता चल कि उनके पैर में गोली लगी थी, हमें आश्चर्य हुआ कि क्या वे उस दिन घायल हुए थे। एक अफवाह फैल रही थी कि जनरल मानेकशॉ को सेना प्रमुख बनाना था; और अगर वे उस दिन मारे गए होते, तो मिज़ोरम राख में बदल जाता। अगले दिन से जेट फाइटर हमले की हमले - जैसे कि विदेशी दुश्मन के खिलाफ चलाया गया हो, शायद इस घटना के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।

...मैंने पहली बार 5 मार्च को सुबह 10 बजे सिकुलपुई में अपना सुबह का खाना खाने के बाद जेट फाइटर की आवाज़ सुनी। जैसे ही मैं तुईखुआहत्लाङ की ओर भागा, उन फाइटर ने हम पर गोलीबारी शुरू कर दी। हमनें चार जेट फाइटर को दो-दो के जोड़े में उड़ते हुए देखे, जो 20 एमएम, 30 एमएम और 40 एमएम कैलिबर की मशीन गन के राउन्ड फायर कर रहे थे और आग लगाने वाले बम गिरा रहे थे। एक बम सर्किट होउस पर गिरा जो ढह गया और आग की लपटों में घिर गया। हम जल्दी से आइज़ोल से बाहर निकल गए और कुलिकोन में, ह्मिएन के रास्ते में, जे.ललसाङज़ुआलआ के घर पर रुक गये। उन्होंने कुछ खाली कारतूस उठाए और तभी इसी से मुझे मशीन गन राउन्ड की मात्रा का पता चला।”[62]

जेट फाइटर हमला केवल आइज़ोल तक ही सीमित नहीं था। मिज़ोरम के अन्य गाँवों पर भी कुंभिग्राम से संचालित तूफ़ानी और जोरहाट से संचालित हंटर्स का प्रयोग किया गया था। माना जाता है कि ये ऑपरेशन एम.एन.एफ. को दूर रखने और जब तक कि सेना को मजबूत नहीं जाता उनकी चौकियों पर दबाव कम करने के लिए किये गए थे। चम्फाई के पास ह्नाहलान गाँव में, ए.आर. कैम्प से दो मिज़ो सैनिक 7 मार्च, 1966 की सुबह गाँववालों को हवाई हमले की चेतावनी देने के लिए निकले और उसी दिन दोपहर 2 बजे के आसपास, दो जेट फाइटर्स ने गाँव के ऊपर से उड़ान भरी और गाँव पर बमबारी की। 270 घरों में से 200 से ज्यादा घर पूरी तरह से नष्ट हो गए और साथ ही 3 जनों की मौत भी हुई। सारा खाद्य भंडार और पालतू जानवर जलकर राख हो गए। उसी दिन सङाउ गाँव पर

भी जेट फाइटर्स ने हमला किया। 6 मार्च को खोज़ोल गाँव में दिखने वाले पहले जेट फाइटर ने सेना कैम्प पर गोलीबारी की और क्वार्टर गार्ड को छोड़कर सभी घरों को जला दिया गया। कैम्प को जलता हुआ देखकर एम.एन.एफ. के कुछ लोगों को लगा कि विमान उनके पक्ष में था। लेकिन, अगले दिन, 7 मार्च को, फिर से, दो जेट फाइटर खोज़ोल के लिए उड़ान भरे और पूरे गाँव को जला दिया। एम.एन.एफ. कर्मियों ने चार दिनों तक ए.आर. कैम्प को घेरे रखा था लेकिन हवाई हमले ने उनके दृढ़ संकल्प को कम नहीं किया। वे 8 मार्च तक कैम्प पर गोलीबारी करते रहे, लेकिन सेना की टुकड़ी के आगे बढ़ने की खबर सुनकर वे शरण लेने के लिए भाग गए। प्रत्यक्षदर्शियों के अनुसार, बांग्लादेश सीमा पर त्लाबुङ (डेमगिरी) गाँव में, जेट फाइटर्स ने 9 मार्च से तीन दिनों तक हमला जारी रखा, जहाँ दो जेट फाइटर्स ने एक जोड़ी में हमला किया, जिसमें पहले विमान ने मशीन गन से गोलीबारी की और दूसरा विमान बम गिर रहा था।"

मार्च, 1966 के दौरान पूकपुई और बूङह्मुन गाँवों पर भी जेट फाइटर ने हमला किया था। लुङलेई के निकट स्थित पूकपुई गाँव, पु ललदेङा का गाँव था। हालाँकि वहाँ कोई सैन्य चौकी नहीं थी, लेकिन 13 मार्च को ठीक उसी समय जब सेना गाँव लोगों को एक खुली जगह पर इकट्ठा कर रही थी, उसी समय गाँव पर जेट फाइटर ने हमला किया। एक गवाह ज़थिआङआ ने याद करते हुए कहा, "पायलट ने हमें देख लिया होगा, लेकिन वहाँ मौजूद लोगों या गाँव की परवह किए बिना उसने हमारी आँखों के सामने बम गिरा दिया।"[63] दूसरी ओर बूङह्मुन में आगे बढ़ रही सेना पर एम.एन.एफ. बलों ने हमला किया, जिन्होंने इस मुठभेड़ में एक मेजर को मार गिराया। हमले के लगभग 10 मिनट बाद, 2 जेट फाइटर गाँव के ऊपर से उड़े, जिन्होंने अपने पहले राउन्ड में कोई निशान नहीं छोड़ा, दूसरे पर भारी मशीन-गन से हमला किया और तीसरे पर बम गिराए। पूरा गाँव आग की चपेट में आ गया और हवाई हमले के बाद बचे हुए कुछ घरों को भी सेना के जवानों ने जला दिया। एक मानसिक रूप से विक्षिप्त महिला अपने घर में जिंदा जल गयी, जबकि जेट फाइटर की गोलीबारी से 22 भारतीय सैनिक मारे गए।[64]

5 अप्रैल, 1966 को असम विधानसभा में श्री स्टेनली डी. डी. निकॉल्स-रॉय(चेरापूंजी, अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित) का मिज़ो हिल्स की नवीनतम स्थिति पर वक्तव्य :

"इस सदन के दो सदस्यों, संसद के एक सदस्य और इस शहर के एक अन्य माननीय सज्जन को सरकार द्वारा 30 मार्च को आइज़ोल जाने की अनुमति दी गयी और 31 मार्च को वहाँ पहुँचे और 2 अप्रैल को हम वापस लौटे। महोदय, हमने जो देखा और वहाँ के लोगों ने जो बताया, उसके बारे में हमें बहुत कुछ बताना है। हमें एक समूह के रूप में यह जाँचने के लिए भेजा गया था कि वहाँ क्या हुआ है और भारत सरकार के प्रति वफादार लोगों की भावनाओं को जानने के लिए, स्थिति का आकलन करने और यह पता लगाने के लिए कि हम पहाड़ों की जनता की ओर से क्या कर सकते हैं ताकि स्थिति को बहाल करने और शांतिपूर्ण राजनीतिक समाधान पर पहुँचने में मदद मिल सके।...

...महोदय, भय और असुरक्षा से भरे देश से वापस आने के बाद, यह हमारा कर्तव्य है कि हम इस सदन के समक्ष वे सभी तथ्य रखें जो हमने वहाँ दो दिनों में मिले लोगों से सीखे और खोजे हैं।

महोदय, जब यह विद्रोह शुरू हुआ तो मैं मानता हूँ कि सरकार और भारत के अधिकांश लोगों को आश्चर्य हुआ और इसे बल प्रयोग से दबाना आवश्यक माना गया। कुछ समय पहले इस विधानसभा में मुख्यमंत्री से पूछा गया था कि मिज़ो हिल्स में क्या सेना मार्शल लॉ के शासन के तहत थी या नागरिक शक्ति की सहायता के लिए वहाँ थी। उत्तर यह था कि सेना को नागरिक शक्ति की सहायता के लिए बुलाया गया था और इसलिए, संसद के सभी अधिनियम और सभी कानून उस स्थिति पर लागू होते हैं जिसमें सेना नागरिक शक्ति की सहायता के लिए काम कर रही हैं।... 28 फरवरी के बाद से मिज़ो हिल्स में जो स्थिति बनी हुई है, उसमें हम यह उम्मीद नहीं कर सकते कि सभी निर्दोष लोग, भारत के प्रति वफादार लोगों की सारी संपत्ति सुरक्षित हो। हालाँकि, अगर संसद द्वारा बनाए गए कानूनों और भारतीय सेना अधिनियम के तहत कानूनों का पालन किया गया होता, तो मेरा मानना है कि भारत सरकार के प्रति वफादार उन निर्दोष लोगों की संपत्ति और जीवन कम से कम नुकसान होता।...

… ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई जहाँ आवश्यक बल की एक निश्चित मात्र से अधिक बल का प्रयोग किया गया। 5 और 6 मार्च को वायु सेना को काम में लाया गया और उसका प्रयोग गोलीबारी और मशीन-गन से किया गया, और आइज़ोल शहर पर बमबारी की गयी। मुख्य मंत्री ने कहा था कि बमबारी का प्रयोग नहीं किया गया। लेकिन इस्तेमाल किए गए विमान, लड़ाकू विमान ही थे। क्योंकि आइज़ोल मे लोगों के साक्ष्य और हमारी अपनी आँखों के साक्ष्य ने हमें आश्वस्त किया है कि उन विमानों से गिराए गए कुछ वस्तुएँ फट गयी हैं, नष्ट हो गयी हैं, इस राष्ट्र के प्रति वफादार लोगों के जीवन और संपत्ति को नुकसान पहुँचा है। आइज़ोल पर कब्ज़ा करने के लिए अत्यधिक बल का प्रयोग, वायु सेना का उपयोग करना अत्यधिक था। क्योंकि यह नहीं बताया जा सकता है कि कौन मिज़ो नैशनल फ्रन्ट वॉलन्टियर है और कौन मिज़ो ज़िले में सत्तारूढ़ पार्टी, मिज़ो यूनियन के हैं। जब सेना मिज़ो हिल्स में प्रवेश करते समय गिराए गए बम भी ज़्यादतियाँ थी।

कुछ गाँवों में, जहाँ कोई प्रतिरोध नहीं था, जैसे कोलासिब में सेना घुस गए और मिज़ो नैशनल फ्रन्ट के वॉलन्टियर्स के भाग जाने के बाद जो लोग पीछे रह गए, उन्हें उम्मीद था कि सेना उनकी रक्षा करेगी, लेकिन इसके बजाय उन्होंने गाँव के लोगों को घेर लिया और सभी लोगों को ज़मीन पर लेटने के लिए कहा गया और उन्हें लात-घूंसों से पीटा गया था। लोगों को थप्पड़ मारे गए, गाँव के जिम्मेदार लोगों पर भी हाथ उठाया गया। पूरे गाँव के लिए यह आश्चर्य और सदमे की बात थी कि उन लोगों के साथ इस प्रकार किया गया था जो अपनी चौकियों पर डेट हुए थे और बिना किसी उकसावे के निहत्थे थे। जिन लोगों को घेरकर पीटा गया उनमें शिक्षक, सरकारी अधिकारी और किसान सभी शामिल थे जिनका मिज़ो नैशनल फ्रन्ट से कोई संबंध नहीं था। इसके अलावा और भी कई चीजें थी जो असुरक्षा की भवन और रक्षा बलों के प्रति भय की भवन पैदा करने के लिए की गयी थी। निर्दोष लोगों की गिरफ़्तारी का डर, मिज़ो लोगों के मन में बहुत है, क्योंकि अंधाधुंध गिरफ्तारियाँ हो रही हैं। जिला परिषद के नेताओं द्वारा भी यह बताया गया था कि जो कई लोगों को गिरफ्तार कर रहें हैं जो मिज़ो नैशनल फ्रन्ट के समर्थक भी नहीं हैं।

कोलासिब गाँव में हो रही ज्यादतियों में एक व्यक्ति जो अपने घर के बाहर खड़ा था को गोली मारने का जिक्र नहीं छूट सकता। मिज़ो नैशनल फ्रन्ट पहले ही गाँव से निकल चुके थे और सेना के अंदर घुसने में कोई प्रतिरोध नहीं हुआ था। गेट के ठीक नीचे एक व्यक्ति अपने घर के पास खड़ा था, जो राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन कार्यक्रम के तहत एक अस्थीययी मजदूर के रूप में काम कर रहा था। उसके हाथ में कोई हथियार नहीं था और वह नेपाली था।

सबसे अमान्य कृत्य, सेना के जवानों द्वारा असहाय महिलाओं के साथ बलात्कार करने का कृत्य, यहाँ तक कि 14 या 15 वर्ष की लड़कियों के साथ भी बलात्कार किया गया जो खुलेआम दिनदहाड़े हुई हैं। ये बलात्कार रात में भी हो रही हैं, दिन में भी और हर समय। लोगों को खासकर महिलाओं को सबसे ज्यादा डर इसी बात का है कि बंदूक की नोक पर इनकी पतियों और चाचाओं को बाहर निकलकर उनके साथ बलात्कार किया जाता है। हमें ऐसी घटनाओं के बारे में सुनने मिली हैं। हमें सबूत दिए गए हैं और बयान डिप्टी कमिशनर को भी भेजे गए हैं लेकिन जब तक हम पहुँचे, डिप्टी कमिशनर से इस घटनाओं को रोकने के लिए कुछ नहीं किया। हमने इस बारे में उनसे पूछा भी और उन्होंने बताया कि ये बयान सेना कमांडर को भेज दिए गए हैं। हम यह समझते हैं कि जब सेना बहुत दबाव में होती है – तो लड़ाई खत्म होने के बाद वे कई तरह से उस दबाव को कम करने की कोशिश करते हैं। लेकिन निश्चित रूप से हम अपने रक्षा बलों के इन अत्याचारों के लिए माफ नहीं कर सकते, इन्हें तुरंत रोका जाना चाहिए, अन्यथा, देश के वफादार लोगों को इस देश के खिलाफ कर दिया जाएगा। एम.एन.एफ वॉलन्टियर्स बिना किसी प्रतिरोध के उन्होंने गाँव छोड़ दिए, लेकिन जो लोग देश के प्रति वफादार बने रहे, उन पुरुष, महिलाएं और बच्चे इस अत्याचारों के अधीन रहे हैं।

एक और बात जिससे लोग डरते हैं, वह है गाँवों को जला दिया जाना। कई गाँव पहले ही जला दिए गए हैं और पूरे जिले में इस खतरे के बारे में व्यापक रूप से फैला हुआ है, जिसमें कोलासिब और आइज़ोल के शहर भी शामिल हैं, जहाँ हमने दौरा किया, जिसे भारतीय सेना की धमकी व्यापक रूप से जानी जाति है कि अगर किसी गाँव से कोई गोली चली या कोई आवाज़ आई

तो सेना उस गाँव को जला देगी। आइज़ोल और अन्य जगहों के कुछ नेताओं द्वारा हमें यह जानकारी मिली हैं।”

मिज़ोरम भारतीय संसद के दोनों सदनों : लोक सभा (लोगों का सदन) और राज्य सभा (प्रतिनिधि सभा) में बहस और चर्चाओं में एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा बन गया। 8 अगस्त 1966 को, भारतीय रक्षा मंत्री वाई बी चवन ने लोक सभा में घोषणा की कि चीन ने जून और जुलाई 1966 में पूर्वी पाकिस्तान में तीन बार घुसपेठ किया गया और मिज़ो की सहायता की। चीनी और पकिस्तानियों ने मिज़ो को सैन्य सहायता प्रदान करने के लिए केंद्र भी स्थापित किये।[65]

मिज़ोरम और मिज़ो लोगों को मिज़ोरम सरकार के हाथों से मुक्त कराने के लिए भारतीय सरकार ने वर्ष 1967 को अभियान चलाया। मार्च, 1966 से उस वर्ष के अंत तक, भारतीय सैनिकों ने मिज़ोरम और मिज़ो लोगों पर सबसे अमानवीय तरीके से कार्य किये। फिर भी, यह ज्ञात था कि मिज़ोरम और मिज़ो लोगों का असली शासन नई मिज़ोरम सरकार के हाथों में है। इसलिए, भारत सरकार ने कार्रवाई करने के लिए अपनी सैन्य शक्ति का उच्चतम प्रयोग किया।

भारत सरकार की सबसे महत्त्वपूर्ण और प्रमुख पहलों में से एक है – गाँव का समूहीकरण (ग्रूपींग ऑफ विलेजेस)। इस प्रकार भारत सरकार ने ‘समूहीकरण’ नामक नीति अपनाई। गाँवों का इस प्रकार का समूहन ब्रिटिश सरकार द्वारा 1958 में एशिया दक्षिण पूर्व में मलाया में एवं दक्षिण वियतनाम में संयुक्त राज्य अमरिका द्वारा अपनाई गई नीति की समान थी और भारत सरकार ने इस नीति का अनुसरण किया। इस समूहीकरण के पीछे की सच्चाई यह थी कि रमबुआई के दौरान भारतीय सेना द्वारा की गई भयावह सैन्य कार्रवाइयों में से एक ‘समूहीकरण’ (खोखोम) का मुख्य उद्देश्य मिज़ो भूमिगत सेना द्वारा भारतीय सेना पर संभावित हमलों को कम करना तथा अपने जंगल शिविरों से आस-पास के गाँवों तक उनकी आसान पहुँच को रोकना था, जहाँ मिज़ो भूमिगत सेना भोजन और भारतीय सेना के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकती थी। अतः मिज़ोरम में शासन दोबारा

हासिल करने और इस तरह के युद्ध के खिलाफ लड़ने के लिए गाँव समूहीकरण का प्रयोग किया गया।

दुनिया में अच्छा नाम कमाने और पहाड़ियों को धोखा देने के लिए भारत सरकार ने कई गाँवों को मिलाकर इसका नाम 'प्रग्रेसिव एण्ड प्रोटेकटेड विलेजेस' (पी.पी.वी.) अर्थात प्रगतिशील और संरक्षित गाँव रखा गया, लेकिन जातीय स्वतंत्रता सेना के अनुसार उन्हें 'एकाग्रता शिविर' कहा गया। जिसे द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान हिटलर द्वारा यहूदियों को कैद करने के लिए प्रयोग किया गया शिविर माना जाता है। इनमें से अधिकांश पी.पी.वी. सिलचर से लुङलेई तक पहाड़ों के बीच दक्षिण की ओर घुमावदार मुख्य सड़क के बगल में स्थित थे। सुरक्षा व्यवस्था विस्तृत और सख्त थी। प्रत्येक ग्रामीण के पास एक पहचान पत्र था जिसे उसे शिविर की परिधि में प्रवेश करते या छोड़ते समय दिखाना पड़ता था।[66]

गाँव समूहीकरण का आदेश शुरू में मिज़ो जिले के लिए भारत सरकार के सिलचर के संपर्क अधिकारी बी.सी. करियापा द्वारा जारी किया गया था। पत्र है: No CLD 1/ 1-67/1, भारत रक्षा नियम, 1962 का Rule 57 और गृह मंत्रालय का पत्र संख्या S.O. 4045, दिनांक 31 दिसंबर, 1966। बाद में, मिज़ो ज़िले के डिप्टी कमिशनर, आइज़ोल ने जिला मैजिस्ट्रैट के रूप में गाँव सभा के आदेश जारी किये। (पत्र संख्या APVC. 21/70/295/1, Dated Aijal, the 6th December, 1970 और संख्या APVC. 21/79/295/2, of Aijal, the 9th December, 1970) कानून का आधार है : असम लोक व्यवस्था रखरखाव अधिनियम, 1935 की धारा 13-D (स्वायत्त जिला अधिनियम, 1935, शांशोधित, असम सरकार अधिसूचना संख्या PLB. 213/68/3, दिनांक 1.8.68)[67]

गाँवों का समूहीकरण 1967 और 1968 में किया गया था। पहले चरण में 75 गाँवों को 15 समूहीकरण केंद्रों में समूहीकृत किया गया था और दूसरा चरण 1968 से 1970 तक चलाया गया था, जिसके दौरान 367 गाँवों को 73 समूहीकरण केंद्रों में समूहीकृत किया गया था।[68] इस नीति से

प्रभावित गाँववालें समूहीकृत होने के लिए तैयार नहीं थे लेकिन उनके पास दूसरा रास्ता नहीं था। उन्होंने अनिच्छा से आज्ञा का पालन किया क्योंकि भारतीय सेना ने उन्हें अपना गाँव छोड़ने के लिए मजबूर किया था। पु आर.वानलोमअ, जिन्होंने अपने आँखों से देखा था, ने अपने पुस्तक ‘क रम लेह केई’ में यह बयान किया हैं कि ग्रामीणों को पी.पी.वी. मे ले जाने का काम भारतीय सेना द्वारा जबरन किया गया था। अधिकांश मामलों में मिज़ो नागरिकों को अपना सामान बांधकर पी.पी.वी. में जाने के लिए एक ही दिन का नोटिस दिया गया था। जिन परिवारों में बच्चें थे, वे यह जानते थे कि अपना सारा सामान नहीं ले जा सकेंगे क्योंकि उन्हें बच्चों को अपनी पीठ पर ढोना होगा, इसलिए उन्होंने अपने जानवरों को मार डाला, लेकिन उन्हें खाने का समय नहीं मिला, क्योंकि भारतीय सेना ने उन्हें बंदूक की नोक पर अपने घर छोड़ने के लिए मजबूर किया। इसके अलावा, चावल, जो मिज़ो का मुख्य भोजन है, कुछ मिज़ो परिवारों द्वारा गाँवों के बाहरी इलाकों में ले जाया गया, जिन्हें उम्मीद थी कि पी.पी.वी. में बसने के बाद वे वापस लौट आएंगे। लेकिन जैसे ही ग्रामीण पी.पी.वी. के लिए रवाना हुए, भारतीय सेना ने सभी चावल को जला दिया या चुरा लिया।[69]

इस अभियान को ‘ऑपरेशन एक्म्प्लिशमेंट’ नाम दिया गया था। पी.पी.वी. को नुकीले बाँसों से घेरा गया था। सभी बाड़ लगाने का काम बिना किसी मज़दूरी के गाँव के मर्दों द्वारा बलपूर्वक कराया गया था। असल में इन मिज़ो लोगों को मिज़ो जातीय सेना के विरुद्ध मानव ढाल के रूप में प्रयोग किये गए थे। मिज़ो लोगों द्वारा सामना की गई माउताम अकाल परिस्थितियाँ इससे कहीं कम गंभीर था।[70] प्रगतिशील और संरक्षित गाँव (पी.पी.वी) प्रभावित गाँवों के लिए फायदेमंद प्रतीत होते थे क्योंकि समूह केंद्रों के लोगों से यह वादा किया गया था कि उन्हें मुफ़्त राशन दिया जाएगा, लेकिन उन्हें बहुत कम मात्रा में राशन मिला। इसके अलावा, समूह केंद्रों में रह रहें गाँव के लोगों को अक्सर सेना के शिविर बनाने, समूह केंद्र के चारों ओर बाद लगाने, खाईयाँ खोदने और बंकर बनाने आदि काम करने के लिए मजबूर किया जाता था। उन्हें केंद्र से बाहर जाने के लिए भारतीय सेना से पूर्व अनुमति लेने के लिए सूचित भी किया जाता था। सीमित कार्य घंटों और रात के समय कर्फ्यू के प्रतिबंध के करण, गाँव वालें अपने झूम में अधिक समय नहीं बिता सकते थे जिसके परिणामस्वरूप

कृषि फसलों की उत्पादकता कम हो गई। जबरन मजदूरी, कड़ी महनत और कुपोषण ने समूह केंद्रों के लोगों को त्रस्त कर दिया। इस प्रकार वे विभिन्न बीमारियों से पीड़ित हुए, और उनमें कई लोगों की मौत भी हो गई।

भारतीय सेना ने वॉलन्टियर्स की तलाशी और उन पर हमला करना शुरू किया। सेना द्वारा प्रताड़ित किये गए कुछ जीवन भर के लिए विकलांग हो गए थे और कुछ मर भी गए। कई बार उन्होंने उन लोगों को गिरफ्तार किया जिनके बारे में उन्हें संदेह था कि उनका वॉलन्टियर्स से संबंध है। जिन लोगों को मारा-पीटा और प्रताड़ित किया गया उनमें से कई लोगों को गिरफ्तार करके भारत की अलग-अलग जेलों में भेज दिए जाते थे।

उन दिनों मिज़ो स्वभाव से शिकारी थे, भोजन के लिए जानवरों का शिकार करते थे। अक्सर वे अपने बंदूकों के लिए कारतूस खुद बनाते थे और यहाँ तक कि बारूद भी खुद बनाते थे। जब भारतीय सेना को घर के मालिक द्वारा लंबे समय से फेंकी गई निर्माण सामग्री का थोड़ा स भी अंश मिलता था तो वह घर के पुरुष सदस्यों को प्रताड़ित करने और यहाँ तक कि उन्हें मारने के लिए पर्याप्त होता था। यह उनके घर में आग लगाने के लिए पर्याप्त कारण से भी अधिक था।

लोगों की हताश स्थिति के करण वॉलन्टियर्स ने जवाबी कार्रवाई की और जगह-जगह घाट लगाकर हमला किया गया। घाट लगाकर किये गए हमलों में अक्सर वॉलन्टियर्स को बढ़त मिलती थी, लेकिन भारतीय सेना की गुस्सा असहनीय थी। वे आस-पास के गाँवों के घरों को जला देते थे और कई लोग भी मारे गए। कुछ गाँवों में पुरुषों को एक साथ मैदान में इकट्ठा करके उनपर बहुत अत्याचार किये जाते थे। कुछ जगहों पर महिलाओं सहित लोगों को पूरे दिन तप्त धूप या लगातार बारिश में खड़ा रखा जाता था।

भारतीय सेना के साथ कुछ मिज़ो थे जो 'कोकतू' थे, क्योंकि उन्हें वॉलन्टियर्स की पहचान के लिए प्रयोग किये जाते थे जो ग्रामीणों के साथ खुलेआम रहते थे। ये 'कोकतू' नकाबपोश होते थे।

कभी-कभी सेना द्वारा सज़ा से खुद को बचाने के लिए या सेना से लाभ उठाने के लिए वे वॉलन्टियर्स के रूप में निर्दोष व्यक्तियों की ओर भी इशारा करते थे और जिस किसी की ओर ये लोग इशारा करते थे, उसे सफाई देने का मौका न देकर गिरफ्तार कर लिया जाता था। विलेज काउन्सल (वी.सी.) सदस्यों पर कभी-कभी वॉलन्टियर्स द्वारा भारतीय सेना के साथ उनके व्यवहार को लेकर भी संदेह किया जाता था। यह वास्तव में उनके लिए एक कठिन और पीड़ादायक समय था और सच में वे हथौड़े और निहाई के बीच की स्थिति में थे।[71]

मिज़ो विद्रोह (रमबुआई) को मिज़ोरम के राजनीतिक इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण मील का पत्थर माना जा सकता है, लेकिन इसका परिणाम विनस्करी था क्योंकि पूरा देश उन अत्याचारों से घिरा हुआ था जो मिज़ो इतिहास ने कभी नहीं देखे थे। 'हथौड़े और निहाई के बीच रहना' वाक्यांश बहुत ही उपयुक्त हैं जो रमबुआई के पीड़ितों द्वारा बीस अंधेरे वर्षों के दौरान मिज़ो लोगों के जीवन का वर्णन करने के लिए अक्सर उपयोग किया जाता है। भारतीय एवं एम एन एफ के सेना द्वारा अपनाए गए विद्रोह और विरोधी उपायों ने आम लोगों के जीवन को बहुत खतरा और पीड़ादायक बना दिया। माता-पिता ने सेना और भूमिगत सेना दोनों के हाथों अपने बेटों को खो दिया, कई महिलाओं को यौन उत्पीड़न का सामना करना पड़ा। कई निर्दोष नागरिकों को भी बिना किसी उचित कारण के बुरी तरह पीटा गया। इस तरह भूख, दर्द, डर और निराशा की भावना ने मिज़ो लोगों के जीवन को जकड़ लिया।

1969 में मिज़ो विद्रोह (रमबुआई) अपने चरम पर पहुँच गया। स्वतंत्रता के लिए मिज़ो विद्रोह में चूँकि मिज़ो नागरिकों को सबसे अधिक कष्ट सहना पड़ा, स्थानीय सामाजिक संगठन और चर्च के नेता बातचीत करने के लिए मजबूर हुए। एक ईसाई समाज के रूप में मिज़ो लोगों के पास शांति निर्माता के रूप में केवल चर्च था। 1969 के बाद मिज़ो नैशनल फ्रन्ट के नेताओं और भारत सरकार के बीच शांति वार्ता को सुलझाने का प्रयास किया गया। अंततः राजनीतिक नेताओं, चर्च जैसे गैर-सरकारी संगठन के प्रतिनिधियों, मिज़ो ज़िरलाई पोल (एम.जेट.पी.) नामक छात्र संगठन और

यंग मिज़ो एसोसिएशन (वाई.एम.ए.) आदि संगठनों द्वारा शांति वार्ता के कई प्रयास के बाद शांति वार्ता सफल हुई। अंततः 30 जून 1986 को नयी दिल्ली में मिज़ो नैशनल फ्रन्ट और भारत सरकार के बीच शांति समझौते पर हस्ताक्षर होने के बाद मिज़ो विद्रोह (रमबुआई) का अंत हो गया। 'इस समझौते में अन्य बातों के साथ-साथ मिज़ोरम संघ राज्य क्षेत्र को राज्य का दर्जा प्रदान करना भी शामिल था। समझौते पर हस्ताक्षर करने के बाद भारत सरकार ने मिज़ोरम राज्य विधायक,1986 पेश किया। 20 फरवरी, 1987 को मिज़ोरम का भारतीय संघ के 23 वें राज्य के रूप में उद्घाटन किया गया।'[72]

संदर्भ

---

[1] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृ. 22 पर उद्धृत (मूल संदर्भ अंग्रेजी में; अनुवाद मेरा)

[2] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, पृष्ठ सं. 51 (मूल संदर्भ अंग्रेजी में; अनुवाद मेरा)

[3] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, पृष्ठ सं.xv (मूल संदर्भ अंग्रेजी में; अनुवाद मेरा)

[4] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, पृष्ठ सं. 52 (मूल संदर्भ अंग्रेजी में; अनुवाद मेरा)

[5] Malsawmdawngliana & Rohmingmawii, Mizo Narratives: accounts from Mizoram, पृष्ठ सं.285 (मूल संदर्भ अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[6] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, पृष्ठ सं. 54, (अनुवाद मेरा)

[7] Malsawmdawngliana & Rohmingmawii, Mizo Narratives: accounts from Mizoram, पृष्ठ सं.302 (अनुवाद मेरा)

[8] Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, पृष्ठ सं.11 (अनुवाद मेरा)

[9] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, पृष्ठ सं. xiii & xiv (अनुवाद मेरा)

[10] ज़ोज़ाम वीकली, खंड-VII, अंक 35, 4-10 अगस्त,2011, आइज़ोल:12 (अनुवाद मेरा)

[11] Malsawmdawngliana & Rohmingmawii, Mizo Narratives: accounts from Mizoram, पृष्ठ सं.306 (अनुवाद मेरा)

[12] Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, पृष्ठ सं.12 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[13] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, पृष्ठ सं. 15 (अनुवाद मेरा)

[14] वही, पृष्ठ सं.54 (अनुवाद मेरा)

[15] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, पृष्ठ सं. 5-6 (अनुवाद मेरा)

[16] Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, पृष्ठ सं.15; Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं. 45 (अनुवाद मेरा)

[17] Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, पृष्ठ सं.16 (अनुवाद मेरा)

[18] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, पृष्ठ सं.3 (अनुवाद मेरा)

[19] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं.47 (अनुवाद मेरा)

[20] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं. 47; Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, पृष्ठ सं. 3,13 & 19 (अनुवाद मेरा)

[21] R. Zamawia, Zofate Zinkawngah- Zalenna mei a mit tur a ni lo, पृष्ठ सं.177 (अनुवाद मेरा)

[22] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement,1966-1971, पृष्ठ सं.4 (अनुवाद मेरा)

[23] वही, पृष्ठ सं.5 (अनुवाद मेरा)

[24] Being Mizo, 82,129 (अनुवाद मेरा)

[25] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, 2012, पृष्ठ सं.xv, 4 (अनुवाद मेरा)

[26] वही, 6 (अनुवाद मेरा)

[27] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, पृष्ठ सं. 51 (मूल संदर्भ अंग्रेजी में; अनुवाद मेरा)

[28] Joy L.K. Pachuau, Being Mizo, 83 (अनुवाद मेरा)

[29] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं.55 (अनुवाद मेरा)

[30] MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, पृष्ठ सं.1 (अनुवाद मेरा)

[31] R. Zamawia, Zofate Zinkawngah- Zalenna mei a mit tur a ni lo, पृष्ठ सं.179 (अनुवाद मेरा)

[32] वहीं , पृष्ठ सं. 239 (अनुवाद मेरा)

[33] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं. 57 (अनुवाद मेरा)

[34] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, पृष्ठ सं.32 (अनुवाद मेरा)

[35] C.Zama, Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986), पृष्ठ सं. 18; R.Zamawia, 241 (अनुवाद मेरा)

[36] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, पृष्ठ सं.33,34 (अनुवाद मेरा)

[37] C.Zama, Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986), पृष्ठ सं.18 (अनुवाद मेरा)

[38] जेरिको, फिलिस्तीन में जोर्डन नदी के तट पर एक फिलीस्तीनी किला था। मिस्र से पलायन के बाद पवित्र भूमि (फिलिस्तीन) की ओर जाते समय यहूदियों ने दूसरी तरफ से जोर्डन नदी को पार किया और उन्हें 'प्रॉमिस लैंड' (बाइबिल के एक प्रसंग में परमेश्वर द्वारा इजरायल के लोगों से यह वादा किया गया है कि फिलीस्तीन यहूदियों की भूमि होगी।) पर कब्जा करने के लिए जेरिको को जीतना पड़ा। परमेश्वर के आदेश के अनुसार, यहूदियों ने नाटकीय ढंग से जेरिको किले पर कब्जा कर लिया। इस प्रकार, एम.एन.एफ. का मानना था कि उन्हें परमेश्वर से भी मदद मिलेगी क्योंकि वे ईसाई थे। जेरिको से संबंधित विवरण के विस्तार के लिए देखें- बाइबल के 'पुराना नियम' में 'यहोशू' के अंतर्गत छठा अध्याय।

[39] MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, पृष्ठ सं.210 (अनुवाद मेरा)

[40] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं.70 (अनुवाद मेरा)

[41] Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, पृष्ठ सं.35

[42] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं.72 (अनुवाद मेरा)

[43] Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, पृष्ठ सं.36 (अनुवाद मेरा)

[44] वही, पृष्ठ सं.37; MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, पृष्ठ सं.225,226,230 (अनुवाद मेरा)

[45] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, पृष्ठ सं. 72-79 (अनुवाद मेरा)

[46] R. Zamawia, Zofate Zinkawngah- Zalenna mei a mit tur a ni lo, पृष्ठ सं.337-338 (अनुवाद मेरा)

[47] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं.73 (अनुवाद मेरा)

[48] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971,पृष्ठ सं.13-15 (अनुवाद मेरा)

[49] वही, 33 (अनुवाद मेरा)

[50] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं.72-73 (अनुवाद मेरा)

[51] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, पृष्ठ सं.34 (अनुवाद मेरा)

[52] वही, Forward, (अनुवाद मेरा)

[53] Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, पृष्ठ सं.74 (अनुवाद मेरा)

[54] वही, 74 (अनुवाद मेरा)

[55] वही, 75 (अनुवाद मेरा)

[56] C.Zama, Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986), पृष्ठ सं.31 (अनुवाद मेरा)

[57] वही, 31 (अनुवाद मेरा)

[58] वही, 32 (अनुवाद मेरा)

[59] वहीं, 33 (अनुवाद मेरा)

[60] वहीं, 33 (अनुवाद मेरा)

[61] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, पृष्ठ सं.100 (अनुवाद मेरा)

[62] R. Zamawia, Zofate Zinkawngah- Zalenna mei a mit tur a ni lo, पृष्ठ सं.295-297 (अनुवाद मेरा)

[63] C.Zama, Thlawhtheihna in Mizoram a Bomb, पृष्ठ सं.132 (अनुवाद मेरा)

[64] Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, पृष्ठ सं.106-107 (अनुवाद मेरा)

[65] Dr.Lalramchuani Sena Samuelson, Mizo Independence Movement, पृष्ठ सं.119 (अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[66] वही, पृष्ठ सं.124 (अनुवाद मेरा)

[67] R. Zamawia, Zofate Zinkawngah- Zalenna mei a mit tur a ni lo, पृष्ठ सं.517-518 (अनुवाद मेरा)

[68] C.Zama, Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986), पृष्ठ सं.82 (अनुवाद मेरा)

[69] वही, पृष्ठ सं. 124-125 (अनुवाद मेरा)

[70] Keihawla Sailo, MCS (Rtd.), Golden History of Lushai Hills (Zoram-Chin-Lushai-Kuki Country), पृष्ठ सं.273 (अनुवाद मेरा)

[71] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, पृष्ठ सं. 224-230 (अनुवाद मेरा)

[72] Malsawmdawngliana & Rohmingmawii, Mizo Narratives: accounts from Mizoram, पृष्ठ सं.366 (अनुवाद मेरा)

अध्याय- 3

‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ उपन्यास का हिन्दी अनुवाद

‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ उपन्यास का हिन्दी अनुवाद

ङ्हिल्ह हर कन तुआर

(दर्द जिसे भूलना मुश्किल है)

(1)

10 मार्च, 2010 की सुबह सूरज के उगने से पहले जागने वालों को सूर्य के उदय के साथ ही यह पता चल जाता है कि आज का दिन गर्म होने वाला है। सुबह के 5 बजने के साथ ही मुझमें बेचैनी-सी होने लगती है और मेरी नींद खुल जाती है। लेकिन, जागने के बाद भी आधे घंटे तक जबरदस्ती लेटी रहती हूँ। जैसा कि मज़ाक में लोग कहते हैं न कि अगर किसी को सोकर जगने में आलस आए तो पिछवाड़े में घुसेड़े जा रहे डंडे के दर्द को भी वह अनदेखा कर देता है, मैं वैसा ही करती हूँ।

इस सुबह भी मैं अपने बिस्तर में देर तक आँखे खोलकर लेटी हुई। लेटते हुए हमारे राज्य के सरकारी मशीनों तथा सामान्य जनता के रहन-सहन की सोच में डूब गई। इस प्रकार से हमारा राज्य कैसे इतना गिर गया है? क्या इसे जगाने वाला कोई नहीं है? आम जनता द्वारा चुने गए सरकार को क्या यह पता नहीं हैं कि हमारे राज्य को क्या चाहिए? चुनाव के समय आत्मनिर्भर राज्य, राज्य का विकास जैसे *कैंपेन* के नारों पर जोर दिया जाता है। लेकिन वास्तव में इसका फल दिखाई नहीं देता। हमारे ही उम्र वाले भी यदि इस बात को ध्यान से सोचना चाहे तो, नई सरकार के द्वारा हमारे राज्य में विकास और प्रगति कहीं पर भी दिखाई नहीं देता है।

कभी कभी मुझे लगता है कि हम मिज़ो लोगों का मन भी अजीब सा प्रतीत होता है। हम ऐसे जाति के लोग है जो किसी दूसरी राजनैतिक *पार्टी* को चुनने और परखने के बजाय लंबे समय तक राज करने वालों को ही घुमा फिराकर चुनते रहते हैं। नई चीजों का अनुभव करने के प्रति हम इतने अनिच्छुक क्यों है? जिसको हमने खारिज कर दिया है, उसी को हम चुनाव में जिताते हैं। और थोड़ी

देर बाद उनकी निंदा करना शुरू कर देते हैं। मुझे लगता है कि मिस्र के गुलामी में पड़ने वालों को आजाद कराना सबसे कठिन कार्य था। उन्होंने बहुत ज्यादा शिकायतें की। वे मिस्र में गुलामी रहकर उप गए थे और उन्हे छुड़ाने वाले का वे प्रतीक्षा कर रहे थे। तभी मूसा आया। लेकिन उसका भी विरोध किया गया। परमेश्वर की योजना में बाधा नहीं डाला जा सकता, सो उन्हें वहाँ से बाहर लाया गया। मिस्र की याद में वे फिर रोने लगे।[1] मुझे लगता है कि हम मिज़ो वाले भी उन्हीं के जैसे हैं।

मुझे पता था कि कुछ हासिल नहीं होने वाला है फिर भी मैं गुस्से से अपने बिस्तर से उठ गई। खाना खाते समय भी मैं उसी बात को सोचती रही। हमारी इतने कम लोगों वाली छोटी-सी जाति में भी अमीर और गरीब के बीच का अंतर एक शर्मनाक चीज है। हमारा राज्य अपनी भूमि में संसाधनों को पैदा करने के बजाय दूसरे राज्यों के संसाधनों पर निर्भर है। हम अपने घरों को ही नहीं बल्कि अपने शरीरों को भी विदेशी सामग्री से सजाते हैं। हमारे संकरी सड़क भी महंगी विदेशी गाड़ियों से भरी पड़ी हैं। सोचना होगा कि 'हमने आखिर ऐसी क्या गलती की है!' (यह सब एक तरह का दंड नहीं है तो और क्या है।)

भारत के उत्तर-पूर्व के छोटे से राज्य में हम मिज़ो लोग अपने मुश्किल जीवन को जी रहे हैं। मुझे लगता है कि राज्य के सबसे छोटे नागरिक से लेकर सबसे बड़े नागरिक तक, सभी *पॉलिटिक्स* से घिरे हुए हैं।(देख लीजिए मेरे जैसी साधारण लड़की भी अभी लिख रही है।) हमारा राज्य एक ईसाई राज्य है, लेकिन, आम जनता में और राज्य के नेताओं में कोई भी ऐसा नहीं है जो मसीह के जैसा जीवन जीता हो। राज्य के विकास के लिए जो भी पैसा आता है उसको भी अमीरों के बच्चे खा जाते हैं, और उसी विकास का लाभ उठाने के लिए आम जनता भाग-दौड़ करती रहती है। ऐसे बहुत से लोग हैं जो आसान तरीके से पैसे कमाना चाहते हैं।

चुनाव से पहले *पोलिटिकल पार्टी* द्वारा बांटे गए *मैनिफेस्टो* और किए गए वादे कहाँ चले गए? आम जनता के बीच 'मुझे आपके लिए काम करने का मौका दीजिए, आपके लिए काम करने की जिम्मेदारी मुझे दीजिए', जैसी बातें कही गयीं। उन्हें काम करने का मौका दिया तो गया। लेकिन

उनका काम कहीं पर भी दिखाई नहीं पड़ता। ऐसे में इसे भी सात अजूबों की सूची में जोड़ देना गलत नहीं होगा! हमारे भोजन की व्यवस्था करने के लिए काम करना तो दूर, जो हमारे सामने मौजूद है उसपर भी ये झपट्टा मार लेते हैं। ऐसा लगता है कि उनके ऐश और आराम के लिए हम ही उन्हें खिला रहे हैं!

लेकिन, इसमें आम जनता की भी गलती है। परिवार में पिता अपनी पत्नी और बच्चों के लिए कई अच्छी चीजें लाने का वादा करते हुए कई बातें कहता है। पत्नी पूरे उत्साह के साथ उसे काम पर जाने वाले कपड़े देकर उसके लिए खाना तैयार करती है। वे एक दूसरे को विदा करते हैं। लेकिन, जिस पिता का वे बेसब्री से इंतज़ार कर रहे होते है, वह केवल जंगली फूल और कुछ दूसरी सामान्य चीजें लेकर घर आता है, रास्ते में अपनी पत्नी और बच्चों के ढेर सारे सवालों से छुटकारा पाने का तरीका भी सोच लेता है। लेकिन, उसके द्वारा लायी गयी उन छोटी-छोटी चीजों से उसका परिवार खुश थे, और उन्होंने कोई शिकायत भी नहीं किया। और इस बात पर पिता भी चकित सा रह गया।

उन छोटी-छोटी चीजों से ही खुश हो जाने के कारण उन्हें ओर कुछ नहीं चाहिए। जब भी वह पिता जंगल की तरफ जाता है, अपनी पत्नी और बच्चों के लिए सिर्फ वही छोटी-छोटी सामान्य चीजें लेकर आ जाता है! यह उसके लिए बहुत ही आसान काम है। दूसरी तरफ हमारे राज्य के लोग भी कुछ इसी तरह के हैं। हमारे राज्य के नेता हमारे माता-पिता की तरह जरूर हैं, लेकिन हम समझते हैं कि हम अपने इलाके के एम.एल.ए. के घर कभी-भी जा सकते है और इसी वजह से वहाँ हर वक्त भीड़ लगी रहती हैं। लेकिन किसी भी परिवार में हर समय एक जैसी स्थिति नहीं होती, वहाँ कभी अच्छी और कभी बुरी स्थिति हो सकती है। ऐसे में यदि वे कभी हमें अच्छे से जवाब नहीं देते तो हम बुरा मान जाते हैं। हम अपेक्षा करते हैं कि वे हमें अच्छे से खिलाएँ-पिलाएँ। बहुत-से लोग तो ऐसे भी होते हैं जो दिन भर उनके घर में ही पड़े रहते हैं। नेताओं के अपने भी बहुत खर्चें होते है। उनके बच्चों को भी अच्छी शिक्षा की जरूरत होती है। खैर, हमारे राज्य के लोगों को भी को जागने की जरूरत है।

नाश्ता करने के बाद मेरे परिवार के सभी लोग अपने-अपने काम के लिए निकल पड़े। मैं भी अपनी किताब को खोलकर 'नायक ने बुलडोजर का बलात्कार करने के बाद...' पढ़ना शुरू किया। ये बस मज़ाक है ... मुझे चिढ़ाने के लिए मेरी दोस्त का छोटा भाई रुआता इस वाक्य का प्रयोग करता है। मैंने ऐसे ही किताब को जल्दी से पलटा। फिर कमरे में जाकर कपड़ा बदलने लगी। मेरा इंतज़ार कर रहे पु रोउछुआहा के घर की तरफ मैंने कदम बढ़ाया।

जब मैं उस घर में पहुँची तो वहाँ एक बूढ़ी औरत भी थी जो किसी और दिन वहाँ नहीं रहती थी। बुज़ुर्गों से बात करने का तरीका मुझे बहुत अच्छे से मालूम है। पी दारथङपुई से उस बूढ़ी औरत के बारे में थोड़ा कुछ जानने के बाद, जैसे ही उनका नाम पता चला, मैंने पूछा- "क पी[2], आपकी उम्र तो बहुत ज्यादा हो गयी होगी ना?" मेरी तरफ घूमकर हँसते हुए उन्होंने कहा, "बोईह्, मैं 90 और 3 साल की हो गई हूँ। मेरी उम्र अब बहुत ज्यादा हो गयी है।" मैंने कहा "अच्छा! लेकिन, अभी तो आप एकदम जवान लग रही हैं और आपका शरीर भी तंदुरुस्त लग रहा है। अरे! क पी, आप अपनी जवानी के दिनों में बहुत ही खूबसूरत रही होंगी।" यह सुनकर वह बहुत खुश हो गयी और उनका उसमें उत्साह बढ़ गया।

"सच बात है, नुबोईह्[3], जवानी के समय मुझे चाहने वाले बहुत थे। मेरे लिए कई गाने भी बनाए गए थे। मेरी दीदी साङलिआनथङी के साथ मेरी तुलना की जाती थी कि दोनों में से कौन ज्यादा सुंदर है। एक बार जब हमारे गाँव में कूत[4] के मौके पर गाँव के राजा लिआनह्लीरआ और उनके मंत्रियों ने युवकों से पूछा कि 'बताओ छीङी और उसके दीदी में से तुम लोगों को कौन ज्यादा सुंदर लगती है?' तब युवकों ने उत्तर दिया, *'कैनी तान चुआन ङूर ङाई लौ छीङदोनतुआई लेनमोई म्हेलठ्राई, अ पार ते ली ल्याय वाल कन लोम नान,' (हमारे लिए तो राज घराने की नहीं बल्कि सुंदर युवती केवल वही है जो हम युवकों के मन को बहलाती है)"* ऐसा कहकर वह हँसने लगी। मुझे लगता है कि उनके लिए यह गाना बिल्कुल उपयुक्त था। वह एक छोटी-सी और थोड़ी मोटी बूढ़ी औरत थीं। जवानी के दिनों में भी वह छोटी लेकिन सुंदर रही होंगी।

"अच्छा! क पी, आप बहुत ही भाग्यशाली हैं कि आप और आपकी बहन किसी गाँव की सुंदर बहनें थीं। यहाँ हम हैं कि पैदा हुए तो किसी को पता भी नहीं चला और किसी से अपने सुंदर होने की बात सुने बिना ही हमारी मृत्यु हो जाएगी।"- कहकर मैंने उन्हें और उत्साहित किया। मेरी ओर मुड़ने के लिए वह अच्छे से बैठने लगीं। उन्होंने हँसते हुए कहा, "देखो बोईह्[5], हमारे गाँव के राजा लिआनह्लीरआ का बेटा था जो पथ्लोई[6] था। वह भी मुझे बहुत पसंद करता था। लेकिन मेरी दूसरे गाँव में शादी होने वाली थी। इसलिए उसने मुझे गाने के साथ विदा किया जिसे सुनकर मैं भी चकित रह गई थी,-*'छीङख्वालअः थ्लङख्वान व दीम मह ला, लाम अङ लौ लेत लेह अं चे छीङदोनतुआई; अन सोई तुआलते खोत्लाङ मोई तूरअन,' (दूसरे गाँव में शादी करने के बाद भी तुम जरूर वापस आना हे सुंदरी युवती; 'तुआलते'[7] कहे जाने वाले गाँव को सुंदर बनाने के लिए।)* यह बात बताते हुए उन्हें भी अच्छा लग रहा है क्योंकि उनकी आँखों में एक चमक दिखाई पड़ रही थी। उनके जैसे बुज़ुर्गों को अपनी बातें बताने के लिए किसी की जरूरत होती है। मैं समझ सकती हूँ कि आज की दुनिया में उनके पोते और पोते की पत्नी उनके लिए समय नहीं निकाल पाते जिसके कारण उन्हें अकेला महसूस होता है। हालाँकि ज्यादा उम्र तक जीवित रहना परमेश्वर का आशीष है और अपने जीवन के ऊपर हमारा कोई वश भी नहीं है, लेकिन तब भी मुझे बूढ़े होने तक जीवित रहने की इच्छा नहीं होती।

फिर मैंने पूछा- "क पी, जैसे हमलोग हँसी मज़ाक में 'तुआलते वाङलाई'[8] की बातें करते हैं, क्या आपके पास भी उस ज़माने के बारे में बताने के लिए कुछ हैं? क्या अपने गाँव के पुराने ज़माने की अच्छाइयों के बारे में आप कुछ बताना चाहेंगी?" थोड़ी उदासी के साथ उन्होंने कहा- "देखो, पुराने ज़माने का सर्वोत्तम समय तो मेरी माँ की जवानी का समय था, मेरे पास इस बारे में कहने के लिए कुछ भी नहीं है।" "तो फिर आपके लिए जो दूसरे गाने बनाए गए थे, उसके बारे में थोड़ा और बताइए, मैं और सुनना चाहती हूँ"- मैंने कहा।

'केई ज़ोङ क दिङ रिह दोन ए,

थ्लेङ थेई लौ चुङ पथिआन मह कन ङह चुआन;

क ङहक ज़ेल नाङ ए, छीङदोनतुआई।'

(मैं तो अभी उसके लिए रुका हूँ, हम ऊपर वाले ईश्वर की प्रतीक्षा करते हैं जो कभी नहीं पहुँचने वाला है; मैं उस प्यारी-सी सुंदर युवती छीङी की प्रतीक्षा करूँगा।)

जब हम खेती के लिए अपने-अपने खेतों की ओर जा रहे थे तब इनङ्हा खोमना ह्मुन[9] के पास खड़े एक युवक ने यह गीत मेरे लिए गाया था। हमें वहाँ पहुँचने में थोड़ी देर हो गई थी, इसलिए उसके दोस्त उसे अपने के साथ चलने के लिए कह रहे थे। वह उनके साथ बिल्कुल नहीं जाना चाहता था और फिर उसने इस गाने को गाना शुरू किया।

हाऊचुङनुङा ने भी मेरे लिए गाना गाया- *"ठूवा लेनथिआमते, क तीर नाङ चे, व दील ता ला अन मि लाई छीङपुई। लईपुइ रि वुङइन कन खम ङेई अङ।"*

[हे सुंदर कबूतर, मैं तुम्हें वहाँ जाकर उनसे उनके बीच से छीङपुई को मांगने के लिए भेज रहा हूँ। अपनी बंदूक से गोली चलाते हुए (शिकार करते हुए) मैं उसका इंतज़ार करूंगा।')]

"आ, मामबोईह्[10], बहुत साल बीत गया है, इसलिए मुझे अच्छे से याद भी नहीं आ रहा है। बस इतना ही मुझे याद है।"-ऐसा कहकर वह पी दारथङपुई द्वारा दी गयी चाय पीने लगी।

मैंने कहा कि "अरे, क पी, आपको तो अभी तक इतनी सारी बातें याद हैं। हमें तो यह भी याद नहीं कि पिछले साल क्या हुआ था, लेकिन आपकी याददाश्त तो बहुत अच्छी है। तुआलते गाँव की इतनी सुंदर युवती होकर आपका चोङत्लाई[11] में शादी कर लेना तुआलते गाँव के युवकों के लिए निश्चय ही शर्म की बात रही होगी।" इसपर उन्होंने कहा- "यह बात भी सही है। लेकिन, शायद इसमें परमेश्वर की इच्छा भी रही होगी। हमारे ज़माने में केवल मैं ही थी जिसने दूसरे गाँव में शादी की थी। मेरी दीदी ने भी हमारे ही गाँव में शादी की थी।"

जब मैंने यह कहा कि "क पी, मुझे सब समझ में आ रहा है। आप इतनी सुंदर थीं कि आपकी चर्चा दूसरे गाँव तक भी पहुँच गयी थी, है ना? और वैसे भी आपका चेहरा आपके नाम छीङपुई के अनुरूप ही रहा है। अपने समय की युवतियों को आपने खूब पीछे छोड़ दिया होगा।" यह सुनकर वह बहुत खुश हो गयीं।

पु रोउछुआहा, जो बाहर गए हुए थे, उनके वापस आने के बाद हम फिर चाय पीने लगे। आराम कुर्सी पर बैठकर उन्होंने पूछा- "बोईह् ई (बेटी), क्या तुम बहुत देर से मेरा इंतजार कर रही थी?" मैंने कहा कि काफी समय हो गया है लेकिन मैं क पी के साथ मजे-से बातें कर रही थी। फिर उन्होंने गंभीर स्वर में कहा, "बोईह् ई, शायद तुम्हें दो पाटों के बीच पिसने[12] का अनुभव नहीं हुआ है। मैंने भी उस दौर के बाद दोबारा ऐसा अनुभव नहीं किया है। लेकिन उस दौर को भूलना अब मुमकिन नहीं है। जब तक मैं अपनी याददाश्त खो न दूँ, मैं उस बात को बताना बंद नहीं करूँगा।" दीवार से टेक लगाते हुए उन्होंने अपनी आँखें बंद कर लीं, मानो बीते हुए समय को याद कर रहे हों। और मैंने भी झट से अपनी डायरी खोल ली।

(2)

गाँव की तरफ से भी एक नए दल एम.एन.एफ. ह्नम सिपई[13] के गठन की अफवाह रह-रहकर सुनायी पड़ रही थी। लेकिन शायद रोउछुआहा और उनके दोस्तों की दिलचस्पी इसमें नहीं रही होगी, घर पर रहने और अपनी पसंद की युवतियों के साथ खेतों में जाने में ही वे अधिक रुचि रखते थे। हर दिन, यहाँ तक कि धूप और बारिश के बीच भी खेती के लिए जाने में वे हिचकिचाते नहीं थे, बल्कि खुशी-खुशी खेती करने जाते थे। और उन्हें लगता था कि जो उनके भाग्य में है उन्हें जरूर मिलेगा। एम.एन.एफ. के बारे में लगातार कुछ-न-कुछ खबर सुनने को मिलती रही। *इंडिपेंडेंट* होने की अफवाहों से भी रोउछुआहा और उनके दोस्तों को कोई फर्क नहीं पड़ा। लेकिन, तपछक ज़ोल[14] और लेईकापुई[15] में इकट्ठे बैठकर बातचीत करने वाले अधेड़ उम्र के मर्दों की बातें गहरी होने लगीं।

जो एम.एन.एफ. और उसकी गतिविधियों के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी रखते थे, वे पूरे जोश के साथ कहते कि 'इंडिपेंडेंट' होना एक अच्छी बात हो सकती है। कई लोग थे जो बड़ी हिम्मत वाली बातें करते थे। उनमें से कई ऐसे भी थे जो इस मामले में कुछ नहीं जानते थे, फिर भी इसमें दिलचस्पी लेते थे।

5 मार्च, 1966 को मिज़ोरम की राजधानी आइज़ोल पर एक विमान से *बॉम्ब* गिराई

गई। कुछ ही देर में यह खबर पूरे मिज़ोरम में फैल गयी। कुछ लोग इस बात से बहुत डर गए और कुछ ऐसे भी थे जिन्हें नहीं पता था कि इस घटना से उनको डरना चाहिए या नहीं। और, कुछ ऐसे भी थे जिन्हें लगता था कि जब आइज़ोल में बमबारी हो गयी है तो गाँव वाले सुरक्षित हैं। इसके अलावा कुछ ऐसे भी थे जो 'इंडिपेंडेंट' होने की लड़ाई के जोश में अंधे हो गए थे। उस समय मिज़ो लोगों की हालत ऐसी हो गई थी कि हवा का रुख जिस और होता, वे उसी ओर झुक जाते। मिस्र में गुलाम बनाए गए इज़रायल के लोगों[16] की तरह मिज़ो लोगों के मन को भी बहलाना आसान हो गया था। मिज़ो लोगों को ह्रम सिपई हीरे की तरह सुंदर और मूल्यवान लगने लगा था।

आइज़ोल में बमबारी होने के कुछ दिनों के बाद ईस्ट लुङदार गाँव की चर्चा का विषय भी बदलने लगा। इससे पहले साल 1965 के अंतिम दिनों में ही एम.एन.एफ. द्वारा ईस्ट लुङदार और बूङज़ुङ गाँवों में अपना *हेडक्वार्टर* बनाने के कारण भारतीय सेना ने भी यहाँ अपना ठिकाना बनाने की कोशिश की। मतलब इन गाँवों में रहने वाले लोगों के लिए पहले से ही माहौल बिल्कुल भी शांतिपूर्ण नहीं था। एम.एन.एफ. ने 1 मार्च, 1966 को जब 'इंडिपेंडेंट' होने की घोषणा की, उस समय यदि जोश में आकर वे जरूरत से ज्यादा आत्मविश्वास का शिकार न हुए होते तो उन्हें अपनी अशांत स्थिति का एहसास जरूर होता। लेकिन, बुरा न मानें तो, अधिकांश लोग ऐसे थे जो 'इंडिपेंडेंट' होने की लड़ाई का मतलब भी नहीं समझते थे, इसलिए हो सकता है कि वे आने वाले खतरे से अनजान हों और शायद इसीलिए उन्हें किसी तरह का कोई डर-भय नहीं था। और, ऐसे ही कई दूसरे गाँव भी थे जिनको यही नहीं पता था कि उन्हें चिंता करनी चाहिए या नहीं। इसके अलावा बढ़-चढ़ कर बोलने

वालों के पास शब्दों की कमी नहीं थी। ऐसे कई लोग थे, जिन्हें लगता था कि भारत को आसानी से धमकाया जा सकता है।

15 नवम्बर,1966 की दोपहर, हमेशा की तरह, ईस्ट लुङदार गाँव के लोग अपने-अपने काम में व्यस्त थे। चम्फाई से आए भारतीय सेना के जवानों ने सभी गाँववालों को तुरंत अपने-अपने खेतों से घर लौटने का आदेश दिया। जल्दी-जल्दी वे एक दूसरे को खबर करते गए और फसल काटने और दूसरी जरूरी चीज़ों की चिंता किए बगैर समय से पहले ही सभी अपने खेतों से गाँव की ओर लौट गए।

सिपई के आदेश से गाँववाले दीलज़ोल में इकट्ठे हो गए। सिपई के जवानों ने कहा कि वे लोग भारत सरकार की इच्छा के अनुसार इसी गाँव में रहेंगे और गाँववालों को निर्देश दिया गया कि वे एम.एन.एफ. का पक्ष न लेकर भारत की मदद करें। उन्हें यह समझाया गया कि एम.एन.एफ. के लोग जो करना चाहते हैं, वह सही नहीं है और भारत सरकार मिज़ो लोगों को प्यार करती है। ऐसी अच्छी-अच्छी बातें कहकर भारतीय सेना गाँववालों का दिल जीतना चाहती थी। इसके बाद सभी सैनिक वापस चले गए। 'इंडिपेंडेंट' होने वाले मुद्दे पर हालाँकि पहले भी चर्चा होती थी, लेकिन उस शाम के बाद से प्रत्येक व्यक्ति आपस में इस बारे में बातें करने लगा। बहुत से ऐसे लोग भी थे जो अब भी इन बातों का अर्थ नहीं समझते थे, इसलिए जानकार लोग उन्हें समझाते थे।

दिन भर खेती के काम से थककर चूर हो जाने पर भी लड़के रात को अपनी पसंदीदा लड़कियों के घर रीम[17] के लिए जाते थे। यह मिज़ो युवकों का रात का मुख्य काम होता है। शाम में भारतीय सैनिकों द्वारा कही गयी उनके गाँव में रहने की बातों के बारे में बहुत चिंता किए बगैर उस रात भी लड़के उन-उन लड़कियों के घर गए, जहाँ-जहाँ वे हमेशा जाया करते थे। रोउछुआहा और उसके दोस्त भी नुला दारथङी[18] के घर के लिए निकल पड़े।

दारपुई ने आँखों से चिंता जाहिर करते हुए कहा- “अरे, भारत सरकार हमारे गाँव में सेना रखने की कोशिश कर रही है, लेकिन मैं यह हरगिज़ नहीं चाहती। मुझे तो सैनिकों से डर लगता है।”

शाङथङआ, जो खुद को उनमें से सबसे ज़्यादा होशियार समझता है, ने दारपुई द्वारा बनाई गई बीड़ी[19] को फूंककर नाक से धुआँ निकालते हुए कहा- “बेकार की बात है। तुम इतना क्यों डर रही हो? वे अधिक देर तक यहाँ नहीं टिकेंगे। ह्मम सिपई जल्द ही भारतीय सेना को यहाँ से बाहर खदेड़ देगी।” हालाँकि उसके चेहरे से यह लग रहा था कि यह बात वह बड़े आत्मविश्वास से कह रहा था। लेकिन यह उसकी अज्ञानता और मूर्खता है!

दोपहर में अपने सामान के साथ आए भारतीय सैनिकों के बारे में वे जो कुछ भी जानते थे उन्हीं के बारे में बातें कर रहे थे। सभी का मानना था कि वे लंबे समय तक नहीं रहने वाले हैं। तभी, रात के तकरीबन दस बजे मुर्गे ने बाँग दी जो युवकों के लिए अपनी प्रेमिकाओं के घर से वापस जाने के समय का संकेत है। और फिर अगले दिन एक साथ खेत में जाने की बात करते हुए उन्होंने एक-दूसरे को अलविदा कहा। कोई नहीं जानता था कि वह रात उनके बुरे दिनों की शुरुआत की रात थी। और दिनों की ही तरह अगले दिन भी साथ मिलकर कड़ी धूप में अपनी-अपनी पक चुकी फसलों की रखवाली करने के लिए वे उत्साहित थे। अपने खेतों में जाते समय पसीने से लथपथ हो जाने की वे परवाह नहीं करते थे। उन्हें किसी चीज़ की कमी नहीं खलती थी, जो दूसरे के पास था, उनके पास भी था। वे जिसे पसंद करते थे, वह भी आँखों के इशारे से उन्हें पसंद करने का यकीन दिलाती थी। यह सब उनके लिए खुशी की ही बात थी। ‘इंडिपेंडेंट’ और ह्मम सिपई की खबरें उन्हें बिल्कुल परेशान नहीं कर रही थीं। वे एक सुखी जीवन जी रहे थे।

अन्य रातों की तरह 15 नवम्बर की रात भी वे एक अच्छा सपना देखने की उम्मीद में सोने चले गए। पूरा गाँव शांत था। बस कीड़ों की और दीतिप[20] के भीतर चूहों के दौड़ने की आवाजें आ रही थीं। कभी-कभार किसी सोते हुए व्यक्ति की सांस लेने की आवाज भी आ रही थी। लेकिन अपनी प्रेमिका दारपुई के साथ अपने भविष्य की कल्पनाओं में डूबा रोउछुआहा सो नहीं पा रहा था। इसी

तरह दारपुई भी नहीं सो पा रही थी, उसे पता था कि उसके परिवार वाले चाहते हैं कि वह जल्द ही शादी कर ले। उसके मन में केवल इस बात की चिंता थी कि क्या वह अपने प्रेमी से शादी कर पाएगी। अपने प्यार के कारण चिंतित मन से उसने गहरी सांस ली और तभी दारपुई को धमाके की आवाज सुनाई पड़ी।

लेकिन, उसे लगा कि शायद चिंता करने की कोई बात नहीं है, इसलिए वह अपने चादर को ठीक से ओढ़ने लगी। अगर उसे बाहर के अशांत माहौल के बारे में मालूम हुआ होता, तो वह तुरंत अपने परिवार को जगाती, लेकिन उसे कुछ भी पता नहीं था। उसने अपने मन को शांत किया और सोने की कोशिश करने लगी। रोउछुआहा   ने भी वही आवाज सुनी जो दारपुई ने सुनी थी। चूँकि वह एक मर्द था, वह धीरे-धीरे उठने लगा और दूसरी आवाजों को सुनने की कोशिश करने लगा। फिर से एक धमाका हुआ। उनका घर दारपुई के घर की तुलना में गाँव की सीमा के अधिक निकट था, इसलिए वहाँ विस्फोट की आवाज ज़्यादा तेज थी।

अब थोड़ी-थोड़ी देर में ही विस्फोट की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी। निःसंदेह यह गोली चलने की आवाज थी। रोउछुआहा   ने तुरंत ही यह अनुमान लगा लिया कि यह ज़रूर भारतीय सेना के खिलाफ ह्मम सिपई की गोलीबारी की आवाज़ है। उसे लगा कि गाँववालों को चिंता करने की जरूरत नहीं है। उसने सोचा कि अपने घर से ही ह्मम सिपई की जीत के ह्ला दोउ छम[21] को सुनना बेहतर होगा, इसलिए वह आराम से लेट गया। लेकिन, समय बीतने के साथ-साथ गोलीबारी की आवाज गाँव के अंदर से आने लगी। और लोग भी नींद से जागने लगे, लेकिन बहुत से लोग ऐसे थे जिनकी सोच रोउछुआहा   जैसी थी, इसलिए उन्होंने उन आवाजों की तरफ बहुत ध्यान नहीं दिया। पु हाऊज़ीकआ की माँ, जो लगभग बहरी थी, भी जाग गई थी और उसने अपने बेटे से जोर से कहा- “हाऊआ, कोई हमारी दीवार पर पत्थर फेंक रहा है, जाकर चुपके से देखो।” लेकिन अपनी बूढ़ी माँ को सच बताने में हिचकिचाते हुए उन्होंने उत्तर दिया, “माँ, तुम सो जाओ। जिन लड़कों को नींद नहीं आ रही है वे एक-

दूसरे को अपना जौहर दिखा रहे हैं। वे हमारी दीवारों पर पत्थर नहीं फेंक रहे, इसलिए मुझे उन्हें डाँटने की जरूरत नहीं है।

बंदूकें लगातार चलने लगीं। गाँववालों की घबराहट और बेचैनी बढ़ने लगी। चिल्लाने और गोली चलने की आवाजें फिर से आने लगीं। भारतीय सेना ने भी जवाबी कार्रवाई शुरू की। भारतीय सेना की बेहतर बंदूकों की आवाज ज़ोरदार थी। अब गाँववालों के लिए सोना असंभव हो गया था। कुछ घर तो गोलियों की चपेट में भी आ गए। इसलिए लोग घबराने लगे और जान बचाने के लिए अपने बिस्तर छोड़ने लगे। एम.एन.एफ. के सैनिकों ने भागने की कोशिश नहीं की बल्कि गोली से भारतीय सेना को जवाब देना शुरू किया। कुछ जगहों पर आग लग गयी, तब सब लोग अपने-अपने घरों से हड़बड़ी में जैसे-तैसे निकल पड़े। भला क्या सोचकर एम.एन.एफ. ने गोली चलायी थी! भले ही वे भारतीय सेना के *कैंप* पर कब्ज़ा करना चाहते थे, पर अपने ही मिज़ो लोगों के बारे में सोचे बिना उनको हमले का जरिया बना लेने के कारण एम.एन.एफ. को निर्दोष मान पाना बहुत मुश्किल है।

आगे चलकर युवा पीढ़ी इस बात को समझेगी और उनकी करतूतों के लिए उनकी निंदा की जाएगी! सभी गाँववाले एक साथ सुआङओक नदी घाटी की ओर भागे, मानो वे सभी एक ही बात सोच रहे हों। ऐसे उथल-पुथल में दिमाग काम नहीं करता, इसलिए भले ही वे सभी अपने-अपने घर से भाग कर आए थे, मगर उन्होंने ढंग के कपड़े नहीं पहने थे, इसलिए जब वे वहाँ पर पहुँचे तो उनमें से अधिकांश लगभग नग्न थे। डर के मारे भागने के कारण उन्हें ठंड या शर्म का एहसास ही नहीं हुआ। लेकिन, जब भोर होने लगी तो एकदम सर्द तेज हवा चलने लगी। उसपर से नदी की घाटी में होने के कारण हम कल्पना भी नहीं कर सकते कि ठंड कितनी रही होगी!

भोर होने तक गोलीबारी खत्म नहीं हुई। तकरीबन 2 बजे गाँववालों को बताए बिना ही ईस्ट लुङदार गाँव को जला दिया गया! यह समझना बहुत मुश्किल था कि इसे भारतीय सेना ने जलाया था या ह्रम सिपई ने। अगर मान लें कि इसे भारतीय सेना द्वारा जलाया गया, तो फिर जिन भारतीय नागरिकों की सुरक्षा के लिए भारत सरकार से उन्हें वेतन मिलता है, उन निर्दोष नागरिकों को ही वे

कष्ट क्यों दे रहे हैं! सैनिक लोग तो बहुत दुष्ट हैं! लेकिन अगर एम.एन.एफ. द्वारा जलाया गया था, तब तो यह और भी बुरा है। अपने ही मिज़ो लोगो को ज़रिया बनाकर उन्होंने जो गोलीबारी की थी उसके लिए ही सफाई दे पाना उनके लिए असंभव था, और अब गाँव में आग लगाकर वे कैसी आज़ादी की लड़ाई लड़ रहे थे! यदि उन्हें ऐसा ही करना था तो पहले उन्हें ग्राम परिषद् से बात करनी चाहिए थी। इस मामले में कई सवाल उठ सकते हैं और उनके कई जवाब भी हो सकते हैं। लेकिन, शायद ऐसा कोई नहीं होगा जो इन सवालों का सही-सही जवाब दे सके। *इंडिपेंडेंट* पाने या *इंडिपेंडेंट* के लिए लड़ने के दस तरीके जानने वाले *मिज़ो नेशनल फ्रन्ट* के फाउन्डर स्व. पु ललदेङा भी इनका सही-सही जवाब नहीं दे पाते।

मिज़ो लोगों में से एक बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति - पु ए. थङलूरआ, जो असम के एम.एल.ए. भी रह चुके थे, ने भी पु ललदेङा से कहा था, "आज़ादी केवल दो तरीके से पायी जा सकती है- या तो गोली चलाकर या फिर मेज पर एकसाथ बैठकर बात करके।" लेकिन उसने उत्तर दिया कि वह आज़ादी हासिल करने के दस तरीके जानता है। उसने उन दस तरीकों में से गोली चलाने से शुरू किया, लेकिन किसी भी तरीके से सफल नहीं हो सका।

ऐसा प्रचार किया गया कि भारतीय सेना द्वारा लुङदार गाँव में आग लगायी गयी थी। लेकिन, अगर गौर किया जाए तो यह साबित करना असल में बहुत मुश्किल है कि यह सही है या गलत। यह भी जानना बहुत मुश्किल है कि उनके गाँव के पराजित मुखिया की बेटी किसके हाथों मारी गयी थी। लेकिन, भारतीय सेना ने गाँव के जिस स्कूल में कैंप बनाया था, वहाँ से गाँव में किसी को ठीक-ठीक निशाना साधकर मारना नामुमकिन था और यह बात गाँव के लोग भी अच्छी तरह से जानते थे। स्कूल और मुखिया के घर के बीच की दूरी बहुत ज्यादा थी और दोनों एक दूसरे के आमने-सामने भी नहीं थे। मुखिया के घर और स्कूल के बीच दो पहाड़ थे- एक था *सिग्नल* पर्वत और दूसरा जहाँ घंटा बजता था।

16 नवंबर 1966 की सुबह का सूरज भी दूसरे दिनों की तरह ही निकला, लेकिन लुङदार गाँव के लोगों के लिए यह एक बड़ा दुर्भाग्य लेकर आया। गाँव के लोग भागते हुए जब सुआङओक नदी की घाटी में मिले, तब बातचीत करके वे कोई रास्ता नहीं निकल पा रहे थे, लिहाज़ा वे सब आपस में बहस करने लगे। उनमें से कुछ बुद्धिमान पुरुषों ने सोचा कि गाँव के भीतर या गाँव जाने वाली सड़क पर वापस लौटना खतरनाक हो सकता है, इसलिए उन्होंने लोगों को इधर-उधर भटकने से मना किया। वे सभी ठंड और भूख की परवाह किए बिना वहाँ रुके रहे। डबडबाई आँखों से अपने जलते हुए गाँव और आसमान में ऊपर की ओर उठते आग के काले धुएँ को वे देख रहे थे। वे अच्छी तरह जानते थे कि अपने सामानों को बचाने के लिए वे कुछ नहीं कर सकते थे। उन्हें जिन मुश्किलों का सामना करना था, वे उन्हें ही करना था, उसके लिए कोई भी और आने वाला नहीं था। उनके दिल को जो ठेस पहुँची है, उसे कोई और नहीं समझ सकता।

लेङ, मुआलचेङ और लुङदार गाँव के सीमांत पर स्थित सुआङओक नदी घाटी में वे अपने गाँव, जिसे वे प्यार से दार खोपुई[22] कहते थे, के लिए रो रहे थे। जिस गाँव को उन्होंने कड़ी मेहनत से बसाया था, जहाँ वे खुशी और आनंद के साथ रहते थे, वह अभी जलकर राख हो रहा था। जहाँ वे खुशियों की दावत करते थे, जहाँ रात भर अपने प्रेमी के साथ चाँद के नीचे बैठकर गुनगुनाया करते थे, अब वह जगह भूतों की गली जैसी भयानक होती जा रही थी।

सूरज चढ़ रहा था, बच्चे नाश्ते के लिए बिलखने लगे। वयस्क भी लगभग नग्न थे, इसलिए कई तरह की समस्या होने लगी। उनके ऊपर अचानक बड़ी विपत्ति आ गयी थी, मानो आसमान टूट पड़ा हो। उनके पड़ोसी गाँव उनके गाँव की तुलना में छोटे थे, अगर वे वहाँ चले गए तो उन गाँववालों के पास उनके लिए पर्याप्त भोजन नहीं होगा। पुरुषों ने एक बैठक की, लेकिन इस समस्या का कोई हल नहीं निकाल पाए। उन्हें लगा कि उन्हें अपने आस-पास के गाँवों में जाना ही पड़ेगा।

गाँव के लोग सदमे में थे और उधर भारतीय सैनिकों को एम.एन.एफ. के लोग हरा नहीं पाए थे। उनमें से कुछ तो भागकर सुआङओक नदी घाटी तक भी आ गए थे। रमह्लुनी नाम की एक

नवयुवती ने जब एम.एन.एफ. के एक सैनिक को आते हुए देखा तो उसका हाथ पकड़कर रोते हुए गुस्से से पूछने लगी- "तुमने हमारे साथ ऐसा क्यों किया? तुम लोगों ने हमें पहले कुछ बताया क्यों नहीं? अब तुम लोग तो जंगल में अलग-अलग जगह जाकर छिप जाओगे, लेकिन तुम लोगों ने हमारे बारे में सोचा है? अब हम कहाँ और कैसे रहेंगे? क्या तुम्हारे पास मेरे इन सवालों का कोई जवाब हैं?" जैसा कि उसने कहा, उनके पास कोई जवाब नहीं था।

अगर उन्होंने भारतीय सैनिकों को हरा दिया होता, तब शायद गाँववाले इसे अपने कष्टों में छुपे आशीर्वाद की तरह देख सकते थे। बाद में पता चला कि सिआलसीर गाँव में एम.एन.एफ. का *पार्लियामेंट* सम्मेलन होने वाला था, तो उसके पहले सभी *सीनियर* सैनिकों को बैठक के लिए साईलुलाक गाँव में बुलाया गया था। *प्रेसीडेंट*, पु ललदेङा भी *मीटिंग* में शामिल होने जा रहे थे। तो, साईलुलाक जाते समय रास्ते में ईस्ट लुङदार गाँव में एम.एन.एफ. के सिपाहियों ने भारतीय सैनिकों पर, जो अभी बस एक रात ही उस गाँव में ठहरे थे, बेवजह गोली चला दी। उस क्षेत्र की *मीटिंग* और *पार्लियामेंट* के *कमांडर* पु बिआकछूङआ भी इस गोलीबारी से खुश नहीं थे। इस वजह से एम.एन.एफ. संगठन के भीतर लगभग टकराव की स्थिति बन गयी।

ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों के लिए एम.एन.एफ. के सिपाही केवल एक ही काम कर सकते थे कि पास के गाँवों में जाकर उनकी खबर पहुँचायें, जिसे करने का उन्होंने वादा भी किया और फिर वे वहाँ से चले गये। फिर तकरीबन 11:30 बजे मुआलचेङ गाँव के युवक-युवतियाँ 'दोरोन'[23] में खाना लेकर सुआङओक नदी की घाटी पर पहुँचे। बच्चों को सबसे पहले खाना खिलाया गया, जो बहुत ज़्यादा भूखे थे और फिर वयस्कों ने बस भूखे मरने से बचने के लिए बचा हुआ खाना खाया। गाँववालों के लिए एकसाथ घाटी में रह पाना अब मुमकिन नहीं था, इसलिए लोगों ने अलग होने का फैसला किया। आस-पास के गाँवों में जिनके रिश्तेदार थे, उन्होंने *रिपोर्ट* किया। जबकि आस-पास के गाँवों में जिनके कोई रिश्तेदार नहीं थे, वे सब अपनी-अपनी सहूलियत के अनुसार इधर-उधर निकल गए। सब ने रोते हुए एक-दूसरे को विदा करके अपने-अपने रास्ते अलग किए।

औरतों, छोटे बच्चों और कमज़ोर बुजुर्गों के साथ-साथ चलना बहुत मुश्किल था। उनके गाँव के मुखिया की पत्नी बूढ़ी और कमजोर थी, ऊपर-से अपनी बेटी के ग़म में वह विक्षिप्त-सी हो गयी थी, इसलिए खुद से चल नहीं पा रही थी। उनके बेटे ने उन्हें अपनी पीठ पर उठा लिया था। दुःख और डर के कारण उनके बेटे के लिए भी उन्हें उठाकर चल पाना बहुत मुश्किल था। कुछ भले युवकों ने खुद आगे बढ़कर उन्हें उठाने में मदद की। उन्हें अपनी मंज़िल तक पहुँचने में बहुत समय लग गया।

वे अपने जलते हुए गाँव दार खोपुई को देखते रहे जहाँ वे साथ-साथ खुशी से रहते थे। वे वहाँ से जाना नहीं चाहते थे। लेकिन, हालात ने उन्हें अलग होने पर मजबूर कर दिया। इसके अलावा जो युवक-युवतियाँ एक दूसरे को पसंद करते थे उन्हें भी एक-दूसरे से दूर अलग-अलग गाँवों में जाना पड़ा। यहाँ तक कि दारपुई और रोउछुआहा को भी कुछ समय के लिए अलग-अलग गाँवों में रहना पड़ेगा। क्या वे उस दार खोपुई में फिर से मिल पाएँगे? उनके इन सवालों का जवाब कौन देगा?

जो लोग उस रात गाँव से भागने में सफल नहीं रहे, उन्हें भारतीय सैनिकों ने पकड़ लिया था। उस घटना में तीन लोगों की मौत भी हुई। खासकर जब किसी युवक की मौत हो जाए तो यह उसके परिवार और गाँव के लिए कितना अधिक दर्दनाक होगा! ऐसा नहीं है कि जो युवा मारे गए वे बदमाश या बदतमीज़ थे, बल्कि अपने परिवार की चिंता करने के कारण उन्हें गोली लगी थी! अब नदी की घाटी में जमा हुए लोग चाहें या न चाहें, उन्हें अपने रास्ते अलग करने ही पड़ेंगे। दारपुई और उसके परिवार के लोग बिआते गाँव चले गए और रोउछुआहा और उसका परिवार मुआलचेङ गाँव की तरफ चले गए। कुछ समय के लिए अपने आस-पास के गाँवों में रहने के बाद ग्राम परिषद् और भारतीय सैनिकों के बीच बातचीत हुई और ईस्ट लुङदार गाँव को फिर से बसाने का प्रस्ताव आया। युवा पीढ़ी शायद समझ सकती है कि पूरी तरह जले हुए गाँव को फिर से बसाना कितना मुश्किल और मेहनत का काम होगा!

लेकिन, जिस गाँव को उन लोगों ने अपने खून-पसीने से सींचकर बसाया था वह एक रात में ही जलकर राख हो गया था। गाँव को फिर से बसाने के लिए गाँव वालों का दिल तैयार नहीं हो पा

रहा था क्योंकि अपने जलते हुए गाँव को देखकर उनकी सारी शक्ति और उनका सारा उत्साह आँसू के साथ बह गया था।

गाँव की मरम्मत के लिए गाँव वालों के इकट्ठे होने के कुछ ही समय बाद सैनिकों ने ईस्ट लुङदार और उसके आस-पास के गाँव वालों को बुलाया और उनपर एक दूसरा बोझ भी लाद दिया गया। यदि केवल अपने गाँव की मरम्मत करना उनका काम होता तो उनका बोझ थोड़ा हलका होता। लेकिन अब उन्हें सैनिकों के लिए एक सुरक्षित स्थान और बैरेक भी बनाना था। सैनिकों के लिए बंकर (छिपने की जगह) का निर्माण करने के लिए गाँव के मर्दों को अपने गाँव के उन सुंदर पहाड़ों और मैदानों की खुदाई करके उन्हें नष्ट करना पड़ा जहाँ युवक-युवतियाँ और बच्चे टहलने और खेलने के लिए जाते थे, जहाँ वे क्रिसमस और नए साल के दौरान इकट्ठा होते थे। औरतें घास-फूस निकालने का काम करने लगीं।

गाँव वालों का पूरा समय उसी काम में लग जाने के कारण धान की फसल की अच्छी कटाई नहीं हो पायी, जिस पर वे मुख्य रूप से निर्भर थे। कई परिवार ऐसे थे जो आलस के कारण गोलीबारी से पहले अपने धान की कटाई नहीं कर पाए थे, उन्हें केवल धान की बालियों को तोड़कर काम चलाना पड़ा। इसलिए, 1966 का क्रिसमस उस तरह नहीं मनाया जा सका जैसे हमेशा-से मनाया जाता रहा है। लेकिन, जिन परिवारों ने अभी तक फसलें नहीं काटी थीं, उन्हें अकेला नहीं छोड़ा गया, बल्कि सभी गाँव वालों ने उनकी मदद की। किसी ने कोई शिकायत नहीं की और भारतीय सेना के नियंत्रण में रहते हुए भी बड़े ही उत्साह के साथ काम किया। और इस तरह 1966 का साल बीत गया।

(3)

नये साल का उनके लिए कोई मतलब नहीं था। सैनिकों के *कैम्प* के लिए पहाड़ों और मैदानों की खुदाई बंद नहीं हुई। इसी के साथ उन्हें अपने टूटे हुए घरों की मरम्मत भी करनी थी और

खाने के लिए खेती भी। लेकिन इससे कहीं अधिक कष्ट अभी उन्हें झेलना बाकी था। उनकी 'दो पाटों के बीच पिसने' वाली स्थिति तो अभी शुरू ही हुई है। गोलीबारी के बाद गाँव की एकमात्र पाठशाला को भी बंद कर दिया गया, जिसे अपने बच्चों और पोते-पोतियों के लिए सालों से गाँव वालों ने बचाकर रखा था, ताकि वे अच्छी शिक्षा हासिल कर सकें और अपना आगे का जीवन बेहतर ढंग से बिता सकें।

उनकी ही तरह दूसरे गाँवों के लोग भी इस दौरान बहुत तकलीफ झेल रहे थे। अब गाँव को जला दिए जाने और बलात्कार जैसी घटनाओं के बीच सैनिकों के नियंत्रण में रहना उनकी नियति हो गयी थी। अब ऐसा कोई गाँव नहीं बचा था जहाँ लोग खुशी से रह रहे हों और सुरक्षित हों। उनके ऊपर हमेशा कर्फ़्यू लागू किया जा रहा था। बस थोड़े समय के लिए उन्हें खाने के लिए गाँव की सीमा पर से अरबी और दूसरी चीजें लाने की अनुमति दी जाती थी और यही थोड़ा-सा वक्त उनकी आज़ादी का वक्त हुआ करता था। लेकिन कभी-कभी मिट्टी से खोदकर अरबी निकालते समय ही कर्फ़्यू की घोषणा कर दी जाती थी। ऐसे में सभी हड़बड़ी में घर वापस भाग जाते थे। उन्हें ड्यूटी पर तैनात सैनिकों को अपनी सफाई भी देनी पड़ती थी। और कुछ लोगों की पिटाई भी हो जाती थी।

भले ही भारतीय सैनिक मिज़ो लोगों पर अत्याचार कर रहे थे, मगर मिज़ो लोग उस अत्याचार को सहने में पीछे नहीं हट रहे थे, क्योंकि मिज़ोरम की आज़ादी के लिए लड़ने वाले ह्मम सिपई (मिज़ो सिपाही) उनके दिलों के राजा थे। उनका पूरा ध्यान बस इस तरफ था कि उनकी भूमिगत सेना आगे क्या करने वाली है। जो लोग खुद को बुद्धिमान समझते थे, वे एम.एन.एफ. के वादों पर आँख मूँदकर भरोसा कर रहे थे। उस समय उनके पास बात करने के लिए एम.एन.एफ. के सिवा और कुछ भी नहीं था।

1967 का साल मिज़ोरम के लोगों के लिए एक बुरा साल था। 'कन हुन तोन तोह ज़ीङअः खोखोम अ पोई बेर मई' (सबसे तकलीफदेह स्थिति जिसका हमें सामना करना पड़ा वह थी गाँवों का समूहीकरण) गाने में दरअसल उन्हीं परिस्थितियों का ज़िक्र मिलता है। हर समूहीकृत गाँव, ग्रूपिंग

सेंटर एक सैन्य अड्डा बनता जा रहा था। इस पूरे साल में ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों को भारतीय सेना के लिए तोमकूक (बंकर) खोदना पड़ा, साथ ही उन्हें खेतों में अपनी फसल भी काटनी पड़ी, इसलिए उनकी थकान दोगुनी हो गई थी।

ऐसा कहा जा सकता है कि अपनी इच्छाओं और हितों की परवाह किये बिना ह्रम सिपई और भारतीय सेना की सेवा करना अब मिज़ोरम के लोगों के जीवन के लिए जरूरी हो गया था। युवकों और युवतियों के लिए तो खास तौर पर यह बहुत ही थकाने वाला काम था। कड़ी धूप में वे भारतीय सेना के लिए काम करते थे। वे थोड़ी देर के लिए भी चैन की साँस लेने से डरते थे। हर तरफ बंदूकों के साथ भारतीय सैनिक मौजूद थे। वे मिज़ो युवतियों के लिए अपशब्द बोलते, तब भी गुस्सा और नफरत के बावजूद मिज़ो युवक उनके खिलाफ न आवाज उठा सकते थे और न ही खड़े हो सकते थे।

हालाँकि वह ज़्यादा कुछ कर नहीं सकता था, लेकिन रोउछुआहा चुपके से देखता रहता कि कहीं उसकी प्रेयसी दारपुई के साथ छेड़छाड़ तो नहीं हो रही। लेकिन, सौभाग्य से दारपुई के साथ कुछ भी गलत या बुरा नहीं किया गया। इसलिए वह परमेश्वर को धन्यवाद देता रहा।

दिनभर काम करके थके होने के बावजूद रात में जब कर्फ़्यू थोड़ा ढीला हुआ तो युवकों के लिए बाहर न निकलना और अपनी प्रेमिकाओं के घर न जाना मुश्किल था। और इसके लिए वे बिल्कुल दोषी नहीं थे। कौन दिन भर की शारीरिक और मानसिक थकान मिटाने के लिए अपनी प्रेमिका के घर जाकर उसके द्वारा बनायी गयी सिगरेट पीना नहीं चाहेगा?[24] उस समय यही उनके जीवन में खुशी और राहत की चीज़ थी। केवल गाँव के युवक ही नहीं, एम.एन.एफ. के वॉलन्टियर भी गाँव में घुसकर 'नुलारीम' करते थे।

भले ही वॉलन्टियरों के लिए हमले का डर बना रहता था, लेकिन युवतियों के घर जाना और 'नुलारीम' करना उन्हें भी अच्छा लगता था। जिन युवतियों के घर वॉलन्टियर जाते थे, वे अपनी

सखियों के बीच अपने-आप को सौभाग्यशाली मानती थीं और गर्व करती थीं। वे उनके पीने के लिए और साथ ही ले जाने के लिए भी सिगरेट बनाती थीं। चाय और कुरतई[25] के अलावा खाने की अन्य चीज़ें वे वॉलन्टियर की कमर में बाँध देती थीं। लगभग प्रत्येक गाँव में ऐसा होता था। अपने राज्य के लिए लड़ने वालों के लिए चोरी-चुपके युवतियों के घर जाना आनंददायक था। जैसा कि कहा जाता है, 'अंतरंगता का आनंद इसकी गोपनीयता के गायब होने के साथ गायब हो जाता है', इसलिए कई बार चीजें कहीं ज़्यादा आनंददायक हो जाती हैं जब उन्हें छुप-छुपाकर करना पड़ता है। ईस्ट लुङदार गाँव में भी रमह्लूनी और पेककिमई, ज़ाईत्लुआङई के घर अधिकतर समय वॉलन्टियर आया करते थे। दूसरी कुछ युवतियाँ उनसे ईर्ष्या भी करती थीं।

जब गाँव वाले शारीरिक और मानसिक रूप से थक चुके थे तब भारतीय सैनिकों ने एक दिन गाँव के नेताओं को बुलाया और उनसे कहा "हमें वॉलन्टियरों की सूची मिली है, वे तुरंत सरेंडर कर दें (असल में उन्होंने 'सलेन्डर' कहा), अन्यथा पूरे गाँव को भुगतना पड़ेगा।" गाँव के नेताओं के लिए उनकी बात पर यकीन करना मुश्किल था। इस बात का कोई सबूत नहीं था कि सैनिकों ने वास्तव में वॉलन्टियरों को देखा था या नहीं। इसलिए हालाँकि उन्होंने पूरे विश्वास के साथ कहा कि उनके गाँव में कोई वॉलन्टियर नहीं है, लेकिन भारतीय सैनिक इस बात को लेकर बिल्कुल दृढ़ थे और उन्होंने उन नेताओं की बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। गाँव के नेता चुपचाप चिंता में बैठे रहे।

जब भारतीय सैनिकों का प्रमुख अधिकारी कुछ समय के लिए बाहर गया, तो गाँव के वीसीपी (विलेज काउंसिल प्रेसीडेंट) ने सुझाव दिया, "दोस्तों, यह सही नहीं है। अगर हम यह नहीं कहेंगे कि हम वॉलन्टियरों को खोजने की पूरी कोशिश करेंगे, तो हमारे लोग परेशान हो जाएँगे। यहाँ *कैम्प* में बैठे रहना ठीक नहीं है और यह कोई ऐसा विषय भी नहीं है, जिसके बारे में हमलोग अभी यहाँ फ़ैसला ले सकें। इस मामले को घर पर मिल-बैठकर सोचना ठीक होगा। इसलिए आइए यहाँ से घर चलने का कोई तरीका सोचें।"

उसके साथियों ने भी कुछ देर सोचा। जैसा कि वीसीपी ने कहा था, औरों का भी यही मानना था कि अभी के लिए सेना *कैम्प* से बाहर निकलना और इस मामले पर मिल-बैठकर सोचना ही बेहतर होगा। जब भारतीय सैनिकों का प्रमुख अधिकारी लौटकर आया तो उन्होंने उनसे अनुरोध किया, "क पू[26], आपकी बात और आपको मिली जानकारी पर हमने विचार किया। हाँ, हम भी कोई परेशानी नहीं चाहते है। इसलिए हम वॉलन्टियरों को ढूँढने की पूरी कोशिश करेंगे। लेकिन यहाँ हमारे देर तक रुकने से कुछ नहीं हो पाएगा, इसलिए हम चाहते हैं कि आप हमें अभी घर जाने दें।"

सैन्य अधिकारी कुछ देर तक सोचता रहा। फिर उसने दुभाषिये से कहा कि उन्हें बताए कि वह उन्हें घर जाने की इजाज़त दे रहा है, लेकिन उन्हें वॉलन्टियरों को लेकर आना होगा। सैन्य अधिकारी ने ने बोलना जारी रखा- 'चूँकि हमें वॉलन्टियरों की सूची मिल गई है, इसलिए उन्हें *सरेंडर* करना ही होगा वरना पूरे गाँव को भुगतना पड़ेगा।' पु रोउठिआङआ को यह बात सही नहीं लगी, उसने दृढ़तापूर्वक दुभाषिये से कहा, "हाँ-हा, हम उनके आदेश को समझते हैं और उसका पालन करने की पूरी कोशिश करेंगे। लेकिन, हमने वॉलन्टियरों की उस सूची को अभी तक नहीं देखा है और इस बात का कोई सबूत भी नहीं है कि ऐसी कोई सूची है भी या नहीं। इसलिए वॉलन्टियरों का पता लगाना एक मुश्किल काम होगा। इसके लिए हमें और समय की आवश्यकता होगी, उसे बात दो।"

गुस्से में सैन्य अधिकारी ने जवाब दिया, "मुझपर शक कर रहे हो? अगर हम कहते हैं कि हमें इसकी जानकारी है, तो इसका मतलब वह हमें मिला है। उन्हें एक हफ्ते के अंदर सरेंडर करना होगा।" पु ठिआङआ (रोउठिआङआ का संक्षेप) ने फिर कहा, "वह इस तरह हमें एक निश्चित समय नहीं दे सकता है। अगर हम भी उसे नदी पर जाकर एक घंटे के अंदर बाल्टी भर 'ङ्हालेर'[27] पकड़ लेने के लिए कहें, तो वह भी ऐसा नहीं कर पाएगा। उसे तो 'ङ्हालेर' पता भी नहीं होगा। और वैसे भी, अगर हम उन्हें सरेंडर करने के लिए कह भी दें तो उन पर हिंसा नहीं होनी चाहिए। उन्हें बात दो कि अपने ही लोगों को बेचना हमारा धर्म नहीं हैं।" उनके साथियों ने भी उनके समर्थन में "हाँ" कहा। चिंतित मन से वे सेना *कैम्प* से अपने घरों की ओर चल पड़े।

रात के खाने के बाद गाँव के नेता और कुछ समझदार पुरुषों ने एक आपातकालीन बैठक की। उन्होंने भारतीय सेना की माँगों पर और इस बात पर चर्चा की कि गाँव के लिए क्या बेहतर हो सकता है। सभी के विचारों को सुनने के बाद उन्होंने तय किया कि वॉलन्टियरों के स्थान पर गाँव से किसी और को चुनना सबसे अच्छा तरीका होगा और उन्होंने यही फैसला लिया। अब सबसे बड़ा और कठिन सवाल यह था कि क्या वे इस बात के लिए अपने गाँव के युवाओं का मन जीत पाएँगे। लेकिन, उन्हें इससे बेहतर कोई और रास्ता नहीं सूझा। वे देर रात तक इस पर चर्चा करते रहे। इस कठिन सवाल को मन में लिए वे घर लौट गए।

और फिर, जैसा कि उन्होंने पहले ही चर्चा कर ली थी, शुक्रवार की रात सभी युवक-युवतियों को उन्होंने गिरजाघर में बुलाया। जब उन्हें लगा कि सब युवक इकट्ठे हो गए हैं, तो गाँव के सभी नेताओं ने संक्षिप्त भाषण दिए। सभी ने प्रोत्साहन और सामुदायिक सहयोग की बात कही। सभी समझदार पुरुष युवकों के सामने उन विषयों पर बात करने में हिचकिचा रहे थे, जिन पर उन्होंने पहले चर्चा की थी। इसलिए बात करने वाले व्यक्ति के चुनाव में भी काफी समय लगा। अंत में पु रोउठिआङआ (रोउछुआहा के पिता) को चुना गया जो बातचीत करने में कुशल थे और सभी के प्रिय भी थे।

थोड़ा झिझकते हुए पु ठिआङआ खड़े हुए। उन्होंने सैनिकों की बातें और उनकी माँगें बतानी शुरू कीं। उन्होंने बताना जारी रखा कि उन्होंने कैसे प्रतिक्रिया दी और यह भी कि अगर उनकी माँगें पूरी नहीं हुईं तो पूरे गाँव को इसका परिणाम भुगतना पड़ेगा। वे इधर-उधर देखने लगे और फिर कहा, ‘‘इस बीच एक अच्छी खबर यह है कि आज सैनिकों ने दुभाषिये से कहा कि ‘जो भी अपने आप को सरेंडर करेगा, उसके साथ हिंसक व्यवहार नहीं किया जाएगा, लेकिन उसको कभी भी बुलाया जा सकता है, इसके लिए उसे हमेशा तैयार रहना होगा’। यह सब सुनकर सभी एकदम खामोश हो गये।

पु ठिआङआ को जो कहना था, अब उसे कहने का समय आ गया था। मन ही मन परमेश्वर से प्रार्थना करते हुए उन्होंने बोलना शुरू किया, ‘‘यहाँ, हमसब गाँव की भलाई की चिंता में चैन से सो

नहीं पा रहें हैं। लेकिन, तुम युवक-युवतियों के सहयोग के बिना हम फैसला ले पाने की स्थिति में नहीं हैं। इसलिए हमने सभी से सहयोग माँगने के लिए आपसब को यहाँ बुलाया है। सबसे पहले कृपया यह जान लें कि हम स्वयं भी अपनी तरफ से यह फैसला नहीं लेना चाहते थे। लेकिन हमें सबसे पहले बच्चों, औरतों और कमजोर बुजुर्गों का ध्यान रखना है। हमें उनकी सुरक्षा के साथ-साथ गाँव की भलाई के लिए भी सोचना था। और मुझे लगता है कि शायद आपसब भी इस बात का समर्थन करेंगे। इसलिए, युवक-युवतियों से हमारी विनती है कि आप लोग गाँव के भले के लिए त्याग करते हुए अपने आप को *सरेंडर* कर दें।"

लोग आपस में बातें करने लगे। कुछ लोग इस फैसले के सख्त खिलाफ थे और कुछ इसे सही मान रहे थे। काफी देर तक शोरगुल मचा रहा और उनके बीच बेमतलब की बातें होती रहीं, तभी पु रोउठिआङआ कहने लगे, "हम समझते हैं कि हमारे फैसले से आप सब खुश नहीं हैं। लेकिन, हम जानते हैं कि हमारे देश के लिए लड़ रहे ह्नम सिपई (मिज़ो सैनिकों) और गाँव की भलाई के लिए कुछ भी करने में आप ज़रा भी संकोच नहीं करेंगे।" यह कहकर वह अपनी जगह पर वापस चले गए।

रोउछुआहा ने *सरेंडर* करने का मन बना लिया था। चूँकि फैसला उसके पिता ने सुनाया था, इसलिए उसे उस फैसले का पालन करना ही था। तभी त्लङवाल[28] लिआनखूमआ ने खड़े होकर एक बिल्कुल सटीक सवाल पूछा, "हमें तो यह भी नहीं पता कि अगर हम *सरेंडर* कर दें तो वे हमारे साथ क्या करेंगे, क्या यूँ ही झूठ-मूठ का *सरेंडर* करना सही होगा? हमें तो एम.एन.एफ. के रहस्य और उनके तौर-तरीके भी नहीं पता। जब हमसे पूछताछ की जायेगी तो क्या हमें और अधिक तकलीफ नहीं उठानी पड़ेगी?" उसी समय दारपुई ने सवालों से भरी आँखों से पश्चिम की ओर बैठे रोउछुआहा की तरफ देखा। रोउछुआहा भी समझ गया और उसने जवाब में सिर हिलाया। रोउछुआहा को सिर हिलाते देख दारपुई का दिल तेजी से धड़कने लगा। लिआनखूमआ के सवालों की तरह, किसी को नहीं पता था कि सरेंडर करने वालों को क्या-क्या झेलना पड़ेगा। यह सभी के लिए डरावना था।

वीसीपी ने खड़े होकर कहा, "जो सवाल पूछा गया है, वह बिल्कुल जायज़ है। हाँ, जो काम आप करने जा रहे हैं वह शायद आपके मन के अनुकूल न हो, लेकिन भारतीय सैनिकों ने कहा है कि अगर वे *सरेंडर* करेंगे, तो उनपर हाथ नहीं उठाया जाएगा और न ही उनके साथ कोई हिंसा होगी।" लेकिन इस बात से युवक-युवतियाँ संतुष्ट नहीं हो पाए। अपने आप को होशियार मानने वाला त्लङवाल शाङथङआ खड़ा होकर कहने लगा, "लेकिन, क्या ये वाई[29] सैनिक भरोसेमंद हैं? हमारे पास उनकी वफादारी का एक भी सबूत नहीं है।"

"हाँ, हमें अभी भी नहीं पता कि वे भरोसेमंद हैं या नहीं। लेकिन, इसे जानने के लिए कि वे भरोसेमंद हैं या नहीं, हमें एक बार उनपर भरोसा करना पड़ेगा, वर्ना तुम्हारे सवाल का जवाब कभी नहीं मिल पाएगा। और अगर हमने सरेंडर नहीं किया तो क्या यह हमारे गाँव के लिए खतरनाक नहीं होगा?"- रोउछुआहा ने गाँव के नेताओं का समर्थन करते हुए कहा, जिससे उसके पिता खुश हुए। लेकिन दारपुई बहुत दुःखी थी और वह बैठे-बैठे मन ही मन प्रार्थना करती रही।

रात तक चली लंबी चर्चा के बाद अगले दिन 90 पुरुष और 40 महिलाओं को झूठे एम.एन.एफ. सदस्य के रूप में सरेंडर करने के लिए चुना गया। इससे गाँव के नेताओं को राहत मिली। लेकिन, उस रात किसी को नींद नहीं आयी, क्योंकि इस बात का कोई अंदाजा किसी को नहीं था कि सरेंडर करने वालों के साथ सच में क्या होने वाला है। घर पहुँचकर पु रोउठिआङआ ने अपने बेटे को कुछ नसीहतें दीं और उसका हौसला बढ़ाया। उनके फैसले का समर्थन करने और सैनिकों के सामने सरेंडर करने के लिए सबसे पहले आगे आने के लिए उन्होंने अपने बेटे के प्रति गर्व और खुशी व्यक्त की। लेकिन रोउछुआहा की माँ खुश नहीं थी। उसने गुस्से से कहा, "तुम अपने ही बेटे को वाई लोगों को सौंपने जा रहे हो?"

"हमें अपनी स्थिति पर ध्यान से सोचने और विचार करने की जरूरत है। हमारे देश की आज़ादी के लिए लड़ने वाली मिज़ो सेना सराहनीय और सम्माननीय है, हम उनके लिए जो कुछ भी कर सकते हैं, उसे करने से हमें पीछे नहीं हटना चाहिए। हमारी ह्रम सिपई का बलिदान हमारे बेटे के

बलिदान से कहीं अधिक महान है। उन्होंने अपने देश के प्रति प्रेम को अंत तक जीवित रखने के लिए जंगल में डेरा डालने का फैसला किया है। फिर तुम यहाँ इतनी दुःखी क्यों हो?"- एम.एन.एफ. की महानता का बखान करके अपनी पत्नी का दिल जितने की कोशिश करते हुए पु रोउठिआङआ ने कहा।

सुबह हुई। जैसा कि उन्होंने रात में तय किया था, गाँव के नेता चुने हुए लोगों को भारतीय सेना के कैम्प में ले गए। दारपुई भी सरेंडर करना चाहती थी लेकिन रोउछुआहा ने उसे ऐसा करने से रोक दिया। इसलिए वह उनके साथ नहीं गई। वह उनलोगों को भारतीय सेना के कैम्प की ओर जाते हुए देखती रही, वह ठीक से सोच पाने की स्थिति में नहीं थी। उनसब के साथ किस तरह का व्यवहार किया जाएगा? क्या उन्हें मारा-पीटा जाएगा? कहीं सबको पकड़ कर अपने देश (वाई रम)[30] भेज दिया तो? बस यही सब चिंता उसके मन में बनी हुई थी। दारपुई की ही तरह सभी के माँ-बाप चिंतित थे। 'जोउत्लाङ रम नुआम'[31] होने के बावजूद मिज़ोरम बस आँसुओं का देश बन कर रह गया था।

कुछ जगहों पर रह-रहकर गोलीबारी हो रही थी। बीच-बीच में भारतीय सैनिकों द्वारा लोगों को गिरफ्तार किये जाने की खबरें भी मिल रही थीं। एम.एन.एफ. द्वारा कही जा रही 'आज़ादी' की बात ही उस समय उनके लिए खुश होने का एकमात्र बहाना था। और उन्हें पूरा विश्वास था कि ह्रम सिपई जल्द ही भारतीय सैनिकों को यहाँ से भगा देगी। उनकी उस समय की स्थिति और मनःस्थिति को पर विचार करें तो उनका ऐसा भरोसा और उम्मीद करना जायज़ ही था। जैसा कि पहले ही कहा गया है, जो लोग भी समझदार थे, वे एम.एन.एफ. के वादों पर आँख मूँदकर भरोसा कर रहे थे। अगर हम कहें कि उस दौरान आम लोगों का मन एम.एन.एफ. की ओर झुका हुआ था, तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

उस समय एम.एन.एफ. कोई *पोलिटिकल पार्टी* नहीं था। कोई भी नयी सरकार बनने पर एम.एन.एफ. के सदस्य उसे समर्थन देने को तैयार थे। वे ह्रम सिपई थे, जो मिज़ोरम और मिज़ो लोगों की भलाई के लिए लड़ने वाले थे। लेकिन दुःख की बात है कि अब उन्हें सिर्फ एक *पोलिटिकल*

पार्टी के रूप में ही जाना जाता है। जब मिज़ोरम के लोग दुविधा के दौर से गुजर रहे थे, तब पु ललदेङा पूर्वी पाकिस्तान में थे। उनके सैनिक और प्रतिनिधि पूरी शक्ति के साथ मिज़ोरम की आज़ादी के लिए लड़ रहे थे। उस समय लोगों के बीच यही संदेश था कि वे केंद्र सरकार के साथ जरूरी और महत्त्वपूर्ण कामों में व्यस्त थे।

अपने गाँव के लिए त्याग करते हुए अपने आप को सरेंडर करने वाले ईस्ट लुङदार गाँव के युवक-युवतियों से भारतीय सैनिकों ने कुछ सवाल पूछे और जैसा कि उन्होंने वी.सी *मेम्बर* से कहा था, सबको सुरक्षित घर भेज दिया गया और उन्हें तीन महीने तक सुबह पाँच बजे और शाम पाँच बजे रिपोर्ट करने को कहा गया। उस रात रोउछुआहा अपनी डरी-सहमी प्रेयसी दारपुई से मिलने निकला। दारपुई के घर पहुँचकर वह उसके पास बैठ गया जो अकेली बैठी कपास के धागे लपेट रही थी। वह धागे को लपेटने में उसकी मदद करने लगा।

दारपुई ने धीरे से कहा, "ओह! रोछुआह, हमारी जो हालत हो गयी है, वह मुझे बिल्कुल भी पसंद नहीं है। मेरी सारी सहेलियाँ भी एम.एन.एफ. के अलावा कुछ और नहीं सोच पा रही हैं। उन्हें देश को बचाने वाले बहादुर सिपाही कहकर उनलोगों ने उन्हें अपना प्रेमी भी बना लिया है। मुझे ऐसा *इंडिपेंडेंस* भी नहीं चाहिए, शायद मैं बेवकूफ हूँ इसलिए मुझे इन सब बातों की समझ नहीं है। मुझे इस तरह के झंझट नहीं चाहिए। अगर यह आसानी से मिल जाती, तो मैं भी चाहती। लेकिन, अगर इस लड़ाई में खून-खराबा, गिरफ़्तारी, गोलीबारी और धमकियाँ शामिल हों, तो मुझे ऐसा *इंडिपेंडेंस* नहीं चाहिए।"

रोउछुआहा ने उसके कोमल गाल को प्यार से खींचते हुए कहा, "हाँ, बिल्कुल यह बात तो है। लेकिन, इस बारे में इतनी गंभीरता से नहीं सोचना चाहिए। हम इसी तरह चलते रहेंगे और फिर आखिरकार हमें इन सब से छुटकारा मिल जायेगा। यदि हमें इस लड़ाई में आज़ादी मिलती है, तो यह हमारे अपने ही भले के लिए होगा। जिस दिन हमें आज़ादी मिलेगी, उस दिन हम सब खुशी से नाचेंगे।" रोउछुआहा उसे सकारात्मक तरीके से समझाना चाहता था, लेकिन यह सब कहते हुए वह

खुद भी दारपुई की बातों का मन ही मन समर्थन कर रहा था। दूसरी ओर, उसे लग रहा था कि उसे ह्मम सिपई के कामों में दिलचस्पी रखने वाले अपने पिता का समर्थन करना चाहिए क्योंकि वह अपने पिता का बहुत सम्मान करता था। उसका मन उलझन में था।

"मुझे नहीं लगता कि इस तरह खुद को सरेंडर करना सही है। भले ही वे लोग अभी तुम सब के साथ कुछ न करें, लेकिन भविष्य का कौन जाने, मुझे डर है कि आगे चलकर तुम सबके लिये मुसीबत खड़ी हो सकती है।" दारपुई ने धीमे से यह बात कही, तभी दूसरे मेहमानों की आवाजें आने लगीं और दोनों ने बात बदल दी। रोउछुआहा भी दारपुई से दूर खिसक गया।

उसी रात एम.एन.एफ. के कुछ लोग रुआतकिमी और रमह्लुनी के घर में आए हुए थे और वे दोनों उनके लिए बीड़ी तैयार कर रही थीं। एम.एन.एफ. के लोग अपनी गतिविधियों और भविष्य की योजनाओं पर चर्चा कर रहे थे। वे अपने रममुत[32] के बारे में बात कर रहे थे और गाँव के लोग उत्सुकता से उनकी बात सुन रहे थे। अपनी इन बातों से उन्होंने युवतियों का दिल जीत लिया। अपने देश और जाति की भलाई के लिए लड़ने वाले बहादुर ह्मम सिपई को रुआतकिमी अपना दिल दे बैठी और उस सिपाही के लौट कर आने का इंतज़ार करने का मन बना लिया। रुआतकिमी उनके ले जाने के लिए बनायी हुई बीड़ी को उनकी कमर में बाँधती गई। इस तरह एम.एन.एफ. के लोग अक्सर थोड़े-थोड़े दिनों के अंतराल में गाँव के भीतर युवतियों के घर 'रीम' करने जाते थे। अपने लिए समर्थन हासिल करने और खाने-पीने का सामान इकट्ठा करने का यह उनका एक अच्छा तरीका था।

गाँव के जिन लोगों ने सरेंडर किया था, उन्हें तीन महीने तक सुबह-शाम रिपोर्ट करने के लिए कहा गया था। वे सब अच्छी तरह से रिपोर्ट करते रहे। लेकिन, तीन महीने पूरे होने से पहले ही भारतीय सैनिकों ने एम.एन.एफ. के एक सदस्य को पकड़ लिया। वह बहुत बड़ा विश्वासघाती और साथ ही दूसरों पर दोष लगाने वाला था। एम.एन.एफ. वाले इसे बर्दाश्त नहीं कर सके और उन लोगों ने उसका मुह बंद कर दिया। इस घटना ने गाँव के लोगों की पीड़ा और बढ़ा दी। भारतीय सैनिकों ने फिर से गाँव के लोगों को पकड़ना शुरू कर दिया। भारतीय सैनिकों ने उनसे ज़ोरदार पूछताछ की

लेकिन कोई भी न कुछ बोल सका और न ही कुछ कबूल कर सका। भारतीय सैनिकों ने सख्त आदेश दिया, "सभी अपनी बंदूकें जमा करें। और एम.एन.एफ. को हमारे हाथों में सौंप दें।" यह गाँव वालों के लिए बहुत मुश्किल स्थिति थी। उनके पास जमा करने के लिए बंदूकें नहीं थीं और न ही वे एम.एन.एफ. के किसी व्यक्ति को जानते थे जिसे वे भारतीय सेना को सौंप दें। अगर, उन्हें पता भी होता, तब भी वे ह्रम सिपई की ओर से किसी भी तरह मुँह नहीं फेर सकते थे। लेकिन, डर से भरी दारपुई मन-ही-मन सोच रही थी कि बंदर के अपराध की सजा लंगूर को भुगतनी पड़ रही थी[33], यह सही बात नहीं है।

हाँ, गाँवों में ज़रूर कई लोग ऐसे होंगे जो दारपुई जैसी सोच रखते होंगे। कई ऐसे भी थे जो भारतीय सैनिकों और एम.एन.एफ. के द्वारा परेशान किए जाने के कारण अपने घरों में भी आराम से नहीं रह पा रहे थे। शायद कई ऐसे भी रहे होंगे जो आज़ादी भी नहीं चाहते थे, मगर जिनमें खुलकर यह बोलने की हिम्मत नहीं थी। लेकिन, जैसा कि हम पहले ही कह चुके हैं, ज़्यादातर लोग मिज़ो जाति को लेकर अपनी वचनबद्धता के प्रति पागलपन की हद तक दीवाने थे। सच तो यह है कि इस *इंडिपेंडेंस* की लड़ाई के कारण आम जनता असहनीय पीड़ा झेल रही थी। खासकर गाँव के नेताओं को आधी रात को बाहर बुलाकर भूखा रखा जाता था। लोग हर वक्त अपने दिल में डर लिए जी रहे थे।

मुझे यहाँ अचानक से कुछ याद आ गया। हमारे दैनिक अखबार वाले से एक दिन पॉलिटिक्स के बारे में मेरी खूब सारी बातचीत हुई। उसकी उम्र का अंदाजा लगाने पर लगा कि वह रमबुआई[34] के समय में मौजूद रहा होगा और उसे रमबुआई के बारे में अच्छी तरह पता होगा। मुझे लगा कि वह एम.एन.एफ. पार्टी का समर्थन करता होगा और इसलिए मैंने उससे मज़ाक भी किया। लेकिन, मुझे वह जवाब नहीं मिला जिसकी मुझे उम्मीद थी। फिर वह मुझे बताने लगा कि क्यों उसने एम.एन.एफ. पार्टी का समर्थन नहीं किया। जब उसने कहा "काफी साल बीत गये हैं। उस समय मेरे पिता हमारे गाँव के वीसी सदस्य थे। वह एम.एन.एफ. के लोगों की भी मदद करते थे। इसलिए

भारतीय सैनिक उन्हें बार-बार बुलाते थे। सोने के बाद भी भारतीय सैनिक हमें जगा देते थे, इसलिए हमें ठीक से सोने का समय भी नहीं मिलता था। भारतीय सैनिक उन पर हाथ भी उठाते थे और अक्सर उनको परेशान किया करते थे। उस समय मेरे पिता की पीड़ा ने मेरे दिल को भारतीय सेना के प्रति कठोर नहीं बनाया बल्कि एम.एन.एफ. के खिलाफ विद्रोही बना दिया। आज तक, मुझे लगता है कि मेरे पिता को जो कष्ट सहने पड़े, उसका कारण एम.एन.एफ. है।" तब मैंने कहा, "रुको, पर तुम्हारे पिताजी को सताने वाले तो भारतीय सैनिक थे।" इसपर उसने पूरी दृढ़ता के साथ कहा, "हाँ यह सच है, लेकिन, एम.एन.एफ. की वजह से।"

फिर मैंने सोचा और मुझे भी लगा कि जिस परिस्थिति को ध्यान में रखकर वह यह बात कह रहा था, उसके हिसाब से उसकी बात भी सही थी। जब मैंने पूछा "फिर, तुम किस पार्टी का समर्थन करते हो?" तब उसने मुस्कुराते हुए कहा, "बोईह्[35], मुझे लगता है कि कोई भी पार्टी भरोसे के लायक नहीं है। चुनाव के दौरान सभी पार्टियों के जो अच्छे-अच्छे मैनिफेस्टो होते हैं, चुनाव के खत्म होते ही सब गायब हो जाते हैं।" यह कहकर वह चला गया। मुझे भी लगा कि उसने सही कहा है। जहाँ तक मैं भी जानती हूँ, हम ऐसी हालत में पहुँच गए हैं कि हमें सोचना पड़ रहा है कि ऐसी कौन-सी पार्टी है जो मिज़ोरम को बेहतर स्थिति तक पहुँचा सकती है। मैं भी कई बार सोचती हूँ कि शुरू से ही मिज़ोरम गलत रास्ते पर चलता रहा है, और अब इसे सही रास्ते पर लाना नामुमकिन हो गया है। ऐसा लगता है कि रूलिंग पार्टी नहीं बल्कि हर ऑपोज़ीशन पार्टी ही देश से प्रेम करती है, इसलिए अगर हर बार ऑपोज़िशन पार्टी ही सरकार बनाए तो क्या यह अच्छा नहीं रहेगा?

जिस समय ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों से भारतीय सेना ने अपनी बंदूकें जमा करवाने और एम.एन.एफ. के लोगों को भारतीय सेना को सौंपने को कहा था, वह 1967 में थरराङ (चावल)[36] की कटाई का समय था। इसलिए जो लोग बंदूकें ढूँढने निकलते थे वे अपने साथ छुपाकर फवाह्[37] ले जाते और जिनके भी खेत में थरराङ की फसल होती, उनमें से ढेर सारी फसल काट लेते। जिन लोगों के खेतों में थरराङ की फसल होती, यह उनके लिए खुशी की बात होती। वे जानते थे कि थरराङ की

यह फसल खुद को जिंदा रखने का एकमात्र साधन थी, लेकिन वे अपने ही खेतों की देखभाल नहीं कर पा रहे थे, क्योंकि गाँव के मर्दों की पूरी ताकत और उनका पूरा समय अपने जले हुए गाँव की मरम्मत करने और सेना के लिए बंकर खोदने में निकल जाता था।

कुछ दिनों तक बंदूकों और एम.एन.एफ. के लोगों की तलाश में निकलने के बाद गाँव के नेताओं को लगने लगा कि यह करना अब और संभव नहीं है, इसलिए उन्होंने जैसे-तैसे बनायी हुई घटिया किस्म की बंदूकें भारतीय सेना को सौंप दीं। इससे भारतीय सेना भी थोड़ी ढीली पड़ गयी। इसके बाद गाँव के पुरुषों ने बंदूकों और एम.एन.एफ. के लोगों की तलाश छोड़ दी और सेना के बूथों के निर्माण के लिए बाँस काटने लगे और महिलाएँ छप्पर के लिए सूखी घास उखाड़ने लगीं। जब-जब उन्हें लगता कि उनकी समस्या कुछ कम हो रही है, तब-तब एम.एन.एफ. की तरफ से कोई-न-कोई घटना सामने आ जाती। इस कारण लोगों की समस्या का अंत नहीं हो पा रहा था।

(4)

अब मिज़ोरम एक अशांत क्षेत्र बन गया था और हर जगह लोगों को सेना के नियंत्रण में रहना पड़ रहा था, इसलिए जीवन उनके लिए बहुत कठिन हो गया था। कुछ गाँवों में वाई सैनिकों ने स्त्रियों के साथ बलात्कार भी किया और ऐसा करते हुए उन्होंने जवान लड़कियों और बुजुर्ग महिलाओं में कोई भेद नहीं किया। जवान लड़कियाँ तो असुरक्षित थीं ही, बुजुर्ग महिलाएँ भी सुरक्षित नहीं थीं। लेकिन यह जरूर कहा जा सकता है कि जवान लड़कियों की स्थिति ज़्यादा बदतर थी। घर से कहीं बाहर जाते समय जवान लड़कियाँ अपने पड़ोसियों के छोटे बच्चों को अपनी पीठ पर लादकर ले जाती थीं और अगर ऐसा कोई छोटा बच्चा नहीं मिल पाता तो वे किसी बड़े बच्चे को कम-से-कम हाथ पकड़ कर चलने के लिए ढूँढ़ती थीं। कुछ गाँवों में तो कई युवतियाँ अपने-आप को कालिख पोत कर काला कर लेती थीं।

लेकिन चोङत्लाई गाँव थोड़ा भाग्यशाली था। उस इलाके का सेना अधिकारी बहुत सज्जन था। वह महिलाओं का सम्मान करना जनता था और अपने सैनिकों को किसी भी महिला के नजदीक जाने नहीं देता था। यहाँ तक कि जब वे किसी के घर में एम.एन.एफ. के लोगों की तलाश में जाते थे और यदि घर में कोई महिला होती, तो वे पहले उन महिलाओं को बाहर भेज देते थे। कुछ खास मामलों में भले ही वह अच्छा नहीं था, मगर मनुष्यता के प्रति सबसे खौफनाक और घृणित अपराध बलात्कार से अन्य गाँवों की तुलना में चोङत्लाई गाँव को उसने सुरक्षित रखा। इसलिए चोङत्लाई गाँव को भाग्यशाली कहा जा सकता था। लेकिन उन वाई सैनिकों के द्वारा गाँव के मुखिया की हत्या और गाँव के भूतपूर्व मुखिया के बहुत ही सुंदर बेटे को बुरी तरह पीटने के बाद उसे घुटनों के बल गाँव के बाहर तक घसीटना गाँव वालों के लिए बर्दाश्त से बाहर था। वे सैनिक हद से ज़्यादा दुष्ट और नफरत के लायक थे।

विद्रोह के समय से लेकर आज तक कई लोग अपनी जाति की सुरक्षा का भाव अपने दिल में रखने वाले ह्रम सिपई (जिसे आज एम.एन.एफ. पोलिटिकिल पार्टी के रूप में जाना जाता है) का समर्थन करते रहे हैं और आगे भी करते रहेंगे। लेकिन, जो लोग अपनी भूमि और जाति की रक्षा के लिए लड़ते हुए अपना खून बहाने से नहीं डरते थे, उनके बीच कुछ ऐसे भी थे जो भेड़ की खाल में भेड़िये की तरह थे, जो दुःखद है और यह उन्हें नई पीढ़ी के बीच गलत साबित कर सकता है। तुआलते गाँव के कुछ युवक भी ह्रम सिपई में भर्ती हुए। लेकिन, पूरे दिल से अपने देश और अपनी जाति से प्रेम करने वालों के बीच कुछ ऐसे भी थे जो बदले की भावना से भरे हुए थे।

पृथ्वी की उत्पत्ति से लेकर अंत तक, मनुष्य स्त्री-पुरुष के बीच के जिस प्रेम के प्रति आकर्षित रहा है, वह मानवजाति को उसके लक्ष्य से किस सीमा तक विचलित कर सकता है? यह प्रेम की पीड़ा ही थी जिसने नेपोलियन बोनापार्ट और हिटलर जैसे योद्धाओं को भी घुटने टेकने पर मजबूर कर दिया और इसी प्रेम के कारण हमारी भूमि और जाति की रक्षा के लिए लड़ने वाले ह्रम सिपई को भी शर्मिंदा होना पड़ा था। तुआलते गाँव से ह्रम सिपई में भर्ती होने वालों में से दो ऐसे भी थे जो *ट्रेनिंग*

प्राप्त करने के बाद *सिविल* नागरिक की तरह वापस लौट आए। यह एक गंभीर चिंतन कअ विषय है कि ऐसा क्यों हुआ? उन दोनों ने सैन्य प्रशिक्षण प्राप्त किया था और बंदूक उठाने में सक्षम थे। फिर भी वे भूमिगत एम.एन.एफ. में शामिल नहीं हुए।

तुआलते गाँव का एक सुंदर युवक त्लाङचुआना जो अब प्रायः बर्मा में रहता है और बिक्री के लिए मिर्च की तलाश में बीच-बीच में गाँव आता रहता है, बर्मा जाने से पहले अपने गाँव की लड़कियों के बीच बहुत लोकप्रिय था। दूसरे लड़के उसका मुकाबला नहीं कर सकते थे। यही कारण था कि वे सब उससे जलते थे और उसकी बुरी तरह चुगली करते थे। इसलिए जब वह व्यापार करने के लिए बर्मा गया तो कुछ लोगों ने नाक में घुसे हुए जोंक के निकल जाने जैसी राहत महसूस की[38] ऐसा माना जा सकता है। पर दिल के घाव इतनी जल्दी नहीं भरते। विद्रोह शुरू होने के बाद जब वह मिर्ची लेने अपने गाँव लौटा, तब उसे रात में बाहर बुलाया गया और गाँव के बाहर ले जाकर गोली मार दी गई। विद्रोह के कारण भारतीय सैनिकों द्वारा मारे जाने और जलील होने के बीच अपने ही देश और जाति को बचाने वाले ह्नम सिपई द्वारा मारा जाना उसके परिवार के लिए बहुत ही दुःखद और दर्दनाक होगा। विद्रोह के कारण हमेशा कर्फ्यू लागू रहने की वजह से उस युवक के शव को वहीं छोड़ दिया गया।

तुआलते गाँव का सुंदर युवक त्लाङचुआना बिना किसी अंतिम संस्कार के गाँव के बाहरी इलाके में सूखे पत्तों के नीचे दब गया और गायब हो गया। मैं सोचती हूँ कि अगर वह मेरे परिवार का सदस्य होता तो मैं किस तरह की सोच रखती। मुझे बहुत दुःख होता। जिन लोगों ने ह्नम सिपई में भर्ती होने के लिए प्रशिक्षण लिया था वे लोग देश और जाति की रक्षा के लिए कदम बढ़ाने की बजाय त्लाङचुआना, जिसका वे युवतियों के बीच लोकप्रियता के मामले में मुकाबला नहीं कर सकते थे, की जान लेने के लिए ज़्यादा बेचैन थे! हाय रे मनुष्य का मन! ....कितना निकृष्ट है यह! लेकिन, उस विद्रोह ने लोगों में अपनी जाति के प्रति प्रेम इतना ज्यादा बढ़ा दिया था कि अगर त्लाङचुआना के परिवार के लोगों से भी पूछा जाता तो वे अब भी एम.एन.एफ. की अच्छाईयों का बखान करते नहीं

थकते और कहते कि एम.एन.एफ. के बिना मिज़ोरम बिखर जाता। वे कहते हैं कि "यदि एम.एन.एफ. के लोग नहीं लड़ते तो आज कोई भी मिज़ो बचा नहीं रहता, वाई हमें खत्म कर चुके होते।" उनका दिल आज भी वॉलन्टियरों के लिए धड़कता है।

हाँ, उस विद्रोह ने जरूर देश और जाति में एकता की भावना पैदा की। लेकिन इसी के साथ इसने जाति और जाति के बीच दुश्मनी भी पैदा की। पु रोउछुआहा को तो लगता है कि इस विद्रोह ने ही चोरी जैसी चीज को जन्म दिया है। हम यह तो नहीं कह सकते कि एकदम से ऐसा ही हुआ है, लेकिन, कई मामलों में कुछ हद तक यह बात सही मालूम पड़ती है। खैर, चलिए आगे देखते हैं।

इस तरह जब कई गाँवों में उथल-पुथल मची हुई थी, ईस्ट लुङदार गाँव की पीड़ा भी कम नहीं हो रही थी। भारतीय सैनिकों के लिए बंकरों की खुदाई करना एक थका देने वाला काम था, पर अब उन्हें इसकी आदत पड़ गयी थी। उनके लिए ज्यादा कष्टदायक यह था कि जब भी एम.एन.एफ. की तरफ से किसी घटना की खबर आती, तब उनसब को एक साथ मैदान और स्कूल में बुलाया जाता था और हर बार उनकी पिटाई होती। कड़ी धूप में उन्हें मुर्गा बनने के लिए कहा जाता था, भारतीय सैनिक जितना चाहें उन्हें पीटते थे। कौन इतनी यातनाएँ चुपचाप सह सकता था! कुछ लोग भले ही पिटाई से बच जाते, लेकिन चिलचिलाती धूप में खड़े रहने के कारण उन्हें चक्कर आ जाता और वे गिर जाते थे। और उसके बाद वे बीमार भी पड़ जाते। शायद यही वजह है कि विद्रोह के ज़माने के ज्यादातर लोगों को सिर दर्द, चक्कर और साइटिका की समस्या है? कुछ इस तरह हमारे देश ने स्टेट का दर्जा हासिल किया है!

बस इतना ही नहीं। कुछेक लोगों के कारण गाँव वालों के बीच आपस में भी दुश्मनी हो गयी। लेकिन, इसमें उनका कोई दोष नहीं है, हर मनुष्य स्वार्थी है, वह बस अपने लिए ही केकड़े पकड़ता है।[39] कुछ लड़कियाँ भारतीय सैनिकों के पक्ष में रहने की चाह में भारतीय सेना के *ऑफिसर* से प्यार करने लगीं! इस बात की जानकारी मिलने के बाद अक्सर कुछ लोग उन लड़कियों के घरों की दीवारों पर नफरत से भरे अपमानजनक शब्द लिखकर चिपका दिया करते थे। लड़कियों ने सैनिकों को इस

बारे में बताया। भारतीय सैनिक ऐसा लिखने वालों का पता लगाने के लिए गाँव के लोगों को इकट्ठा करके पूछताछ करते। लेकिन कोई भी ऐसा नहीं होता जो यह कहता कि 'मैंने लिखा है या मैंने टाँगा है।' इसलिए सबको भारतीय सैनिकों से मार खानी पड़ती थी। कुछ अधेड़ मर्द ऐसे भी थे जो भारतीय सेना *कैम्प* के पक्ष में चले गए थे। वे अक्सर भारतीय सेना का दूध, चायपत्ती और तंबाकू बड़ी मात्रा में अपने घर ले जाने लगे। इन सब बातों का एक खास मतलब था। यह गाँव के लोगों के लिए पीड़ादायक था। यही लोग अक्सर अपने फायदे के लिए दूसरों के खिलाफ बोलने लगे। कुछ लोग गाँव के दूसरे लोगों के खिलाफ बोल रहे हैं- यह बात जब एम.एन.एफ. के लोगों को मालूम हुई तो वे लोग उन्हें बाहर निकालकर उनपर कार्रवाई करने लगे। भारतीय सेना उन लोगों को बचा लेती, फिर गाँव वालों पर आरोप लगाती और गाँव के लोगों का उत्पीड़न फिर से शुरू हो जाता।

एक दिन ईस्ट लुङदार गाँव में 'कोकतू'[40] आया। गाँव के एक व्यक्ति ललज़ामा की ओर उँगली उठाकर भारतीय सैनिक से वह कहने लगा, 'यही है एम.एन.एफ. का नेता ललदेङा!' गाँव वालों के कहने पर भी कि वह ललदेङा नहीं है, भारतीय सैनिकों ने उनकी बात को कोई महत्व नहीं दिया।[41] ललज़ामा को अलग रखा गया और भारतीय सैनिकों ने जितना चाहा, उसे सताया। पूरी रात उसकी चीख बंद नहीं हुई। इसी से समझा जा सकता है कि उसे पूरी रात बेरहमी से पीटा गया था। ललज़ामा के रिश्ते के भाइयों के लिए यह बहुत ही पीड़ादायक रहा होगा। स्कूल के एक कमरे में उनके भाई के ऊपर अत्याचार हो रहा था, वह चीख रहा था और वे दूसरे कमरे में रस्सी से बँधे हुए थे और कुछ नहीं कर सकते थे। पूर्वजों के जमाने से ही मिज़ो लोगों के मन में 'दोस्त के लिए अपनी जान दे देने'[42] का विचार गहराई से बैठा हुआ था। इस बीच ललज़ामा को बचाने वाला कोई नहीं था और उसकी दर्द के मारे जोर-जोर से चीखने की आवाज़ सुनकर उसके साथ सहानुभूति रखने वालों का दिल फूट-फूटकर रो रहा होगा।

उस नकाबपोश 'कोकतू' ने एक निर्दोष व्यक्ति पर झूठा आरोप क्यों लगाया? जिस व्यक्ति के भीतर अपनी ही जाति के प्रति प्रेम न हो, वह अब तक इस दुनिया में क्या कर रहा है? कई लोग

तत्काल उसकी जान लेने पर उतारू हो गए। लेकिन, यह भी एकदम निश्चित है कि उस 'कोकतू' को भी किसी का डर था। लोगों को अपना चेहरा दिखाने का साहस उसमें नहीं था। और साथ ही सैनिकों की निगरानी के बिना अकेले रहने की हिम्मत भी उसमें नहीं थी। कई लोगों के लिए और खासकर दारपुई जैसी एक सुशील युवती के लिए यह सब जानना आश्चर्यजनक था कि एक ऐसा व्यक्ति जो खुद को ईसाई कहता है, उसने मानवता के विरुद्ध जाकर खुद के जीवन को इतना संकीर्ण बना लिया। लगता है कि जब यीशू ने हमारे पापों का उद्धार के लिए अपना लहू बहाया था, तो कोकतू ने उस अनुग्रह को स्वीकार ही नहीं किया होगा।

रोउछुआहा और उसके दोस्त दारपुई को झूम के लिए अपने साथ ले गए। वे खेती-बाड़ी की बातें कर रहे थे उसी बीच अचानक जंगल में उगे घास के बीच से लंबे-बिखरे बालों वाले तीन गंदे-संदे मर्द निकल कर सामने आ गए। दारपुई बुरी तरह चौंक गई इसलिए वह चीख पड़ी। लेकिन उन्होंने कहा, "हमसे डरो मत। हम तुम्हारे ह्मम सिपई हैं। हम भारतीय सैनिकों के बारे में चुपके से जाँच-पड़ताल करने आए हैं।" यह कहकर सभी आपस में गाँव के बारे में बातचीत करने लगे।

रोउछुआहा और उसके दोस्तों के मन में केवल यही बात खटक रही थी कि ये ह्मम सिपई गाँव में घुसकर क्या करेंगे? ये भारतीय सैनिकों के बारे में जाँच-पड़ताल क्यों करना चाहते हैं? ये लोग जो कुछ भी करेंगे, उसका खामियाजा हमें ही भुगतना पड़ेगा।

दारपुई ने, जितना हो सका, उनसे विनती की- "दोस्तों, कृपया कोई ऐसा काम मत करो जो नुकसानदेह हो। तुम्हारे कर्मों का फल जिनको भुगतना होगा, वे हमारे गाँव के ही भोले-भाले लोग हैं। सच तो यह है कि तुम सबको सुरक्षित रखने के लिए ही मेरे इन सभी दोस्तों ने भी सरेंडर किया था।" लेकिन उसकी इन बातों से उन मिज़ो सिपाहियों के कानों पर जूँ तक नहीं रेंगा[43]। उन्होंने लापरवाही से उत्तर दिया, "नुला[44], हमारे कर्मों का फल तो तुम लोगों को ही मिलने वाला है। जब हमें *इंडिपेंडेंस* मिलेगा तब तुम लोग ही खुश होने वाले हो।" यह सुनकर दारपुई को गुस्सा आ गया। एक कोमल मन वाली और बहुत दूर तक नहीं सोचने वाली महिला के लिए इतनी पीड़ा झेलकर मिलने वाली

स्वतंत्रता का कोई मूल्य नहीं था। दारपुई की इस सोच को एकदम से खारिज नहीं किया जा सकता था।

ह्रम सिपई से अलग होने के बाद, किसी के मुँह से एक शब्द न निकला। लेकिन सभी के विचार एक समान थे। झूम पर जाने की न तो उनमें कोई उत्सुकता थी और न ही ज़रा भी इच्छा। उनके मन में कवेयल यही चिंता थी कि अब गाँव में क्या होने वाला है। उन्हें लगता था कि उनकी पीड़ा बहुत ज्यादा काफी थीं। अपने ही गाँव को जलते हुए देखना, शरणार्थी बंकर पड़ोसी गाँव में बसना और उस रात मुखिया की बेटी – जो मानसिक रूप से आम व्यक्ति से कम थी – उसी के घर के अंदर गोली मार दिया जाना, ये घाव बहुत गहरे थे। अगले दिन सूर्योदय के बाद खबर लेने निकले युवकों को भारतीय सैनिकों द्वारा मौत के घाट उतार दिया गया और अपने पिता की मदद करने पहुँचे युवक को भी गोली मार दिया गया, यह तमाम पीड़ा उनकी बर्दाश्त से बाहर थे। वे सुरक्षा की आस में घर से निकले थे, लेकिन, संरक्षण के बदले उन्हें गोलियाँ मिली।

आखिर, वॉलन्टियर दारपुई जैसी एक साधारण युवती और अन्य लोगों के अनुरोध पर कान क्यों धरते? वे उसे भला क्यों महत्त्व देते? उस रात (15 नंबर 1966) की गोलीबारी शुरू होने से पहले भी कई मर्दों ने वहाँ के हेडक्वार्टर (मुख्यालय) के संरक्षक पु बिआकछूङा से बार-बार विनती की थी।

उन्होंने लोगों की सुरक्षा और उनकी मांगों को न केवल महत्त्व दिया, बल्कि उन्हें पूरा करने का वादा भी दिया। इस आश्वासन से सभी लोग खुशी-खुशी वापस गए और घरों में इकट्ठे होकर चमफाई की ओर से आने वाली भारतीय सेना के बारे में चर्चा करने लगे। जिन्हें स्थिति की कम जानकारी थी, वे उन समझदार और दूरदर्शी लोगों की बातें सुनते रहे और देर रात तक जागते रहे। किन्तु, जब भारतीय सैनिक अंततः पहुँचे और गाँव वालों से सहायता की अपेक्षा करने लगे, तब भी समाज के कुछ बुजुर्ग और अनुभवी लोग डरे हुए थे। क्योंकि वॉलन्टियरों ने मिनपुई घाटी में अपना ठिकाना बनाया था, जो उनके गाँव के बाहरी सीमा से मात्र एक मील की दूरी पर स्थित थी।

जिस समय भारतीय सेना गाँववालों को एकत्रित कर उनसे सहयोग की अपेक्षा कर रही थी, ठीक उस समय भी वॉलन्टियर अपने बंदूकों के साथ गाँव के बाहरी सीमाओं पर मंडरा रहे थे। इस भयावह स्थिति को अच्छी तरह से परखने वाले गाँव के नेताओं का मन भला आशंका से क्यों न कांपता? इसलिए *31वीं डिवीजन वॉलन्टियर हेडक्वार्टर* के *कमांडर* पु बिआकछूङा से तुरंत बात करने निकल पड़े, जो स्वभाव से एक अत्यंत शालीन और मिलनसार व्यक्ति था।

पुरुषों के बीच सकारात्मक बातचीत होने के कारण उन्हें एक दूसरे पर भरोसा भी रखना चाहिए। पु बिआकछूङा से मिलकर गाँव के मुखिया और नेता आश्वस्त होकर अपने घरों को लौट गए। हमेशा की तरह, गाँव के युवक नुलारीम में मग्न हो गए और खेती-बाड़ी की बातें होने लगी। देर रात जब एक मुर्गे ने बाँग दी – जो उन युवकों के लिए अपने प्रेमिकाओं का घर छोड़ने का पारंपरिक संकेत था- एक दूसरे के साथ समय बिताने के लिए उत्सुक युवक-युवतियाँ उस बाँग से चिढ़ गये। अंततः एक-दूसरे के प्रति अगाध प्रेम और अगले दिन पुनः मिलने के दृढ़ संकल्प के साथ, उन्होंने भारी मन से एक दूसरे को विदा किया।

सब दिन भर के परिश्रम से थके-हारे थे, इसलिए सभी ठंड से बचने के लिए अपनी-अपनी बिस्तरों की शरण ले रहे थे। कुछ बच्चों के सपनों में 'लसी'[45] उनके साथ खेल रहे थे। नींद में ही खिलखिलाते उन चेहरों को देखकर उनकी माताओं की प्रसन्नता से भर उठता। उन निर्दोष बच्चों की मुस्कान उनके माता-पिता की सारी थकान हर लेती थी। अपने माता-पिता के पास रहकर उन्हें जो सुरक्षा और शांति मिल रही थी, वैसी ही उनके गाँव का शांत और सुहाना मौसम के कारण वे अच्छी नींद सो रहे थे। बच्चे जो स्कूल से बाहर खेलने में अधिक मज़ा लेते थे, बिना हाथ-पाँव धोए ही अपने बिस्तरों पर चढ़ गए और रज़ाइयों में उधम मचाने लगे। दूसरी ओर, वे बच्चे जो अपनी पढ़ाई को लेकर गंभीर थे, इस चिंता में डूबे थे कि अगले दिन शिक्षक उनके गृहकार्य के विषय में प्रश्न करेंगे। वे गहरी नींद में भी खर्राटे लेते हुए अपने रटे हुए पाठ दोहरा रहे थे।

जब लोग देर रात तक अपनी रज़ाइयों में दुबके सुनहरे सपनों और विचारों में खोये हुए थे, ठीक उसी समय गाँव के बाहरी छोर पर एक गुप्त बैठक चल रही थी। जहाँ हमले की योजना बुनी जा रही थी। लेकिन इस रणनीति को लेकर सभी के विचार एकमत नहीं थे। पहले से ही उनके हेडक्वार्टर का रक्षक पु बिआकछूङा, जिनसे दोपहर में ही गाँव के नेताओं ने मुलाकात की थी, उन्होंने सेना पर हमला करने के बजाय सीधे अपने पार्लियामेंट बैठक के लिए आगे बढ़ने के लिए सुझाव दिया। लेकिन, शायद उनके प्रेसीडेंट पु ललदेङा को यह विचार निरर्थक लगा होगा, इसलिए वह जानबूझकर उनमें से कुछ लोगों के साथ रणनीति पर चर्चा जारी रखी।

उन्हें लगा भारतीय सेना की टुकड़ी में मात्र सौ सैनिक हैं, जो दोपहर में ही यहाँ पहुँचे हैं और थके हुए हैं। उनके पास न तो अभी कोई *कैम्प* था और न ही *ट्रेंच* के लिए समय मिला था। उन्हें विश्वास था कि एक जोरदार गोलीबारी से वे उन्हें आसानी से हरा देंगे, इसलिए उन्होंने उस क्षेत्र के रखवाले की बातों पर ध्यान नहीं दिया और अनसुना कर दिया। काफी देर तक उनके बीच बहस चलती रही। अंततः जब उनके मुख्य ने ललकारते हुए कहा, “मैं तुम्हारी बंदूकों की गूँज सुनना चाहता हूँ,” तो उसके बाद बहस की कोई गुंजाइश ही नहीं बची। अपने राज्य और जाति के लिए प्राण न्योछावर करने को तत्पर उन जवानों को और अधिक उकसाने की आवश्यकता नहीं थी। कुछ ही पलों में, सन्नाटे को चीरती हुई गोलियों की आवाजें गूँजने लगी।

शरद ऋतु की उस सुहावनी रात में, अपने ही बिस्तर में गहरी नींद सोने वालों को जगाने वाला बंदूक की गूँज से जो चैन की नींद सो रहे थे, उनके लिए उनकी इस स्थिति को समझना मुश्किल था। लेकिन, उनके पास सोचने के लिए समय बहुत कम था। गोलीयों की आवाज़ तेज होती गई। उन्हें धीरे-धीरे यह समझ में आया कि वॉलन्टियर और भारतीय सेना के बीच लड़ाई हो रही हैं। इसके बावजूद कुछ ऐसे भी थे जिन्हें लगा कि वे आराम से चैन की नींद सो पायेंगे। लेकिन, तभी भारतीय सेना द्वारा फेंके गए बम की धमाका इतनी तेज और भयावह था कि, उसे नजरंदाज करना नामुमकिन था और चैन से लेते रहना असंभव हो गया था।

बाँस की चटाई और घास के छप्पर से बने उनके घर धमाओं से हिल रहा था। बंदूक की गोलियां उन कच्ची दीवारों को चीर रही थीं। अब बिस्तर पर लेते रहना भी असंभव हो गया था। इसलिए ना तो कोई बैठ सकते थे और न ही इधर-उधर भाग सकते थे। गोलियों से बचने के लिए बच्चों को सुरक्षा के लिए बिस्तर के नीचे छिपने को कहा गया। हर परिवार अपनी जान बचाने के लिए परेशान हो गए थे। उसी समय ईस्ट लुङदार, दारखोपुई, जहाँ कभी वे चैन और खुशी से रहा करते थे, देखते ही देखते वह जंग लड़ने का एक मैदान बन गया!

(5)

चलिए, कुछ समय पीछे चलते हैं। गरीबी और मौत, दोनों ही हर पल घृणा से भरी होती हैं। विद्रोह के कारण उत्पन्न कठिन परिस्थिति और मुश्किलों से पहले भी पी ह्राङलोमई का परिवार एक संघर्षपूर्ण जीवन जी रहा था। उनके लिए भविष्य ओर भी अंधकारमय था। जब एक क्रूर मौत ने उनके परिवार का मुख्य आधार और उनका सब कुछ, उनके पिता को उनसे छीन लिया, तब मानो उन पर आसमान टूट पड़ा। वह अपने तीन छोटे-छोटे बच्चों की अकेले देखभाल करने के विचार से सहम गई थी। उसके मन में बस यही सवाल उमड़ रहा था कि “मौत गरीबों पर दया क्यों नहीं करती?”

समय बीतता गया और अंततः झूम खेती करने के लिए स्थान चुनने का समय आ गया। पी ह्राङलोमई का सबसे बड़ा बेटा ललज़ेदिङा, जो मात्र 16 साल का था, बहाली-भांति जानता था कि अब उसे उनके पिता का स्थान लेना होगा। इसलिए उसने अपनी माँ से कहा, “माँ, इस बार खेती के लिए जगह चुनने मैं जाऊँगा। पिताजी के जाने के बाद यह मेरा पहला और सबसे बड़ा कर्तव्य है। यह मेरे लिए सीखने का भी अच्छा अवसर होगा, क्योंकि मुझे ही खेतों की देखभाल करनी है।”

उसकी माँ गर्व भरी नज़रों से अपने बेटे को निहारती रही, जिसकी उम्र तो कम थी पर सोच ऊँची। उसने मन ही मन कहने लगी, “ज़े-अ के पापा, क्या आप अपने बेटे को देख रहे हो? यह

माँगना कि आपकी जगह पूरी गरिमा के साथ ले सके।" फिर वह अपने बेटे को लोक-व्यवहार और मर्यादा की सीख देते हुए कहा, "ठीक है बेटा, तुम्हारी बहन की तबीयत भी ठीक नहीं है, इसलिए मैं कहीं नहीं जा सकती। जाते समय पु ज़ोमा को बुलाते हुए जाना, वह चुनाव में तुम्हारी मदद करेंगे। उनकी बातों का ध्यान रखना। वे अच्छे से तय करेंगे कि हमारे लिए क्या अच्छा है।"

उनके सबसे छोटी ललज़ीकपुई ने कहा, "भईया, ज्यादा दूर वाली जमीन मत चुनना। जब मैं खेती में हाथ बँटाने जाऊँगी, तो मेरे लिए बहुत मुश्किल होगा। और वैसे भी अब पापा नहीं रहे तो अगर हमें वहाँ रात बितानी पड़ी तो हमारे लिए बहुत परेशानी हो सकती है। आपकी उम्र भी अभी छोटी है, माँ बहुत ज्यादा थक जाएँगी।" तब ज़े-अ ने घर से निकलते हुए जवाब दिया, "ठीक है, मैं पास वाली और उपजाऊ ज़मीन चुनने की पूरी कोशिश क रूँगा।"

माँ और बेटे को लगा कि शायद पूरे गाँव में उनसे ज्यादा गरीब परिवार ओर कोई नहीं होगा इसलिए उन्हें उम्मीद थी कि गाँव के नेता उन पर दया करेंगे। नेताओं के दया और सहानुभूति की आशा लिए वह नवयुवक ज़मीन के चुनाव और पिता की कमी को पूरा करने और घर को संभालने की अटूट संकल्प लेकर निकल पड़ा। लेकिन, परमेश्वर के न्याय को समझना कठिन है। अक्सर दूसरों को खुश करने के लिए इन गरीब अनाथों के पास कुछ नहीं होता।

तब गाँव के सभी स्त्री-पुरुष ज़मीन चुनने के लिए एक साथ मैदान में एकत्रित हुए। अपनी माँ के सुझाव का पालन करते हुए ज़े-अ भी पु ज़ोमा के पास गया और उन्हें अपनी परेशानियों को बतलाया। लेकिन, मैदान पहुँचने के बाद पु ज़ोमा ने ज़े-अ के परिवार की स्थिति पर कोई ध्यान नहीं दिया। इसके बावजूद, ज़े-अ के पास उनके अलावा ओर कोई सहारा नहीं था, वह उनके साथ ही रहा।

कुछ महत्त्वपूर्ण चर्चा के बाद, ज़मीन का बँटवारा शुरू हुआ। यह सोचा गया था कि विधवाओं, अनाथों और पूर्व मुखिया परिवार के लोगों को अच्छी ज़मीन दिया जाएगा। लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। शक्तिशाली और धनी परिवारों ने गरीब के बारे में ना सोचकर वे स्वयं सबसे पहले

ज़मीन का चयन करते गए! लेकिन, जब पु त्लाङा, एक मिज़ो पुरुष, बहादुर और ईमानदार आदमी, जिसकी मानसिकता वास्तविक मिज़ो व्यक्ति की थी, को ज़मीन चुनने के लिए कहा गया तो उन्होंने इंकार करते हुए कहा, “नहीं, हमारे घर में जवान और अधेड़ उम्र के सक्षम पुरुष है, मैं आखरी में चयन करूँगा। यदि उस समय मुझे कोई अच्छी ज़मीन मिल गयी, तो हमारे लिए खुशी की बात होगी।”

जो कुछ भी उसकी आँखों के सामने घट रहा था, उसे देखकर ललज़ेदिङा हैरान था और बहुत दुःखी होने लगा। हर उपजाऊ ज़मीन ऐसे परिवार द्वारा ले ली गई थी जो पहले से ही बहतर जीवन जी रहे थे। उसे डर लगने लगा कि उसके परिवार के हिस्से अब कोई भी अच्छी ज़मीन नहीं बचेगा।

चिंतित होकर वह पु ज़ोमा से कहने लगा, “क पू, क्या मेरा समय आने वाला है? अब तो मुझे कोई अच्छी ज़मीन भी नहीं मिल पाएगी! क्या आप मेरी मदद के लिए कुछ भी नहीं कर सकते?” लेकिन पु ज़ोमा ने जवाब दिया, “ऐसा नहीं हो सकता। यहाँ बहुत से सम्मानित लोग हैं, और उन्हें नाराज़ करना हमारे लिए ठीक नहीं होगा। तुम बस धैर्य रखो। सभी गाँववालों के लिए ज़मीन को बाँटा गया हैं, इसलिए तुम्हारा हिस्सा कहीं नहीं जाएगा।”

वह उम्र में भी छोटा और बहस करना नहीं जानता था, इसलिए वह एक कोने में जाकर चुपचाप खड़ा रहा। उसी समय पु ठ्रीअङा ललज़ेदिङा के व्यवहार और उसके स्थिति के बारे में सोच रहे थे। उसे लगता था कि उसे ज़मीन चुनने कअ पहला अवसर मिलन चाहिए था, लेकिन किसी ने भी इस बात पर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने गाँव के कुछ ज़िम्मेदार लोगों से इस बारे में बात की, पर उन्होंने भी इसे अनसुना कर दिया। धीरे-धीरे शाम ढलने लगी। जब चुनने वाले केवल चार लोग ही बचे, तब पु ठ्रीअङा को बुलाया गया। लेकिन उन्होंने कहा, “मुझसे पहले पी ह्राङलोमई के परिवार को चुनने दो।”

खुशी से ललज़ेदिङा सामने आया। लेकिन मन ही मन उसे पता था कि अब तक कोई भी अच्छी ज़मीन नहीं बची होगी। फिर भी, पु ट्रीअङा की इस सहानुभूति ने उसे बहुत खुश किया था। जैसे कि उसने पहले सोचा था, अंत में उसके हिस्से जो ज़मीन आई, वह घर से बहुत दूर थी। क्या वह अकेले वहाँ खेती करने का साहस जुटा पाएगा? उसकी बहन ज़ीकपुई तो शायद वहाँ पहुँच भी न पाए! वह ज़मीन न केवल दूर थी बल्कि बेहद अनुपजाऊ भी था। पिता के बिना उस ज़मीन का देखभाल करना उसके जीवन की सबसे कठिन चुनौती बन गई थी।

वह भारी मन से घर की ओर भागा। वह चुपचाप अपनी माँ के पास जाकर बैठ गाउआ, जो बड़ी उम्मीदों से उसकी रह देख रही थी। कुछ देर तक वह कुछ नहीं बोल पाया। अपने बेटे के इस व्यवहार से माँ को आश्चर्य हुआ, पर उन्होंने बिना कुछ पूछे उसे चाय दी। उसने अपनी माँ के हाथों डी गई उस चाय की ओर देखा तक नहीं और रुँधे हुए गले से उसने कहा, “माँ, गरीबी इतनी दर्दनाक क्यों होती है! पिताजी को ही क्यों जाना था!” यह कहते ही उसकी आँसू बहने लगे।

जब उसकी माँ ने उससे पूरी बात पूछी, तब उसने पूरी बात बतायी, और उसने गुस्से से कहा, “यदि रोउछुआहा भईया के पिता नहीं होता तो शायद मुझे सबसे अंत में ज़मीन चुन्नी पड़ती। हमारे पु ज़ोमा कुछ काम के भी नहीं है। उनके मन में हमारे लिए न तो प्रेम है और न ही दया। वह हमसे तब तक प्रेम रखते थे जब तक पिताजी जिंदा थे।”

उसकी माँ ने अपने दुखी बेटे को सहलाते हुए कहा, “अरे बेटा, निराश मत हो, परमेश्वर हमसे प्रेम करता है और वह हमेशा हमारी सहायता करेगा। जो भी हो, तुमने जिस भी ज़मीन को चुना है, हम मिलकर उसकी अच्छे से देखभाल करेंगे, मुझमें अभी इतनी ताकत है।” लेकिन यह कहते हुए माँ का हृदय भीतर ही भीतर रो रहा था, मानो उसे किसी ने गहरा घाव दिया हो। वह मन ही मन पुकारने लगी, “वाला के पापा, देखिए आपके पीछे आपकी पत्नी और बच्चों की स्थिति कितनी दयनीय हो गई है! वापस आ जाओं।” यह सोचकर उसने अपना चेहरा बेटे से छिपा लिया और चुपके से अपने आँसू पोंछने लगी।

जब वे दोनों इस दुःख में डूबे थे, तभी उनके पड़ोसी पु ह्मोङअ की बेटी रमचुआनी घर के अंदर आई। उसने अपने हाथ में पकड़ते हुए वरुङ[46] की ओर इशारा करते हुए कहा “पी लोम, देखिए! पिताजी ने वरुङ कअ शिकार किया है और उन्होंने इसे आपके खाने के लिए देने को कहा है।” पी ह्याङलोमई ने भावुक होकर उत्तर दिया, “अरे, चुआनते, यह तो बहुत खुशी की बात है, लेकिन यह मेरे लिए बहुत लज्जा की बात है! तुम लोग ही खा लेते, तुम लोगों ने आज तक हमें बहुत कुछ दिया है। जो भी शिकार करते हो, उसका हिस्सा हमें दे देते हो।”

“माँ ने कहा है अभी हमारे पास बहुत से हरी सब्ज़ियाँ है। शायद हमें अभी मांस खाने की इच्छा नहीं है। इसलिए आप लोग ही इसे खा लीजिए।” कहकर कुछ ओर भी कहने से पहले ही वह दौड़ कर भाग गई। सचमुच, पु ह्मोङअ के परिवार का स्वभाव बड़ा ही विचित्र और अनूठा था। वे बड़ी आसानी और निपुणता से पशु-पक्षियों का शिकार कर लेते थे। लेकिन, शायद उनके अपने परिवार को मांस उतना पसंद नहीं है, इसलिए वे अक्सर अपना शिकार दूसरों में बाँट देते थे, उनका पड़ोसी होना किसी वरदान से कम नहीं था, शायद उन्हें मांस से अधिक हरी सब्जियाँ पसंद थी। लेकिन, उनकी एक आदत ऐसी थी जिससे अक्सर दूसरे लोग असमंजस में पड़ जाते थे।

सुबह तीन बजते ही वे आग जलाकर चाय बनाने लगते और शोर-शराबा शुरू हो जाता। जिन्हें देर तक सोना पसंद हो, वे उनके पड़ोसी बनने की हिम्मत शायद ही कर पाते। लेकिन, दूसरों के प्रति उनकी निस्वार्थ सेवा और उदारता ऐसी थी कि वे सभी के लिए एक आशीष के समान थे, इसलिए उनकी इसी सहृदयता के कारण, जल्दी उठने की उनकी आदत पर कोई कभी गुस्सा नहीं कर पाता था।

अगली सुबह भी ज़े-अ का गुस्सा शांत नहीं हुआ था। उसने बड़बड़ाते हुए कहा, “माँ, क्या परमेश्वर और लोगों ने एक गरीब विधवा और अनाथ से मुँह मोड़ लिया है?” अपने बेटे के दुःख मन को शांत करने के लिए पी लोमी ने बीते समय के गरीबों और अन्य गाँव के गरीबों की स्थिति के बारे में बताते हुए कहा, “मामा (बेटा), ऐसी बातें नहीं कहते। कहीं कोई हमारी बात सुन न ले। हमें अपने

बातों पर सावधान रहना चाहिए। अब देखो, जब हम बच्चे थे, तब गरीबों की स्थिति आज से कहीं अधिक दयनीय थी। हमारा गाँव तब एक सच्चा गाँव था। हमारे पड़ोस में एक निर्धन विधवा रहती थी। विडंबन यह थी कि केवल बड़े ही नहीं, बच्चे भी उन्हें हेय और घृणा दृष्टि से देखते थे। केवल मेरे पिताजी ही थे जो उन पर दया करते थे और हम उनके लिए घर से हरी सब्जियाँ लेकर जाते थे। आज हमारी स्थिति उस विधवा की तुलना में कहीं अधिक बेहतर है। और सच कहूँ तो, अन्य गाँवों की तुलना में हमारे गाँव के लोग बहुत ही उदार और सहृदय हैं।"

वह अपनी बात जारी रखते हुए बोली, "मामा (बेटा), एक समय था जब मिज़ो जाति के प्रमुख, साइलों प्रमुख भी अत्यंत निर्धनता में जीवन व्यतीत करते थे। उनकी स्थिति इतनी विकत थी कि उन्हें गाँव की सीमा के भीतर भी नहीं रह सकते थे। वे गाँव के बाहरी इलाकों में तिरस्कृत जीवन जीते थे, और लोग उनसे इतनी घृणा करते थे कि अक्सर उनके घरों की दीवारों पर पत्थर फेंका करते थे। उसी कठिन दौर में जब उनके घर दूसरे बेटे कअ जन्म हुआ, तो उसका नाम ज़देङा रखा गया। उन लोगों ने अपनी बुद्धि और परमेश्वर के शक्ति पर भरोसा रखा और उसका सही उपयोग करना जानते थे, और अब वे सम्मानजनक स्थान पर आ पहुँचे हैं।" अपनी माँ के इन प्रभावशाली बातों को सुनकर वह अपने मन को शांत तो करना चाहता था, लेकिन उसके लिए बहुत मुश्किल था। फिर भी, पु रोउठ्रीअङा के परिवार ने जिस तरह उनकी मुश्किलों को समझकर मदद की थी, उस उपकार के लिए उसकी खुशी कम होने का नाम नहीं ले रही थी।

(6)

गाँवों के लोगों के अलग-अलग समूह बनाया गया। ईस्ट लुङदार गाँव को भी एक ग्रूपिंग सेंटर के रूप में इस्तेमाल किया गया था। अलग-अलग मिजाज के लोगों को वहाँ एक साथ रखा गया, जिनका एक साथ रहना मुश्किल था। लोगों के बीच आपसी मतभेद होने लगे थे। यह तो होना

ही था। उनकी मर्जी के बिना उन्हें अपना घर और ज़मीन छोड़ने का आदेश दिया गया था। उन्हें इंडिपेंडेंस के लिए उस जगह को छोड़ना पड़ा, जिसे उन्होंने कड़ी मेहनत से बसाया था, जहाँ वे शांति से अपने रिश्तेदारों और दोस्तों के साथ रहते थे, जहाँ उन्होंने चाँदनी रातों और बारिश के दिनों में अपने प्रेमियों के साथ खेत की झोपड़ियों के बरामदों में सुनहरे पल बिताए थे; और जहाँ उन्होंने अपनी आने वाली पीढ़ियों के उज्ज्वल भविष्य के सपने बुने थे।

खुशी से दूसरों के गाँव में जाकर बस जाना उनके लिए बहुत ही मुश्किल हुआ होगा। मर्द, जिसे खुद पर भरोसा था, उसके लिए दूसरे गाँव में जाकर डर-डर के रहना और भी मुश्किल हुआ होगा। इसलिए, उनके मन में कुछ बुरे खयाल भी थे, तो इसमें उनकी कोई गलती नहीं थी। और उसके साथ ही उस गाँव के मालिकों (गाँव वासियों) के लिए भी दूसरे गाँव के लोगों, मेहमानों द्वारा उनके गाँव को उथल-पुथल कर देना सहन करना मुश्किल हुआ होगा। और सबसे ज़्यादा दुःख की बात यह थी कि जिस परिस्थिति का उन्हें सामना करना पड़ रहा था, उसके जिम्मेदार वे स्वयं नहीं थे।

एक दिन गाँव के मुखिया ने दारपुई को बुलाया। इस अचानक आए बुलावे का क्या कारण हो सकता था? दारपुई को भी समझ में नहीं आ रहा था। अपने परिवार के साथ चर्चा करने के बाद भी उसके पास कोई जवाब नहीं था। पूरा परिवार गहरी चिंता में डूबा था कि आखिर इस बुलावे पर कैसी प्रतिक्रिया दी जाए? अपने बच्चों के चेहरे पर छाई चिंता को दूर करने के लिए उसके पिताजी ने कहा, "जो भी हो, तुम आज रात अपनी माँ के साथ वहाँ जाओगे और फिर हमें इस बुलावे का वास्तविक कारण पता चल जाएगा।"

रात हुई, दारपुई और उसकी माँ बड़े संकोच के साथ पु ज़त्लुअङअ के घर पहुँचे। घर के अंदर गाँव के अन्य नेता बैठे हुए थे। दारपुई और उसकी माँ को देखते ही पु ज़त्लुअङअ ने तुरंत कहा, "ओह, दोनों पहुँच गए। हमें नदी प्रसन्नता है कि आपने हमारे निमंत्रण का माँ रखा। जो भी बात है, उस पर चर्चा करेंगे, पर पहले आप दोनों पहले आराम से बैठ जाइए।" बैठने के बाद दारपुई की माँ पी ललमोइई ने अपनी बेटी की भाउभी और सहमे चेहरे की ओर देखा। उन्हें लगा कि सच कि जितनी

जल्दी जान लिया जाए, उतना ही बेहतर होगा। उन्होंने तुरंत अपनी जिज्ञासा प्रकट करते हुए पूछा, “हमारा थकान मिट गई है। अब वह बात बताइए जिसके लिए हमें यहाँ बुलाया गया है? सच जानने से पहले हमारा मन अशांत है औरहमें कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है।” माँ की इस निर्भीक और स्पष्ट बात ने दारपुई के मन को बड़ी सांत्वना दी और वह भीतर ही भीतर खुश हुई।

उनके चहरों के गंभीर हाव-भाव देखकर साफ झलक रहा था कि वे जो बात बताने जा रहे हैं वह कोई साधारण बात नहीं है। मन ही मन दारपुई अनेक बातें सोचने लगी। लेकिन उसे पूरा विश्वास था कि उसने ऐसा कोई कार्य नहीं किया है जिसके लिए गाँव के नेताओं को उसे बुलाना पड़े। वह किसी निश्चित राय पर नहीं पहुँच पा रही थी और असमंजस की स्थिति में बैठी थी। तभी उनके वी सी पी अपने स्थान पर खड़े हुए और बैठे लोगों के चारों ओर देखने लगे। उसने अपना गला साफ किया और गंभीरता के साथ बोलना शुरू किया, “हम आज रात यहाँ एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण बात पर विचार करने के लिए एकत्रित हुए है। आज रात हम जो बात कहने जा रहे है, वह इस कमरे की चारिडीवरी के भीतर ही राहनी चाहिए; बाहर किसी को भी इसकी भनक नहीं लग्नी चाहिए। मैं चाहता हूँ कि हम इस विषय पर खुले मन और दिमाग से चर्चा करें। सबसे पहले, मैं दारपुई से कहना चाहता हूँ कि उसे इस बात को शर्म की तरह नहीं लेना चाहिए और न ही इसे नकारात्मक तरीके से नहीं लेना चाहिए।” इतना कहकर वह कुछ पलों के लिए मौन हो गए, जिसके कारण दारपुई और उसके माँ को और भी बैचेनी हुई।

उन्होंने अपनी बात जारी रखते हुए कहा “जैसा कि हम सभी जानते हैं, अब मिज़ोरम एक संघर्षरत राज्य बन चुका है और हमारा वर्तमान समय अत्यंत कष्टकारी है। हालाँकि, हमें इस बात से सांत्वना मिलती है कि यह हमारे बुद्धिजीवी और बहादुर लोग राज्य और जाति की भलाई के लिए स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ रहे हैं। इसलिए, हमें इस कठिन समय को धैर्यपूर्वक सहन करना हैं। हमारी पवित्र बाइबल भी हमें यही सीख देती है कि ‘बिना किसी शिकायत के सहते रहो’। लेकिन इस पीड़ा के बीच, सम्मान और प्रतिष्ठा के कई प्रश्न खड़े हो सकते हैं। यदि हम सावधानी से कदम नहीं उठाते

तो हमें शाश्वत बदनामी का सामना करना पड़ सकता है। और मैं चाहता हूँ हम सब यह याद रखें कि एक व्यक्ति की छोटी सी भूल पूरे गाँव के विनाश और कलंक का कारण बन सकती हैं," इतना कहकर वह चुप हो गए। यह सुनकर दारपुई का हृदय जोरों से धड़कने लगा। वह सोचने लगी, 'किस प्रकार की बदनामी? क्या वे उन बातों के बारे में जानते हैं जो उसने ह्मम सिपई के बारे में कही थी और जो उन्हें पसंद नहीं आई थी? लेकिन उन सब बातों का बुरा नहीं माना जाना चाहिए क्योंकि सच तो यह है कि उसकी जैसी कई युवतियाँ थी जो इस तथाकथित स्वतंत्रता के संघर्ष की सराहना नहीं करती।

फिर वहाँ उपस्थित पुरुष आपस में बात करने लगे और धीरे धीरे फुसफुसाहट गूँजने लगी। वी.सी.पी. के बैठने के साथ वहाँ के *सेक्रेटरी* धीरे से खड़े हुए। उन्होंने एक सफेद कागज निकाला जिसका रंग अब फीका पड़ गया था। अपना गला साफ करते हुए उन्होंने सिर झुककर बैठी दारपुई की ओर देखा और बोले, "जैसा कि हमारे वीसीपी साहब ने कहा है कि एक व्यक्ति पूरे गाँव का प्रतिनिधि होता है। यदि विदेश और वाईरम (मिज़ोरम से बाहर के शहर) में भी कोई मिज़ो व्यक्ति गलत काम करता है, तो लोग अक्सर पूरी जाति को बदनाम करते हुए कहते है कि 'मिज़ो लोग ऐसे ही होते है'। इसलिए, आज रात हम वहीं करने आए हैं जिसके संबंध में हमें रिपोर्ट मिली है। इसमें किसी भी प्रकार की व्यक्तिगत नफरत या घृणा का स्थान नहीं है।" फिर उसने अपनी बात जारी रखते हुए कहा, "हमें जो रिपोर्ट मिली है, मैं उसे स्पष्ट शब्दों में सबके सामने रख देता हूँ। हमें रिपोर्ट मिली है कि युवती दारथङपुई कई बार भारतीय सेना के कैम्प में जा चुकी है और उसके सेना अधिकारी के साथ करीबी संबंध है। यह सूचना हमें केवल एक बार ही नहीं बल्कि दो-तीन बार मिल चुकी है इसलिए आज रात आपको यहाँ बुलाया गया है। कृपया हमें समझें, यदि हमारी जानकारी सच है तो हम आपसे निवेदन करते है कि आप इसका खुलासा करें।" यह सुनकर दारपुई को बहुत सदमा लगा। हालाँकि उसे किसी अच्छी बात की आशा तो पहले से ही नहीं थी, लेकिन उसने जो कुछ सुना, वह उसकी कल्पना से भी परे थे।

यह सुनते ही पी ललमोईई ने अपने स्थान से कहा, “आप यह क्या कह रहें है? मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा है!” तब वीसीपी ने खड़े होकर गंभीर स्वर में कहा, “हाँ, इसे समझना कठिन हो सकता है। ऐसी खबर को समझना और स्वीकार करना कठिन हो सकता है। यह ऐसी खबर है जिसकी हमें अपेक्षा नहीं थी। पी मोई, इस खबर को सुनकर हमें भी बहुत ही हैरानी हुई। एक अच्छी और सुंदर युवती माने जाने वाली दारपुई के बारे में हमें सूचना मिली है कि उसने हमारे राज्य और जाति के हितों को त्यागकर दूसरे जाति के साथ संबंध स्थापित कर लिए है। इस खबर ने हमें गहरी ठेस पहुँचाई है और हम इसे समझ नहीं पा रहे हैं।” दारपुई का सिर शर्म और दु:ख से नीचे झुक गया। उसकी आँखों में आँसू भर आए, पर वह कुछ कह न सकी। उसे समझ नहीं आ रहा था कि इस सफेद झूठ के विरुद्ध वह कैसे तर्क दे। वह मन ही मन सोच रही थी, ‘यदि मैं उन्हें बात दूँ कि यह सब सरासर झूठ है, तो क्या वे मुझ पर विश्वास करेंगे? आखिर किसने मुझ पर ऐसा कलंक लगाया होगा?’ उसे रुआतकिमी और ललथङपुई और उनके दोस्तों पर संदेह हुआ, पर उसने सोचा कि अभी इस बारे में कुछ भी कहना उचित नहीं होगा। घर के भीतर रहने वाले लोगों के सामने वह अपना पक्ष कैसे रखेगी? ‘कुछ भी हो, इस बारे में रोउछुआहा के पिता पु रोउठ्रीअङा क्या सोचेंगे? क्या वे अपने बेटे के पत्नी के रूप में अब उसे नकार देंगे?’ उसके मन में कई प्रश्न उठ रहे थे जिनका उसके पास कोई जवाब नहीं था।

अपने बेटी की दयनीय स्थिति देखकर पी मोईई ने कहा, “दारपुई, हमारे मुख्य क्या कह रहे हैं, क्या तुम सुन रही हो? क्या तुम कुछ नहीं कहोगी? इस तरह चुप क्यों हो!” अपनी माँ की बात सुनकर दारपुई को भी लगा कि अब चुप रहना ठीक नहीं है और वह यह जानती थी कि सब उसके बोलने का प्रतीक्षा कर रहे थे, इसलिए वह खड़े होकर दृढ़ स्वर में बोलने लगी, “हाँ, मैं आप सबकी बातें सुन और समझ रहीं हूँ। लेकिन, मैं केवल इतना ही कहूँगी कि यह सब एक सफेद झूठ है।” उसके पास आगे ओर बोलने के लिए कुछ नहीं था, इसलिए फिर से वह चुप हो गई। वहाँ उपस्थित सभी आपस में बात करने लगे, लेकिन, रोउछुआहा का पिता अब भी चुप रहा।

काफी देर तक चले विचार-विमर्श के बाद वीसीपी एक बार फिर से खड़े हुए और बोले, “आप हमसे यह उम्मीद कैसे कर सकते हैं कि हम इसे केवल झूठ मानकर स्वीकार कर लें? हमें आपके बारे में बहुत सी सूचनाएँ मिली हैं और अब हम निश्चित रूप से सच जानना चाहते हैं। यदि यह सच है, तो इसमें डरने और लज्जित होने की कोई बात नहीं है। आपको बस हमसे यह वादा करना होगा कि भविष्य में आप ऐसा पुनः नहीं करेंगे। लेकिन, यदि यह सब वास्तव में झूठ है, तो हम यह जानना चाहेंगे कि जिस काम को तुमने किया ही नहीं, उसके लिए तुम पर ऐसे गंभीर आरोप क्यों लगाये जा रहे हैं? आखिर आपसे किसकी दुश्मनी है। हम इस बात को जानना चाहते है ताकि हम इस बारे में कुछ कर सकें।”

नीचे की तरफ अपना सिर झुकाकर दारपुई ने कहा, “मुझे स्वयं नहीं पता कि ये आरोप कहाँ से आए हैं। मुझे और आकाश में विराजमान उस परमेश्वर को अच्छे से पता हैं कि यह सब झूठ है। आप चाहे तो सेना के कैम्प में जाकर इस बात की वास्तविकता की जाँच कर सकते हैं, मुझे विश्वास है कि वे भी मेरे बारे में इस बात को सच मानेंगे। लेकिन, अगर मैंने अनजाने में भी कुछ अनुचित किया हो, इसके अलावा मैं यह नहीं जानती कि कौन मुझसे इतनी नफरत करता है जो मुझ पर ऐसा आरोप लगाना चाहता है।” सब थोड़ी देर के लिए चुप रहे। तभी उनके बीच बैठे खमलिआना खड़े हुए और गुस्से से कहा, “क्या मिज़ो में यह कहावत प्रचलित नहीं है कि ‘मक्खी घाव पर ही बैठती है’[47]? यदि तुमने कुछ किया ही नहीं, तो कोई तुम पर उँगली क्यों उठाएगा? दारपुई, थोड़ा ध्यान से सोचो, बहतर यही होगा कि जब तक हम धैर्य दिखा रहे हैं तुम हमें सच बता दो।” खमलिआना के उन शब्दों से दारपुई और उसकी माँ के हृदय को ठेस पहुँची, वे आवक रह गए। यहाँ तक कि कोने में बैठे पु रोउठ्ठीअङा को भी यह शब्द चुभा।

वे अपने स्थान पर खड़े हुए और अपने साथियों की ओर देखते हुए अत्यंत गंभीर स्वर में बोले, “मैं भी कुछ कहना चाहता हूँ। यदि आप सभी को आपत्ति न हो, तो हमारे मेहमान पी मोई और उसकी बेटी कुछ समय के लिए बाहर जाए, अधिक समय नहीं लगेगा।” सभी राजी हो गए और

दारपुई और उसकी माँ बाहर चली गई। उनके जाते ही वीसीपी ने आश्चर्यचकित होकर तुरंत पूछा, "पु त्लाङ, ऐसी क्या महत्त्वपूर्ण बात है जो आप उनके सामने नहीं कह सकते थे?" पु रोउठ्रीअङा ने दृढ़ता के साथ कहा, "हाँ, मैं इसे अत्यंत गंभीर मामला मानता हूँ। जिस तरह से अभी हमारे साथी खमा बात कर रहे थे, वह मुझे उचित नहीं लगा। उनके स्वर में स्पष्ट रूप से धमकी की झलक थी। एक असहाय महिला के प्रति इस्तेमाल करने के लिए यह बहुत ही अनुचित है। यदि यही सवाल किसी शक्तिशाली पुरुष से पूछा गया होता, तो गलतफहमी पैदा हो सकता है। मैं इस बात को कतई बर्दाश्त नहीं कर सकता।"

वहाँ उपस्थित कुछ अन्य लोगों को भी खमलिआना के बात करने का तरीका पसंद नहीं आया। यहाँ तक कि घर की मालकिन पी ज़ोउह्लाङी के भीतर कुछ कहने का साहस होता, तो वे भी इस व्यवहार का विरोध ही करती। आपसी विचार-विमर्श के बाद दारपुई और उसकी माँ को पुनः अंदर बुलाया गया और उनसे फिर से पूछने लगे। लेकिन, दारपुई अपने कथन पर अटल रही इसलिए उन्हें भी समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या करे। यदि उस समय दारपुई चाहती तो उनके गाँव की उन अन्य युवतियों के नाम उजागर कर सकती थी जिनके वास्तव में सेना के साथ संबंध थे। लेकिन उसके पास अपने दावों को साबित करने के लिए कोई प्रमाण नहीं था, इसलिए वह बिना सबूत के किसी पर आरोप नहीं लगाना चाहती थी। वीसीपी के साथ भविष्य में सावधानी से जीवन जीने और किसी भी नई सूचना पर पुनः संपर्क करने की बात करने के बाद सभी अपने अपने घर वापस चले गए।

घर पहुंचते ही पी मोई ने भारी मन से अपने पति को सारी घटना विस्तार से सुनाई, जो तपछक में बुझने वाले आग की ओर पीठ किए बैठे थे। अपने पत्नी की बातों को सुनकर पु कामलोवा को बहुत दुःख हुआ। माथे पर हाथ रखते हुए वहाँ से अपनी बेटी को आवाज़ दी, जो अपने बिस्तर की ओर जा रही थी। "अरे, यह सब हमारे साथ हो रहा है? यह कितनी लज्जा की बात है। दारथङपुई, यहाँ जल्दी आओ। सीधे अपने बिस्तर पर मत जाओ। क्या तुम्हें पता भी है कि तुमने अपनी माता-

पिता को समाज में कितना लज्जित किया है?" उनकी पत्नी ने बेटी की बचाव में शांत स्वर में कहा, "इतनी जल्दी गुस्सा मत दिखाओ। हम अभी तक यह भी नहीं जानते कि सच बात क्या है। जिस अपमानजनक बात का उस पर आरोप लगाया जा रहा था, आपकी बेटी पूरी दृढ़ता के साथ उसे नकारती रही। उसके हृदय को भी बहुत गहरी ठेस पहूँचा है, उसे और अधिक दर्द मत दो।"

दारपुई ने अपने माता-पिता के समीप बैठने के लिए जगह बनाई। उसके छोटे भाई-बहन सो गए थे इसलिए उन्होंने अपनी आवाज को धीमी की। उसके पिता ने उससे के कई प्रश्न पूछे, किन्तु दारी ने स्पष्ट शब्दों में दोहराया कि उसके पास खुलासा करने के लिए कुछ बात नहीं है और न ही वह किसी सच को छिपा रही है। सच तो यह था कि दारपुई को पूरे गाँव में एक अत्यंत शालीन और सुशील युवती के रूप में माना जाता था। उसके माता-पिता को सदैव उस पर गर्व रहा था। उसके पिता ने अत्यंत कठोर स्वर में अपनी बात जारी रखी, "हमें तुम पर गर्व होता था, पर आज यह कैसी अशुभ खबर लेकर आई हो? तुम सोच भी नहीं सकते कि यह हमारे लिए कितना पीड़ादायक है। तुम हमारी ज्येष्ठ संतान हो और हम अपनी मर्यादा के लिए तुम पर निर्भर हैं। क्या तुम्हें इस बात की समझ नहीं कि तुम्हें कितनी सावधानी के साथ अपना जीवन व्यतीत करना चाहिए?"

रोते हुए उसने कहा, "पापा, मैं समझती हूँ कि आपकी मुझसे क्या अपेक्षाएँ हैं। मैं अपनी पूरी निष्ठा के साथ आपकी और परमेश्वर की आज्ञाओं कअ पालन करने का प्रयास करती हूँ। मुझे नहीं लगता कि आपके पास भी मेरी बुराई करने कोई वास्तविक आधार होगा। लेकिन मुझे इस बात का दुःख है कि इस झूठे आरोप के कारण आपका मुझ पर से विश्वास उठ गया है। अब मैं समाज का विश्वास भी सदा के लिए खो दूँगी।" अपनी बेटी की ऐसी दयनीय स्थिति देखकर पी मोई कअ हृदय करुणा से भर आया। उन्होंने सहलाते हुए कहा, "मामबोईह् (बेटी), इतना दुःखी मत हो। अगर यह आरोप झूठा निकला तो न्याय करने वाला वह परमेश्वर हमारे साथ है। तुम्हारे माता-पिता का तुम्हारे प्रति जो प्रेम है, वह कभी मिटने वाला नहीं है।"

अपनी बेटी को सिसकते हुए अपनी सफाई देते देख उसके पिता का कठोर मन भी पसीज गया। वे खड़े होकर कहने लगे, "हाँ, जैसा कि तुम्हारी माँ कह रही है, हमारा परिवार और वह परमेश्वर तुम्हारे साथ खड़े रहेंगे, तो तुम्हारी सच्चाई एक दिन अवश्य सबके सामने आएगी। हम परमेश्वर पर अटूट विश्वास रखने वाले लोग है। अब अधिक दुखी होने का कोई लाभ नहीं है। रात बहुत बीत चुकी है, चलो अब सो जाते हैं।"

अपने बिस्तर पर लैटने के बाद भी दारपुई सो नहीं पायी। वह बस इसी चिंता में डूबी रही कि रोउछुआहा के पिता अब मेरे चरित्र के बारे में क्या सोचेंगे। पूरी रात वह इसी अंतहीन उधेड़बुन में जलती रही कि आखिर यह आरोप कहाँ से उपजा होगा? वह कौन हो सकता है जिसने यह आरोप लगाया होगा?

(7)

रविवार दिन था, किन्तु दारपुई का मन भारी था, इसलिए वह गिरजाघर के कार्यक्रम के बाद किसी से मिले बिना सीधे अपने घर लौट आई। पूर्व योजना के अनुसार, वह और उसकी सहेली ज़ेली बुनाई के लिए धागा तैयार करने की तैयारी कर रही थी। जब वे अपने अपने काम में मग्न थी, तभी रमह्लूनी अपनी दो सखियों के साथ अचानक अंदर आ गयी। सच तो यह था कि यह तीनों ही प्रायः भारतीय सेना के कैम्प में जाया करती थीं और उनके घर में एम.एन.एफ. के सदस्यों का भी आना-जाना लगा राहत था। यही कारण था कि दारपुई और ज़ेली, दोनों ही उनसे मिलकर खुश नहीं थे।

दारपुई और ज़ेली राज्य में व्याप्त इस निरंतर संघर्ष की उथल-पुथल से बिल्कुल भी खुश नहीं थे। शायद यह उनकी अज्ञानता के कारण भी हो सकता है, लेकिन इतनी बड़ी अशान्ति झेलने के बजाय, वे आज़ादी न पाकर भी अपनी पुरानी सामान्य जीवनशैली को ही ज्यादा पसंद करते थे। दूसरी ओर, रमह्लूनी काफी मुखर और बेबाक किस्म की युवती थी, वह अपनी बातों को लेकर इतनी

लापरवाह और बेपरवाह थी कि ऐसा लगता था जाइसे उसे खुद नहीं पता कि वह क्या कह रही है, इसलिए वह दारपुई से बिल्कुल अलग स्वभाव की थी।

अंदर आते ही रमह्लूनी जोर-जोर से कहने लगी, “अरे! हम तुम लोगों को घूमने के लिए साथ चलने के लिए बुलाने वाले थे। लगता है तुम लोग बहुत व्यस्त हो।” ज़ेली ने उत्तर देने के साथ सवाल पूछने लगी, “हाँ, हमें समय नहीं मिल पाता है, इसलिए अगर हम रविवार जैसे अच्छा समय का उपयोग नहीं करेंगे, तो हमारे पास पहनने लायक पुआन[48] नहीं बचेंगे। वैसे तुम लोग कहाँ घूमने जाने का विचार कर रहे हो?”

वे तीनों सहेलियों ने एक दुसरें की ओर देखा। तभी पेकी ने कहा, “हम तो बस पहाड़ों में ऐसे ही टहलने जाने की सोच रहे थे। जब तक कर्फ्यू नहीं लगा है तब तक इसका पूरा आनंद लेने का सोच रहे थे।” दारपुई ने चिढ़ते हुए कहा, “अब तो मुझे पहाड़ों में घूमना अच्छा नहीं लगता, वाई सेना का चेहरा से ही मुझे डर लगने लगता है। उन्होंने हमारे अच्छे-अच्छे जगहों पर कब्ज़ा कर लिया है, और ऊपर से जब मन चाहे हमें इकट्ठा कर लेते हैं। मुझे अब इस तरह के जीवन से सच में नफरत हो गई है। मौत और डर के इस साये में रहते हुए मुझे अब टहलने का कोई शौक नहीं रहा।”

रमह्लूनी ने अर्थपूर्ण लहजे में कहा, “यह तो सच है। लेकिन, क्या इस तरह के कष्टों को सौभाग्य में बदलने का तरीका नहीं है? कम से कम उन लोगों के लिए जो इसे गहराई से समझते हैं।” उसके शब्दों में कुछ गहरा अर्थ छिपा जानकार दारपुई ने तुरंत गुस्से से कहा, “शायद ऐसा ही हो, लेकिन तुम्हारी बातों का मतलब हमें बिल्कुल समझ नहीं आ रहा है।” उनकी बातों और चेहरे के हाव-भाव से ऐसा लग रहा था कि जैसे उनके बीच बहस शुरू होने वाली है, इसलिए ज़ेली ने स्थिति संभालने के लिए विषय बदलने के बारे में सोच। वह जानती थी कि रमह्लूनी और उसके सखियों की हरकतों की वजह से गाँव के नेताओं ने किस प्रकार दारपुई को बुलाया और दारपुई के अच्छे स्वभाव के कारण ही रमह्लूनी और उसके दोस्त अब तक अपमानित होने से बची हुई थी, इसलिए उसे उन लोगों पर गुस्सा आ रहा था।

तभी ज़ेली ने दूसरी बात छेड़ी, "अरे देखो, कल हमारी कुछ सब्जियाँ गायब हो गई। जब हम अपने खेत में गए तो हम अवाक रह गए। पु लला की भी कुछ फसलें भी चोरी हो गई हैं, मैं सच मुच हैरान थी। मुझे कभी नहीं पता था कि हमारे गाँव में चोरी करने वाले लोग भी हैं।" उसके आखिरी बात सुनकर रोउछुआहा और उसका दोस्त डूरदिङा अंदर आते हुए पूछने लगे, "चोरी करने वाला कौन है?" बैठने की जगह बनाते हुए उन्होंने अपनी बात जारी रखी, "अरे, तुम लोग तो बहुत व्यस्त दिख रहे हो?"

दारपुई ने मुसकुराते हुए कहा, "हम इतने भी ज्यादा व्यस्त नहीं है। यह तो महिलाओं का सामान्य काम है। आप लोग यहाँ आए, यह देखकर बहुत अच्छा लगा। लेकिन धागा सुलझाने का यह हिस्सा तो मर्दों का काम होता है।" ऐसा कहकर दारपुई ने हँसते हुए रुई धुनने का औज़ार डूरदिङअ की ओर खिसक दिया। डूरदिङअ ने हँसते हुए उसे थाम लिया और कहा, "दारपुई को तो काम बाँटना बहुत अच्छे से आता है। चलो, मैं डूरदिङा, शुद्ध साइलो राजा के वंश, जो कभी दुश्मनों के सामने नहीं घबराया, दारखोपुई की सुंदरता बढ़ाने वाले के पुआन बुनने के लिए जो भले ही मेरे पहनने के लिए न होने पर भी पैर के बाल गिरने तक धागे को लपेटता जाता हूँ।"

सब खिलखिलाकर हँसने लगे। डूरदिङअ स्वभाव से बहुत मज़ाकिया व्यक्ति था। वह जहाँ कहीं भी होता, लोग हँस-हँसकर लोटपोट हो जाते थे। कुछ लोग तो मज़ाक में यहाँ तक कहते हैं कि किसी खतरनाक जगह पर डूरदिङा के साथ रहना ठीक नहीं है, क्योंकि वह मज़ाक करना बंद भी कर दे, तो उसकी सभी हरकतों को देखकर ही हँसी आ जाती है और दुश्मन को हमारी मौजूदगी का तुरंत पता चल जाएगा।

रोछुआहा ने बात बदलते हुए कहा, "कार्यक्रम खत्म होने के बाद मैं थरकिमा के साथ थोड़ी देर बात कर रहा था। कल वे लोग मुआलचेङ गाँव गए थे। मुआलचेङ गाँव के निवासी जो अपने घर-बार छोड़के चले गए थे, उनके घरों और खेतों से कुछ बर्तन उठाकर ले आए हैं। गाँव वालों ने

जंगल में अपना कुछ सामान छिपायें भी थे, जो शायद उन्होंने अपने वापस लौटने के समय के लिए रखे होंगे।”

दारपुई ने कहा, “यह तो बहुत ही बुरी बात है! संघर्ष खत्म होने के बाद गाँवों के जो अलग-अलग समूह बनाये गये है, उन्हें भी बंद कर दिया जाएगा और सब अपने-अपने गाँव लौट जाएँगे, तब ज्यादा भारी सामान लदे बिना आने के लिए शायद उन्होंने अपना सामान छिपाया होगा। थरकिमा को ऐसा नहीं करना चाहिए था! अगर उसने वह सब देख भी लिया था तो उसे वैसे ही छोड़ देना चाहिए था।”

ज़ेली ने भी थोड़े गुस्से में कहा, “तो रोछुआह, क्या सच में थरकिमा और उसके साथी वह सामान अपने साथ ले आए हैं? अगर उन्होंने ऐसा किया है तो मैं भी दारपुई की तरह इसे बहुत गलत मानती हूँ। यदि कोई भी शरणार्थी हो तो हमें एक दूसरे के सामान की देखभाल करनी चाहिए! हमारा संघर्ष युद्ध के मैदान में लूटी गई लूट का मामला नहीं है, बल्कि हम अपने राज्य और जाति के खातिर संघर्ष कर रहे हैं। इसलिए एक शरणार्थी होकर हमें ऐसा गलत काम नहीं करना चाहिए।”

उनकी बातचीत के बीच रमह्लूनी और उसकी सहेलियाँ शायद असहज महसूस कर रही थी, तभी रमह्लूनी ने कहा, “तुम लोग बहुत व्यस्त हो, अब हम निकलते हैं। रात को हम सब गिरजाघर चलेंगे, अभी तो कर्फ्यू नहीं लगा है।” यह कहकर उसने अपने सहेलियों को वहाँ से चलने का इशारा किया।

जब वे लोग निकलने ही वाले थे तब दारपुई ने विनम्रता से कहा, “ठीक है, हमारा समय अच्छा नहीं चल रहा है, एक दूसरे के साथ मिल जुलकर रहने और परमेश्वर की स्तुति करने के लिए भी अधिक समय नहीं मिल पाता है। हो सके तो आज रात सब गिरजाघर जाने की कोशिश करेंगे। घूमने का मन तो हमारा भी बहुत हैं लेकिन आज ही हमने बुनाई का काम करने के लिए करघा तैयार किया है।” वे सभी वैसे ही रहने लगे जैसे पहले रमह्लूनी और उसके बीच बातों का अंबन्ध ही नहीं हो।

रात को गिरजाघर के कार्यक्रम में लेङ गाँव से आए उनके कलीसिया के उपा (प्राचीन)[49] पु थङरूमा ने इस प्रकार एक प्रभावशाली उपदेश दिया : "कल्पना कीजिए कि आप को एक तूफ़ानी दिन में चलते हुए समझें। काले बादल छाए हुए हैं। बिजली तेज चमक रही है और और भीषण तूफान चल रहा है। मूसलाधार बारिश हो रही है और आप रहने के लिए किसी सूखी जगह की तलाश कर रहे हैं। तभी आपको एक बहुत अच्छा बरामद मिलता है और आप सीधे उस ओर चल दिए। वह सुरक्षित स्थान आपके लिए बहुत ही मूल्यवान बन गया है!

उन्होंने आगे कहा, "अभी हम इसी तरह के तूफ़ानी दौर से गुजर रहे हैं। यह बात हम रोजाना विभिन्न खबरों के माध्यम से भी जान सकते हैं। लेकिन हमारे पास एक ऐसा पेड़/ छत है जो हमें इन आपदाओं से बचा सकता है। यदि हम बाइबिल की शिक्षाओं को देखें, वहाँ लिखा हैं कि 'मैं यहोवा से विनती करता हूँ, 'तु मेरा सुरक्षा स्थल है मेरा गढ़, हे परमेश्वर, मैं तेरे भरोसे हूँ,' (भजन संहिता 91:2)।

"जरा सोचिए। सृष्टिकर्ता, स्वर्ग और पृथ्वी का सर्वोच्च प्रभु, हमारी सुरक्षा हो सकता है। वह हमें नुकसान पहूँचाने वाली किसी भी चीज़ की तुलना में अधिक शक्तिशाली होने के कारण हमारी रक्षा कर सकता है। सेनाओं का परमेश्वर यहोवा, सभी बुरे परिणामों को पूरी तरह से मिटा सकता है। लेकिन, ऐसा होने के लिए, हमें उस पर अटूट विश्वास रखना होगा। जैसा कि पवित्र बाइबिल हमें पहले ही बता चुका है, 'अपने आप को परमेश्वर के प्रेम में बनाए रखें'।

आगे कहते है, "परमेश्वर के प्रेम में बने रहने के लिए, हमें यह समझना होगा कि उसने हमारे प्रति अपना प्रेम कैसे प्रकट किया है। सृष्टिकर्ता होने के नाते, उसने हमें यह पृथ्वी रहने के लिए एक सुखद स्थान के रूप में दी है। उसने इसे भोजन, विभिन्न प्रकार के जीवों और सुंदर प्राकृतिक दृश्यों से भर दिया है। इसके अलावा, बाइबिल बताती है कि उसने अपने इकलौते पुत्र को इस संसार पर भेजा और हमारे लिए दुःख सहकर मरने दिया (यूहन्ना 3:16)। उस पुत्र का बलिदान हमारे लिए कौन-सा आशीष लेकर आया है? वह हमारे लिए अनंत काल तक सुख प्राप्त करने का आशीष है।

“वह अनंत सुख यहोवा के अन्य कार्यों पर भी निर्भर करता है। उन्होंने एक स्वर्गीय सरकार की स्थापना किया है। जो सभी दुःख और कष्टों को समाप्त कर देगी और पृथ्वी को एक स्वर्ग में बदल देगा। तब हम सुख और शांति से रह सकेंगे (भजन संहिता 37:29)। तब तक, परमेश्वर हमें आज भी सर्वोत्तम जीवन जीने के लिए मार्गदर्शन दे रहा है। साथ ही, उसने हमें प्रार्थना का उपहार भी दिया है, ताकि हम उससे बात कर सकें। ये तो उसके प्रेम को दिखाने का केवल कुछ ही तारीकें हैं।

“अब महत्त्व प्रश्न यह है कि हम उसके प्रेम का प्रतिपादन कैसे दे? कुछ लोग कहेंगे, ‘मुझे भी बदले में परमेश्वर से प्रेम करना चाहिए।’ क्या आपकी भी यहीं विचार है? यीशू मसीह ने ‘सम्पूर्ण मन से, सम्पूर्ण आत्मा से और सम्पूर्ण बुद्धि से तुझे अपने परमेश्वर प्रभु से प्रेम करना चाहिए’ (मत्ती 22:37) को सबसे बड़ी आदेश माना है। निश्चित रूप से हमारे पास उससे प्रेम करने के कई कारण हैं। लेकिन क्या केवल मन में प्रेम की भावना होना ही काफी है?

बाइबल के अनुसार, परमेश्वर से प्रेम करना केवल एक भावना मात्र नहीं है। वास्तव में, हृदय का प्रेम आवश्यक है, लेकिन यह केवल एक शुरुआत है। उदाहरण के लिए, एक परिपक्व संतरे के पेड़ के लिए संतरे का बीज होना जरूरी है; लेकिन बीज तो केवल शुरुआत है। यदि आपको संतरा खाने की इच्छा हो और कोई आपको केवल बीज ही दे दे तो क्या आप संतुष्ट होंगे? बिल्कुल नहीं। इसी तरह, मन में परमेश्वर के लिए प्रेम होना केवल एक शुरुआत है। बाइबल हमें बताती है कि ‘क्योंकि परमेश्वर से प्रेम रखना यह है कि हम उसकी आज्ञाओं को मानें; और उसकी आज्ञाएँ कठिन नहीं’ (1 यूहन्न 5:3)। सच तो यह है कि परमेश्वर के प्रति प्रेम का परिणाम अच्छा होना चाहिए। हमें भलाई दिखानी चाहिए (मत्ती 7:17-20)।

“परमेश्वर के प्रति हमारा प्रेम उसकी आज्ञाओं और सिद्धांतों का पालन के अनुसार जीने से प्रकट होता है। यह बहुत कठिन कार्य नहीं है, बल्कि उसका व्यवस्था हमारे लिए एक अच्छा, खुशहाल और संतुष्ट जीवन जीने के लिए बनाए गए हैं। लेकिन, दुःख की बात यह है कि आज बहुत कम लोग उसके प्रेम के अनुसार जीवन जी रहे हैं। हम उन दस कोढ़ियों में नौ कोढ़ियों के समान हो

गए हैं जिन्हें यीशू मसीह ने चंगा किया था, जिनमें से केवल एक ही धन्यवाद देने लौटा था। हम सब उसके आशीष चाहते हैं, लेकिन हम उसे वापस प्रेम नहीं करना चाहते। चंगा किए गए दस कोढ़ियों में से एक की तरह, आइए हम उसके प्रेम के लिए उसे धन्यवाद दें और उसकी आज्ञाओं के अनुसार जीएँ, इससे पहले कि बहुत देर हो जाए।

परमेश्वर कहता है- "मैं ही तेरा परमेश्वर यहोवा हूँ जो तुझे तेरे लाभ के लिए शिक्षा देता हूँ, और जिस मार्ग से तुझे जाना है उसी मार्ग पर तुझे ले चलता हूँ। बहाल होता कि तू ने मेरी आज्ञाओं को ध्यान से सुना होता! तब तेरी शांति नदी के समान और तेरा धर्म समुद्र की लहरों के समान होता" (यशायाह 48:18,18) कहकर पु थङरूमा ने अपना उपदेश समाप्त किया। उनके इस उपदेश से दारपुई बहुत सहमत थी। गिरजाघर से निकलते ही दोनों सहेलियाँ इस बात पर चर्चा करने लगे।

"आज का *सारमोन* (उपदेश) बहुत ही अच्छा था। आजकल के समय में ऐसे अच्छे *सारमोन* देने वालों की बहुत जरूरत है" कहकर दारपुई और ज़ेली, दोनों सहेलिया पु थङरूमा के उपदेशों के बारे में चर्चा करने लगी। ज़ेली के घर पहूँचते ही दोनों ने एक दूसरे को अलविदा कहा। इसके बाद रोउछुआहा और दारपुई दोनों एक साथ दारपुई के घर की तरफ बढ़ने लगे। मन ही मन दारपुई, रोउछुआहा से उस रात के बारे में चर्चा करना चाहती थी, जिस रात उसे गाँव के नेताओं ने उसे बुलाया था। लेकिन, वह इस बात को अपनी ओर से शुरू नहीं करना चाहती थी। वह सोच रही थी कि उसके पिताजी उस बात को लेकर क्या सोचेंगे? वह मन ही मन यह भी सोचती रही कि क्या उन्होंने अपने परिवार के सदस्यों को इसके बारे में बताया होगा?

ऐसा लगा मानो रोउछुआहा, दारपुई के मन की बात को समझ गया हो। रोउछुआहा ने कहा, "दारपुई, तुम्हारे साथ जो हुआ उससे मैं बहुत हैरान हूँ और इससे मेरे दिल को ठेस पहुँची है। मुझे यह भी नहीं पता कि इस स्थिति से कैसे निपटाना है। क्या तुम्हें पता है कि उन सभी झूठों का आरोप तुम पर कौन लगा सकता है?" यह बात सुनकर दारपुई को आश्चर्यचकित रह गई! उसने वहीं खड़े होकर

रोउछुआहा को देखने के लिए अपना सिर ऊपर किया और हैरानी से पूछा, “रोछुआह, क्या तुम कह रहे हो कि यह सब झूठ है?”

उसने भी आश्चर्य से पलटकर पूछा, “क्या? दारपुई, क्या वह झूठ नहीं है?” दारपुई का प्रश्न लगभग उसे उलझन में डालने वाला था। वह खुद को रोउछुआहा के सामने सफाई देना चाहती थी, लेकिन जब रोउछुआहा ने उस बात को ‘झूठ’ कह दिया, तो खुशी और आश्चर्य के मारे उसकी बोलती बंद हो गई। जब उसने देखा कि रोउछुआहा उसे हैरानी से देख रहा है, तब वह होश में आ गई। उसने फिर से उससे कहा, “हाँ, वह सब झूठ था। लेकिन तुमने यह कैसे कह दिया कि वह झूठ था?”

रोउछुआहा, दारपुई को निहारता रहा और कहने लगा, “तुम्हारे लिए जो मेरा प्यार है, वह मुझे बताता है कि यह सच नहीं हो सकता। मेरा यह प्यार सच्चाई को जानता है। अगर मुझे इस मामले में तुम पर शक होता, तो इसका अर्थ होता कि मैं अपने प्यार को ठीक से नहीं जानता। मैं उस दारथङपुई को अच्छे से जानता हूँ जिसका नाम समुदाय द्वारा हमेशा तब लिया जाता है जब अच्छी युवतियों की मिसाल दी जाती है।” यह बात सुनकर दारपुई के मन को शांति मिली, लेकिन, भले ही वह खुद को निर्दोष मानती थी, फिर भी उसे पता था कि उसके माता-पिता और पूरे समुदाय की निगाहें उस पर होंगी और वह यह भी जानती थी कि यह स्थिति उससे प्रेम करने वालों को शर्मिंदा कर सकती है।

वह कहने लगी, “मुझ पर भरोसा करने और मुझसे प्यार करने के लिए मैं बहुत खुश हूँ। लेकिन, रोछुआह, क्या तुम्हें अपने माता-पिता के दिल की बात पता है? मुझे नहीं लगता कि आपके जैसा अच्छा परिवार, जो न्याय और प्रतिष्ठा को महत्त्व देने परिवार इसे आसानी से स्वीकार करेंगे।” यही बात रोउछुआहा के मन को भी परेशान कर रही थी। उसके माता-पिता उसके प्रेमिका के रूप में उसको ऐसे युवती को कभी स्वीकार नहीं कर पाएंगे जिसकी प्रतिष्ठा धूमिल हो गई हो। कोई भी उस

पर उस तरह से विश्वास नहीं करेगा और न ही उसे उतनी अच्छी तरह से जानते है जिस तरह से रोछुआहा उसे जानता था।

रोउछुआहा ने उत्तर दिया, “कुछ भी हो, दारपुई, तुम सावधनी से अपना जीवन जीना। यह साबित करने का प्रयास करना कि उन्होंने तुम पर जो भी झूठे आरोप लगाए है वे गलत हैं, और परमेश्वर सत्य के पक्ष में ही रहेगा। बिना किसी बाधा के हम भी शादी कर लेंगे। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मुझे तुम पर पूरा विश्वास है, तुम्हारे प्रति मेरे इस विश्वास और प्यार को कभी धोका मत देना।” उसके पास भी इससे ज्यादा कुछ कहने या वादा करने के लिए शब्द नहीं थे।

तब दारपुई ने भी कहा, “हाँ, मैंने हमेशा पूरी निष्ठा के साथ अपने जीवन जिया है। लेकिन, मुझे दुःख होता है और यह समझ नहीं आता कि इन सबके बावजूद वे ऐसी बातें कैसे फैला सकते हैं कि मैंने अपने शरीर उन वाई सेना के लोगों को सौंप दिया है। प्रार्थना के अलावा मैं खुद को सहीं साबित करने का कोई और रास्ता नहीं जानती। यह दुर्भाग्य की बात है हमारे संघर्ष के बीच कोई ऐसा अवसर खोज रहा है, यह बहुत ही दुष्टतापूर्ण कार्य है। लेकिन, रोछुआह, मैं बस यहीं चाहती हूँ की तुम मुझ पर भरोसा बनाए रखो।” हालाँकि उसने यह बात गुस्से में नहीं कही थी, लेकिन उसके चहरे के भावों से साफ पता चल रहा था कि वह नाराज थी।

उसे दोष नहीं दिया जा सकता क्योंकि एक अच्छे आचरण वाली युवती के लिए, जिसे न केवल उसके माता-पिता ने, बल्कि पूरे समुदाय ने भी अच्छे आचरण वाली कहे थे, उन झूठे आरोपों को स्वीकार करना अत्यंत कठिन था। लेकिन, वह इस बात से संतुष्ट और खुश थी कि जिसे वह प्रेम करती थी वह व्यक्ति उस पर अटूट विश्वास रखता था।

(8)

समय बीतता गया, तुबौह और दौलुङ के बीच रहने वाले ज़ोरम लोगों के लिए एक-एक दिन काटना भी बहुत लंबा समय जैसा प्रतीत होता था! कुछ स्थानों में भारतीय सेना और ह्मम सिपई के

बीच रुक-रुक कर गोलाबारी होती रहती थी। कुछ गाँवों को जलाया भी जा रहा था। उनकी स्थिति इतनी दर्दनाक है कि शब्दों में भी उसका वर्णन नहीं करना संभव नहीं है, यदि हम इसे अधिक गहराई और स्पष्टता से वर्णन करने का प्रयास करें तो किसी को भी लग सकता है कि हम अतिशयोक्ति कर रहे हैं।

ठीक वैसे ही जैसे भगवान ने सभी मौसमों की योजना बनाई है, वे आते-जाते रहे। कीचड़ भरी बरसात के मौसम के बीच, भारतीय सेना द्वारा राज्य और जाति के रक्षक माने जाने वाले वॉलन्टियरों की खोज करने का सख्त आदेश निराशाजनक था। उन्होंने उन घने जंगलों में ह्रम सिपई की तलाश की जहाँ जोंकों और रेत मक्खियों का बसेरा था और जहाँ खतरनाक ऊँची चट्टानों से गिरने का डर बना हुआ था। वे उन्हें इस तरह खोज रहे थे जैसे किसी खोए हुए व्यक्ति को ढूँढा जाता है, जबकि केवल खोजने वाले ही जानते थे कि यह सब व्यर्थ था। भला कौन अपने देश और राष्ट्र को छोड़कर ह्रम सैनिकों के खिलाफ कार्रवाई करना चाहेगा, यह जानते हुए भी कि उसे अत्यधिक कष्ट सहने होंगे और वाई सेना के हाथों प्रताड़ना झेलनी पड़ेगी? वे जिन्हें खोज रहे थे भले ही उनके साथ वे एक ही वाइह्लौ ज़िआल (सिगार जो स्थानीय रूप से तंबाकू के साथ लपेटा जाता है) पीते हो, वे उनके लिए हमेशा भरोसेमंद रहते है। भले ही वे वाक्पटुता से उन्हें सरेंडर करने के लिए मनाने की लाख कोशिश करे, वे सफल नहीं होंगे।

लेकिन, उनका मुख्य कार्य वॉलन्टियरों को ढूँढना था। ऐसे बहुत कम लोग थे जो अपने ही लोगों को गिरफ्तार करवाना चाहते थे। ललदङा और कुछ अन्य लोगों की तरह जो सेना का फायदा उठाना चाहते थे, उनके विपरीत अपने ही जाति को गिराफ़तर करवाने की इच्छा रखने वाले लोग बहुत कम थे। इसलिए खोज में अधिकतर समय असफल ही रहे। वे दिनभर कड़ी धूप, तूफान और बारिश में वॉलन्टियरों की तलाश में निकलते थे, लेकिन उन्हें कभी सफलता नहीं मिली। सफल होने के बजाय, वे अपने ह्रम सिपई के लिए कष्ट सहने को तैयार रहते थे। यह उस व्यक्ति का सच्चा रवैया है जो अपने दोस्त के लिए मरने का साहस (ठ्रीआन छन थिह ङम) करता है। मिज़ो विद्रोह वह दौर

वास्तव में वह समय था जब हम ठ्रीआन छन थिह ङम के वास्तविक अर्थ को अपने जीवन में उतार रहे थे।

इसी प्रकार कई लोग ऐसे हैं जो देश और राष्ट्र के लिए लड़ने वालों को बचाने के लिए अपनी पूरी कोशिश कर रहे थे, लेकिन जैसा कि हमने पहले ही उल्लेख किया था, ऐसे कई लोग भी थे जो अपने लिए ही केकड़ा पकड़ते[50]। यहीं लोग छोटी-बड़ी समस्या खड़ा कर देते थे और कई बार एक ही जाति के बीच झगड़ा पैदा कर देते थे।

अनेक गाँव भी कई समस्याओं का सामना कर रहे थे। इसी बीच देश के लिए लड़ने वालें, जिन पर लोग निर्भर थे, उनके बीच भी आपसी समस्याएँ पैदा हो रही थीं। नेताओं के बीच, नेता और सेना के बीच भी कई मतभेद उभर रहे थे। लेकिन, क्योंकि वे एक ही संकल्प को मानने वालें थे और पहले से ही एक सुर में चलने वाले लोग थे, इसलिए वे जैसे-तैसे उन समस्यों का समाधान ढूँढ लेते थे।

लेकिन, जब चोट पहुँचती है तो वह एक स्थायी निशान छोड़ जाति है। इसलिए, केवल दिखावे के लिए बाहरी रूप से एक सुर में होने के बावजूद, भीतर ही भीतर उन चोट के निशानों के कारण समस्या पैदा हो जाता था। हम सब यह जानते होंगे कि आपसी सद्भाव और एक-दूसरे को समझे बिना परिवार या दोस्तीको बनाया नहीं जा सकता। एक देश को सही मार्ग पर चलाने के लिए आपसी मेल-जोल और एकता के बिना एक महान देश और राष्ट्र नहीं बनाया जा सकता।

इस समय मिज़ोरम के कई गाँव आपस में मिल-जुलकर नहीं रह पा रहे थे। चूँकि गाँवों के लोगों के अलग-अलग समूह बनाया गया था, सबसे मुश्किल बात यह है कि जो ग्रामीण, विद्रोह से पूर्व एकजुट हुआ करते थे, वे अब अलग-अलग विचार रखने लगे थे। लेकिन, उन्हें दोषी भी नहीं ठहराया जा सकता हैं। अलग-अलग गाँव, अलग-अलग स्वभाव के लोगों को एक स्थान पर साथ रखना एक कठिन काम था।

यदि हम तुईखुर[51] से निकलने वाले वर्षा-जल के पानी और घरों के छप्पर पर गिरने वाले उसी वर्षा-जल को एक एकत्र कर दे, तो उसका रंग भी बदल जाता है। इसी प्रकार, अलग-अलग गाँवों के लोगों के अपने-अपने स्वभाव और व्यवहार होते हैं, उन्हें एक साथ रखने के बाद भी एकजुट बनाए रखना कठिन है। शायद इसलिए, दारपुई जैसे सुशील युवती पर भी झूठी आरोप लगाया गया था। इतना ही नहीं, यह भी कहा जा सकता हैं कि इससे चोरी को भी पैदा कर दिया।

पी मोई जल्दी से घर के अंदर दौड़कर आई और अपनी बेटी, जो छत की सफाई कर रही थी, उससे जल्दी में कहा, "दारपुई, बहुत बुरी खबर है! कल रात हमारी सेना की ओर से कुछ ऐसा माहौल बनाया गया, जिसके कारण वाई सेना हमारे युवक-युवतियों जिन्होंने सरेंडर किया था, उनको फिर से बुलाया जा रहा है। रास्ते में मुझे रोउछुआहा भी मिला।"

दारपुई हेरःसोप[52] पर बैठ गई और चिंतित स्वर में कहने लगी, "माँ, यह तो बहुत बुरी खबर है। मैंने पहले भी रोउछुआहा से अपने इस डर के बारे में कहा था। लेकिन, अपने पिता के पद के कारण, उन्हें लगा कि वे ऐसा नहीं करने की स्थिति में नहीं हैं, और मैं उनकी बात टाल नहीं पायी। माँ, क्या आपको लगता है कि सेना उनके ऊपर हाथ उठाएँगे? सच में उठाएँगे न?" वह अपनी माँ से तो बात कर रही थी लेकिन, उनके जवाब पर ध्यान नहीं दिया।

अपने बेटी को सहलाने के लिए उसकी माँ ने कहा, "हाँ, हमारी स्थिति अच्छी नहीं है। सरेंडर करने वालों की स्थिति ओर भी बुरी है। परंतु हमें अपने समुदाय की सुरक्षा के बारे में भी सोचना है। हमें अपने इन परेशानियों को परमेश्वर के सामने रखना होगा और वह हमें रास्ता दिखाएँगे। दारपुई, ज्यादा चिंता मत करो।" उन्होंने यह बात तो कह दी, लेकिन वह स्वयं भी चिंतित थी। भला, अपनी वर्तमान स्थिति को देखते हुए, वे चिंता कैसे नहीं करते।

कई गाँवों से वाई सेना के हाथों लोगों की मारे जाने की खबरें आ रहीं थी। गाँव के कई युवा, सेना के गिरफ्त में थे, इसलिए वे चैन से नहीं रह सकते थे। अलग अलग गाँवों के वीसीपी की

स्थिति दयनीय थी, जिसके कारण वे चिंता में डूबे हुए थे। नवयुवकों को दी जाने वाली भयानक यातनाएँ, उनकी हत्या और अकेले रहने वाले महिलाओं के साथ होने वाले बलात्कार ने उन्हें अधिक भयभीत बना दिया था।

दारपुई और उसकी माँ को भी सैनिकों की मार की भयवाहता के बारे में पता था। उन्होंने अपने इस संकट की घड़ी में मदद के लिए परमेश्वर को पुकारा। जिस समय दारपुई और उसकी माँ अपनी और दूसरों की सुरक्षा के लिए परमेश्वर से गुहार लगा रहे थे, उस समय सेना के कैम्प में पूछताछ चल रही थी। लेकिन, उन युवक-युवतियों के बीच में से कोई भी ऐसा नहीं था जिसे एम.एन.एफ. के गतिविधियों के बारे में पता था। सैनिकों के हर सवालों के लिए उनका जवाब एक ही था, जिससे सैनिक संतुष्ट नहीं हुए। 'मुझे नहीं पता' को 'कहो' और कठोर पिटाई की आवाज के साथ जारी रखा गया।

काफी सवाल-जवाब के बाद सेना एक साथ इकट्ठा होकर बात करने लगे। सभी पुरुषों को मैदान में कड़कती धूप में मुर्गा बनने के लिए कहा गया। लेकिन महिलाओं को अपने सिर पर लकड़ी का एक भारी लट्ठा रखने के लिए कहा गया। उन्हें इस तरह रखने के बाद भारतीय सेना ने घुटने के बल बैठे पुरुषों पर पीछे से बर्बरतापूर्वक प्रहार करना शुरू कर दिया।

भले ही वे पुरुष थे, फिर भी वे अपनी चीखों पर नियंत्रण नहीं रख सके। उनकी दर्द भरी चीखें सुनना उन महिलाओं के लिए असहनीय रहा होगा जो सिर पर लकड़ी की एक लट्ठा लिए उनके बगल में खड़े थीं।

कड़ी धूप में इतनी प्रताड़ना झेलने के बावजूद उनमें कुछ लोग ऐसे भी थे जो खराब बातें कर रहे थे। उनमें से कुछ गिर पड़े, क्योंकि तेज धूप में लगातार पिटाई सहना आसान नहीं था। किसी के पास हिलने-डुलने तक की शक्ति शेष नहीं रहा। अपने ही गिरे हुए दोस्तों की देखभाल करने की

अनुमति न होने के कारण वे केवल उन्हें दया की दृष्टि से देखते रह गए। वे जानते थे कि यदि वे इस प्रकार सज़ा देते रहे, तो उनका भी वही हाल होगा जो उनके साथियों का हुआ था।

रोउछुआहा ने भी मन ही मन प्रार्थना की और खुद को यह सब सहने के लिए तैयार किया। लेकिन, वह भी अपने आँसू को नहीं रोक पाया। कड़ी धूप में उसके चेहरे पर पसीना और आँसू बहने लगे। आँसू और धूल-रेत के कारण पलकें झपकना भी मुश्किल हो रहा था, इसलिए आँखों को खुला रखना भी मुश्किल था। फिर भी, वह होश में रहने का पूरा प्रयास कर रहा था। शायद रात में उन्हें अपने घर जाने की अनुमति भी दिया जा सकता था। उस समय, वह नहीं चाहता था कि उसकी माँ और दारपुई उसकी थकान को देखें और उसने क्या-क्या सहा है, यह भी उन्हें पता नहीं चलना चाहिए। यदि वे जान गए तो उन्हें बहुत दुःख होंगे।

शाम होने लगी। उन्हें प्यास लगने लगी थी और भूख भी सता रही थी, साथ ही वे बहुत थक भी चुके थे। ऐसा लग रहा था कि सेना की बर्बरता कम होने के बजाय ओर अधिक बढ़ती जा रही है। ऐसा लगता है कि गर्मी और उमस भरे मौसम ने भारतीय सेना को बिल्कुल नहीं थकाया। वास्तव में, यदि यह एक हिंसक लड़ाई होती, तो यह मिज़ो लोगों के लिए इतनी डरने वाली बात नहीं होती। लेकिन, निहत्थों पर अत्याचार करने वालों की शक्ति और क्रूरता किसी भी अन्य चीज से अधिक होती है, जो बहादुर और ताकतवर को भी हरा देते है।

कड़ी धूप में खड़ी महिलाएँ जिस तरह से बात कर रही थीं, उससे रोउछुआहा को गुस्सा आ रहा था। महिला होने के कारण उन पर हाथ नहीं उठाया गया था और उन्हें बातचीत करने की अनुमति भी दिया गया था, इसलिए वे जो चाहे कुछ भी बोली जा रही थीं। सिआमपुई ने जोर से कहा, “हमारी दारथङपुई अपने प्रेमी रोउछुआहा को तो बचा ही लेगी, है ना? सुन है उसने इस सेना कैम्प में अपनी जगह बना ली है।”

लिआनवेली ने भी कहा, “उसे रोउछुआहा की पिटाई से कोई फर्क नहीं पड़ता, शायद वह तो खुश होगी। यदि रोउछुआहा पीड़ादायक हो गया तो, उसे परेशान करने वाला कोई नहीं होगा और वह सेना के साथ अपनी मनमर्जी मिल सकती है।” लेकिन, उन सबके बीच दारपुई के पक्ष रहने वाले भी थे। उसकी सबसे अच्छी सहेली ज़ेली की बड़ी बहन थनज़ामी ने दारपुई का पक्ष लेते हुए कहा, “सहेलियों, मुझे लगता है कि तुम लोग हद पार कर रही हो। हमारे पास इस बात का कोई सबूत नहीं है कि दारपुई ने कुछ ऐसा किया है जो हमारे समुदाय के खिलाफ हो। तुम सब अफवाहों को सच क्यों मान रही हो? अभी तुम जो कह रही हो, वह आगे फैलता जाएगा और फिर बाद में वह तुम तक पहुँचेगा और तब तुम उसे सच मान लोगी! इसी तरह समाज में अफवाहें फैलाई जाती हैं।”

सिआमपुई ने कटाक्ष करते हुए पूछा, “ठहरो, यदि हमारे पास उसकी बुराई का कोई ठोस सबूत नहीं है, तो क्या तुम्हारे पास भी इस बात का कोई सबूत है कि दारथङपुई इन सभी आरोपों से पूरी तरह मुक्त है? आखिर हमें जो लगता है हम उन बातों को क्यों न कहे?”

थनज़ामी ने कहा, “यह सच है कि मेरे पास भी कोई ठोस सबूत नहीं है। लेकिन, जिस प्रकार मैंने परमेश्वर को देखे बिना भी उन पर विश्वास किया है, उसी प्रकार मैं दारपुई के निर्दोष होने का प्रमाण सुने बिना भी उसका पक्ष लेती रहूँगी। वह बचपन से ही किसी के बारे में बुरा नहीं कहती और अपने माता-पिता की हर बात मानती है। जब वह युवती हुई, तो सभी युवतियाँ उससे ईर्ष्या करने लगीं। वह युवकों के बीच सबसे लोकप्रिय थी तथा हर माता-पिता भी उसे अपनी बहु बनाने की इच्छा रखते हैं। मुझे नहीं लगता कि वह अपनी प्रतिष्ठा और ईश्वर से मिली अनमोल विरासत को कभी कलंकित कर सकती है।”

चोरी छिपे महिलाओं की बातें सुन रहे रोउछुआहा के लिए यह सब सहना बहुत कष्टकारी था। उसकी अपनी प्रेमिका, जिसे उसने अपने बच्चों की माँ बनाने का सपना देखा था, उस दारथङपुई के बारे उन्हीं के साथी महिलाएँ जब अपशब्द कह रहीं थीं, उस बीच वह उनके सामने कुछ नहीं बोलना चाहता था। कहीं जा पाने में असमर्थ, उसे ऐसा महसूस हुआ कि यह दर्द सिपाहियों की पिटाई

से भी अधिक गहरा था। लेकिन, जब थनज़ामी ने दारपुई का पक्ष लिया और उसकी प्रशंसा की, तो रोउछुआहा कि ऐसा लगा थनज़ामी के उन शब्दों ने उसके दुखी मन को बहुत शांति और सुकून पहुँचाया।

वह धीरे-धीरे फुसफुसाते हुए कहने लगा, "हे परमेश्वर, हमारे इस प्रेम के बीच दुश्मन चाहे कितने भी जाल क्यों न बिछाए, आप उन जालों को निष्फल कर देना और दारपुई और मुझे हमेशा सुरक्षित रखना। मुझे महसूस होता है कि अभी हम जो कष्ट झेल रहे हैं वह मानव शरीर के लिए अत्यंत पीड़ादायक है, भले ही मुझे मेरे सहनशक्ति से ज्यादा तकलीफ हो, हे प्रभू, मेरी आत्मा आपके हाथों में है।" जब वह इस प्रकार प्रार्थना कर रहा था, तभी एक सिपाही ने देख लिया और उसे फिर से जोर से मारते हुए कहा, "अरे तुम, बड़बड़ाने बंद करो। यदि तुम वालंटियरों के ठिकाने और उनकी योजनाओं के बारे में नहीं बता रहे हो, तो अपना मुहँ बंद रखो।

रोउछुआहा को एक गहरा धक्का लगा। उसकी साँसे तेज़ चलने लगीं और आँसू बह निकला। उसे चक्कर आने लगा, सब कुछ धुंधला हो गया और ऐसा लगा मानो उसके चारों ओर की दुनिया घूम रही हो। उसे सबसे बड़ा डर इस बात का था कि कहीं वह बेहोश न हो जाए। उसका शरीर भले ही चोटों से भरा हुआ था, फिर भी उसे हर हाल में होश संभालते हुए अपने घर पहुँचना है। वह खुद को हिम्मत देते हुए बार-बार कह रहा था, 'मैं ठीक हूँ, रोछुआह, होश में रहो, जागते रहे। तुम्हें दर्द नहीं हो रहा है। बस थोड़ी थकान है। होश में रहो। प्यास से सूखते गले तो बुझाने के लिए अगर एक गिलास पानी मिल जाता तो कितनी राहत मिलती। लेकिन, अफसोस, पानी की एक बूंद तो क्या नाश्ता खाने के तुरंत बाद शाम ढलने तक सिपाहियों के क्रूर शासन और डंडों के नीचे झुके हुए थे!

दिन ढलते-ढलते अब किसी में भी साहस शेष नहीं बचा था। रोउछुआहा और हार न मानने वाले दृढ़निश्चयी युवक हाऊखूमा, के अलावा, बाकी सभी मैदान में जहाँ-तहाँ गिर चुके थे। उनके शरीर के जख्मों से खून निकलने लगा। पसीने, आँसू और मिट्टी से सने हुए उनके शरीरों से कच्चे मांस

जैसी गंध आ रही थी। कड़ी धूप के कारण कुछ लोग बेहोशी की हालत में उल्टियाँ करने लगे और अपने ही उल्टियों के बीच गिरे हुए उन लोगों को देखना बहुत दुखदायक था।

सिपाहियों ने वीसीपी को संदेश भेजा, "सुनो, हमने तुम्हारे युवकों से पूछताछ की पर कुछ भी उगलवा नहीं पाए, इसलिए हम इन्हें यहाँ रख रहे हैं।" यह खबर मिलते ही वीसी को लगा कि यह नहीं हो सकता इसलिए अपने युवकों से मिलने सेना कैम्प की ओर चल पड़े। जब वीसी वहाँ पहुँचे और अपने युवकों को दर्द और बेसुध पड़े को देखा, तो उन सभी के आँखों में आँसू भर आए। खास कर पु रोउठ्रीअङा ने जब अपने लाड़ले बेटे रोउछुआहा, जिस पर उन्होंने कभी हाथ तक नहीं उठाया था, को घायल अवस्था में ज़मीन पर पड़े देखा तो उनका हृदय और शरीर गहरी दर्द से भर गया। हाँ, अपने ही अंश और रक्त से निकले को तड़पते हुए देखना असहनीय था। निस्सहाय पड़े युवकों को इस तरह लैटे हुए देखना सबसे भयानक बात माना जा सकता है।

दूसरों की परवाह किए बिना पु ठ्रीअङा अपने साथियों से आगे बदकार सीधे अपने बेटे की तरफ गया। डर और घबराहट के साथ उन्होंने धीरे से अपने बेटे के धूल से सने गालों को छुआ। तभी रोउछुआहा ने बड़ी मुश्किल से अपनी आँखे खोलीं और धीरे से कहने लगा, "मुझे नहीं पता। एम.एन.एफ. की योजनाओं के बारे में मुझे कुछ भी नहीं पता।" यह सुनकर उसके पिता की आँसू बहने लगे और उसे सहलाते हुए सांत्वना दिया, "वालते, डरो मत। अब तुम्हारा पिता पहुँच गया हूँ।" लेकिन, दोनों यह जानते थे कि भारतीय सेना के सामने वे अपने बेटे को बचाने में पूरी तरह असहाय है।

लेकिन, पूरा दिन पीड़ा सहने के बाद, प्रियजनों के प्यार भरे स्पर्श और मीठे शब्द बहुत शक्तिशाली होते हैं। रोउछुआहा को ऐसा लगा कि उसके पिता के प्यार भरे स्पर्श की गर्माहट और उनके आश्वासन ने उसे जगा दिया है। जब वह बेहोश होने वाला था, उसने अपने आप को जगाए रखने के प्रयास ने भी उसकी मदद की। उसने सामने खड़े अपने पिता की ओर हाथ बढ़ाया और कहने लगा, "पिताजी, मुझे छोड़कर मत जाओ। आप यहाँ मेरे साथ रहिए।"

जाते हुए उसके पिताजी ने कहा, “वालते, मैं कहीं नहीं जा रहा हूँ। मैं बस उस टंकी से पानी लेने जा रहा हूँ और जल्दी वापस आऊँगा।” वे एक बड़े प्याले में पानी भरकर वापस आए, अपने बेटे को उठाकर उसके सिर को अपनी बाहों में रखकर उसे गले लगाया। उस पानी भर प्याले को उसके सूखे होंठों से लगाया। रोउछुआहा ने पानी न पीकर वह कहने लगा, “क पा, सेना ने हमें पानी पीने से मना किया है। अगर उन्होंने हमें देख लिया तो वे आपको भी नहीं छोड़ेंगे। क पा, आप मेरी चिंता मत करो, मैं ठीक हूँ।”

पु ठ्रीअङा ने दुखी मन से कहा, “वालते, तुम्हारा पिता यहाँ हूँ। जब तक मैं जिंदा हूँ, तुमको मुझसे कोई दूर नहीं कर सकता। ये लो, जितना मन चाहे तुम पानी पियो। डरने की कोई बात नहीं है।” उसके इन वाक्यों से रोउछुआहा के मन को शांति मिली और वह पानी पीने लगा। यह शायद सबसे मीठा पानी होगा जो उसने कभी पिया हो। जब वह काफी पीने लगा, वह कहने लगा, “क पा, शायद ङूरा अभी भी सचेत है, उसे भी बहुत प्यास लगी होगी,” इसके बाद वह ज़मीन पर फिर से गिर पड़ा।

जैसा कि उनके बेटे ने उन्हें बताया था, पु ठ्रीअङा ङूरा के पास गया। उसी समय सैनिक जोर-जोर से चिल्लाने लगे। वे लोग पु ठ्रीअङा के तरफ आने लगे, और गुस्से से कहने लगे कि उन्हें पानी देना मना है। बिना हिचकिचाए पु ठ्रीअङा ने उसके होंठों से प्याला लगाकर कहा, “ङूरा, यह लो, पानी पियो। मैं तुम्हारे प ठ्रीअङा हूँ।” ङूरा बिना कुछ कहे वह पानी पीने लगा। अपने बच्चों को इतना प्यासा देखकर एक पिता के हृदय को बहुत दुःख हुआ और उनके आँसू बहने लगे। ङूरा के सिर पर पु ठ्रीअङा के प्यार भरे आँसू टपकने लगा।

सैनिक ने उनसे प्याला छीनने की कोशिश की। यह पु ठ्रीअङा के मर्यादा के खिलाफ था। उन्होंने सेना के कलाई में पकड़ कर उसे जोर से धक्का मारा। सेना गुस्से से चिल्लाने लगा और अपने छड़ी उठाई। उसी समय दूसरे सैनिक और वीसी सदस्य वहाँ दौड़कर आए। सैनिक ने अपने मुखिया को जल्दी-जल्दी सब कुछ बता दिया। उनके प्रमुख ने पु ठ्रीअङा को गुस्से से देखते हुए कहा, “क्या तुमने मेरे आदमी पर हाथ उठाया है?”

लेकिन, एक बहादुर मिज़ो मर्द, जो अपने दोस्त के लिए मरने का साहस रखता है, वह अपने बेटे को बचाने के लिए मौत से कैसे डर सकता है? मौत ही क्या, वह अपने बेटे के लिए कटने के लिए भी तैयार था। उसने ड्रूरा को फिर से आराम से लिटाया। फिर वह सेना अधिकारी का सामना करने के लिए खड़ा हुआ। उसने धीमी आवाज़ में कहा, "तुम्हें क्या चाहिए? तुम्हें इन लोगों से वॉलन्टियर के बारे में जानना था न? अगर यह बात है तो तुमने इनको एक प्याले भर पानी भी न देकर इन पर हाथ क्यों उठाया? आज रात भी यह सब लोग तुम्हारे पास नहीं रहेंगे।"

सेना अधिकारी ने कहा, "ये लोग हमारे पास रहेंगे या नहीं, यह तुम्हारी नहीं मेरी मर्जी है। तुम कौन होते हो जो मेरे आदमी के ऊपर हाथ उठाने का हिम्मत दिखा रहे हो? ये लोग मेरे में हैं, मैं जब भी चाहूँ उन्हें पानी और खाना दूँगा। लेकिन, यदि वे बात नहीं मानेंगे, तो मैं उन्हें कुछ नहीं दूँगा।"

"नहीं, यदि तुम इन्हें खाने के लिए कुछ दिए बिना तड़पाओगे, तो तुम्हें जो चाहिए वह भी नहीं मिल पाएगा। इसलिए, अब हम अपने आदमियों को वापस घर ले जाएँगे। दो या तीन दिन के बाद फिर से पूछताछ कर लेना," कहकर उनके वीसीपी ने भी अनुरोध किया। यह अनुरोध से अधिक एक आदेश जैसा था। सेना अधिकारी कुछ नहीं कह पाया और अपने ठुड्डी को सहलाते हुए इधर-उधर देखने लगा।

जब उन्हें लगा कि वे थोड़े डरे हुए हैं, तो पु थङदेला ने भी थोड़ा गुस्सा दिखाकर कहा, "हाँ, तुम्हारे हाथों तड़पने के लिए हमने इन्हें तुम्हारे पास नहीं भेज हैं। अगर ये लोग कह रहे हैं कि इन्हें कुछ नहीं पता, तो तुम बार-बार पूछताछ क्यों कर रहे हो? यदि तुम इस तरह काम करोगे तो हम सरेंडर करने वालों को पीछे हटने के लिए कहेंगे। तुम्हारी धमकियों के कारण ही इन लोगों ने सरेंडर किया है। सच बात तो यह है कि हमारे नौजवान बहुत ही बलवान हैं। अगर यह एक लड़ाई होती, तो तुम्हारे वाई आदमी इनसे जीत भी नहीं पाते। लेकिन, हमने तुम्हें अपने प्रमुख की तरह देखा है और तुम्हारे आदेशों के लिए रुके हुए है।"

पु ट्रीअङा ने कहा, “अब रात हो चुका है। सर्दी के मौसम में इस तरह लैटे रहने से ये बीमार भी पड़ सकते हैं। इसलिए हम इन्हें वापस ले जा रहे है। आज तुमने जो किया है उसके कारण अगर हमारा कोई भी आदमी मर जाता है, तो तुम जिम्मेदार होंगे। तुम जिसके के लिए काम कर रहे हो, हम उस भारत सरकार को पत्र भेजेंगे।” उनके कहने के बाद सेना अधिकारी भी शायद डर गया होगा। उसने अपने आदमियों से कहा कि ये लोग उन्हें घर ले जा रहे हैं।

सैनिकों के चले जाने के बाद, उन्होंने पु ज़ाह्राङा को गाँव में संदेश पहुँचाने के लिए भेज दिया। थोड़ी देर बाद कुछ युवा और अधेड़ उम्र के लोग वहाँ पहुँचे। जिन लोगों को सैनिकों ने प्रताड़ित किया था, वे उन्हें हर संभव तरीके से घर ले गए।

(9)

रोउछुआहा में यातनाओं को सहने की गजब सहनशक्ति थी, यहाँ तक कि जब सेना द्वारा उन पर अत्याचार किया जा रहा था, तब भी उन्होंने खुद को सचेत रखा था। ऐसा लग रहा था मानो उसके साथियों सेकी तुलना में उसे कम प्रताड़ित किया जा रहा हो क्योंकि उसमें अभी भी ताकत बची थी। ऐसे कुछ लोग भी थे जो उठ नहीं पा रहे थे। जहाँ उन्हें मारा गया था, वहाँ शरीर पर घाव और छाले पड़ गए थे। सेना के छड़ियों के निशान बिल्कुल काले पड़ गए थे।

रोउछुआहा के घाव देखकर दारपुई अपने आँसू रोक नहीं पायी। अपने दोनों हाथों से मुहँ छिपाते हुए वह सिसक-सिसक कर रोने लगी और कहने लगी, “हाय, यह क्या हो गया! मैं पहले से ही चाहती थी कि आप सरेंडर न करें! रोछुआह, हमारे साथ यह क्या हो रहा है?” वह दारपुई की नज़रों में सहज दिखने की कोशिश कर रहा था, लेकिन बड़ी मुश्किल से रोउछुआहा उसकी ओर मुड़ा और कहने लगा, “अरे, दारपुई, आपको नकारात्मक नहीं सोचना चाहिए। देखो, मैं ठीक हो जाऊँगा।

मैं भाग्यशाली हूँ कि उन्होंने मुझे ज्यादा नहीं मारा है; बल्कि मुझे तो अपने अन्य साथियों की चिंता है।”

दारपुई ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा और कहा, “इसमें आपका भाग्यशाली होना कहाँ है? क्या आप पर ज्यादा हाथ नहीं उठाया गया है? यह सब एक अविश्वसनीय बातें हैं।” बिना हँसी आए उन्होंने झूठ कह दिया, “कहने के लिए यह बात बहुत ही शर्मनाक चीज है। लेकिन, मैं कह देता हूँ। उन्होंने जब हमें कड़ी धूप में खड़ा कर दिया था, थोड़ी देर बाद शायद मैं बेहोश पड़ गया था। शायद मैं धूप को बर्दाश्त नहीं कर सका। यह बहुत मर्दानगी वाली बात नहीं है न? जो बेहोश पड़ा रहा, उस पर क्या हाथ उठाना? इसलिए मैं बच गया।”

वह झूठ नहीं बोलना चाहता था। लेकिन, उसे लगा कि अपनी प्रेमिका के मन को शांत करने के लिए उसे डरपोक और शक्तिहीन दिखना सही लगा और सफेद झूठ कहना ही बहतर लगा। उनके जमाने में एक मर्द का कायर होना कोई आदर्श बात नहीं थी। खतरनाक स्थिति में भी मर्दों को बहादुरी दिखाना पड़ती थी, और यही उनका मुख्य लक्ष्य भी होता था।

दारपुई ने कहा, “आपको क्या लगता है कि हमारी यह स्थिति कब खत्म होगी? मैं इससे थक चुकी हूँ। यदि आपको किसी भी समय गिरफ्तार किया जा सकता है और पीटा जा सकता है, तो यह निश्चित बात है कि आपके शरीर को कष्ट होगा।”

दारपुई के हाथों को सहलाते हुए उसने कहा, “हाँ, यह बात तो सही है। लेकिन, परमेश्वर हम पर मेहरबानी करेंगे, और जिस बात का तुम्हें डर है शायद वह कभी सच न हो। और, हमारी यह जो स्थिति है, लगता है यह इतनी जल्दी खत्म नहीं होगी। जहाँ तक मैंने हमारे गाँव के मुखिया की बातचीत और आकाशवाणी से सुना है, उससे मुझे नहीं लगता कि इतनी आसानी से यह ठीक होने वाली है। मुझे लगता है कि इसमें समय लगेगा, लेकिन, ज्यादा डरे हुए रहने से कोई लाभ नहीं होने

वाला है। हमारे सामने जो भी कठिनाइयाँ आएँगी, उसे परमेश्वर के साथ सामना करेंगे। हमेशा याद रखो कि एक दिन हम लोग एक आजाद देश और राष्ट्र जरूर बनेंगे।"

दोनों की बातें पूरी होने से पहले घर का दरवाजा जोर से खुल गया। जल्दी और हड़बड़ी में रोउछुआहा की माँ पी राङी अंदर आ गई। फिर उसने बिना कुछ और सोचे फ़ाईरेल[53] (साफ किये गए चावल रखने का मिट्टी का पात्र) में हाथ डाला। रोउछुआहा और दारपुई, दोनों उसके अजीब व्यवहार को देखते रहे। उनके व्यवहार के तरीके से यह पता चल रहा था कि वह हड़बड़ी में थी। ऐसा लग रहा था मानों उनका ध्यान अपने बच्चों पर गया ही न हो। वह साफ किए हुए चावल को एक बोरी में डालती जा रही थी।

उसने सोचा कि यह जानना बेहतर होगा कि क्या हो रहा है, रोउछुआहा ने अपनी माँ से पूछा, "माँ, इतनी हड़बड़ी में आप क्या कर रहे हो?"

अपने बेटे की आवाज सुनकर ऐसा लगा मानो वह चौंक गई थीं। फिर चावल को डालते हुए उन्होंने धीमे स्वर से कहा, "हमारे ह्रम सिपई के पास अब खाने के लिए कुछ नहीं बचा है। उन्हें गाँव में घुसने से डर लगा रहा है, इसलिए वे बाहर से ही खाने की माँग कर रहे हैं।"

रोउछुआहा ने कहा, "माँ, कुछ दिन पहले भी वे लोग लेकर गए थे न? फिर से उन्हें देने की क्या जरूरत है?" तब उसकी माँ ने कहा, "लगता उन्हें देना अब खत्म नहीं होगा। यदि हमारे अपने ही आदमी भूखे रह रहे हैं तो उन्हें अनदेखा नहीं कर सकते। और वैसे भी, वे हमारे लिए ही तो लड़ाई लड़ रहे हैं। हमें हर संभव तरीके से उनकी मदद करनी होगी।"

"अगर वे लोग गाँव में घुसने की हिम्मत नहीं कर पा रहे हैं, तो उन्हें खान देने कौन जा रहा है?" कहकर उसने अपनी माँ से प्रश्न पूछा। उसकी माँ बोरी में 'वाइह्लोउ' डालते हुए कहा, "लगता है हमारे युवतियाँ पानी भरने का बहाना बनाकर उन्हें खाना देने जा रही हैं। इसके अलावा कोई और रास्ता भी नहीं है।"

रोउछुआहा ने असहमत होते हुए कहा, “यहीं चीज हैं जो मुझे अच्छी नहीं लगती। माँ, यदि सेना हमारी युवतियों की तलाशी लेने लगेगी, तो हमारे गाँव के लिए और भी बुरा हो सकता है। क्या वे लोग यहाँ आने का कोई और तरीका नहीं ढूंढ सकते है? क्या ऐसा नहीं कहा जाता है कि जिसे जरूरत हो, वह खुद आए[54]? और वैसे भी पिताजी कहाँ हैं?” हाँ, जैसा कि रोउछुआहा ने कहा है अगर वे अकाल के कारण मौत से डरते हैं, तो उन्हें खुद आना चाहिए, भले ही स्थिति कितनी भी खतरनाक क्यों न हो!

यह जानते हुए कि बाढ़ आने वाली है, क्या हम हाथ पर हाथ धरे बाढ़ के आने का इंतज़ार करते रहेंगे?

पी राङी ने धीरे से कहा, “वालते, ऐसा तो नहीं हो सकता न। हमें अपने ही आदमियों के बचाव के लिए भी सोचना होगा।” लेकिन, अपने बेटे की इस सोच से वह सहमत थीं। तभी रोउछुआहा ने फिर से कहा, “उन्हें बचाने के लिए चक्कर में हम लोग भी यहाँ प्रताड़ित हो रहे हैं। हमें कष्ट में न डालने का कोई रास्ता निकालकर, अपना पेट भरने के लिए उन्हें खुद कोई रास्ता निकालना चाहिए।” उसकी माँ ने भी अपने बेटे की मन की बात समझते हुए जवाब दिया, “सही बात है।”

जैसे ही वे वॉलनटियरों के लिए चीज़े इकट्ठा करने में व्यस्त थे, उसके पिता भी घर आ गए।

अपने पिताजी को देखते ही रोउछुआहा ने तुरंत सवाल पूछा, “पिताजी, वॉलनटियरों ने अपनी जरूरतों का संदेश किसके पास भेजा?” उसके पिताजी खाँसने लगे और फिर उत्तर दिया, “कल उन्होंने पु ज़ाखोला की पत्नी से कहा था जो अपने झूम से सब्जियाँ लेने गई थी। आज सुबह पानी भरने जाने वालों के ज़रिए भी यह संदेश भेजा गया था कि यह अब मुश्किल होगा। लेकिन...” कहकर वह चुप हो गया।

“लेकिन क्या पिताजी?”

पिताजी ने कहा, ".. वालते, हमारी स्थिति बहुत ही खराब है। हमारे ऊपर जो कष्ट और कठिनाइयाँ आ रही हैं, उससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता। उन्होंने धमकी दी है कि अगर आज शाम अंधेरा होने तक उन्हें उनकी जरूरत के सामान नहीं मिला, तो वे आज रात ही गाँव को जला देंगे। हम सबकी भलाई के बारे में सोचने के लिए आज सुबह भोजन के बाद एक बैठक बुलाई गयी और इस बात पर चर्चा की गयी। अंत में हमने उनकी माँग को पूरा करने का निर्णय लिया है। इसलिए उनकी जरूरतें पहुँचाने वालों का चुनाव भी उसी समय कर लिया गया। शाम को आखिरी बार पानी भरने जाने वाले सामान लेकर जाएँगे।"

उसके पिता की बातों से रोउछुआहा खुश नहीं था। वह कहने लगा, "उन्होंने बिना सोचे-समझे इंडिपेंडेंस की घोषणा कर दी, यह पूछे बिना कि हम इसे चाहते हैं या नहीं। उनके कारण हमारा गाँव जलकर राख हो गया और हमारे ही लोगों ने अपनी जान गँवा दी। हमारे समुदाय को सुशोभित करने वाली सारी प्राकृतिक सुंदरता को भारतीय सेना के बंकरों के लिए नष्ट कर दिया गया। जिसे बलपूर्वक खोदा गया था। उनकी सुरक्षा के लिए हमने सरेंडर किया और दर्द सहा। उनके लिए इतना कुछ करने के बाद भी कृतज्ञता दिखाने के बजाय वे हमें हमारा गाँव जलाने की धमकी देने की हिम्मत कर रहे हैं? पिताजी, हमारे ह्मम सिपई किस प्रकार की मानसिकता रखने वाले लोग हैं?"

पु ठ्रीअङा अपने बेटे की नाखुशी को समझ रहे थे और वह उससे कुछ और बात करना चाहते थे। लेकिन, क्योंकि उनकी बातचीत और उनका मन अलग ही माहौल में था इसलिए उन्हें यह भी नहीं पता था कि वे और क्या कहें। अपना वइबेल[55] शुरू करते समय अचानक उसकी नज़र दारपुई पर पड़ी, जो एक कोने में चुपचाप बैठी थी। उन्होंने कहा, "अरे, दारपुई, तुम आई हो क्या? तुमने बहुत अच्छा किया। क्या तुमने चाय पी?" दारपुई ने भी विनम्रता से जवाब दिया।

थोड़ी देर के लिए पु ठ्रीअङा चप रहे। फिर वह कहने लगे, "अरे दारपुई, तुम्हारा परिवार भी खाना बनाने वालों में शामिल है।" उनकी यह बात सुनने के बाद दारपुई खड़ी हो गई और कहने लगी, "सच में? अरे, तब तो मुझे भी जल्दी से घर जाना चाहिए, माँ बहुत व्यस्त होंगी। रोछुआह, लगता है

आप भी जल्दी से ठीक हो जाओगे। समय मिलने पर मैं फिर कभी आऊँगी,” दूसरों के कुछ बोलने से पहले वह बाहर की तरफ जल्दी से जाने लगी।

दारपुई के निकलने के बाद पु ट्रीअङा अपने बेटे को देखते रहे। उन्होंने मीठे स्वर में कहा, “वालते, जैसा कि हम लोग जानते है कि बचपन से ही दारपुई की सभी ने प्रशंसा की है और करते रहे हैं। तुम्हारी माँ और मुझे भी बहुत खुशी है कि तुम दोनों एक-दूसरे को पसंद करते हो, लेकिन हमने किसी के सामने यह ज़ाहिर नहीं किया। हमें लगा कि हमें एक अच्छी और सुशील बहू मिलने वाली है। लेकिन, अब दारपुई के बारे में बहुत ही खराब अफवाहें फैल रही हैं, अब हम लोग क्या करेंगे?”

अपने पिता की बातों को सुनकर रोउछुआहा चौंक गया। भले ही उसने दारपुई के बारे में फैल रही अफवाहों को सुन लिया था और जान भी गया था, लेकिन जब उसके पिता ने बड़ी ही गंभीरता से यह बात छेड़ी तो उसका मन उथल-पुथल हो गया। वह अपने पिता से पूछने लगा, “पिताजी, क्या आपको लगता है कि दारपुई के बारे में जो अफवाहें फैल रही है, वह सच है?”

“केवल ऊपर वाले परमेश्वर ही सच जानते हैं। लेकिन, भले ही हमें दारपुई पर विश्वास हो, गाँव वालों को नहीं हैं। हमें अपने पूर्वजों से कभी बदनामी नहीं मिली। मुझे लगता है कि हमारे पूर्वजों की आत्माएँ बहुत सम्मानित हैं। वालते, अपना रास्ता सावधानी से चुनो, मैं चाहता हूँ कि मेरे जाने के बाद भी मेरा प्रशंसनीय बेटा मेरा नाम रोशन करे। मेरी इन बातों से नाराज मत होना और हमेशा यह याद रखना कि हम तुम्हारे प्यार को रोकना नहीं चाहते।” अपने पिता के इन बातों को सुनकर रोउछुआहा के मन को भी थोड़ा शांति मिली। लेकिन,जैसा कि उसके पिताजी ने कहा है, उसे तुरंत समझ आ गया कि उसे अपना मन सीखना होगा।

फिर उस शाम, जब अंधेरा होना शुरू हुआ था, पाँच युवतियाँ एक साथ उस कुएँ की ओर निकली जो बिआकथङा के झूम की सीमा के तरफ था। जैसा कि उन्हें डर था, बाहरी इलाके में ड्यूटी पर तैनात दो सिपाहियों ने उन्हें रोक दिया। उन्होंने उनसे पूछा कि वे क्या ले जा रही हैं। उनमें से सबसे

अच्छी और लोगों से बात करने की क्षमता रखने वाली युवती, ठूआमखूमी ने आराम से कहा, “तुईखुर से पानी लेने के साथ-साथ हम अपने कुछ कपड़े धोने जा रहे हैं।” वे सभी चुपके से सोच रहे थे कि सैनिक इस झूठ पर विश्वास करेंगे या नहीं। यदि उनको विश्वास नहीं हुआ, तो वे उनकी तलाशी लेंगे, और वॉलनटियरों का सामान जो वे लेकर जा रहे थे, उसे देख लेंगे और उन्हें पकड़ लेंगे। यह भी सोच रहे थे कि यदि ऐसा हुआ तो किस तरह उनको यतनाएँ दी जाएँगी।

दोनों सिपाही एक दुसरें से बात करने लगे। तभी एक सिपाही ने टूटी-फूटी मिज़ो भाषा में कहा, “एङअः ङे नि लन लाईइन सूक लाउह? तूनअः नी पोह कल दाइह तोह मोले। वॉलनटियर तेन मन अङ, नाङमहनी ह्मेइछिअ निः खा, इनअः कल वेक रोह उ,” (तुमने इसे दिन में क्यों नहीं धोया? अब सूरज चला गया है। वॉलनटियर तुम्हें पकड़ लेंगे, तुम महिलाएँ हो, अपने घर वापस चले जाओ)। उसने जो कुछ कहा था, वह सच था। सूर्यास्त के बाद, सबसे दूर वाला तुईखुर, जो बिआकथङा के झूम की सीमा में पड़ता था, वहाँ जाना एक सही नहीं था। सच बात तो यह है कि जब से विद्रोह शुरू हुआ था तब से कर्फ्यू लागू होने के कारण कोई भी शाम को बाहर जाने का हिम्मत नहीं रखते थे। उन्हें सेना और वॉलनटियर, दोनों का ही डर था।

लेकिन कुछ भी हो, उन युवतियों को वह सामान बिआकथङा के वाऊ[56] तक पहुँचाना था। यदि उन्होंने इसे वहाँ नहीं पहूँचाया तो उन्हें अपने गाँव को जलते हुए और लोगों को फिर से रोते हुए देखना पड़ेगा! तभी, ठूआमी ने फिर से कहा, “का पू, कृपया हमें जाने दीजिए। दिन में हम अनेक काम करते हैं, कपड़े धोने का समय नहीं मिल पाता, इसीलिए हमें रात को जाना पड़ता है। हम जल्दी से धोएँगे, और फिर तुरंत वापस आ जाएँगे। परमेश्वर हमारी रक्षा करेगा और कोई समस्या पैदा नहीं होगा।”

दोनों सिपाही फिर से एक दूसरे से बात करने लगे। तभी उन्होंने “केईमहनी नेन कलपुई अङ (हम तुम्हारे साथ चलेंगे),” कहकर उन पाँच युवतियों के साथ जाने का फैसला लिया! वे पाँचों बड़ी दुविधा में पड़ गयीं। अगर वे वापस चली जातीं, तो बिना किसी ठोस कारण के वॉलनटियरों द्वारा गाँव

जला दिए जाने का डर था। और यदि वे सिपाहियों के साथ आगे बढ़तीं, तो वॉलनटियरों के छिपने का जगह पहुँचते ही गोलीबारी शुरू हो जाती! अब वे लोग क्या करें?

तभी देङलिआनी ने फुसफुसाते हुए कहा, "हाय, क्या हमें फिर वापस चले जाना चाहिए? अगर सिपाही हमारे साथ आए तो वॉलनटियर गुस्सा करेंगे, मुझे लगता है कि हम दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति में फँस गए हैं।" भले ही उन्हें लगा कि वह जो भी कह रही थी सच था, लेकिन दूसरी ओर, वे इस कल्पना मात्र को रोक भी नहीं सकते थे कि जिस गाँव को फिर से बसाने के लिए उन्होंने अपनी पूरी ताकत लगा दी थी, वह एक रात में ही फिर से राख हो जाएगा और बच्चे तथा महिलाएँ फिर से भोजन के लिए तड़पेंगे।

सैनिक उन्हें संदेहास्पद नज़रों से देख रहे थे। वे यह भी सोच रहे थे कि अगर वे अपने साथ सिपाहियों को लेकर नहीं गए, तो वे गुप्त रूप से उनका पीछा करेंगे और उनके गंतव्य तक पहुँचने के बाद बड़ी समस्या खड़ी हो जाएगी। उन्हें इस बात का अफसोस था कि उनके साथ कम से कम एक पुरुष को क्यों नहीं भेजा गया। लेकिन, गाँव के मुखियों को डर था कि यदि युवतियों के साथ कोई पुरुष को भेजा गया, तो सिपाही उन पर और अधिक शक करेंगे। उनकी यह सोच भी अनुचित नहीं थी।

वे सिपाहियों को उनके साथ न आने के लिए कह रही थीं, लेकिन सिपाही साथ जाने के लिए अड़ गए थे। जब वे वहाँ खड़ी थी, उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि अब वे क्या करें। सूरज ढल रहा था और वे जानती थीं कि अब निर्णय लेने का समय आ गया है और उस दिशा में आगे बढ़ना ही होगा। ठूआमी चिंतित थी और वह मन ही मन सोच रही थी कि "अपने देश के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने से बढ़कर और क्या होगा तथा इससे महान और क्या हो सकता है?" उसने अपने साथियों से कहा, "अगर हम लोग घर वापस चले गए, तो हमारे गाँव की स्थिति बहुत ही बुरी होगी। चलो, सिपाहियों के साथ चलते हैं। बीच रास्ते में भी हम शोर मचाने पर ज्यादा ध्यान नहीं देंगे। और

जब हमारे वॉलन्टियर हमारा शोर सुनेंगे और जान लेंगे कि सिपाही हमारे साथ हैं, तो शायद वे हम पर कुछ मेहरबानी दिखाएँ।"

तब वे डर के साथ धीरे-धीरे चलने लगे। भले ही वे बातचीत करना चाहते थे, लेकिन उनके पास बोलने के लिए कुछ नहीं था। उनके बीच ठूआमी, कापमोई से बात करने का तरीका सोच रही थी, जो उन सबमें सबसे परिपक्व थी। जब वे अपने गंतव्य के करीब थे, ठूआमी को वह मौका मिल गया जिसका उसे इंतजार था। जब कापमोई ने कहा कि वह पेशाब करना चाहती है, तो ठूआमी ने तुरंत कहा, "मैं भी खुद जाना चाहती हूँ। दोस्तों, हम जानते हैं कि हमें पहले ही बहुत देर हो चुकी हैं। आप सभी सिपाहियों के साथ आगे बढ़ते रहिए। हम अभी आकार तुमसे मिलते हैं।" और दोनों रास्ते से थोड़ी दूर बगल में झाड़ियों की तरफ चली गयीं।

ठूआमी ने डर के बावजूद अपनी योजनाओं के बारे में कपमोई को बताया, "ठ्रीअनी[57], हमें पता है कि हम अपनी पूरी कोशिश के साथ वॉलनटियर की मदद कर रहे हैं। मुझे पता है कि तुम भी जानती होगी कि अभी हम वॉलनटियर और अपने पूरे गाँव के लिए काम कर रहे हैं। अपने देश और राष्ट्र के लिए जो महान काम करने जा रहे है, वह हमारे आने वाले जीवन के लिए भी सुखद होगा। और हम जानते भी हैं कि अगर हम वॉलनटियर को उनके खाने-पीने के समान नहीं पहूँचाया तो हमारा गाँव फिर से जलकर राख बन जाएगा। इसलिए मैंने यह फैसला तभी ले लिया था जब सिपाही ड्यूटी पर तैनात थे।"

थोड़ी हैरानी के साथ कापमोई पूछने लगी, "तुम्हारे कहने का क्या मतलब है? मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा है! क्या हम इन सिपाहियों को मरने वाले है? या फिर वॉलनटियर के हाथों सौंप देंगे? जल्दी से साफ-साफ बताओं, मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा है कि तुमने क्या फैसला लिया है?" ठूआमी चिंतित थी कि कापमोई उसकी बातों को समझ नहीं पा रही थी। उसे अब लगने लगा था कि यदि उसे अभी भी समझ नहीं आ रहा है, तो सीधी बात बताने पर भी शायद वह नहीं मानेगी। लेकिन,

अपने देश और राष्ट्र के लिए जो उसे सही लग रहा था, उसे करने के अलावा उसके पास और कोई रास्ता नहीं था और वक्ष इसे करने के लिए दृढ़ थी।

वह धीरे से कहने लगी, “ट्रीअनी, वॉलनटियरों ने अब तक हमारे देश के लिए इतना कुछ सहा है। हमारे बारे में सोचने के कारण, अपने पूरे गाँव और वॉलनटियरों की सुरक्षा के लिए, हमें इन दो वाई सिपाहियों के साथ सोना होगा। समझ में आया? ये लोग सिर्फ हमारे शरीर के लिए हमारे साथ आए हैं, और कुछ नहीं।” उसकी बातों को सुनकर कपमोई को बहुत हैरानी हुई। उसके पास कहने के लिए कुछ शब्द नहीं थे, इसलिए वह अपनी सखी को फटी आँखों से ताकती रही। लेकिन वह मन ही मन यह सोच रही थी कि ‘आखिर ठूआमी के मन में क्या चल रहा है?’

उसने गहरी साँस ली और कहने लगी, “ट्रीअन ठूआम, मुझे नहीं लगता है कि ऐसा काम करना उचित है। ऐसा ना हो कि कहीं तुम्हें बाद में पछतावा हो! मैं चाहती हूँ कि तुम इस बारे में फिर से अच्छी तरह सोच लो।” उसे भी लगा कि उसकी सखी जो कह रही है वह सही है, लेकिन उसे यह भी लग रहा था कि उस रात अपने गाँव और वॉलनटियरों को बचाने के लिए उन सिपाहियों को अपना कीमती कौमार्य देना ही होगा। वे जितनी भी बहादुरी के साथ उन सिपाहियों पर हमला भी कर लें, उनके पास कोई हथियार नहीं था। और यदि वे एक सिपाही पर हमला करके उसे हरा भी देते, तो भी एक ओर सिपाही था जिसका ध्यान रखना जरूरी था। साथ ही, बदले में सेना के संभावित हमले का डर भी बना हुआ था।

ठूआमी को पता था कि उनके पास तर्क-वितर्क करने का समय नहीं है, इसलिए वह कहने लगी, “ट्रीआनी, वॉलनटियरों के छिपने के स्थान तक पहुँचने से पहले मैं उन सिपाहियों को थोड़ा अलग ले जाऊँगी, और तुम हमारे दूसरे साथियों को लेकर आगे बढ़ते रहना। उसने आगे कहा, “मेरे दादाजी ने बताया था कि जर्मन शत्रुओं के साथ लड़ाई के समय भी वे युवतियों का सहारा लेते थे। वे अन्य देशों के वीर सैनिकों को भी हराकर, उनके रहस्य उगलवा लेते थे। सच बात तो यह है कि अपने

देश और राष्ट्र को बचाने के लिए लोग कुछ भी करने को तैयार होते हैं।" यह कहकर वह अपनी सखी को रास्ते की ओर खींच ले गई।

अपने साथियों से जुड़ने के बाद भी कापमोई के मन को शांति नहीं मिली। एक ठूआमी जैसी एक शालीन और सुशील युवती के मन में ऐसे विचारों का जन्म होना उसकी समझ से परे था। लेकिन दूसरी ओर, अपनी सखी की सोच और योजनाओं को सुनकर वह इसे राष्ट्रहित में एक महान कार्य भी समझ रही थी, उसकी मन पूरी तरह उथल-पुथल हो गया था। ठूआमी के मन में भी द्वंद चल रही थी। वह जो काम करने जा रही है, क्या सिपाही राजी होंगे? क्या वह उन दोनों को दूसरों से अलग कर पाएगी? क्या आगे चलकर वे सिपाही उस पर अपना हक जताएँगे? क्या उसके साथी उसे बदनाम करेंगे? उसके पास सोचने के लिए बहुत कुछ था।

जब वे अपने गंतव्य के नज़दीक पहुँच गए, तब ठूआमी ने चुपके से कापमोई से कहा कि वह उनके साथियों को साथ लेकर और तेज गति से आगे बढ़े। जैसा ठूआमी ने कहा, ठीक वैसा ही कापमोई ने भी किया और अपने साथियों से कहा, "चलो, हमें और तेज गति से चलना चाहिए। हमें बहुत देर हो जाएगी और हमारे परिवार वालें भी चिंतित होंगे।" वह उन सबको लेकर तेज गति से आगे बढ़ने लगी। लेकिन, उसके मन को शांति नहीं मिल रही थी। वह सोच रही थी कि क्या ये दो सिपाही ठूआमी के साथ रुकने के लिए तैयार होंगे? क्या एक उसके साथ रुककर दूसरा हमारे साथ चलने का फैसला करेगा? अगर ऐसा हो गया तो ठूआमी जो करने जा रही है, सफल नहीं हो पाएगा! अब क्या होगा?

अचानक वह यह सोचने लगी कि 'यह मेरा भी देश और राष्ट्र है। मैं क्यों अपने देश के लिए कुछ बीए बिना भाग जाऊँ'! वह अपने साथियों से फुसफुसाते हुए सलाह देने लगी, "साथियों, देखों हम पहुँचने वाले हैं। ठूआमी और मैंने सिपाहियों को अलग करने की योजना पहले से ही बना चुके हैं। तुम लोग जल्दी से आगे बढ़ते रहना, जल्दी से हमारे पुआन को भीगा देना, और हम जल्दी ही तुमसे फिर मिलते हैं। अच्छे और सही तरीके से काम करके आना। तुम लोग हमारी चिंता मत करना,

लेकिन यह हमेशा याद रखना कि हम भी यहाँ अपनी पूरी कोशिश कर रहे हैं। अगर कुछ समस्या पैदा हो गई, तो तुरंत गाँव की ओर लौट जाना।" उसे डर था कि कहीं उसके साथी उसकी बातों का विरोध न करें, इसलिए वह तुरंत पीछे चल रहे ठूआमी और सिपाहियों के पास चली गई।

वह अपने सहेली ठूआमी से फुसफुसाते हुए कहने लगी, "ठ्रीआनी, तुम मुझे यहाँ से जाने के लिए नहीं कह सकती। मैं भी अपने देश के लिए वह सब कुछ करूँगी जो मैं कर सकती हूँ। वैसे भी, एक के जाने से बेहतर दो का जाना है।" कुछ देर बाद, दोनों सखियों ने सैनिकों को रास्ते के उत्तर की ओर चलने के लिए आमंत्रित किया। शुरुआत में सिपाहियों को समझ में नहीं आ रहा था। लेकिन, बिना बाल प्रयोग के, जब एक साधारण युवती उन्हें अपनी ओर आकर्षित कर रही थी, तो वे ज्यादा देर तक विरोध नहीं कर पाए। ठूआमी और उसकी सहेली यहीं चाहती थीं और उम्मीद भी थी। उन्होंने उन्हें बहलाते हुए कहा, "हमारे सहेलियाँ हमारे कपड़ों को भी ढो देंगे। हम लोग यहीं रुककर आराम करते हैं।"

हाँ, विश्व के विभिन्न देशों में महिलाओं ने अपने देश और राष्ट्र के लिए बहुत कुछ किया है। वैसे ही ठूआमखूमी और कापमोई, दोनों सहेलियों ने भी कुछ इसी तरह का साहस दिखाया हैं। उन्हें इसके लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता है। आखिर, यह उनके वॉलनटियरों की मदद करने और गाँव को बचाने के लिए था। कौन चाहेगा कि उसका गाँव जलकर राख हो जाए? कोई भी अन्य नागरिक उनके स्थान पर खड़ा होता, तो उन्हें भी वही निर्णय लेना होता जो ठूआमी ने लिया।

यद्यपि उनके कार्य ईसाई दृष्टिकोण और संकीर्ण राष्ट्रवाद के नजरिए से बहुत घृणित लग सकते हैं, और यह किसी दुष्टता या शरारत के कारण नहीं था, फिर भी उनके इस क़दम से वे प्रशंसा के पात्र हैं और वास्तव में सहानुभूति के योग्य भी क्योंकि उन्होंने यह सब अपने देश और जाति की रक्षा के लिए किया था। शायद हमारे समाज की कई महिलाओं को इस तरह की विकट स्थितियों का सामना करना पड़ा होगा। वीर युवती ठूआमखूमी और कापमोई ने अपने भविष्य और समाज में लॉक-लाज की चिंता किये बिना, राष्ट्रहित को सर्वोपरि रखा और स्वयं को नयाछवार कर दिया।

अपने देश को बचाने के लिए अन्य देशों के लोगों ने भी हर संभव बलिदान दिए हैं। महायुद्धों के दौरान भी ऐसे कई लोग थे जिन्होंने अपने दुश्मनों को लुभाने और परास्त करने के लिए महिलाओं के सौन्दर्य का उपयोग किया जाता था। स्त्री, जो दुनिया की सबसे खूबसूरत रचना में से एक है, जिसका शरीर कोमल है फिर भी हृदय वीरता से भरा हुआ है, को कई देशों में रणनीतिक ढाल के रूप में उपयोगी बनाया जाता था। ऐसे बहुत से लोग हैं जो अपने स्वार्थ के कारण सेना से संबंध रखते हैं, लेकिन उन्हें दोष नहीं दिया जा सकता। वे तो बस अपने देश, राष्ट्र और अपने परिवार के सुरक्षित भविष्य के निर्माण के अवसरों की तलाश कर रहे हैं।

जब शारीरिक शक्ति और बुद्धि के साथ आजीविका कमाने और परिवार का भरण-पोषण करने के लिए परमेश्वर द्वारा बनाए गए सक्षम पुरुष भी अपने देश और जाति के साथ गद्दारी कर निर्दोषों को प्रताड़ित करने के लिए ‘कोकतू’ बनने की साहस कर सकता है, तो फिर कोमल हृदय वाली और बुद्धि में कमजोर मानी जाने वाली वह महिला भला क्यों न अपने परिवार के लिए अपने एकमात्र साधन और अपनी सर्वोत्तम प्रेम-रूपी नदी में सेना अधिकारी को डुबोने का प्रयास करती?

रमबुआई के कठिन समय के साथ-साथ उन्हें अकाल का भी सामना करना पड़ा। जब परिवारों के पास पर्याप्त भोजन न होने के कारण लाचारी से बैठे है, तब दिमाग में कई प्रकार के नकारात्मक ख्याल आ सकता है और यह कहा जा सकता है कि उस विचार से कई गलत कामों का जन्म भी हुआ। जब किसी व्यक्ति को उनकी सहनशक्ति से अधिक मजबूर किया जाता है, तो दिमाग को शांत और स्थिर रखना बहुत कठिन हो जाता है। जब उनके पास खाने के लिए कुछ नहीं होता, तो हवाई जहाजों के माध्यम से *सिविल सप्लाइ* का चावल गिराया जाता था। इसे गिराते समय वे बहुत लापरवाह थे। चावल के बोर न केवल किसी के गाय के ऊपर गिरे, बल्कि घरों और स्कूलों के ऊपर गिरा दिया जाता था, जिससे काफी नुकसान हुआ और यहाँ तक कि कुछ लोगों की जान भी चली गई। जो उनकी भूख मिटाने के लिए था, वहीं अंततः उनके लिए विनाशकारी भी बन गया था।

(10)

जब भारतीय सैनिकों ने पूरी तरह से गाँव पर कब्जा कर लिया, तो उन बच्चों के लिए जो स्थिति की गंभीरता और गहराई को नहीं समझते थे, वहाँ कुछ चीजें मजेदार भी थी। कभी-कभार सैनिकों का हेलिकॉप्टर खराब हो जाता था, जिसमें बच्चे चढ़कर खेल का आनंद लिया करते थे।

इसके अलावा, एक और बहुत बड़ी परेशानी यह थी कि उन्हें अकाल का सामना करना कि पड़ा था, वे कितने भूखे थे, इसका वर्णन करना भी मुश्किल है। वे आटा पर निर्भर होने लगे थे, लेकिन मिज़ो, हमेशा से चावल खाने वालों के लिए इसे सहना बहुत कठिन था। बच्चे भी इस बात को समझ नहीं पा रहे थे। वे आते को भोजन के रूप में स्वीकार नहीं कर पा रहे थे। आटा खाने के बाद भी वे यहीं कहते थे कि उन्होंने अभी तक खाना नहीं खाया है! हालाँकि उनका कोई दोष नहीं था, उन्हें भोजन की कमी कभी-भी नहीं होती थी। वे ऐसे बच्चे थे जो सुबह, दोपहर और रात को चावल की एक गांठ लेकर बाहर खेलते थे। यहाँ तक कि मुर्गियाँ भी, जो अपने चूजों के साथ बच्चों के पके हुए चावल के ढेर में से दाने का पीछा करने वाले भी अवाक रह गए थे।

साहसी माताओं के लिए भी अपने बच्चों की भूख को देखना कठिन था। वे नहीं जानतीं थीं कि उनके बच्चे द्वारा माँगे जो भोजन की व्यवस्था कैसे करें, इसलिए वे चुपके से अपने आँसू पोंछ लिया करती थीं। पिता भी अपने भूखे परिवार को निराशा भरी नज़रों से देखते रहते थे। इतना ही नहीं, वे जंगलों में भी नहीं जा सकते थे और अपनी दैनिक जरूरतों कोकी चीजें जुटाने में असमर्थ थे, जिसके कारण उनके घर के बर्तन भी खराब होते जा रहे थे। बच्चें सैनिकों द्वारा फेंके गए मांस के खाली डिब्बे और अन्य डिब्बाबंद कंटेनर इकट्ठा करते थे, जिन्हें बाद में परिवार की जरूरतों के लिए प्रयोग किया जाता था।

उस समय के दौरान, एक वयस्क पुरुष की पूरे की मजदूरी केवल 5 रुपए थी। यह वह समय था जब महिलाएँ दिन भर काम करके भी साबुन का एक टुकड़ा ही कमा पाती थीं। जीवन अत्यंत

कठिन था। यह कहना गलत नहीं होगा कि किसी भी परिवार के पास अपनी जरूरत का पर्याप्त सामान नहीं था। यहाँ तक कि सबको खाली डिब्बे तक नसीब नहीं होते थे। प्रकृति की गोद में बसे ईस्ट लुङदार गाँव की बनावट और वहाँ का वातावरण बहुत सुखद था, जिस कारण भारतीय सेना को भी काफी पसंद था और वे वहाँ से जाने का नाम नहीं ले रहे थे और धीरे-धीरे वहाँ बसे जा रहे थे, जो वहाँ के स्थानीय निवासियों के लिए बहुत ही चिंता और घबराहट का विषय था।

उन्हें सिविल सप्लाई के रूप में जो कुछ भी मिलती थी वह केवल चावल था। हेलीकॉप्टर चावल की बोरियों को अलग-अलग नहीं गिराते थे, बल्कि वे बड़ा पार्सल ले जाता था जिसके अंदर चावल की 6 बोरियाँ भरी होती थीं और उन्हें इसी तरह गिराया करते थे। लेकिन, उन बोरियों को सावधानी से क्यों नहीं गिरते थे, यह आज भी एक बहुत बड़ा सवाल बना हुआ है।

एक बार, हमेशा की तरह चावल लेकर एक हेलीकॉप्टर फिर से आया। उस दिन बच्चें स्कूल गए हुए थे। जब उन्हें लगा कि हेलीकॉप्टर उनके ऊपर गिराने वाला है, स्कूल के बच्चें वहाँ से भाग निकले। शिक्षक भी पीछे नहीं रहे। स्कूल का हेड टीचर अनुशासित व्यक्ति थे और उनका मानना था कि ऑफिस को ऐसे ही खुला नहीं छोड़ा जा सकता। जब हेलीकॉप्टर थोड़ा दूर ही था, लोगों के चिल्लाने और रोकने की परवह किए बिना वे अपने ऑफिस की ओर वापस गया और दरवाजा ठीक से बंद करने लगा। जैसा कि डर था, चावल का पार्सल गलत जगह गिर गया (या शायद अधिकारियों ने उन्हें सावधानी से गिराने के लिए नहीं कहा था, या शायद वे जानबूझकर उनकी तकलीफें और बढ़ाना चाहते थे)! चावल का पार्सल ने सीधे मिडल स्कूल के कक्षा IV,V और VI के कमरे को कुचल दिया। प्राइमारी स्कूल के कक्षा III के कमरे एवं ऑफिस का दरवाजा भी बुरी तरह टूट गया।

लेकिन, इसमें कोई संदेह नहीं है कि परमेश्वर ने उनके हेड टीचर की जान बचा ली। वे बाल-बाल बच गए। स्कूल के नीचे की ओर मकान को भी कुचल दिया था। इस घर के अंदर रहने वाले एक बच्चे का जान भी चला गई। जिस चावल को अकाल के समय जीवन बचाने के लिए आना था, वही मौत का कारण बन गया और एक आपदा बन गया। यहीं लोगों के कष्टों का प्रमाण है। चावल

गिराने के बाद हेलीकॉप्टर अक्सर लोगों का अभिवादन करने के लिए नीचे कि ओर उड़ता था, लेकिन यह हेरोडेस के भयानक सलाम[58] के समान जैसा था! जब उनके घर तबाह हो गए और जान चली गई, तो ऐसे में हेलीकॉप्टर के अभिवादन का क्या मोल हो सकता था!

(11)

रोउछुआहा और अन्य लोगों को सिपाहियों ने एक साथ इकट्ठा कर पीटे गए लोगों में से कई लोग ऐसे थे जो लंबे समय बाद भी अपने बिस्तर से उठ नहीं पा रहे थे। पहले ही नकाबपोश व्यक्ति, जिसे 'कोकतू' कहते थे, ने ललज़ामा पर यह झूठ आरोप लगाया था कि 'यह एम.एन.एफ. का प्रेसीडेंट ललदेङा है'। अब उसे मूत्र संबंधी गंभीर समस्या हो गई थी। उसके शरीर पर पिटाई के गहरे निशान काले पड़ गए थे। उसे पीटने के निशान जो घर्षण घाव हो गए थे, उन्हें गर्म पानी से धोकर बड़ी सावधानी से साफ किया जाता था। वह हिलने-डुलने में भी असमर्थ था और पेशाब की समस्या के कारण लगातार कम मात्रा में उसका पेशाब विसर्जन हो रहा था।

एक दिन, शाम के समय जब अंधेरा हो रहा था, साङकुङा और उसके साथी अपने भरे हुए थैलों में सब्जियाँ और बहुत सी चीजें लेकर रोउछुआहा के घर के आँगन में बातचीत करते हुए आए। मुर्गियों को दाना देकर वापस आ रही रोउछुआहा की माँ ने उन्हें देखा और कहा, "अरे, तुम लोग तो झोला भरकर वापस आए हो। तुम्हारी सब्जियाँ भी बहुत अच्छी दिख रही हैं, बहुत ही स्वादिष्ट होंगी।"

साङकुङा ने, "हाँ, हमें बहुत अच्छी सब्जियाँ मिली हैं। हम आपको भी कुछ दे देते हैं," यह कहते हुए उसने अपना थैला नीचे रख दिया। पी राङी ने मना करते हुए कहा, "अरे नहीं, इसकी कोई जरूरत नहीं है। खेत में जाना कठिन काम है। तुम्हारे परिवार वाले बहुत खुश होंगे, तुम इन सबको अपने घर ले जाओ, हमारे पास खाने के लिए है।"

“क पी, हम जब चाहें फिर से लेने जा सकते हैं। हम वहाँ गए थे जहाँ किसी की जाने की हिम्मत नहीं होती,” कहकर वे जोर-जोर से हँसने लगे। पी राङी ने बड़े आश्चर्य के साथ तुरंत पूछा, “तुम्हारे कहने का क्या मतलब है?”

साङकुङा ने गर्व के साथ कहा, “यह सब विद्रोह के कारण है। लेङ गाँव जिसे खाली कर दिया गया था, हम उस तरफ गए थे। अब उनके लिए वहाँ जाना आसान नहीं रहा, उनके छोड़े हुए खेतों में बहुत अच्छी सब्जियाँ उगी हई थी और हम उन्हें ले आए। क पी, इन सब्जियों के अलावा हमें घाँस के बीच कुछ बर्तन भी मिले,” यह कहते हुए उसने लाई हई सब्जियाँ पी राङी के हाथ में थमा दीं।

पी राङी , साङकुङा के व्यवहार और बात करने के तरीके से चकित होकर कहने लगी, “रुको, कुङा, इसका मतलब यह है कि तुम लोग जो लाए हो वह राललाक (युद्ध के मैदान में लूटी गई वस्तुएँ) है? क्या किसी ईसाई को इस तरह का काम करना शोभा देता है? अगर तुम लोगों ने उसे उठा ही लिया है तो मुझे लगता है कि तुम्हें ये चीजें इनके असली मालिकों को लौटा देना सही होगा। उन्होंने बड़ी मेहनत और थकान के साथ काम किया होगा। उन्होंने जो मेहनत से बोया है, उसका फल उन्हें ही मिलना चाहिए, है ना? हमसे ज्यादा उन्हें इसकी जरूरत होगी। अगर उन्हें अपना सामान वापस मिल गया, तो मुझे विश्वास है कि उन्हें बहुत खुशी होगी।”

ललरुआला ने गुस्से से कहा, “आप बहुत फालतू की बात कर रही हैं। वहाँ जाने के लिए हमने बहुत मेहनत की है, अगर वे चाहें तो वे भी चले जाएँ।” पी राङी ने बड़ी विनम्रता के साथ कहा, “उनके लिए वहाँ जाना सुखद नहीं होगा। उस गाँव को दोबारा देखना उनके लिए बहुत दुखदायी होगा जहाँ वे कई वर्षों से रह रहे थे और जिसे उन्हें मजबूरी में छोड़ना पड़ा था। मुझे बस इसी का डर है कि कहीं तुम लोग परमेश्वर के खिलाफ कुछ न कह दो। हमें हमेशा याद रखना चाहिए कि हमारा परमेश्वर गरीबों की पुकार सुनता है और उनकी परवह व देखभाल करता है।”

ललरुआला को ज्यादा गुस्सा आ गया था, इसलिए वह तैश में आकार कहने लगा, “पी राङ, हमारे माता-पिता ने भी हमें अच्छे संस्कार सिखाए हैं। अगर आप चाहती हैं तो अपने बेटे रोउछुआहा और उसकी प्रेमिका, हमारे गाँव को बदनाम करने वाली दारथङपुई को समझाएँ। कल रात भी आपके बेटे की प्रेमिका कैम्प की तरफ फिर से गई थी।” उसके इन शब्दों ने पी राङी के हृदय को गहरी ठेस पहुँचाई। अपने ही बच्चों की उम्र के लड़के के सामने उनकी बोलती बंद हो गई थी।

साङकुङा थोड़ा हिचकिचाने लगा, और फिर हँसी-मज़ाक के लहजे में कहने लगा, “क पी, अब हम चलते हैं। हमें नहाना भी हैं। ‘राललाक’ का सामान भी हो, पर अब जब हमने ले ही लिया है तो अब इसे रख लीजिए और खा भी लीजिएगा। परमेश्वर को शायद इसकी परवाह नहीं होगी।” इसके बाद वह अपने साथियों को लेकर वहाँ से चला गया।

ललरुआला के बात करने के तरीके से पी राङी को बहुत ठेस पहुँची थी, इसलिए उन्होंने रात का खाना खाते समय कह दी। सब ने माँ की बात सुनी और उन्हें बहुत आश्चर्य हुआ, सबको मन ही मन बहुत अजीब लगा। रात में भी वे तपछक के पास बैठ गए। फिर, रोउछुआहा की लगभग किशोर बहन ने अचानक कहा, “हाँ, मेरे दोस्त भी उ[59] दारपुई की खबरों का इस्तेमाल मुझे चिढ़ाने के लिए करते हैं। लेकिन, मैं भैया की भावनाओं को ठेस नहीं पहुँचाना चाहती थी, इसलिए मैं अब तक चुप हूँ।”

तब रोउछुआहा का मन व्याकुल हो गया। अब क्या किया जाए? चाहे लोग कुछ भी कहें, वह इसे सच नहीं मान सकता था। लेकिन, क्या उसकी चाहत ने उसे पूरी तरह से अंधा कर दिया था? क्या सच पर प्रेम हावी हो गया है? क्या उनके गाँव को सुशोभित करने वाली एक सुशील और खूबसूरत युवती, दारथङपुई के मन में ज़हरीले साँप ने अपनी जगह बना ली है? यदि गपशप सच नहीं हुई, तो रोउछुआहा वह व्यक्ति बनना नहीं चाहता था जो उसे तब छोड़ दे जब उसे मदद की सबसे ज्यादा जरूरत थी। साथ ही, जब उस पर आरोप लगाया जा रहे थे, तब उन्हें स्वीकार करना कठिन था और उसे यह सहीं भी नहीं लग रहा था।

रात भर वह बहुत उलझन में रहा और सोचता रहा। उसने अपनी परेशानी परमेश्वर को सौंप दी। सुबह मुर्गे की बांग तक वह अपने बिस्तर पर करवटें बदलता रहा और एक पल के लिए भी अपनी आँखें नहीं झपकाई। वह अपने माता-पिता का मुख्य सहारा था, और वह जानता था कि परिवार की इच्छा के विरुद्ध जाकर दारपुई को अपनाना बहुत स्वार्थी होगा। लेकिन, इससे पहले दारपुई कभी बदनाम नहीं हुई थी। क्या वह यह मान पाएगा कि वह ऐसी झंझट में फसेगी जिसका उस पर आरोप लगाया गया है? उसका मानना था कि यह सब निश्चित रूप से लोगों की ईर्ष्या के कारण हो रहा है।

उसने सोचा, 'जब तक मैं अपनी आँखों से न देख लूँ और अपने कानों से न सुन लूँ, तब तक मैं दारपुई के बारे जो कहा जा रहा है, उन बातों को स्वीकार नहीं कर सकता। मुझे सबूत चाहिए।' नींद न आने के कारण वह दबे पाँव सुमह्लुन की ओर निकल गया। वह एकटक आसमान की और देखता रहा। उसका मन बहुत उलझ हुआ था। उनके जैसे छोटे से गाँव में, यदि एक व्यक्ति को पता चलता है, तो पूरे गाँव को पता चल जाता हैं। समय के साथ बदनामी मिट सकती है, लेकिन, वह समय कब आएगा? कहा जाता हैं कि समय मारे हुए के याद की दुख को कम कर देता है, लेकिन किसी के लिए समय का यह एक या दो साल हो सकता है, और किसी के लिए यह कहीं अधिक लंबा समय होता है। इंसानों के लिए समय का प्रभाव कितना अलग-अलग होता है! रोउछुआहा ने भी ठान लिया था कि जब तक दारपुई के बारे में उसे सच्चाई का पता नहीं चलता, वह दारपुई का साथ नहीं छोड़ेगा। उसे यकीन था कि यह सब दूसरों के द्वारा फैलाया गया झूठ है। वह धीरे-धीरे फुसफुसाने लगा -

मैं तुम्हें अपनी शुभकामनाएँ और सुरक्षा अर्पित करता हूँ,

जो हमेशा तुम्हारे साथ रहेगी,

सृष्टिकर्ता ने तुम्हें पूर्ण सौन्दर्य से सजाया है।

केवल मैं ही नहीं,

तुम्हारे माता-पिता भी तुम्हारी प्रशंसा करना नहीं छोड़ते।

युवक तुम्हें ही देखते और युवतियाँ तुमसे ईर्ष्या करते,

लेकिन, तुम्हारे स्तर तक कोई नहीं पहुँच सकता।

स्वर्ग के फ़रिश्ते भी तुमसे ईर्ष्या करते।

फ़रिश्ते भी तुम्हारे लिए अपने द्वार खोल देते,

क्या वे रास्ते में बाधा नहीं बनेंगे... अपने प्रेम का संदेश साझा कर रहे।

दुनिया की आलोचनाओं की परवाह नहीं करता,

उन्हें पुराने कपड़ों की तरह त्याग दिया है,

सुंदरी के कदमों के साथ चलने के लिए।

वह कॉल एङ (भोर या संध्या से पहले जो सूर्य की किरणों से बनने वाली आसमान में प्रकाश)को निहारता रहा। अपने परिवार के जागने से पहले ही वह वापस सोने के लिए अंदर चला गया।

उनके प्रेम का मार्ग आसान नहीं था। ऊपर से, जब भी भूमिगत मिज़ो सेना द्वारा की जाने वाली धरपकड़ के कारण उन्हें सरेंडर करना पड़ता था, इन सब स्थितियों से अब रोउछुआहा, उनके अपने जीवन के इस दौर से ऊब रहा था। सच भी सामने नहीं आ रहा था। ऐसा भी लग रहा था मानो हर गुजरता दिन के साथ गाँव वालों के पास दारपुई के बारे में कहने के लिए और भी बुरी बातें मिल रही थीं। वह मन ही मन सोच में डूब गया कि 'हमें ऐसे समय से क्यों जूदर रहे हैं?'

दारपुई के बारे में अफवाहें इतनी फैल गई थी कि ठूआमी और कापमोई को भी बहुत बुरा लग रहा था। जैसा कि बुजुर्गों से कहा है, 'यदि कोई वेश्या पेड़ के पास भी अपना गुनाह कबूल कर ले, तो ईश्वर भी उसे माफ कर देता है,' इसलिए, वे किसी के सामने सच्चाई बताना चाहते थे कि

उन्होंने अपने देश और जाति, अपने गाँव और अपने लोगों की रक्षा के लिए क्या किया था। लेकिन, वे किस पर भरोसा करते? अगर वे किसी पर भरोसा भी करते, उन्हें बदनाम होना ही था। इस दुनिया में कोई भी भरोसेमंद नहीं नहीं है! हर कोई सिर्फ अपने भले की सोच रखने वाले हैं।

एक शनिवार की शाम, जब रोउछुआहा गाँव के बाहर टहलने के बाद वापस आ रहा था, उसने अचानक दारपुई और उसकी चचेरी बहन छीङखूमी को सेना के कैम्प वाले पर्वत से एक साथ नीचे आते हुए देखा। वह बहुत हैरान था, उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। लेकिन चूँकि वह बीच रास्ते में सो न गया हो और न ही कोई सपना देख रहा था, इसलिए उसे विश्वास करना पड़ा। ध्यान से देखने के बाद भी वह दारपुई ही थी। ऐसा क्यों हो रहा था, उसे सबूत चाहिए था, है न? शायद ही उसका सबूत होगा! चूँकि वह उस रास्ते पर था जहाँ दारपुई आने वाली थी, इसलिए उन्हें मिलना ही था। लेकिन, उसे लगा कि इस समय उनका मिलना सही नहीं होगा, इसलिए वह पु खमलिआना के घर के पीछे छिप गया।

जब वह किसी के बदबूदार और सँकरे घर के पीछे खड़ा था, तब उसने गहराई से सोचा। दारपुई के पक्ष लेने के जुनून ने उसने अपने माता-पिता भावनाओं को ठेस पहुँचाया साथ ही वह परमेश्वर से भी शिकायत करने लगा था। उसने अपने दोस्त ड्ऱा से यहाँ तक कह दिया था कि वह हमारी मुश्किलों को दूर करना नहीं चाहता, इसलिए मुझे लगता है कि अब मैं परमेश्वर के प्रति वफादार नहीं हो पा रहा है। उसने परमेश्वर से सच्चाई दिखाने के लिए भी प्रार्थना किया था। लेकिन, परमेश्वर के सही समय का इंतजार करना उसे कठिन लगने लगा था कि उसने अपनी इच्छा के अनुसार कई चीजों पर अपनी राय बना लिया था और जो भी हो उसने दारपुई को स्वीकार करने का फैसला बना लिया था।

दारपुई और उसकी बहन उसकी ओर ही आ रहे थे। वह उन्हें तब तक देखता रहा जब तक वे उसके पास से गुजर नहीं गए। जब वह अपने प्रेमिका को निहार रहा था तब उसे लगा कि उसके मन में पु खोला के प्रवचन ने उसे उल्टा मारा हो, ‘‘क्या तुमने परमेश्वर से सत्य नहीं पूछा? फिर तुम्हें संदेह

क्यों है? जिस परमेश्वर की तुम आराधना करते हो वह विश्वासयोग्य है। आज रात तुम इतने निराश क्यों हो? क्योंकि अब तुम परमेश्वर की आवाज नहीं सुन पा रहे हो। परमेश्वर की आवाज़ सुनने के लिए, हमें अपने आध्यात्मिक कानों को खुला रखना चाहिए। परमेश्वर के लिए समय और स्थान निकालें। पूर्ण उद्धार पाने के लिए आपको एक आज्ञाकारी जीवन जीना होगा; अपने हृदय के इसहाक का त्याग करो और परमेश्वर के सामने पूरी तरह समर्पित होकर प्रकट होने का साहस करो।"

अब्राहिम की नज़रों में उनके पुत्र इसहाक, जो उनके बुढ़ापे में हुआ था, से अधिक सुंदर और प्रिय इस पूरी दुनिया में कोई और नहीं था। उसके हृदय का सबसे प्रिय इसहाक था। और ठीक इसी बात का उपयोग परमेश्वर यहोवा ने अब्राहिम की परीक्षा लेने के लिए की थी। उन्होंने अब्राहिम से अपने प्रिय पुत्र को बलिदान करने के लिए कहा। अब्राहिम के लिए यह कितना कष्टदायक रहा होगा! अत्यंत दुखी मन और रोते हुए हृदय के साथ, वह अपने परमेश्वर की आज्ञा का पालन करने के लिए तैयारी करने लगा। ओ माताओं, पिताओं, युवकों और युवतियों, ज़रा इसके बारे में सोचिए। दुनिया में अपनी सबसे बहुमूल्य संपत्ति कॉ त्यागना कितना कठिन होगा! परंतु अब्राहिम अपने उस परमेश्वर को अच्छी तरह से जानता था, जिसकी वह आराधना करते है कि उनकी आज्ञा को इनकार नहीं कर सका। फिर, भारी मन के साथ, वे मोरिया पर्वत पर परमेश्वर के लिए अपने बेटे इसहाक को होम-बलि के रूप में चढ़ाने के लिए निकल पड़े।"

"उस समय अब्राहिम की मानसिक स्थिति और परिस्थिति ईर्ष्या करने योग्य नहीं थी! लेकिन, प्रभु पर उनके विश्वास ने उन्हें एक विश्वासी के जीवन में सबसे अधिक प्रशंसनीय बना दिया है। ओ, भाइयों और बहनों, यहोवा चाहता है कि हम भी अब्राहिम की तरह, अपनी सबसे कीमती संपत्ति को त्यागने के लिए तैयार रहें। उन तक पहुँचने के लिए आपको और मुझको अपने हृदय का इसहाक को बलिदान करने के लिए तैयार रहना चाहिए। तब यहोवा का वचन हम तक पहुँचेगा। यद्यपि अब्राहिम इसहाक की बलि देने के लिए तैयार था, लेकिन उन्होंने उसे खोया नहीं। आज भी, कई जातियों के पिता अब्राहिम की कहानी सबसे महान कहानियों में एक बनी हुई है।"

“अब आप ईश्वर से जो अपनी इच्छाओं और जरूरतों का उत्तर जानना चाहते हैं, अपने हृदय के इसहाक को फेंक दे और खाली दिल से, आध्यात्मिक कानों से परमेश्वर की आवाज सुने। उनकी आवाज़ ही परमेश्वर की प्रतिज्ञा और उद्देश्य है। यदि आपके हृदय में उनके अलावा कोई और चीज़ अधिक महत्त्वपूर्ण है, तो आपके और उनके बीच का रिश्ता कभी भी गहरा नहीं होगा। हम जानते हैं कि पूर्ण रूप से चांगई पाने के लिए आज्ञाकारिता आवश्यक है। जिस प्रकार डॉक्टरों द्वारा दी गई दवाओं से ठीक होने के लिए भी मरीज को उनके निर्देशों का पालन करना पड़ता है, उसी प्रकार परमेश्वर आपको अपने हृदय के इसहाक को जलाने के लिए आमंत्रित रहे हैं ताकि आप उनकी आज्ञा का पालन कर सकें और उनके लिए जी सकें।”

कभी-कभी परमेश्वर की पुकार को समझने के लिए हमें विभिन्न माध्यमों की आवश्यकता होती है। हमारा मानव मन भी यह समझता हैं कि उनके ऊपर किसी ओर चीज को चुनना या रखना अच्छी और सहीं बात नहीं है। यदि हम अपने प्रियजनों के करण दुखी होते हैं, तो परमेश्वर, जिसने हमारे लिए अपना एकलौता पुत्र दिया और हमारे लिए एक सुंदर घर तैयार करने वाला, क्या वह हमारे कारण दुखी हीं होगा?

(12)

देश और राष्ट्र अशांत था। हर गाँव में उथल-पुथल मची हुई थी। हर व्यक्ति को अपनी सुरक्षा के बारे में सोचना पड़ रहा था। देश और जाति की रक्षा के लिए निकली भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों को अनेक कठिनाइयों का सामना कर रहे थे। आम जनता को भी लगातार शारीरिक कष्ट सहना पड़ रहा था। महिलाओं और बुजुर्ग डरे हुए थे। महिलाओं की गरिमा को बार-बार ठेस पहुँचाई गई और अपमानित किया गया। युवक-युवतियाँ भी सैनिकों के हाथों सुरक्षित नहीं थे। भोजन और पानी की समस्या थी। उस समय किसी परिवार में मृत्यु होना एक भयानक और चरम स्थिति थी। किसी को भी

एक-दूसरे को सांत्वना देने की हिम्मत नहीं हुई। शोक संतप्त परिवार को भी चुपचाप अकेले ही अपना पीड़ा अकेले सहना पड़ रहा था।

विभिन्न गाँवों के लोगों का अलग-अलग समूह बनाया जा रहा था। गाँवों के जलाएं जाने की खबरें लगातार मिल रही थी। वे गाँव में भारतीय सेना के डर से रहते थे, उसी के बीच भूमिगत मिज़ो विद्रोही भोजन और अन्य जरूरतों की माँग कर रहे थे, और अगर उन्हें देने से इनकार कर दिया तो उन्हें धमकी देकर डराया जाता था।

ऐसी भारी उथल-पुथल के बीच, रोउछुआहा और दारपुई भी प्यार के कारण घायल मन के साथ जी रहे थे। उस प्यार में एक गहरा दर्द और ज़ख्म था। और उनका यह घाव पूरे समुदाय के सामने फैल गया। इससे परेशानी, कष्ट और दुःख पैदा हो गया।

बिना किसी स्पष्ट कारण के जब कई दिनों तक रोउछुआहा का चेहरा नहीं देखा और न उसकी खबर सुनी, दारपुई को आश्चर्य हुआ। अब वह बिस्तर पर आराम की जरूरत जितनी जख्म भी नहीं था। यहाँ तक कि जब उसकी मुलाकात ङूरा से हुआ था, तब उसने उसे रोउछुआहा के बिमारी के बारे में नहीं बताया था। वह इस बात से बहुत चिंतित थी कि आखिर क्या हुआ होगा। लेकिन उसे अपनी मानसिक उलझनों को भी छिपाकर रखनी पड़ी थी। उसके जैसी युवतियों के लिए अपने प्रेम संबंधी परेशानियों को किसी और को बताना संभव नहीं था।

दिन बीतता गया और दारपुई की चिंता बढ़ती गई। हालाँकि उसने खुद को यह समझाने की कोशिश की कि वह कभी उसके घर आ जाएगा, लेकिन अब उसे खुद पर और अपनी उम्मीदों पर भरोसा नहीं रहा था। घरेलू काम करते हुए भी वह गहराई से इस बारे में सोचती रहती। उसे लगा कि अपनी पूरी हिम्मत के साथ रोउछुआहा से सीधे मिलने जाना ही अच्छा होगा। उसने सोचा कि उस शाम पानी भरने के लिए जाते समय उसे कैसे मिला जाए। लेकिन, फिर उसे डर लगा कि अगर लोगों को इस बात का पता चल गया तो उसे कितनी निर्लज्ज सोचेंगे! सब से उसे बेशर्म औरत कहकर

घोषणा करेंगे! वे एक मुश्किल परिस्थिति में फासी हुई थी, और उसे अपना जीवन बड़े ही सावधानी से जीना था, वह दुखी मन से सोचने लगी कि रोउछुआहा समझ से परे व्यवहार क्यों कर रहा है। रोउछुआहा के प्रति उसे गुस्सा होने लगा। वह मन ही मन सोच रही थी कि 'जब मैं उससे मिलूँगी तब उसे बहुत जोर से डाटूँगी'। इस बीच अचानक से उसकी सहेली ज़ेली वहाँ आ पहुँची।

दारपुई ने तुरंत बैठने की जगह दिखाते हुए कहा, "अरे सहेली, आओ बैठो। मुझे तुम्हारी बहुत जरूरत थी।" ज़ेली भी दारपुई के बगल बैठकर धागा लपेटने में अपनी सहेली की मदद करने लगी। उसने हँसते हुए कहा, "तुम्हें मेरी क्या जरूरत पड़ गई?" लेकिन, जब अपनी सहेली का गंभीर चेहरा देखा, तो उसकी हँसी तुरंत रुक गई और वह चुपचाप रुई लपेटने लगी।

"सहेली, मुझे रोउछुआहा से मिले बहुत समय हो गया है। मुझे कुछ सही नहीं लग रहा है। मेरे बारे में जो अफवाह फैल रही है, तुम्हें सब कुछ पता है, मुझे लगता है कि उसके माता-पिता ने शायद इस कारण कोई समस्या खड़ा कर दिया हैं। लेकिन, मुझे बिना कुछ बताए उसका इस तरह खामोश हो जाना समझ नहीं आ रहा है। मैं चाहती हूँ कि तुम उसे देखने या उससे मिलने का कोई तरीका सोचने में मेरी मदद करो। क्या तुम मेरे लिए कर सकती हो?" कहकर दारपुई ने अपनी सहेली ज़ेली से अनुरोध किया। ज़ेली ने तुरंत उत्तर दिया, "अच्छा, तो यह बात है! लेकिन, हम महिलाओं की स्थिति बहुत ही जटिल है, अगर हम अपनी मर्ज़ी से किसी लड़कों से मिलने की कोशिश करें, तो लोग हमारी बुराई करना शुरू कर देते हैं। हमें क्या करना चाहिए होगा?"

दारपुई ने कहा, "यही तो मेरी समस्या है। मेरी पहले ही काफी बदनामी हो चुकी है। रोउछुआहा से मिलने जाना या उसे बुलाना अब सही भी नहीं है। मुझे तुम्हारी मदद चाहिए। आज शाम मुझे पानी भरने जाना है, कृपया कुछ उपाय सोचो ताकि वहाँ उससे मेरी बात हो सके।"

ज़ेली ने कहा, "ठीक है, जहाँ तक मैं कर सकती हूँ, मैं हमेशा तुम्हारे साथ रहूँगी। यह तुम्हारे लिए जितना है, उससे कहीं अधिक मेरे लिए शोभा देता है। तुम बिल्कुल भी चिंता मत करो, मैं उसे

तुम्हारे लिए बुलाऊँगी।” ज़ेली के ऐसे कहने पर दारपुई को काफी राहत महसूस हुई। उसी समय, दारपुई की माँ, पी मोईई हड़बड़ी और घबराहट में दौड़ती हुई अंदर आई, उन्होंने अपने साथ कुछ कपड़े भी साथ लाई थी। दारपुई और उसकी सहेली बड़ी हैरानी से उन्हें देखते रहे। अपने बेटी के “माँ, क्या बात है?” जैसे सवाल का जवाब दिए बिना उन्होंने अपने साथ लाए हुए कपड़ों को घर के रपचुङ[60] पर रखी हुई लकड़ियों और रपचुङ की उत्तरी दीवार के बीच जल्दी से ठूँसने लगी। उनकी व्यवहार से दारपुई और उसकी सहली समझ गई कि कुछ गड़बड़ है, इसलिए दोनों जल्दी से उनकी मदद करने लगी। घुसए हुए कपड़ों को ढकने के लिए सामने बीज के डिब्बे और अन्य कुछ वस्तुएँ रख दिया। सब चुप रहे। लेकिन, वे अपने काम में पूरी तरह एकजुट थे। चूँकि उन्हें अक्सर ऐसी स्थिति का सामना करना पड़ता था, इसलिए सवाल पूछने या सवालों का जवाब देने का समय नहीं होता था। ऐसे में शांत दिमाग से तुरंत कदम उठाना जरूरी होता था।

अपने इच्छानुसार व्यवस्थित करने के बाद थुक[61] में पड़े चाय के बर्तन से चाय डालने लगी। ज़ेली और दारपुई की माँ तुरंत धागों को लपेटने लगीं। चाय की प्याली लेकर बैठते हुए दारपुई ने धीरे से पूछा, “माँ, वे लोग कहाँ हैं?” दरवाजे की ओर नज़र चुराते हुए उसकी माँ ने कहा, “पु त्लाङखूमा के घर पर अभी खाना खा रहे होंगे। यदि हम उनके कपड़े आपस में बाँटकर नहीं छिपाते, तो हमें नहीं लगता कि सेना के आ जाने पर पु ठ्रीअङा का परिवार इसे पूरी तरह छिपा पाता।”

ज़ेली पूछने लगी, “हाय, मुझे बिल्कुल भी अच्छा नहीं लग रहा है! वैसे, पी मोई, वे लोग कब तक रुकने वाले हैं?” पी मोई ने धीरे से कहा, “अगर आज पूरे दिन सैनिकों को कुछ पता नहीं चलता, तो उन्होंने रात का खाना खाने के बाद जाने की योजना बनाया हैं।”

“रात का खाना खाने के बाद,” दारपुई ने धीरे से कहा। सब का विचार एक जैसा था। अभी तो दोपहर की शुरुआत ही हुई थी, और रात के खाने का समय तो बहुत बहुत ही दूर की बात थी। अब उन्हें डरे हुए मन के साथ सूरज ढलने और अंधेरा होने का इंतज़ार करना होगा! कोकतु जैसे लोग, जो सेना का प्रिय बनने की कोशिश में रहते थे और जो किसी बिना पछतावे के साथ आम

आदमी को वॉलन्टियर कहकर आरोप लगा सकते थे, अगर उन्हें इस बात का पता चल गया कि पुत्लाङखूमा के घर में दस वॉलन्टियर में भोजन कर रहे हैं, तो आगे उनकी क्या स्थिति होने वाली है, यह सोचकर ही वे डरे थे। दारपुई ने थोड़ा मायूस होकर फिर कहा, "क्या वे गाँव में आए बिना सीधे अपनी मंजिल की ओर नहीं जा सकते थे?" तब उसकी माँ ने बड़े ही नर्म से कहा, "लाबोईह्, ऐसा नहीं कहते। जब हमारे अपने लोग भूखे हो, तो हमें उन्हें खिलाना चाहिए। अगर उनके पास पहनने के लिए कपड़े नहीं हैं, तो हमें उनके लिए इंतेजाम करना चाहिए। आखिरकार, वॉलन्टियर हमारे लिए ही काम कर रहे हैं, वे हमारे सुख-सुविधा के लिए मुश्किलें सह रहे हैं। हमें अपनी आखिरी सांस तक उनका साथ देना है।" लेकिन, दारपुई ने विरोध किया और कहा, "माँ, आप जैसा सोच रही है, मेरे लिए वैसा सोचना मुश्किल है। मुझे उनके कष्टों पर दया तो आता है। लेकिन, मुझे नहीं लगता कि वे हमारे समुदाय के कष्टों की भरपायी नहीं कर पाएँगे। और साथ ही मेरे इन बदनामों को वे कैसे हटाएँगे? उनके वजह से हमारे मन का जो भय है, वह भी। अभी भी...,"

ज़ेली ने भी अपने सहेली की भावनाओं को समझते हुए कहा, "यह सच है। हमारे देश के लिए चाहे वे लड़ाई कर रहे हो, उनके लड़ाई के कारण हमारे देश और जाति ने जो दुख झेले हैं, उन्हें सुधारणा अब बहुत ही कठिन होगा। व्यक्तिगत रूप से भी कितने लोगों ने कष्ट सहे हैं।"

पी मोईई ने वॉलन्टियर के एक महान सोच का साझा करते हुए कहा, "वास्तव में वे ही हैं जो सबसे अधिक कष्ट सह रहे हैं और जंगलों में हमारे लिए अपनी जान नयाछवार कर रहे हैं। वे निरंतर भयभीत मन के साथ जंगलों में रह रहे हैं। वे हमारे लिए भूख और प्यास सहते हुए बंदूकें उठाए हुए हैं। हमारे पास एक महान देश हो, और हमारे द्वारा चुने गए अच्छे नेता हमारे देश और जाति कि भलाई को देखते हुए हमें एक महान राष्ट्र की ओर ले जाने और हमें दूसरे देशों के नेता के सामने न झुकने के लिए ही तो वे कड़ी मेहनत कर रहे हैं।" पी मोईई अपनी बेटी और उसकी सहेली के मन को प्रभावित करने की कोशिश कर रही थी, लेकिन वह सफल नहीं हो पाई। फिर भी, केवल इस कारण से यह नहीं कहा जा सकता था कि दारपुई और उसकी सहेली अपने देश और जाति के प्रति समर्पित नहीं थे।

उनके जैसी साधारण और सीधे-साधे युवतियों के लिए वॉलन्टियरों जैसी सोच रखना वास्तव में एक कठिन काम था। जब उनकी अपनी कुछ भूमिगत विद्रोहियों के बीच भी अक्सर ऐसे लोग होते थे जो अपने देश और जाति के प्रति सच्चे प्रेम की भावना को पूरी तरह से खो देते थे, ऐसे में स्थानीय लोग जिन्होंने उनके कारण इतना कष्ट सहा है, वॉलन्टियरों जैसी भावना को हमेशा कैसे रख सकते हैं? कई महिलाएँ जिन्होंने बलात्कार के कारण अपना पवित्रता खो दिया और जिन्होंने अपनी जान गँवा दी, उन्हें कभी भी अपना जीवन, अपना सम्मान और पवित्रता वापस नहीं मिलेगी।

वे अपने जलते हुए गाँवों को आँखों में बसाए हुए इंडिपेंडेंस का जश्न मनाएंगे। वे अपने भाइयों, पतियों और पिताओं की याद में जश्न का प्याला उठाएंगे जो सैनिकों के हाथों मारे गए। वे उस इंडिपेंडेंस की खुशी में नाचेंगे, यह याद करते हुए कि कैसे उनके शरीरों शरीर को बिना किसी दया या प्रेम के अपने आनंद के लिए प्रयोग किए थे! यह निश्चित रूप से एक बहुत ही कठिन बात होगी। लेकिन, उन्होंने इसे चुनौती दिया, उन्हें लुभाने की हिम्मत की, वे इसमें पूरी तरह डूब गए और अब सब कुछ हो चुका है इसलिए अब पीछे हटना संभव नहीं है। इसलिए उन्हें अपनी विभिन्न पीड़ाओं को याद करते हुए इंडिपेंडेंस का जश्न मनाना ही होगा। लेकिन वह दिन कब आएगा? वॉलन्टियरों और स्थानीय लोगों को यह अहसास तक नहीं था कि वे उस इंडिपेंडेंस को कभी नहीं देख पाएंगे जिसके लिए उन्होंने अपना जीवन, अपनी पवित्रता, अपने घरों और अपना सब कुछ का बलिदान कर दिया है।

उस दिन जो लोग जानते थे कि वॉलन्टियर उनके बीच रह रहे हैं, उन्होंने घबराहट और डर में समय बिताया। लेकिन, सौभाग्य से सैनिकों को इस बारे में जानकारी नहीं मिलने के कारण, उस रात, लगभग आधी रात के करीब वॉलन्टियर वहाँ से निकल गए। कुछ कारणों से उसकी माँ ने भी दारपुई को पानी भरने के लिए जाने नहीं दिया इसलिए रोउछुआहा से भी मुलाकात नहीं हो सकी। ज़ेली ने फिर भी अगली सुबह पानी भरते समय मिलने का इंतज़ाम कर दिया था। यह दारपुई के लिए खुशखबरी थी।

क्या उन तमाम विचारों को शब्दों में व्यक्त कर पाएगी जो रात भर बिना सोये उसने सोचा था? वह बड़े उत्साह लेकिन झिझकते हुए सुबह मुर्गे की बांग के साथ तुईखुर की तरफ निकलने के लिए तैयार होने लगी। जैसे ही सैनिकों ने सुबह बाहर जाने की अनुमति दी, वह तुईखुर की ओर चल पड़ी। क्या रोउछुआहा वहाँ होगा? क्या वह मिलने के लिए उत्सुक होगा? इतने दिनों तक उनके न मिलने का कारण सोचते हुए वह जाने लगी। अगर उनके न मिलने का कारण केवल उसके माता-पिता हो गए तो वे आगे क्या करेंगे?भले ही लोगों द्वारा फैलाई गई अफवाह झूठी थी, लेकिन इसका कोई सबूत नहीं है। सिर्फ खुद को निर्दोष बताने से कोई खास फर्क नहीं पड़ने वाला था।

जब वह तुईखुर पर पहुँची तो वहाँ कोई नहीं था। तभी घनी झाड़ियों से रोउछुआहा भी धूँआ उड़ाते हुए बाहर आया। दारपुई इसी घड़ी का इंतज़ार कर रही थी लेकिन उसके पास कहने के लिए कुछ भी नहीं था। तभी रोउछुआहा ने सीधे तौर पर पूछा, “इन सब के होने के बाद भी, क्या तुम्हें अब भी मेरी जरूरत है?” दारपुई हकबकी सी रह गई। उसके लिए बोलना और भी कठिन हो गया। रोउछुआहा ने फिर से कहा, “क्या तुमने मुझे यहाँ केवल इसी तरह चुप रहने के लिए बुलाया है?”

“मुझे लगा कि तुम्हारे पास कहने के लिए कुछ होगा,” दारपुई ने बड़ी घबराहट के साथ कहा। उसके जवाब से रोउछुआहा हैरान हो गया और उसे देखता रहा। कपड़ा धोने के लिए प्रयोग किए जाने वाले एक बड़ा सपाट पत्थर पर बैठकर रोउछुआहा ने कहा, “हाँ, कहने के लिए तो मेरे पास बहुत कुछ है। मैंने तुम्हें मेरे प्यार का जो खूबसूरत फूल दिया था, तुमने उसे ज़मीन पर क्यों फेंक दिया!? वह फूल किसी के द्वारा छुआ नहीं गया था, वह ओस की बूंदों और साफ झरने से सींचा गया था। और तुम उसे अपने जीवन भर उसकी देखभाल करने के लिए मैंने तुम्हें सौंपा था। लेकिन, तुम उसकी देखभाल नहीं करना चाहती इसलिए तुमने उसे ज़मीन पर फैंक दिया जहाँ वह कड़ी धूप, बारिश, धूल और हवा के झोंकों से इधर-उधर उड़े और तुम उसे और कुचल रही हो।”

उसकी बातें सुनकर दारपुई का दिल टूट गया, जो उससे मिलने का बेसब्री से इंतज़ार कर रही थी। काफी देर बाद दारपुई ने कहा, “रोउ, मुझे तुम्हारी बात समझ नहीं आ रहा है। जिस दिन से तुमने

मुझे वह सुंदर फूल दिया था, तब से मैंने कभी भी उसे चोट नहीं पहुंचाई। तुम्हें भी पता है कि सिर्फ हाथों में ही नहीं, बल्कि मैंने उसे अपने दिल के सबसे सुरक्षित कोने में बंद करके रखा है, क्योंकि उसकी चाबी तुम्हारे ही पास है।"

रोउछुआहा चुपके से जानता था कि प्यार की वजह से वह अब तक अंधा बना हुआ था। उसने दारपुई और रमज़ाउई, दोनों को सेना के कैम्प से नीचे आते हुए अपनी आँखों से देख लिया था इसलिए अब वह अपने प्रेमिका के प्यार के कारण अपनी आँखों पर पर्दा नहीं डालना चाहता था। लेकिन, जब उस खूबसूरत युवती ने इतने प्यार से उसके प्यार को स्वीकारने की बात कही, तब उसे पता था कि अपने दिल को कठोर बनाना मुश्किल होगा। उसके सामने खड़ी एक सुंदर लंबे बाल वाली, गोल चहरा और चमकती आँखें, लाल होंठ वाली युवती के पास ज्यादा देर रुकना भी उसे कठिन लग रहा था। इसलिए उसने वहाँ से जल्दी चले जाने के बारे में सोचा। लेकिन, दारपुई ने कहा, "कृपया मुझे साफ-साफ समझाओ। सच में मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा है। मुझे बस इतना पता है कि तुम मुझसे प्यार करते थे और अब तुम मुझसे दूर जा रहे हो।" दारपुई के इन शब्दों को सुनकर रोउछुआहा का मन चिंतित हो उठा।

वह उलझन में था कि क्या उसे वह सब बता देना चाहिए जो उसने उसे वाई कैम्प से नीचे आते हुए देखा था। अंत में उसने सोचा कि उसे सच बताकर रिश्ता खत्म कर देना ही बेहतर है, इसलिए वह कहने लगा, "तुम्हारे बारे में जो अफवाहें फैली हुई है, उसके बारे में मैं क्या सोचता हूँ, तुम्हें सब कुछ पता है और यहाँ तक कि अपने परिवार के सामने भी मैं हमेशा तुम्हारा ही साथ देता रहा। लेकिन, दारपुई, अब मैं समझ गया हूँ कि प्यार ने मेरी आँखों पर पत्ती बाँध दी थी। मैंने कभी सोचा नहीं था कि तुम इस तरह गैर-मिज़ो को अपना दिल दे दोगी, शायद यह मेरी ही मूर्खता थी। दारपुई, मुझे लगता है कि मेरे साथ रहने से ज्यादा सुख-सुविधायें मिलेगी। इस लालची दुनिया में जहाँ बड़े-बड़े पुरुष भी अपने फायदे के लिए सैनिकों का सहारा ले रहे हैं वहाँ तुम जैसे एक कोमल और

सुंदर युवती, जिसे हमेशा किसी की सुरक्षा की जरूरत होती है, वह अपनी इस सुंदरता का क्यों न फायदा उठाएगी!"

"अरे! रोछुआह, तुम यह क्या कह रहे हो? क्या आप भी धोखा खा गए हो?" दारपुई की आँखे फटी की फटी रह गई। उसे समझ नहीं आ रहा था कि वह क्या कहे। अपने प्रेमी के मुँह से ऐसी बातें सुनकर उसे गहरा सदमा लगा था। रोउछुआहा भी दारपुई से आँखें नहीं मिला पा रहा था। उसने जवाब दिया, "हाँ, कौन किसे धोखा दे रहा है, यह हमें जल्द ही पता चल जाएगा। हम इंसानों को धोखा दिया जा सकता है, भले ही वे सच जाने बिना हमेशा के लिए धोके में भी रह सकते हैं, लेकिन, परमेश्वर कभी भी अपने प्रिय संतान को पूरी तरह धोखा नहीं देने देंगे। इसलिए, उन्होंने अब मेरी आँखें खोल दी होगी।"

"नहीं, रोछुआह, तुम्हारे दिल में यह झूठ किसने बोया है। कृपया मुझ पर विश्वास करो। आप ही अकेले ऐसे व्यक्ति व्यक्ति है जो मेरी सच्चाई साबित करने में मेरी सहारा है और मुझ पर भरोसा रखने वाले है।"

"मुझे खेद है। मैं अब और धोके में नहीं रह सकता। किसी और ने मेरा दिल नहीं जीता है। अगर कोई विजेता है तो वह तुम ही हो। प्यार कि वजह से तुमने मेरा दिल जीता था। अब दूसरी बार सच का पता चलने के लिए तुमने इसे जीत लिया है। इसे समझने की कोशिश करो।"

"मैंने!? आपके कहने का क्या मतलब है? मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा है!"

"पिछले कुछ दिनों पहले तुम अपने रिश्तेदार रमज़ाउई के साथ सेना कैम्प गई थी। दिन दहाड़े में भी तुम्हें वहाँ जाने में शर्म महसूस नहीं हुई, यह देखकर मुझे जो दुःख हुआ है तुम उसका अंदाज़ा भी नहीं लगा सकती। मुझे लोगों की बातों पर विश्वास नहीं होता था, लेकिन इस बार मैंने केवल कानों से ही नहीं, अपनी आँखों से सबूत देख लिया है।"

तब दारपुई ने चौंकते हुए और तुरंत अपनी सफाई देते हुए कहा, “क्या अअपने मुझे उस दिन देखा था? हाँ, हम सच में वहाँ गए थे। लेकिन, यह दूसरों के बातों को सच बनाने के लिए नहीं था। हमारी पड़ोसन, बूढ़ी पी ज़ाह्नूनी की पेट खराब थी, इसलिए हम उसके लिए सेना चिकित्सक से मूम-उक (कब्ज की दवा) लेने गए थे। रमज़ाउई भी तुम्हें सच बता सकती है।” लेकिन, उस पर रोउछुआहा इतनी जल्दी भरोसा नहीं करना चाहता था। वह मन ही मन सोच रहा था कि ऐसी बिगड़ी हुई औरत मुझे धोखा देने के लिए कुछ भी कह सकती है।

“दारपुई, मेरे पास समझने के लिए बहुत सी चीजें नहीं बची हैं, इसलिए मैं अब तुम पर इतनी आसानी से भरोसा नहीं कर सकता। मुझे समझने की कोशिश करो, अब मैं चलता हूँ,” यह कहकर वह तुरंत उठ गया। दारपुई ने उससे विनती की, “कृपया मेरी बात पर विश्वास करने की कोशिश करो, मेरी सच्चाई जानने के लिए रमज़ाउई से भी मिल लेना।” रोउछुआहा को जाते हुए देख ही रही थी कि उसने उसे फिर से पुकारा, “रोछुआह, रुको, अब मैं भी जाने के लिए तैयार हूँ। थोड़ी देर के लिए ही सही, साथ चलते हैं।” लेकिन रोउछुआहा ने दवाब दिया, “तुम खुद ही घर चली जाओ। हमारा साथ चलना अब और शौभा नहीं देता,” यह कहकर उसे छोड़कर वह चल गया।

रोउछुआहा के इस जवाब ने दारपुई को बहुत ठेस पहुँचाया। लेकिन, उसने खुद को यह कहकर दिलासा दिया कि सच जानने के लिए उसकी बहन रमज़ाउई है, जिससे उसे थोड़ा सुकून मिल। जाने के बाद रोउछुआहा भी खुश नहीं था। उसकी आँखों में उसके प्रिय दारपुई की दर्द भरी चेहरा बसा हुआ था और दारपुई का यह कहना कि केवल रोउछुआहा ही उसकी सच्चाई साबित करने में उसकी सहारा है, यह बात उसके दिल में गहराई तक उतार गया था। और वह मन ही मन सोचने लगा कि उसे रमज़ाउई से भी मिलना चाहिए जैसे दारपुई चाहती थी।

तभी ज़ेली पानी भरने के लिए वहाँ आ पहुँची, तब दारपुई को भी इसके बारे में सोचने के लिए समय नहीं मिला और दोनों आपस में बातें करने लगे। घर लौटते समय उसने रोउछुआहा और उसके बीच की बातों को बता दी। ज़ेली ने अपनी सहेली को सांत्वना देते हुए कहा, “दोस्त, तब तो

ज्यादा चिंता करने की कोई बात नहीं है। रमज़ाउई तुम्हारी बहन है, इसलिए वह स्पष्ट रूप से सब कुछ बात देगी। मुझे नहीं लगता कि तुम दोनों का रिश्ता इतनी आसानी से टूट जाएगा।" पी थ्लुआइई के आँगन पहुँचते ही पी थ्लुआइई गुस्से से चिल्ला रही थी, "कितनी अजीब बात है। हमारे गाँव में पहले कभी चोरियाँ नहीं होती थी। मुझे समझ नहीं आ रहा है कि रमबुआई के कारण आजकल कुछ न कुछ गायब होता जा रहा है। किस बदमाश का किया हुआ होगा! अगर उसे चाहिए था तो कम से कम अच्छे से माँग लेता।"

ज़ेली ने उन्हें बुलाकर पूछा, "पी थ्लुआइ, आप किस बारे में बात कर रही हो? आप इतना गुस्सा क्यों कर रही हैं? वह भी इतना सुबह सुबह?" पी थ्लुआइई ने चिल्लाते हुए कहा, "अरे, यह तो ज़ेली है। क्या तुमलोग पानी भरने गए थे? दोनों कितने अच्छे हो। दरअसल, कल ठूआमी चाय की पत्तियाँ तोड़ने गई थी लेकिन वहाँ तोड़ने लायक कुछ नहीं था; उसे निराश होकर वापस आना पड़ा। बस इसी बात को लेकर मैं गुस्सा हो गई थी। शायद किसी ने उनसे पहले तोड़ लिया था।"

उनकी बातें सुनकर पी थ्लुआइई के पड़ोसी भी बाहर आई। उनके बीच कहने लगी, "अरे, हमने तो इस साल की नई सब्जियाँ भी नहीं चखी; कोई और ही हमसे पहले सब ले जा रहा है। सबके सामने इस तरह की बातें करना शोभा नहीं देता, पता नहीं हमें क्या हो गया है?" दारपुई ने भी अपनी बात जोड़ी, "अरे, कुछ दिन पहले हमारे पड़ोसियों की कुछ जलाऊ लकड़ी भी चोरी हो गई थी। वाकई में चोरी की खबरे बार-बार बार-बार सुनने में आ रही है।"

पी थ्लुआइई ने फिर कहा, "सब्जियों की इतनी कमी भी हो रही है। अरे, दारपुई, क्या तुमलोग के पास अभी भी सशियाक[62] हैं?" दारपुई ने तुरंत कहा, "थोड़ी सी बची हुई है। ह्लीरी को लेने भेज दीजिए।" ज़ेली ने बड़े ही आश्चर्य से कहा, "अरे, तुम्हारे पास अभी भी दूसरों को बाँटने के लिए सशियक बचा हुआ है?"

दारपुई ने उत्तर दिया, "ज्यादा नहीं बचा है। पिछले साल जब हमने अपने सूअर काटा था, तब हमने उसके चर्बी को संभाल कर रखे थे, हम अभी भी उसका इस्तेमाल कर रहे है। माँ कहती है कि हमें जितनी हो सके तेल का उपयोग कम करना है, इसलिए केवल रविवार को ही हम तली हुई सब्जी खाते है।"

उस सुबह सामान की चोरी को लेकर काफी बातचीत हुई। दोनों को घर पहुँचते-पहुँचते बहुत देर हो गया था, इसलिए दोबारा लेने नहीं गए।

सच तो यह है कि, रमबुआई के दौरान, हर गाँव, हर जाति के लोगों का एक समूह बनाने के कारण एक दूसरे के साथ मिल-जुलकर रहने में कठिनाई हो रही थी। कर्फ्यू और सैनिकों द्वारा शक किए जाने के डर से किसी भी बात पर कोई भी एक दूसरे के घर नहीं आ-जा पाते थे, जिससे जान-पहचान बढ़ाना और भी मुश्किल हो गया थ। यहाँ तक कि अपने पड़ोसियों से भी अपनी जरूरत की चीजें माँगना कठिन हो गया था। वे अक्सर चोरी-छिपे करने लगे। हालाँकि मिज़ो लोग अपनी ईमानदारी और ईसाई धर्म की निष्ठा के लिए जाने जाते थे, लेकिन समय की परिस्थितियाँ इतनी विपरीत थी कि उन्हें गलत कामों को करने के लिए मजबूर होना पड़ा जिन्हें उनका दिल और चरित्र ने कभी स्वीकार नहीं किया था।

(13)

कुछ लोगों का मानना है कि जब रमबुआई के कारण विभिन्न गाँवों के लोगों के अलग-अलग समूह बनाया गया था तब अलग-अलग विचार और मत रखने वालों को एक साथ रहना पड़ा, जिससे चोरी करने की इच्छा भी पैदा हुई। निश्चित रूप से यह दृष्टिकोण कुछ हद तक सही भी है।

अपनी इच्छानुसार कभी भी खेतों या जंगलों में जाना अब संभव नहीं रह गया था, क्योंकि खेतों और गाँवों के बीच की दूरी भी अधिक थी, इसलिए उनके लिए कर्फ्यू के बीच आना-जाना

मुमकिन नहीं था। (उदाहरण के लिए पु हुलिआना के छोटी खेत उनके अपने घर की तुलना में समूहीकरण के कारण रखे गए पु कामलीआना के परिवार के ज्यादा करीब था। इस कारण पु कामलीआना का परिवार, पु हुलीआना से पहले उनके खेत की उपज का फायदा उठा लेते थे।)

इस प्रकार, परिस्थितियों के बाबाव में आकार लोग वे काम करने लगे जो उन्होंने पहले कभी नहीं किए थे। जैसा कि हम जानते हैं, स्थानीय लोग भी इस काम में कोई कसर नहीं छोड़ी। वे खाली किए गए गाँवों में जाकर वहाँ से अपनी जरूरत का सामान ले लेते थे। शायद इन्हीं सब अफर-तफरी के बीच से ही मिज़ो लोगों के मन में बेईमानी और भ्रष्टाचार ने अपनी जगह बना लिया है। लेकिन, ये कोई आश्चर्य की बात नहीं है। समय और परिस्थितियाँ मनुष्य के स्वभाव और मन को बहुत अधिक बदल सकती है।

जब हमारे देश को यू टी का दर्जा मिला, तो धन का प्रवाह बहुत बढ़ गया था। ऐसे वयस्कों की संख्या बहुत थी जो बिना किसी कठिन परिश्रम के अपना गुजारा करने के लिए पर्याप्त धन पर्पट करते थे। तब से, हम आलस्य की बुराई में फँस गए, और हम भविष्य की ओर देखने के बजाय अतिरिक्त धन प्राप्त करने के लिए अपनी चतुराई और वाकपटुता का अधिक उपयोग करने लगे। हमारे ज़ोरम का स्वरूप बहुत खराब हो गया है। हम अपने बच्चों और आने वाले पीढ़ियों को कड़ी मेहनत, आत्मनिर्भरता, दृढ़ संकल्प और धैर्य सिखाने के बजाय, हमने उन्हें केवल यह सिखाया कि सरकार पर निर्भर रहकर पैसा और काम कैसे प्राप्त किया जाए। ऐसा लगता हैं कि अब हमारा पूरा देश उन्नति नहीं कर पाएगा! हमने उन्हें सरकार की अमीरी और सरकारी नौकरी के फायदे तो सिखाया, लेकिन हमने सरकार को बेहतर बनाने के तरीके नहीं सिखाए; हम यह नहीं समझ सके कि हमारे इस अदूरदर्शी शिक्षा की कमी हमारी आने वाली पीढ़ी को ही भुगतना होगा!

हाँ, इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि जहाँ ज़ोरम संघर्ष ने देश और राष्ट्र के प्रति एकता की एक महान भवना पैदा की, लेकिन इसके साथ भी बैमानी की भावना को भी जन्म दिया हैं। साथ ही, इसने व्यक्तिगत दुश्मनी और ईर्ष्या की भवन को भी जन्म दिया है।

दिन बीतते गए। लेकिन रोउछुआहा के बारे में कुछ पता न चलने के कारण दारपुई की की चिंता कम नहीं हुई। एक दिन वह रमज़ाउई से मिलने उसके घर चली गई। लेकिन, अंदर घुसने से पहले वह सुमह्मून[63] पर कुछ देर तक खड़ी रही। दरवाजे पर पहुँचते ही उसे अंदर से ङूरा की आवाज़ सुनाई दी। क्या रोउछुआहा ने उसे भेजा होगा? यह सोचकर कि वे किस बात पर बातचित कर रहे होंगे, उसे लगा कि उन्हें परेशान न करना ही बहतर होगा, और जैसे ही वह वापस जाने वाली थी तभी उसे रमज़ाउई के यह कहते सुन, "यह बात तो सही है। प्यार इतना महान है कि उसे कभी पराजित होने और अपमान का ख्याल नहीं रखता। रोउछुआहा को भी दोष नहीं दिया जा सकता है। लेकिन, मेरी बहन से वह इतना प्यार करता है कि मुझे यह बात बहुत महान लगती है, पर इसके साथ ही मुझे खेद भी है।" यह बात सुनकर उसके कदम भी रुक गए।

उसे रमज़ाउई की बात समझ नहीं आई, लेकिन यह जानते हुए भी कि वह जो कर रही है, वह गलत है, तब भी वह उनकी बातों को छिपकर सुनने की ठान ली। तभी ङूरा ने कहा, "रमज़ाउ, जैसा कि मैंने कहा था, मेरा दोस्त दारपुई को नहीं भुला पा रहा है। और, दारपुई ने उससे कहा था कि तुम्हें सच बात पता है, इसलिए हमें दारपुई के पवित्रता के बारे में सच सुनना चाहते है।"

रमज़ाउई कहने लगी, "मैंने जितना कहा उसके अलावा मेरे पास कहने को कुछ नहीं है। दारपुई हमारी छोटी बहन है। लोग उसके बारे में जो भी कह रहे हैं हम भी चाहते है कि यह सच हो, इसलिए रोउछुआहा की तरह ही हमें भी अंधा बनाया गया था। लेकिन, उस दिन जब वह गायब हुई, उसकी माँ परेशान हो गई थी और उन्होंने मुझे बुलाया, और चुपके से हम उसे खोज रहे थे। कुछ बच्चों ने हमें उस दिशा की ओर दिखाया जहाँ वह गई थी, और बिना विश्वास के भी हम उसी तरफ चले गए। मुझे वह वहीं मिली। मुझे बहुत ही हैरानी हुई और मुझे बहुत ठेस भी पहुँचाया है। पी मोईई को भी बताने का हिम्मत नहीं किया इसलिए मैंने उन्हें नहीं बताया; और फिर उसने मुझसे बहुत अनुरोध किया कि मैं यह बात किसी को भी न बताऊँ, इसलिए मैंने इस बात को छिपा के रखा था।" रमज़ाउई चिंतित होने का दिखावा करके वह फटाफट झूठ बोलती जा रही थी।

अपनी ही बहन के मुँह से ऐसा सफेद झूठ सुनकर दारपुई के दिल टूट गया! वह इस तरह कैसे झूठ बोल सकती है, यह समझ से परे था। उसकी सलाह माँगने वाले ड्रूरा को कैसा लगा होगा? दूसरे लोगों ने उसके बारे में जो अफवाहें फैलाई थी, उनके कारण उसे जितना दुःख पहुँचा था, उससे भी अधिक यह बात समझ से परे थी कि उसकी अपनी बहन जिसके साथ उसका खून का रिश्ता था, वह इस तरह से झूठ कैसे बोल सकती है।

ड्रूरा दुखी से कहने लगा, "रमज़ाउ, तुम सच कह रही हो न? यह सब जानकार मेरे दोस्त को बहुत दुःख होने वाला है! यह खबर उस तक पहुँचाना बिल्कुल भी आसान नहीं है!" रमज़ाउई ने कहा, "मैं चाहती हूँ कि आप खुशखबरी वापस ले जाएँ, लेकिन मैं आपको सिर्फ झूठ लेकर घर नहीं जाने दे सकती हूँ। ड्रूरा, मुझे भी दारपुई के इस सच से बहुत दुःख पहुँचा है, मेरा दिल टूट गया है। वह मेरी बहन है और उसपर बहुत गर्व करते थे।" रमज़ाउई उन लोगों के लिए सच में दयनीय थी जो नहीं जानते थे कि उसके दिल की जहरीली साँप बाहर निकल रही है।

जब वे कुछ बातें कर रहे थे, तो दारपुई को समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। वह दोनों की बातचीत और सुनना चाहती थी। लेकिन, उसकी आँखों में आँसू भरे होने के कारण उसे कुछ भी साफ दिखाई नहीं दे रहा था; इसलिए उसने वहाँ से चले जाना ही बेहतर समझा। "ड्रूरा, अगर तुम्हें अपने दोस्त को सच बताने में हिचकिचाहट हो रही है, तो क्या मैं खुद उससे मिलने का कोई रास्ता निकालूँ? शायद मैं तुमसे बेहतर उसे अपने शब्दों से सांत्वना दे सकूँगी,' कहने की आवाज उसे सुनाई दिया। वह मन ही मन कहने लगी, "नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। रमज़ाउई को उसे वह निश्चित रूप से बहुत सारे झूठ बोलेगी।' लेकिन, अब उसकी इच्छा के मुताबिक नहीं हो रही थी। भारी मन से वह अपनी सहेली ज़ेली के घर की ओर जाने लगी।

ड्रूरा ने जवाब दिया, "मुझे उसे बताने में बहुत संकोच हो रहा है, लेकिन उसने मुझ पर भरोसा किया है और मुझे भेजा हाई; अगर मैं इसे सीधे तुम्हारे हाथों सौंप दूँ तो मैं एक अच्छे दोस्त का

किरदार नहीं निभा पाऊँगा; मुझे पहले खुद जाकर उसे सच्चाई बाटनी चाहिए और अगर ज़रूरत पड़ी, तो तुम बाद में उसे बता देना।"

"अच्छा ठीक है। अगर तुम्हें मेरी ज़रूरत पड़े, तो मैं हमेशा तैयार हूँ," कहकर रमज़ाउई ने बहुत ही अच्छे स्वभाव का नाटक करते हुए घर जाने वाले डूरा को सलाह दी। डूरा के जाने के बाद रमज़ाउई का दिल खुशी से भर गया और मुस्कुराने लगी। वह जानती थी कि रोउछुआहा, जिससे वह काफी समय से गुप्त रूप से पसंद करती थी, के करीब आने का एक अच्छा मौका दिख रहा है, इसलिए उसे अपनी बहन दारपुई के दिल को पहुँचने वाली चोट की बिल्कुल भी परवाह नहीं थी।

जब ज़ेली ने अपनी सहेली का चेहरा देखा, तो वह आश्चर्य और चिंता से भर गई, और तुरंत पूछा, "अरे, सहेली दारपुई, क्या बात है? मुझे तुम्हारी हालत बिल्कुल अच्छी नहीं लग रही है!" दारपुई ने कोई जवाब नहीं दिया और सीधे घर के पीछे की ओर चली गई। उसका व्यवहार देखकर ज़ेली बहुत हैरान थी कि वह अपनी सहेली के पीछे चलने लगी। बिना कुछ पूछे वह चुपचाप उसके पास जाकर खड़ी हो गई।

कुछ देर तक चुपचाप खड़े रहने के बाद दारपुई ने वह सारी चौंकाने वाली बातें ज़ेली को बता दी जो उसने सुनी थी। बताते हुए वह लगभग रो ही रही थी जिससे यह साफ पता चल रहा था कि उसे बहुत दुःख पहुँचा है। और फिर ज़ेली को भी अपनी सहेली की बातें सुनकर आश्चर्य हुआ। किसी भी अन्य चीज से ज्यादा वह रमज़ाउई की नियत और सोच से हैरान थी। जब दारपुई ने अपनी पूरी बात कह दी, तो ज़ेली ने कहा, "यह तो वाकई अविश्वसनीय है! तुम्हारे पिता के बड़े भाई की बेटी होने के बावजूद रमज़ाउई के मन में तुम्हारे लिए रत्ती भर भी प्यार या दोस्ती नहीं है क्या!? लोग कहते हैं कि दोस्ती के प्यार से ज्यादा गहरा खून के रिश्ते का प्यार होता है!"

सिसकते हुए दारपुई ने कहा, "हाँ, बहुत ही हैरानी की बात है। मुझे उस पर इतना भरोसा था कि मैंने सच का पता लगाने के लिए मैंने रोउछुआहा को उसके पास भेजा था। लेकिन, इंसान का

दिल इतना बुरा हो सकता है! मुझे समझ नहीं आ रहा कि मैं क्या कहूँ, बस यही कि यह बहुत ही आश्चर्यजनक है, इसके साथ-साथ सच अब और भी गहरा छिपता जा रहा है। ज़ेली, मेरे लिए तो ऐसा लग रहा है जैसे पूरा आसमान ही मुझपर टूट पड़ा हो।"

ज़ेली ने गुस्से में दांत पीसते हुए कहा, "सहेली, इतना दुखी मत हो। रमज़ाउई सब कुछ अपनी मर्जी से नहीं सकती है, अभी भी मैं तुम्हारी सहेली हूँ और तुम्हारे साथ हूँ। मैं नहीं चाहती कि तुम्हारे दुश्मन तुमको इतनी आसानी से तुम्हें हरा दे," वह आगे कहने लगी, "सहेली, हमें बहुत पहले से पता था कि रमज़ाउई भी रोउछुआहा को पसंद करती है। लेकिन, मुझे लगा कि तुम, उसकी अपनी बहन, और रोउछुआहा, दोनों एक दुसरें को पसंद करने के बाद उसने हार मान लिया है। पर अब लगता है कि वह सही मौके का इंतज़ार कर रही थी। जब तुम यह सब कह रही हो, तो मुझे लगता है कि तुम्हारी इस बदनामी और अपमान के पीछे उसी का हाथ है।"

जैसे-जैसे दोनों सहेलियाँ बात करती गई, उन्हें पूरा यकीन हो गया कि इन सब के पीछे रमज़ाउई का हार न मानने वाली प्रेम ही मुख्य कारण था। हाँ, उनकी सोच जायज़ थी और यह सच भी था। जिस तरह प्रेम गरीब और अमीर में फर्क नहीं देखता उसी प्रकार खून के रिश्तों के बीच भी दुश्मनी पैदा कर सकता है। इस अधूरी दुनिया में ऐसा कुछ भी नहीं है जो नहीं किया जा सकता। उन इंसानों के जीवन में नफरत कैसे अपनी जगह बना लेटी है, जो दुनिया के कष्टों से गुजरने के बाद एक साथ खुशी से गाते थे?

दारपुई ने धीरे से कहा, "सुनो, शायद रोउछुआहा और मेरा भाग्य ईश्वर द्वारा साथ लिखा ही नहीं गया होगा, इसलिए क्या इतनी दुखी होना और गुस्सा करना सही होगा?" लेकिन, अंदर ही अंदर उसे भी अपने ही बातों को स्वीकार करना कठिन लग रहा था। ज़ेली ने अपना सिर हिलाते हुए सवाल पूछा, "मुझे नहीं लगता कि तुम्हें इस तरह सोचना चाहिए। शायद मुझे ईश्वर द्वारा मिलाई गई जोड़ी के बारे में ज्यादा समझ नहीं है; लेकिन मुझे लगता है कि हम जिस चीज को पाने के लिए पूरी मेहनत करते हैं, उसे हासिल भी कर लेते हैं। और यदि इस तरह प्रयास करने वालों के बीच शादी हो जाए तो

क्या उसे ईश्वर द्वारा मिलाई गई जोड़ी नहीं कहेंगे? यदि वे अलग हो जाते हैं तो क्या हम कह सकते हैं कि वे ईश्वर द्वारा मिलाई गई जोड़ी नहीं हैं क्योंकि उन्होंने अधिक प्रयास नहीं किए हैं? अगर ऐसा है तो क्या ईश्वर द्वारा नियुक्त साथी, मनुष्य के आचरण और उसकी हार पर आधारित होगा?"

दारपुई को भी अपनी सहेली का कहना सही लगा। वह कहने लगी, "लगता है तुम सही कह रही हो। लेकिन, मुझे यकीन है कि ईश्वर द्वारा मिलाई गई जोड़ी न होने के कारण भी कुछ लोग ऐसे होंगे जिन्होंने एक-दूसरे से हार मान ली हो। ऐसा लगता है कि प्यार ने हार नहीं मानी, लेकिन इंसान हार मान लेता होगा।" हाँ, दारपुई और रोउछुआहा के बीच जो प्यार है, वह हारा नहीं है। लेकिन, एक साधारण मनुष्य का मन हार मान रहा है।

(14)

समय और दिन बीतते गए। पेड़ों के पत्ते झड़ने लगी और शुष्क मौसम आ गया। मिज़ोरम के अशांत स्थिति के बावजूद, जो संवेदनशील स्वभाव के थे, उनके लिए यह समय पुरानी यादों को जगाने वाला था। लेकिन, वे काफी समय से तुबउह और दोउलुङ के बीच[64] फँसे होने के कारण अपनी भावनाओं को व्यक्त करने या उन्हें महसूस करने की स्थिति में नहीं रह गए थे।

इस समय मिज़ो लोगों के मन में मुख्य चर्चा के विषय, जो सबसे हावी थी वे थे इंडिपेंडेंस, भारतीय सेना और वॉलन्टियर। मन में इन विचारों को रखने में वे दोषी नहीं थे। बल्कि वे इंडिपेंडेंस के सुखद परिणामों का सपना देख रहे थे, और उन्हें विश्वास था कि इसके बाद ऐसी असीम खुशी आएगी जो कभी समाप्त नहीं होगी। जिस प्रकार यहोवा की आराधना करने वाले इज़राइल के लोग, फिरौन के दासता से मुक्ति दिलाने वाले मार्गदर्शक की प्रतीक्षा कर रहे थे, वैसे ही मिज़ो लोग ने अपनी आशा वॉलन्टियर पर रखी। वे हमेशा इंडिपेंडेंस देश, जिसमें हर तरह का सुखद और गौरवशाली देश उपस्थित है, की सपना देखते थे जहाँ सब कुछ अच्छा हों। उनके दिलों में अब और कोई विचार

जगह नहीं ले पा रहा था; वे बस यही सोचते कि उनकी यह आशा कब सच होगी और वॉलन्टियर कब उस प्रिय भूमि को स्वतंत्र कर पाएंगे।

दुःख और पीड़ा के बीच, जब मिज़ो लोग सुख और शांति की नई किरण कि प्रतीक्षा में बैठे थे, उसी दौरान दारथङपुई और रोउछुआहा प्यार के कारण पैदा हुए दुखों के गहरे बादलों के बीच धीरे-धीरे ओझल होते जा रहे थे। सच्चाई जानने वाली दारपुई के लिए अपने प्रियतम को दुश्मनों के छल में फँसा हुआ देखकर उसे दुःख होता, फिर भी सच बताने और स्वीकार कराने के लिए वह कुछ नहीं कर सकती थी। वह हर रात बिस्तर पर आँसुओं के साथ परमेश्वर को पुकारती थी। अपनी बेगुनाही साबित करने के लिए परमेश्वर के न्याय के समय की प्रतीक्षा करने के अलावा वह और कुछ नहीं कर सकती थी।

“हे यहोवा, अपने शत्रुओं के कारण मैं गिर गई हूँ। यदि मेरी पिछली सभी सेवाओं से मुझे आपकी कृपा प्राप्त हुई है, तो कृप्या मेरी सच्चाई उजागर कर दीजिए। अब तो उचित समय पर आपके नाम की स्तुति करना और प्रार्थना करना भी मेरे लिए लज्जा की बात बन गई है। लोग अब मुझे हेय दृष्टि से देखने लगे हैं,” कहकर वह फुट-फुटकर रोती थी। वह अपनी सारी कठिनाईयाँ परमेश्वर को सौंप देती थी और मदद मांगती थी, लेकिन परमेश्वर मनुष्य की इच्छाओं और समय के अनुसार कार्य नहीं करते हैं। उस व्यक्ति के लिए परमेश्वर के कार्य करने के समय की प्रतीक्षा करना कितना पीड़ादायक होगा जो हर दिन दूसरों की बदनामी और मुसीबतें झेल रही है!

रोउछुआहा की बेचैनी का भी कोई अंत नहीं था। वह अपने दोस्त ङूरदिङा से कहने लगा, “दोस्त, क्या इतने बेहद खूबसूरत इंसान के दिमाग में ऐसी घृणित बात अपनी जगह बना सकती है? मुझे लगता था कि परमेश्वर के दृष्टि में भी दारपुई से बेहतर कोई नहीं हो सकती थी!” ङूरा के लिए भी उसे सांत्वना देना बहुत कठिन था। लेकिन, दोस्त होने के नाते उसे कुछ तो कहना ही था, इसलिए उसने कहने, “हाँ, यह वाकई हैरान करने वाला है। जैसा तुम देखते और सोचते हो, मैं भी वैसा ही विचार रखता हूँ। लेकिन, इस तरह अब जब यह सच सामने आ ही गया है तो मैं इस बात से हैरान हूँ

कि दारपुई इस तरह खुद को छिपाकर रखा है। तुम तो क्या, कोई दुसरें युवक भी उसके सामने अहंकारी नहीं दिखा सकता है।”

“ङूरा , तुम किस सच की बात कर रहे हो? क्या यह कि दारपुई सेना के मुख्य अधिकारी से प्रेम करती है?” उसने उल्टा प्रश्न पूछा।

“हाँ, और नहीं तो क्या। उसका व्यवहार अब गाँव के सभी लोगों को पता चल गया है। इसलिए तो तुम भी दुःख की चिंता में डुबे हुए हो ना?”

“नहीं। यह नहीं हो सकता। यह बात सच नहीं हो सकता। हाँ, मैं इस बात से दुखी हूँ, और यहीं बात मुझे हर दिन कचोट रही है। लेकिन, दारपुई इतनी घिनौनी हरकत नहीं कर सकती,” उसने बड़बड़ाते हुए कहा। ङूरा को भी समझ नहीं आ रहा था कि उसे क्या जवाब दे और क्या कहे, इसलिए वह चुपचाप धूम्रपान करने लगा।

दिन बीतते रहे, लेकिन सूरज रोज़ाना उसी तरह निकलता रहा। पूरा गाँव कष्ट झेल रहा था। उसके साथ ही हर व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत समस्याओं से जूझ रहा था, जिससे उनका जीवन अत्यंत कठिन और थकाऊ हो गया था। जगह-जगह पर भारतीय सेना और वॉलन्टियरों के बीच अनवरत गोलीबारी चलने की खबरें आ रही थी। महिलाओं और बच्चों के डर और घबराहट को देखकर किसी भी कोमल हृदय वाले व्यक्ति के लिए आसानी से लग सकता था कि ज़ोरम को परमेश्वर ने त्याग दिया है। ‘मैं इसके बारे में गहराई से सोचने की हिम्मत नहीं करता, हमारा देश दुखों और समस्याओं में डूबा था, बुद्धिमान अंग्रेज जवान हमसे मुह मोड़ लिए हैं, और अब हमारा बेसहारा देश, जो नष्ट होने वाला है की रक्षा के लिए, हमें परमेश्वर की जरूरत है।’

जहाँ कुछ लोग वॉलन्टियर को छोड़ रहे थे, वहीं कुछ नए लोग उसमें शामिल हो रहे थे। दारपुई की तरफ से निराश होने के बाद, रोउछुआहा ने भी गंभीरता से वॉलन्टियर बनने के बारे में सोच रहा था। वह उन भारतीय सेना अधिकारियों का सामना करने के लिए तड़प उठा जिन्होंने उसकी

प्रेमी, जो उसे सांसारिक खुशी देने वाली थी का मन बदल दिया था। लेकिन, उसके माता-पिता उसे जाने देने के लिए तैयार नहीं थे, और वह अपने मर्जी से घर छोड़ना नहीं चाहता था। उसके बूढ़े माँ-बाप का क्या होगा? यदि वह लड़ाई में चला गया, और क्या वह वहाँ से कभी जीवित वापस लौटेगा भी या नहीं, इस बात का पता नहीं था।

अब अपनी मर्जी से घर छोड़ना भी संभव नहीं था। दारखोपुई, जहाँ कभी वे हर्षोल्लास में रहते थे अब पूरी तरह उदासीन लगने लगा था इसलिए वह अक्सर दिन भर अपना समय एकांत में बिताने लगा। लेकिन, अकेले रहने पर उसे दारपुई के बारे में सोचने का अधिक समय मिल जाता था, और वह यह नहीं चाहता इसलिए बिना किसी उत्साह के वह अपने दोस्त ङूरा और रमज़ाउई के साथ अपना समय बिताने लगा। लेकिन, रमज़ाउई, दारपुई का पक्ष लेने के बजाय, अक्सर दारपुई के बारे में भला-बुरा कहती थी, जिससे रोउछुआहा का दिल बहुत दुखता था।

इस दुनिया के इंसानों का सोच! शैतान ने इसे कितनी गहराई से अपने वक्ष में कर रखा है! परमेश्वर का वचन भी मनुष्यों के हृदय को बुरा कहा है। अधिकांश विश्वासियों का मानना है कि यह दुनिया में जिसमें हम रहते हैं, जो लोग यहाँ रहते हैं और यहाँ होने वाली हर घटना ईश्वर की योजना का हिस्सा है। इसी तरह हम मानते हैं कि स्वर्ग, जो विश्वासियों की आशा है, वह परमेश्वर के शासन के अधीन है। लेकिन, स्वर्ग और इस दुनिया के बारे में केवल सोचने से भी कितना बड़ा अंतर महसूस होता है। जब ये दोनों परमेश्वर के न्याय के अधीन हैं, तो केवल स्वर्ग ही इतना सुखद और पृथ्वी इतनी कष्टकारी क्यों है? क्या यह दुनिया और इसमें होने वाली बहुत सी घटनाएँ हमारे परमेश्वर यहोवा की ओर से नहीं, बल्कि दुश्मन शैतान की ओर से नहीं हैं?

शैतान, जो मनुष्यों को परमेश्वर की स्तुति और महिमा करने से रोकने की लगातार कोशिश करता है, वह हमारे प्रियजनों को हमसे छीन लेता है। इसलिए 'परमेश्वर हमसे प्रेम नहीं करता है। उन्होंने मुझ पर जो कष्ट पहुँचाया है, उसे सहन करना मेरे लिए कठिन है। यदि वह मुझसे प्रेम करता, तो

मुझे इस तरह पीड़ित नहीं होने देता,' कहकर हम परमेश्वर की निंदा करने लगते हैं। वास्तव में, शैतान यहीं चाहता है। अनजाने में हम अक्सर शैतान को ही खुश करने लगते हैं।

हाँ, दारपुई और रोउछुआहा भी परमेश्वर को पुकारते थे लेकिन कभी-कभी उनके मन में संदेह पैदा हो जाता था। उनके प्रेम के बीच शैतान ने रमज़ाउई का उपयोग किया। इसलिए तभी वे दोनों परमेश्वर की योजना को स्वीकार नहीं कर सके और जिस परमेश्वर की वे प्रशंसा करते थे, उसकी निंदा करने लगे, और वे धीरे-धीरे परमेश्वर से दूर होते जा रहे थे। लेकिन, परमेश्वर अपने प्रिय बच्चों को शैतान द्वारा हमेशा के लिए धोखे में नहीं रहने देते, इसलिए परमेश्वर उन्हें फिर से जगाते हैं।

दिल के भारीपन के कारण रात को सोना कठिन था। लेकिन, कुछ करने के लिए न होने के कारण, रोउछुआहा अक्सर रात में अपने बिस्तर का ही सहारा लेता था जहाँ उसे नींद नहीं आती थी। अगर उसके माता-पिता ने अनुमति दी होती तो वह वॉलन्टियर के रूप में शामिल हो गया होता। ङूरा भी अपने दोस्त को सांत्वना देना और उसकी मदद करना चाहता था, लेकिन वह नहीं जानता था कि कैसे करे, फिर भी वह अपने दोस्त को अकेला नहीं छोड़ना चाहता था इसलिए वह उसके साथ ही रहा करता था।

उस दिन भी वह रोउछुआहा के साथ रहने के लिए वह उसके घर की ओर चल पड़ा। रास्ते में युवती कपमोई ने उसे पुकारा, "ङूरा , मुझे तुमसे बात करनी है। क्या तुम्हारे पास समय है?" इस पर ङूरा ने उत्साहपूर्वक और मज़ाक से जवाब दिया, "हम जैसे गरीब, जो लकड़ी के लट्ठों के पास पालने वाले, झोपड़ियों में रहने वाले, बाएँ हाथ से काम करने वाले, कुत्ते की चर्बी का तेल लगाने वाले, सिर्फ त्यौहारों पर माँस खाने वाले, और कोयले से दाँत साफ करने वाले हमारे पास क्या आप जैसे लोगों के लिए समय नहीं होगा?"

"तुम भी कितनी बातें बनाते हो। अगर समय है तो थोड़ी देर रुको," कहकर वह ङूरा की ओर जाने लगी। और उसने तुरंत बात आगे बढ़ाई, "ङूरा, आजकल तुम्हारा दोस्त का कोई खबर नहीं है!

वह कहीं दिखाई भी नहीं देता।” ङूरा ने मुसकुराते हुए कहा, “मुझे लगा तुम मेरी हाल पूछोगी, लेकिन तुम तो मेरे दोस्त के बारे में पूछ रही हो।”

कापमोई ने खिलखिलाकर हँसते हुए कहा, “खेत के ऊपरी हिस्सा और निचले हिस्से में असल में कोई फर्क नहीं होता। मैं बस तुम्हारे दोस्त से थोड़ी बात करना चाहती थी। हम जैसों को तो तुम भाव भी नहीं देते। अगर हम बात न करें, तो तुम हमारी तरफ मुड़कर भी नहीं देखोगे।” दोनों हँसने लगे। कापमोई वास्तव में एक अच्छी और मिलनसार युवती थी। वह सबके साथ खुशी-खुशी घुलमिल जाती थी। लेकिन, अगर उस रात की बात करें जब वे वॉलन्टियरों को उनकी जरूरतें पहुँचाने गए थे, उस रात उनके कार्यों में पाप छिपा था पर क्या वह देश और जाति के प्रति प्रेम के कारण दूसरों के बच्चों के लिए किया गया काम नहीं था! फिर भी, अपने मन में गहरी अपराधबोध महसूस करने के कारण वह अपनी प्रेमिका के अपमान के कारण दुखी रोउछुआहा से बात करना चाहती थी।

जब रोउछुआहा, दारपुई और रमज़ाउई, तीनों अपने प्रेम संबंधों में उलझे हुए थे, उसी दौरान रमह्लूनी और उसके साथी भी सैनिकों के साथ प्रेम संबंध रखने के कारण मुसीबत में थे। लेकिन, सबसे बड़ी अफसोस की बात यह थी कि गाँव वालों को सच्चाई को का पता नहीं था। बंदर के अपराध की सजा लंगूर को भुगतनी पड़ रही थी[65], जिसने कई लोगों के दिलों को ठेस पहुँचाई है और यहाँ तक कि परमेश्वर को कोसने की भवन भी पैदा कर दी थी। अपने गलतियों को छुपाने के लिए दूसरों पर इल्जाम लगाने में भले ही सफलता जैसा लगे, लेकिन व्यक्त हमेशा करवट लेता है। और जब वह समय आता है, तो भला उसे कौन सह पाएगा!

दारपुई शरद ऋतु के चाँदनी रात में अपने गाँव के दृश्यों को निहारती रही। पुराने समय में जहाँ वे अपने प्रेमियों के साथ खुशी से घूमा करते थे, वह सुंदर घास का मैदान अब खूबसूरत नहीं रहें। उसे ऐसा लगने लगा था कि रात को चहचहाने वाले पक्षी उसका मज़ाक उड़ा रहे हैं। उसने मन ही मन कहा, “हे सुंदर गायक पक्षी, तुम मुझ पर क्यों हँस रहे हो? मेरे दर्द असहनीय हैं, कम से कम तुम मेरी

मासूमियत का गाना नहीं गाओगे?’ उसके परिवार वाले गहरी नींद में सो रहे थे, उनकी साँसों की आवाज़ से उसे अकेलापन महसूस हुआ जिसने उसे यह सोचने में मजबूर कर दिया कि वह अकेली हो गई है। उसकी चहेरी बहन रमज़ाउई, चुपके से रोउछुआहा के पीछे-पीछे जंगल जाने की बात से उसके दिल को बहुत दुःख भी पहुँचाया।

‘हे परमेश्वर मेरे यहोवा, आप इस सत्य को कब तक छिपाए रखेंगे? जब सच्चाई सामने आएगी तो कहीं ऐसा न हो कि मैं अपने प्रिय के लिए देर कर चुकी हूँ। प्रभु, क्या आपने मुझे त्याग दिया है? प्रेम ईर्ष्या भी साथ लाता है, हे न? वह भी एक ही परिवार के भीतर! यह कितनी आश्चर्य की बात है! लेकिन रमज़ाउई थङखूमा से बहुत प्रेम करती थी, हे न? फिर वह अपनी ही बहन के बीच क्यों आ रही है? यह औरत वास्तव में चाहती क्या है? क्या वह सच में रोउछुआहा से प्रेम करती है? चूँकि उनका रहन-सहन सम्पन्न हैं, तो क्या वह उसे केवल अपने एशो-आराम और बेहतर जीवन के लिए चाहती है? प्रभु, सच भले ही कड़वा हो, कृपया उसे सामने लाना,’ कहकर वह बड़बड़ाने लगी।

क्या रमज़ाउई का व्यवहार सच्चा प्रेमपूर्ण है या एक मूर्खतापूर्ण किशोरावस्था वाला पागलपन? लेकिन, सच कहे तो हम हमेशा ही सच्चे प्रेम की बात कहते है। कौन एक सच्चे प्रेम के बारे में अच्छे से जानता होगा? अगर हम एक-दूसरे को पसंद करते हैं और हर जीवन के हर रास्ते पर साथ चलने को तैयार हैं, तो क्या वही सच्चा प्यार नहीं है? रमज़ाउई, जो थङखूमा जैसे बहुत ही अच्छे युवक का ध्यान भटका सकता है, भी प्रशंसा के काबिल है। और अब दारपुई और रोउछुआहा, दोनों को भी अपने जाल में फसा दिया।

उस चाँदनी रात में रोउछुआहा भी सो नहीं पा रहा था। लेइहकापुई में खड़े होकर वह दूर सेना कैम्प की धुंधली रोशनी को देखकर वह मन ही मन गुस्सा करने लगा था। वह मन ही मन कहने लगा, ‘इतने सुशील युवती का मन ऐसे कैसे बदल सकता है! लेकिन, उसके बारे में बताने वाली रमज़ाउई भी कुछ खास नहीं होगी। अपने ही बहन के बारे में ऐसी बात कहने वालों से क्या दोस्ती रखना।

शायद उनका परिवार वैसा नहीं होगा जैसा कि गाँव वालें सोचते है। लेकिन, परमेश्वर मेरी मदद करेगा, और ऐसा कोई भी अभागे प्रेम नहीं है जिसे मैं उनकी कृपा से सह न सकूँ।'

भले ही वह अपने मन को कठोर बनाने की बहुत कोशिश करता था, लेकिन इससे पहले कि वह संभाल सके, उसका दिल फिर से नरम हो जाता था। इस तरह जब वह सेना कैम्प कि ओर देख रहा था उसने हेलीकॉप्टर को चालू होते देखा। उसे बहुत आश्चर्य लगा। वह सोचने लगा कि इस समय क्या होने वाला है। क्या वॉलन्टियर गाँव के आसपास भटक रहे हैं? उसकी आँखों के सामने अपने गाँव के जलने की भयानक यादें धुंधली सी तैरने लगी। वह तुरंत घर के अंदर भागा।

हेलीकॉप्टर की आवाज़ से उसके पिता की नींद खुल गई और अंधेरे में वे दोनों एक-दूसरे से लगभग टकराने लगे। उसके पिता ने उससे तुरंत पूछा, "वाला, क्या तुम बाहर गए थे? इस वक्त क्या कर रहे थे? क्या जो आवाज़ मैंने सुनी वह सही है?" रोउछुआहा ने जवाब दिया, "हाँ, सही है। उन्होंने हेलीकॉप्टर शुरू कर दिया है और शायद वे उड़ान करने वाले है। लेकिन, इतनी रात को वे क्या करने जा रहे होंगे? अगर हमारे आस-पास वॉलन्टियर हैं तो भी इतनी रात को हेलीकॉप्टर क्या काम कर सकता है?" उसने अपने पिता से वापस सवाल किया।

माँ भी उठ गई और उसने बुझ चुकी चूल्हे की राख को कूड़ेरने लगीं। धीरे से पु ट्रीअडा ने कहा, "क्या हमें कुछ करने की जरूरत होंगी। अगर कुछ होने वाला होता, तो गाँव के प्रधान को पहले ही सूचित करना चाहिए था। हमनें सेना अधिकारियों के साथ इसके लिए पहले ही समझौता कर लिया था।"

"हाँ, बिना सूचना के हम निर्दोष लोगों को फिर से कष्ट झेलनी पड़ेगी!" माँ ने डरते हुए कहा और आग लगाने लगी। यह वह समय था जब लोग देर रात तक जागना चाहते हुए भी आग जलाने से डरते थे। तप (चूल्हे) के पास बैठकर रोउछुआहा ने तुरंत कहा, "उन्हें सूचित करना चाहिए थ,

लेकिन जब अपने ही लोग बिना बताए गोलीबारी कर सकते हैं, तो क्या आपको लगता है कि दूसरे कबीले के सैनिक हमें महत्व देंगे?”

“हाँ.... यह बिल्कुल सही है। इसलिए मुझे तुरंत पु हुआपलीआना के घर जाना होगा। अगर हम बिना कुछ जाने ऐसे ही इंतज़ार करते रहे, तो हमारा स्थिति फिर से बहुत दयनीय हो सकता है। यदि हम जागरूक होने के बावजूद बचाव का काम नहीं करेंगे, तो शायद तो परमेश्वर भी हमें माफ नहीं करेंगे।” कहकर पु ठ्रीअङा अपनी जगह से खड़ा हुआ। उनकी पत्नी ने डरते हुए कहा, “नहीं। वाला के पिता, अभी मत जाओ, इस गहरी अंधेरे में तो अपने रिश्तेदार भी एक दूसरे को नहीं पहचान पाते।” रोउछुआहा भी चुपचाप तैयार होने लगा। उसने अपने पिता के साथ जाने का पक्का इरादा बना लिया था।

“अरे, राङी, हमारे पूरे गाँव का जीवन हमारे हाथों में हो सकता है,” कहकर वह दरवाजे की ओर बढ़ गए। पीछे मुड़कर जल्दी से कहने लगे, “राङी, अगर गोली चलने की आवाज़ आए तो तुम बच्चों के साथ घर के नीचे छिप जाना। और वाला, तुम्हें पता है न क्या करना है, मैंने तुम्हें कई बार बताया है,” कहकर वह बाहर निकल गया और आँगन में खड़े होकर इधर-उधर देखने लगा। उन्होंने देखा कि कुछ लोग सेना कैम्प में काम में व्यस्त लगे हुए हैं। अपने पास खड़े बेटे को देखे बिना ही वे बड़बड़ाने लगा, “वे निश्चित रूप से किसी में व्यस्त हैं। हे प्रभु, आप ही हैं जो उन्हें रोक सकते हैं।”

“हाँ, पिताजी, चलिए जल्दी चलते है। कहीं हमें बहुत देर न हो जाए,” रोउछुआहा ने कहा। रोउछुआहा का आवाज़ सुनकर पु ठ्रीअङा बुरी तरह चौंक गए, जिसे देख रोउछुआहा को बुरा महसूस हुआ। पु रोठ्रीअङा नहीं चाहते थे कि वह रोउछुआहा उनके साथ आए, वे उसे घर पर ही रहने के लिए कहना चाहते थे लेकिन उनका बेटा भी उन्हें अकेले जाने देने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं था। काफी समय तक दोनों के बीच प्यार और चिंता के कारण बहस चलती रही। आखिरकार बेटे की जीत हुई, और शरद ऋतु की उस सुहावनी रात की चाँदनी में, मन में गहरा संकल्प लिए अपना कार्य पूरा करने के लिए चलने लगे, और वे तुआलते इलाके में रहने वाले पु हुआपलीआना

के घर एक साथ प्रवेश किए। उनके बीच बातचीत होने के बाद उन्हें यह लगा कि सेना कैम्प में किसी का जाना ही ठीक रहेगा।

जब कुछ सलाहकार बड़े-बुज़ुर्ग पु हुआपलीआना के घर की ओर जा रहे थे, कई लोग ऐसे भी थे जिन्हें हेलिकाप्टर की आवाज़ सुनाई दी, लेकिन बाहर निकलने की हिम्मत नहीं कर रहे थे और मन ही मन परमेश्वर को पुकार रहे थे। ऐसे कई लोग भी थे जो गाँव के जलने और तबाही के दृश्य को याद करते हुए, वैसा फिर से होने के डर में थे और तुरंत दिमागी तौर पर सुरक्षा की योजनाएँ बनाने लगते हैं। उनका ऐसा करना बिल्कुल भी गलत नहीं है!

उन अनुभवी पुरुषों के बीच रोउछुआहा चुपचाप बैठा हुआ था। वे केवल यहीं निर्णय ले सकते थे कि कोई सेना कैम्प में जाकर बात करे। किसी की कहे बिना ही रोउछुआहा ने खुद को इस काम के लिए पेश किया। परंतु, वे उसके लिए बहुत चिंतित थे। उनका मन दुविधा में थे कि क्या समूह में जाना सही होगा। लेकिन, उन्हें डर था कि अगर वे एक साथ जाएंगे तो सेना उन पर अंधाधुंध हमला करेंगे, इसलिए अंत में यह काम रोउछुआहा के हाथों सौंप दिया गया। सच बात तो यह है कि इस समय रोउछुआहा के मन में मौत का कोई डर नहीं था! लेकिन, उसे उन लोगों के हाथों मरने में थोड़ी झिझक हो रही थी, जिन्होंने उसकी प्रेमिका को छीन लिया था।

जब वह सेना कैम्प पहुँचने ही वाला था उसे हेलिकाप्टर की आवाज़ के साथ-साथ 'वाई' लोगों के चिल्लाने की आवाज़ें भी सुनाई देने लगी। लेकिन, जब उसे यह पता चला कि यह किसी हमले की आवाज़ नहीं है, तब उसे राहत महसूस हुई। गहरी सांस लेकर वह थोड़ी देर के लिए खड़ा रहा। फिर वह मन ही मन सोचने लगा, 'ओह, दारपुई, क्या तुमने इसी पहाड़ पर मेरे प्रेम को कुचल दिया? यहाँ तुमने कौन-सा खजाना खोज निकाला है!' फिर उसे अपने पिताओं के चिंतित स्थिति की याद आई और वह आगे की ओर बढ़ने लगा।

“वहीं रुक जाओ। अगर नहीं रुके तो मैं तुम्हें गोली मार दूँगा,” कहने की आवाज़ के साथ एक तेज रोशनी उसकी ओर आई। सैनिक की *लाइट* उस पर बहुत तेज चमकी जिससे उसकी आँखों के सामने अंधेरा छा गया। अपने हाथ ऊपर उठाते हुए तुरंत उत्तर दिया, “गोली मत चलाओ, मैं गाँव का रहने वाला हूँ। मुझे वीसी ने भेजा है।” एक सेना नीचे आया और रोउछुआहा की तलाशी ली। फिर उसके चेहरे को गौर से देखने लगा। उनके पास *सरेंडर लिस्ट* में उसकी तस्वीर थी इसलिए उसे आराम से कैम्प के अंदर ले गए।

जैसे ही वे उसे बारिक के अंदर ले जाने वाले थे, रोउछुआहा ने हेलीकॉप्टर के दरवाजे के पास खड़े लगभग 35 साल के एक साफ-सुथरे दिखने वाले मिज़ो व्यक्ति की झलक देखी। उसके हरे रंग के सूट, *हंटर बूट* और कंधे पर एक बड़ा काला कपड़ा देखकर उसे कुछ समझ में आ गया। बिना कुछ बोले उस पर हमला करने का मन हो रहा था। वह ‘कोकतू’ था जो दूसरों पर झूठा आरोप लगाकर फँसाता था। अपनों के प्रति बिना किसी सहानुभूति के वह लोगों को सेना के हाथों सौंप ता था।

उसके वहाँ जाने का वजह उसने सेना अधिकारी को बताया। चूँकि उनके बीच भाषा संबंधी बाधा थी, उन्होंने ‘कोकतू’ को अंदर बुलाया और उसने पहले से ही अपना चेहरा ढक लिया था। सिपाहियों ने भी उन्हें अच्छी तरह से सारी बात बता दिया। यह समझाने के बाद कि वे लुङलेई में अपने साथियों की मदद के लिए वॉलन्टियर और गवाहियों को ले जा रहे हैं, रोउछुआहा वापस लौट गया। पता नहीं वह आदमी किस तरह का दुःख और कष्ट पहुँचाएगा! वह बड़बड़ाने लगा, ‘हे परमेश्वर, गद्दार शैतान के इतने सारे अनुयायी हैं! अपनी मतरभूमि और जाति से ज्यादा खुद से प्यार करने वाले लोग कितने बढ़ गए है। गद्दारी का अंत कितना भयानक होगा?’

लेकिन, उसके मन में अचानक दारपुई की याद आ गई। ‘हे प्रभु, मैं उस विश्वासघाती औरत से प्यार करना अभी भी बंद नहीं कर पाया हूँ। कृपया उसके लिए मेरे मन में उठने वाले नए विचारों को

स्वीकार मत करना। मुझ पापी की प्रार्थना को कृपया स्वीकार कर और दया कर, उसका जीवन बर्बाद होने मत देना,’ कहकर वह दारपुई के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करने लगा।

उन सारी बातें बताने के बाद वे सभी शांति के साथ और दूसरों को परेशान किए बिना अपने-अपने घर चले गए। पु ठ्रीअङा और उसके बेटे को देखकर उनके पत्नी ने तुरंत कहा, “हाई! मैं तुम दोनों का कितनी बेसब्री से इंतज़ार कर रही थी। मुझे बहुत खुशी हुई। मैं गोलियों की आवाज़ सुनने के लिए अपने आप को तैयार कर रही थी, और मेरी तो साँस ही अटक गई थी।”

सारी बातें स्पष्ट होने के बाद, वे निश्चिंत होकर सोने चले गए। लेकिन, गाँव वालें जिन्होंने हेलिकाप्टर की आवाज़ सुनने के बाद, अपने घरों में डर-डर के रह रहे थे, वे किसी बुरी खबर के इंतजार में सतर्क थे, इस विचार ने पु ठ्रीअङा को सोने नहीं दिया।

(15)

प्रभु यीशू का जन्मदिन (क्रिसमस) फिर से आने वाला है। दुःख और हृदय की पीड़ा के बीच, क्रिसमस के समय की शुष्क मौसम ने उनकी पुरानी भावनाओं को जागृत किया और मन को उदास कर दिया। पुराने समय में लोग सभी एक साथ मिल-जुलकर बिना किसी समस्या और चिंता के खुशी से मनाते थे। लेकिन, अब राष्ट्रवाद की लहर के आने से सब कुछ बदल गया है। क्रिसमस का त्योहार, जो किसानों के लिए आशा की किरण और जिसका बच्चे बात करना बंद नहीं करते, अब केवल भय और असुरक्षा के साये में मनाया जाने वाला था।

मसीही विश्वासी जिस क्रिसमस सामूहिक गान का बड़ी बेसब्री से इंतज़ार कर रहे थे, वह भी अब न हो सका! विशेष रूप से दारपुई अब दिन भर घर पर ही रहती। घूमने के लिए उसके दोस्त और परिवार वालों द्वारा बुलाने के बाद भी अब वह उनके साथ नहीं निकलती।यहाँ तक कि जब सैनिकों ने भी बड़े त्योहार के अवसर पर उन्हें रविवार को गिरजाघर जाने की छूट देने के बावजूद, अब वह नहीं

जाती थी। जब दूसरे लोग खुशी से त्योहार मना रहे होते, वह ‘लेइकापुई’ और घर के पीछे की तरफ बैठकर अपने दुखों को गीतों और शब्दों में बयां करती रहती थी।

तोड़े जाने के बाद भी सभी पेड़ और फूल,

निराश न होकर, फिर से खिलने की ठान लेते;

पहले से भी अधिक सुंदरता के साथ गर्व से खिलकर,

पहाड़ों और घाटियों को खूबसूरती से सजा देते।

पर वह प्रेमी जिसे पाया न जा सका, टूटने के बाद नहीं खिला,

क्या वह घने जंगलों की तरह मुरझा गया है?

खुशी और आनंद के दिन पुराने कपड़ों की तरह फीकी पड़ गई,

जीवन के सुनहरे दिन फूलों की तरह कुम्हला गए है;

इस एकाकीपन और विलाप की लंबी राह को समाप्त करने,

सर्दी के रास्ते और ऊंचे आसमान की ओर देखते;

चाँद और तारे एक साथ मिल गए हैं,

इंसानों की परवाह किए बिना, आसमान में कितने खूबसूरत चमकते हैं।

त्योहार की खुशी में हर कोई सज रहे है,

क्या उस अधूरे प्यार के लिए यह दुनिया खूबसूरत होती जाएगी;

बिछड़ने के बाद भी यादें पीछा नहीं छोड़ती,

आँसुओं के साथ अब बिस्तर ही उसका सहारा है।

क्रिसमस और नए साल के बीच, 29 दिसंबर, 1968,को एक धूप अच्छी निकली हुई थी, इसलिए घर के आँगनों में बुजुर्ग पुरुष और महिलाएँ धूप सेंक रहे थे। कुछ पति-पत्नी भी एक दूसरे जूएँ निकाल रहे थे। वे बहुत शांतिपूर्ण में जी रहे थे। लेकिन, माहौल जितना शांत होता, उतने ही अधिक वॉलन्टियर भाइयों को उनके बीच आने की उत्सुकता होता था जिससे कुछ लोगों के लिए स्थिति बहुत कठिन और परेशानी भरी हो जाति थी। उस दिन भी, उनके गाँव के प्रवेश द्वार के तरफ रहने वालों के पास चाय और उबली हुई अरुम का आनंद लेने के लिए कुछ मेहमान आ गए थे।

जिन्हें पता था कि उनके गाँव में मेहमान आए हैं, उनकी साँसे थम सी गई। जैसे ही उन्हें डर था, यह खबर भारतीय सेना के कानों तक पहुँच गई। वे अपने हथियार के साथ गाँव के प्रवेश द्वार की ओर चल पड़े। और तुरंत गाँव के लोगों पर कर्फ्यू की घोषणा कर दी गई। अब वे उस बड़े दिन का जश्न नहीं मना पाए जिसका उन्हें बेसब्री से इंतजार था।

लेकिन, गाँव वाले बड़े एकता से काम करते थे। वे उन वॉलन्टियरों, जो उनके और उनके देश के लिए जंगल में डेरा डाले हुए माने जाते हैं, के लिए ऐसे कई लोग थे जो कुछ भी करने को तैयार थे। सेना के पहुँचने से पहले ही यह कहा जा सकता है कि वे सफलतापूर्वक जंगल की ओर भाग गए, लेकिन जो दूसरे की तुलना में धीमी गति वाला था, वह घर के पीछे के हिस्से से कूदते समय गिर गया। लेकिन, किसी तरह घुटनों के बल रेंगते हुए वह बगीचे के अंत तक पहुँच गया और छिप गया और पकड़ने से बच गया। लेकिन, सैनिकों के मन को शांति नहीं मिली क्योंकि उन्हें पता था कि वॉलन्टियर वहाँ आए हुए थे। और उस दिन से उन्होंने लगातार कर्फ्यू की घोषणा कर दी।

हाँ, देश और जाति को बचाने वाले वीर सैनिकों(विद्रोहियों) को नहीं पता था कि वे कई वर्षों के संघर्ष बाद वे असफल होने वाले हैं, इसलिए वॉलन्टियर और लोगों के बीच का सहयोग बहुत अच्छा था। फिर भी, लोग एकमत नहीं होते, और ऐसे कई लोग थे जो स्वतंत्रता के संघर्ष के कारण जीवन में कष्ट सह रहे थे। और यह अस्वाभाविक नहीं था। उन्होंने जिन कष्टों की पहले उम्मीद नहीं की थी, उस कष्ट को सहने के लिए आज़ादी की लड़ाई लड़ी। कुछ लोग ऐसे सवाल भी पूछ सकते हैं कि 'वे इसे मेज पर क्यों नहीं सुलझा सकते? उनके पास इतने मिज़ो लोगों का दिल जीतने के लिए शब्दों की कमी नहीं थी, तो निश्चित रूप से उनके पास भारत सरकार का दिल जीतने के लिए भी सही शब्द रहे होंगे!'

कौन ऐसा होगा जो अपनी बेटियों के साथ होने वाले बलात्कार के बदले में मिली आज़ादी को खुशी-खुशी स्वीकार करेगा? कौन ऐसा होगा जो अपने सगे संबंधियों को सैनिकों के हाथों प्रताड़ित होने के लिए सौंपने के लिए तैयार होगा? क्या अपने प्रियजनों को हमेशा डर के साये में जीते देखना हमे पीड़ा नहीं देगा? इसके अलावा, कुछ स्वार्थी लोगों ने झूठा आरोप भी लगाया! सबसे दुखद बात यह थी कि अनेक निर्दोष लोगों ने अपनी जान गँवाई। और, वॉलन्टियरों और 'कोकतू' के कारण, सेना के हाथों प्रताड़ित होने वाले कई लोग आज भी अपाहिज होकर जीवन बिता रहे हैं।

नए साल के ही शुरुआत में ही, एक दिन साङह्लूना हड़बड़ी में थोममोइअ के घर दौड़कर अंदर आया। थोमा की माँ पी ज़ात्लुआङी ने उससे पूछा, "अरे, यह तो ह्लूना है! लगता है तुम बड़े ही जल्दी में हो, क्या कोई बुरी खबर है?" वह हाँफते हुए कहने लगा, "थोमा कहाँ है? मैं उसे अपने साथ वहाँ जाने के लिए बुलाने आया हूँ। कोई ऐसी बुरी खबर तो नहीं है, बस मैं जितनी तेजी से हो सके उतनी तेजी से आया हूँ, इसलिए मेरी साँस फूल रही है।" और मुस्कुराने लगा। बगीचे से निकला थोमा को देखते ही वह तुरंत कहने लगा, "थोमा, चलो, थोड़ी देर के लिए बाहर चलते है। वीसी ने उन युवतियों को पहचान लिया है जो वाई सेना से मेल-जोल रखती थीं, शायद उन्हें इकट्ठा किया जाने वाला है।"

थोमा ने कपड़े की डोरी से अपना कपड़ा छीनते हुए हैरानी से कहा, “ अरे!” फिर दोनों दोस्त फौरन निकल गए। ङूरा ने सोचा कि रोउछुआहा, जिसे इस बारे में कुछ नहीं पता था परेशान हो रहा होगा, इसलिए वह जल्दी ही उसके घर चला गया। लेकिन, उसके बातचीत करने के ढंग से यह लग रहा था कि इस खबर के बारे में उसे कुछ जानकारी नहीं है, इसलिए उसे सच बात बताना ही सही लगा, और ङूरा ने सीधा सच बात दिया। यह बात जानकार रोउछुआहा का मन घबराहट से भर गया। लेकिन वह अपने इस परेशानी को छिपाना चाहता था, इसलिए गहरी साँस लेते हुए कहने लगा, “ङूरा , मुझे उम्मीद है कि कपमोई और उसकी सहेली वहाँ नहीं होंगे।” ङूरा को समझ नहीं आ रहा था।

उसे समझ नहीं आ रहा था इसलिए ङूरा ने उसे सीधी बात पूछा। रोउछुआहा को एहसास हुआ कि घबराहट में उसने उसने वह कह दिया जो उसे नहीं कहना चाहिए था। लेकिन, छिपाने के लिए देर हो चुकी थी इसलिए उसने ङूरा को पूरी बात बता दी कि कपमोई और उसकी सहेली ने अपने देश और जाति के लिए, अपने ही गाँव वालों के लिए क्या किया था। और आगे कहने लगा, “उनका मन परेशान था, और दारपुई के बारे में कुछ वैसा ही हो गया था, इसलिए वे दोनों मेरे पास आ गए थे। उनका राज़ रखना मेरी जिम्मेदारी थी, पर आज पहली बार मैं उनका राज़ नहीं रख पाया।”

यह बात सुनकर ङूरा को दंग रह गया और उन दोनों युवतियों के प्रति उसके मन में सम्मान बढ़ गया। वह कहने लगा, “दोस्त, मुझे लगता है कि जो इन दोनों सहेलियों ने किया है शायद दूसरे गाँव में भी घटित हुआ होगा। मुझे गर्व है कि वे अपने देश और गाँव से इतना प्यार करती हैं।” यह निराशाजनक की बात है कि जहाँ कुछ लोग अपने फायदे के लिए अपने देश और राष्ट्र के प्रति प्रेम की भावना दिखते है, जबकि कुछ लोग अपने देश और राष्ट्र के लिए अपना सबसे मूल्यवान चीज दे रहे हैं। जैसे ही पहले कहा गया था न केवल गाँव वालों में, बल्कि जातीय विद्रोहियों के बीच भी ऐसे कई लोग हैं जो केवल अपना स्वार्थ सिद्ध करने में लगे हैं।

थोड़ी देर दोनों चुप रहे और फिर रोउछुआहा ने अचानक पूछा, "दोस्त, तुम जिस बात को लेकर आए हो वह कहाँ से मिली? क्या तुम पक्का जानते हो कि उन औरतों को बुलाया जाने वाला है?" स्थानीय तंबाकू पीते हुए डूरा कहने लगा, "हाँ बिल्कुल पक्का। मुझे तो इस बात पर हैरानी हो रहा है कि तुम्हें इस बात की खबर ही नहीं है! हमारे गाँव से ही कई ऐसे हैं जो सेना कैम्प में जाते हैं। उन पर कुछ लोग नज़र रख रहे थे। चूँकि तुम केवल अपनी दारपुई के बारे में सोच रहे थे, और हर समय घर पर ही रहते थे। हमारे ही वॉलन्टियर भाइयों को उन लड़कियों के बारे में जानकारी हैं!"

"फिर, कुछ दिन पहले से हमारे वॉलन्टियर भाइयों ने उन्हें चेतावनी भी दी थी। इतना ही नहीं, वे उन युवतियों के घरों पर कागज भी चिपकाएँ थे ताकि वे ऐसा करना बंद कर दे। मैं तुम्हें कुछ भी नहीं बताना चाहता था क्योंकि तुमसे बात करना कठिन हो गया था। और वैसे भी, मुझे डर था कि कहीं ऐसी बात न निकल आए जिसे हम जानना नहीं चाहते, इसलिए मैंने चुप रहना ही बेहतर समझा।" डूरा ने कहना जारी रखा।

उस दिन से गाँव वालों को सच्चाई का पता चलने वाला था। कुछ युवतियाँ जो लंबे समय से सुख भोग रहे थे, अब उनके पापों का खुलासा होने जा रहा था। कई पत्र दिए जाने के बाद भी उन्हें अपने आप पर बहुत घमंड था। हर रविवार की शाम वे सबसे अच्छे कपड़ों में सज-धजकर सेना कैम्प की ओर जाती थीं। उन्हें लगा कि वे गाँव वालों को अंत तक धोखा दे सकेंगे, लेकिन सच्चाई के पक्षधर परमेश्वर उनके अहंकार को शिखर से नीचे खींचने वाला था।

रमज़ाउई, जिसने अपनी बहन की परवह न करते हुए उनके प्रेम के बीच आने की कोशिश की, उसे भी उन युवतियों के बीच बुलाया गया और उसे अपने ही परिवार को शर्मसार करने वाली और अपने ही जाति को त्यागने वाली माना गया। उन युवतियों के बीच, हर तरह की शर्म और अपमान से घिरी दारपुई का नाम कहीं नहीं था! रोउछुआहा और उसके दोस्त के लिए यह सोचने की बात थी कि यह खुशी की बात है या कोई गलतफहमी।

दोनों मित्र भारी मन से उस स्थान पर गए जहाँ गाँव के मुख्य अपना काम कर रहे थे। दारपुई का नाम न सुनकर उन्हें एक राहत भरी साँस मिलनी चाहिए थी, लेकिन उनके उदासीन स्थिति को देखकर ऐसा लग रहा था कि दोनों तनाव में थे। भले ही उन्होंने एक दूसरे से कुछ नहीं पूछा था, लेकिन यह स्पष्ट था कि वे एक ही चीज के बारे में सोच रहे थे। उनके मन में यह विचार था कि दारपुई का नाम काफी समय से सामने आ रहा था, इसलिए जब कोई नया नाम सामने आया, तो वे इसे भूल गए होंगे या दारपुई ही शुरुआत करने वाली थी और चूँकि यह बात पूरे गाँव में फैल गई थी, इसलिए शायद उसे अलग से बुलाने वाले होंगे। कोई भी उन्हें उनके विचारों के लिए दोषी नहीं ठहरा सकते थे। जब हम जिनसे प्यार करते हैं यदि उनके प्रति संदेह की भावना पैदा होता है तो ऐसे में दो दिल रखना आसान हो जाता है।

जब वह गुप्त रहस्य उजागर हुआ, रोउछुआहा के मन को शांति नहीं मिली, लेकिन उसके प्रिय दारथङपुई का हृदय खुशी से भर गया। उसने तुरंत परमेश्वर को धन्यवाद दिया कि उसकी सच्चाई प्रकट होने जा रही है। सच बात तो यह है कि, उसकी सच्चाई को बाहर निकालने के लिए उसकी सहेली सोमज़ेली ने बहुत ही महनत की है। वह उन युवतियों पर कड़ी नज़र रख रही थी जिन पर उसे शक था, और अंत में वह सफल हुई।

भारी मन और कुछ भी कहने का हिम्मत न होते हुए रोउछुआहा ने रात का खाना जैसे-तैसे खाया। वह अपने पिता को जाते हुए देख रहा था, जो दोपहर का काम जारी करने के लिए निकल गए। पता नहीं वे किस तरह का फैसला लेंगे? कुछ भी हो, कपमोई और ठूआमखूमई उनके बीच नहीं थे, उसे इस बात की खुशी थी। क्योंकि उन्होंने वह काम अपने अनैतिक आचरण के कारण नहीं, बल्कि आवश्यकता के कारण किए थे। वे दोनों सुरक्षित योग्य थे। और वह सोचने लगा कि यदि उन दोनों जैसे अगर अन्य गाँव में भी हो, तो वे भी अवश्य सुरक्षित हो।

वह तपछक के पास सिर झुकाए उसी जिज्ञासा और चिंता के साथ बैठा रहा, कि उसके पिता क्या समाचार लेकर आने वाले हैं। वह बहुत दूर तक की सोच में डूब गया। दारपुई के बारे में वह

सोचना नहीं चाहता था इसलिए वह यह बात सोचने लगा, 'इंडिपेंडेंस के इस संघर्ष के और क्या नकारात्मक परिणाम होगा? कई गाँवों में आग लगी और मौतें हुई। कई महिलाओं ने अपनी पवित्रता खो दिया है, और कुछ पत्नियों ने विदेशी संतान को जन्म दिया है। सबसे दुखद बात तो यह है कि जहाँ बच्चे, युवक-युवतियाँ, प्रेमी-प्रेमिका मौज-मस्ती करते थे, उनके गाँव को जला दिया जाता था।'

'और निर्दोषों की मौत का अंत कब होगा? लेकिन, स्थिति को देखकर ऐसा लगता है कि जब तक इंडिपेंडेंस की लड़ाई खत्म होने से पहले मिज़ोरम को अपनी पहली स्थिति नहीं मिल पाएगा! परमेश्वर, आप इस कष्ट को कब खत्म करेंगे?'

हाँ, रमबुआई ने मिज़ो लोगों के बीच एकता और सहयोग की भावना लाया है, लेकिन यह असंगतता को भी लाया है। और इसी प्रकार क्या ऐसा नहीं कहा जा सकता कि इसने अभिशाप और आशीर्वाद, जीवन और मृत्यु, पिछड़ापन और प्रगति, साथ ही भूख और परिपूर्णता भी पैदा किया है? पहले अपने ही गाँव में जाने-माने लोग रहते थे लेकिन जब उन्हें समूहीकृत किया गया था, तब अलग-अलग मिजाज के लोग वहाँ रहे लगे। अब एक दूसरे पर भरोसा करना कठिन हो गया था। खाने-पीने और कई छोटी-सी-छोटी चीजों में भी उनके बीच प्रतिस्पर्धा उत्पन्न हुआ। जो पहले एक ही विचार रखकर मिलजुलकर रहते थे, अब उनके बीच भिन्न-भिन्न मत और विचार आने लगे। उनके गाँव के सलाहकार का सलाह दूसरे गाँव का सलाहकार नहीं मानना चाहता था। इसलिए उनके बीच बहुत सारी समस्याएँ पैदा होने लगा। जिसने धीरे-धीरे उन लोगों को अलग करने की इच्छा को जन्म दिया जो अपनी मनमानी करने की हिम्मत रखते थे। जो भविष्य की भाष्यवाणी करने लगा। और यही हमारे देश और राष्ट्र ने आज तक भुगता और नष्ट हो रहा है।

न केवल उन्हें अपने पूर्वजों से विरासत में मिले घरों, बगीचों, फसलों और खेतों को छुड़वाया गया, बल्कि उन्हें समूहों में रहने के लिए मजबूर किया गया, वह भी दूसरे गाँव में, जिन्हें पी.पी.वी. कहा जाता हैं, जहाँ वे खुशाल जीवन बिताते थे, उसे खाली करने के बाद, वहाँ इधर-उधर घाँस उगने लगे, जहाँ वे खुशी से क्रिसमस का त्योहार मनाते थे, अब वह गिरजाघर भी क्षतिग्रस्त हो

गए, अब वह केवल कबूतरों, पीत (चावल की फसल के लिए बहुत विनाशकारी एक बहुत छोटे पक्षी का नाम) और वज़ार (एक पक्षी का नाम है, जो झुंडों में घूमते हैं और कभी-कभी उनका नेता भीमराज होता है; वे कभी कभी कोरों पक्षियों से भी जुड़े होते हैं) के रहने का स्थान बन गया हैं, यह सब उनके लिए असहनीय था, इसे याद करने पर भी कोई फायदा नहीं था। कोई भी दर्दभरी से यह कहे बिना नहीं रह सकते, 'ओह, एक पूर्ण परिवार और उन प्रिय साथियों के साथ, जहाँ हम स्वर्ग के महलों और उन गलियों में मिलकर गाते थे, अब वहाँ असीम शांति है। जैसे एक अकेला कबूतर अपने साथी के बिना इंतजार करता है, उन्होंने अब उस ठंडे और शांत परलोक को पूरी तरह से पा लिया है जहाँ आत्माएँ विचरण करती हैं।'

कुछ समय के बाद गाँवों को समूहीकृत करने की जगह, जिसे पी.पी.वी., प्रोटेक्टिव प्रोग्रेस विलेज कहा जाता है, जो ए.ओ., ऐड्मिनिस्ट्रेटिव ऑफिसर के अधिकार क्षेत्र में आने लगे। लेकिन इस समय वे इन अधिकार के नीचे नहीं रहते थे, खेती के लिए जो भूमि पहले एक गाँव के लिए पर्याप्त होती थी, अब कई गावों द्वारा उसे साझा करने के कारण अकाल कि स्थित पैदा हो गई। अब केवल वाईबुह (चावल की प्रजाति का नाम) काफी नहीं था, बच्चे भूख से रोते हुए दोपहर का खाना माँगने लगे, माँ अपने बच्चों को सूखी रोटी देने को मजबूर हो गई थी। यहाँ तक कि कुछ महिलाओं ने चार-पाँच किलो आते के लिए खुद को बेच दिया। हाँ, उन्हें इसके लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता कि वे सिपाहियों के पास जाते थे, उनकी स्थिति अत्यंत दयनीय थी, बस उनके गरीबी के कारण था। हमारे अनुभवों में गाँव समूहीकरण सबसे दुखद घटना थी। ज़ोरम(मिज़ोरम) का हर जगह पुराने कपड़े की तरह फीका पड़ गया, हर पहाड़ों से इकट्ठा किए गए माँ-बच्चों की स्थिति, जो दोपहर के भोजन कि कमी के करण बहाल थे' जैसे गानों से हमें उनके उस समय की स्थिति का पता चलता है।

उस रात, पु ट्रीअङा अपने बेटे की मनःस्थिति को समझते हुए, तेजी से घर की ओर चल पड़े। उन्होंने जैसे ही दरवाजे से प्रवेश किया, तपछक के पास बैठा उनका बेटा, ढेरों सवाल के साथ उनकी ओर तुरंत देखा। बिना कुछ बोले उन्होंने सबसे पहले चाय की प्याली की ओर हाथ बढ़ाया।

वह जानते थे कि उनके बेटे को एक ही बात जानने की इच्छा है। और उन्हें यह भी पता था कि उनसे सवाल पूछने की हिम्मत नहीं कर पाएगा। अपने बेटे के पास बैठते हुए उन्होंने अपनी पत्नी को बुलाया जो सो चुकी थी, “राङी , ज़रा बाहर आओ। हमारे परिवार के लिए मैं एक जरूरी खबर लेकर आया हूँ। लेकिन बच्चों को सोये रहने दो।” यह सुनकर रोउछुआहा का दिल ओर तेज धड़कने लगा। उसका मन डर से भरा हुआ था। उसे यकीन था कि उसके पिता दारपुई को हमेशा के लिए छोड़ने के लिए कहने वाले है इसलिए वह मन ही मन परमेश्वर से यहीं प्रार्थना कर रहा था कि चाहे जो भी खबर हो उसे सुनने की शक्ति उसे दे।

जब वे तीनों तप के कोने में बैठ गए तब पु ठ्रीअङा कहने लगा, “जैसे कि हम सब जानते हैं कि लंबे समय से हमारे परिवार का मन बहुत ही भारी था। खासकर वालतेअ ने अपने इस प्रेम के मार्ग में अपमान और दिल का दर्द सहना पड़ा। यहाँ तक कि हम उसके माता-पिता ने भी उसे अपने प्यार को छोड़ने के लिए सलाह दिया। लेकिन, कुछ बुरे लोगों ने हमें और हमारे समाज को धोखे में रखा था। मैं वालतेअ के लिए यह खबर बताने को बहुत बेताब हूँ। हमारी बेटी दारथङपुई पवित्र(निर्दोष) है।” यह सुनकर रोउछुआहा की खुशी रुकी नहीं गई और पुरुष होने के बावजूद वह अपने खुशी के उन आँसुओं को नहीं रोक पाया।

पी राङी ने भी बहुत उत्साह के साथ अपने बेटे से हाथ मिलाया। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि रमबुआई के बाद उनके परिवार ने उस रात जैसी खुशी का अनुभव पहले कभी नहीं किया था। पु ठ्रीअङा ने भी कहा कि इतने सालों में उन्होंने जितनी भी बातें कही, उनमें से यह वह बात थी जिसे कहने के लिए वे सबसे ज्यादा उत्सुक और खुश थे। सच तो यह है कि भले ही उन्होंने दारपुई को छोड़ने की सलाह दी थी, लेकिन अपने सबसे बड़े बेटे को इतने दर्द में देखते हुए कई बार उनके भी आँसू गिरे थे। और इसके साथ ही उन्हें दारपुई से भी नफरत होने वाला था। लेकिन, जब उन्हें महसूस हुआ कि अगर कोई अपनी ज़िंदगी अपनी मर्जी से जी रहे हैं तो उन्हें उनके प्रति नफरत करने का अधिकार नहीं है, इसलिए वे भारी मन से अपने बेटे को देखते थे।

उनकी इस खुशी को पूरा करने के लिए माँ ने उनके पास जो एक लोटा है, बिना दूध और शक्कर का चाय और गुड़ निकाला। शोर सुनकर रोउछुआहा के भाई-बहन भी जाग गए और फिर पूरे परिवार ने उनके दारपुई के निर्दोष होने का जश्न चाय के साथ मनाया। इसी बीच दारपुई के परिवार की खुशी भी कम नहीं थी। जिस रात उन्हें पता चला कि अपमानित होने पर घायल हृदय में परमेश्वर से किए गए प्रार्थना का फल उन्हें मिला है, उन्होंने पारिवारिक प्रार्थना में समय बिताया और रमबुआई, इंडिपेंडेंस और वॉलन्टियर- भारतीय सेना, इन सब के बारे चिंता किए बिना उन्होंने स-परिवार चाय के साथ जश्न मनाया।

दारपुई ने उसके सभी अनुरोधों और प्रार्थनाओं का उत्तर देने के कारण परमेश्वर को धन्यवाद दिया। सच अंत में जीत ही जाती है, हालाँकि इसके लिए समय लग सकता है। वह अपने आप को रोक नहीं पाई और फूट-फूट कर रोने लगी, और वह धीरे से कहने लगी, प्रभु... मेरी प्रार्थना सुनने के लिए आपको धन्यवाद... हे... प्रभु...

मुझे तेरी शरण में शांति मिल गई है,

मेरी आनंदमय गीत सब तक पहुँचे ,

पृथ्वी और स्वर्ग के सभी निवासियों के बीच;

आपने मुझे पाप और मृत्यु के अंधकार से बचाया है,

मैंने तुम्हें याद की, आप मेरे चट्टान है प्रभु .... उसके माता-पिता के भी खुशी के आँसू बहने लगे। पूरा परिवार रोने लगे और *'मेरे गालों में हमेशा खुशी के आँसू बहते हैं'* कथन उनके परिवार के लिए पूरी तरह सच साबित हुई।

पु रोउछुआहा अचानक चौंक कर जागे और मुझसे पूछने लगा, “बोईह् ई, क्या समय हुआ है?” मैंने जब घड़ी देखा तो बहुत देर हो चुकी थी। मैंने उठते हुए कहा, “अरे, पु रोछुआह, बहुत देर हो

गई है। मैं अभी के लिए निकलती हूँ। आपकी बातें सुनने में इतनी दिलचस्प कि मैं घड़ी देखना भी भूल गई। जैसे ही दोबारा अवसर मिलेगा, मैं फिर आऊँगी।" उन्होंने भी कहाँ, "हाँ, मैं भी चाहता हूँ कि तुम जल्दी ही फिर से आओ। जब तक मैं तुमसे इन सब बातों को नहीं बताऊँगा, तब तक मुझे भी चैन नहीं मिलेगा। दारपुई और मैं कैसे पति-पत्नी बने, यह सब बातें भी कहना है। चार सालों में हमने कितनी अनगणित मुश्किलों का सामना किया था! केवल इतना ही नहीं, 1973 में जब हमारे पूरा गाँव फिर से जल गया और तब हमारे समुदाय ने जो भारी दुःख सहा था," मुझे फिर से जल्दी आने के आग्रह करते हुए दोनों पति-पत्नी मुझे बरामदे तक छोड़ने आए।

'दिन बीते, महीने गुजरे और साल बीत गए। जैसे-जैसे समय बीतता हाई, वे यादें पुरानी होती जाती हैं, और वे नए युवा पीढ़ी के लिए पुराने जमाने की बात हो जाते हैं। पर मेरा मन उन यादों को नहीं छोड़ता, मैं बताना बंद नहीं कर सकता, दर्द जिसे भूलना मुश्किल है,' वे धीरे से कहने लगे। ढलते सूरज की मद्धम रोशनी में, मैं सड़क से पीछे की ओर मुड़ा और देखा कि वह बूढ़े मर्द और औरत, जिन्होंने कई परेशानियों और समस्याओं के बीच भी अपने प्यार को पनपाया था, अभी भी मुझे देख रहे थे, मैं खुशी से मुस्कुराने लगी और अपना हाथ हिलाकर उन्हें विद किया, और जब तक वे मुझे देख सकते थे तब तक वे भी हाथ हिलाते रहे। किसी तरह इस दृश्य ने मेरे दिल को खुशी दी।

मैं उनके द्वारा झेले गए दर्दनाक संघर्षों के बारे में सोचती रही, अगर मेरा जन्म मिज़ोरम के संघर्षो के दौरान हुआ होता, तो मैंने उन स्थितियों को कैसे झेला होता? मुझे नहीं लगता कि उन लोगों की निंदा करना सही है जिन्होंने अपने शरीर वाई (गैर मिज़ो) सैनिकों को बेच दिए और कोई भी ऐसे लोगों को दोषी नहीं ठहराया जा सकता जिन्होंने अपने देश को छोड़, सैनिकों का साथ दिया। बल्कि मैं यह सोचने लगी कि आज की परिस्थिति में भी कितने लोग ऐसे होंगे जो अपने ही देश को बेच रहे हैं। ऐसा कोई नहीं होगा जो हमेशा डर-डर के अपना जीवन व्यतीत करें और भूख में साये में रहे। ऐसे समय में परमेश्वर पर भरोसा करने की आवश्यकता साफ दिखाई देती है। लेकिन, जब हम इंसानों का विश्वास डगमगा जाता है, क्या हम सबसे आसान रास्ते को नहीं अपना लेते हैं?

यदि हम ज़ोरम(मिज़ोरम) कि वर्तमान स्थिति पर गंभीरता से विचार करें, तो यह वास्तव में बहुत चिंताजनक है। अपनी कोई वास्तविक नवीनता या ठोस उत्पादन न होने के बावजूद, हम केवल अपनी परिस्थितियों के लाभों पर निर्भर रहते हैं, हम दूसरे देशों के आधुनिक उत्पादों और उन्नत निर्माणों को तुरंत अपना लेते हैं और उन्हें अपने यहाँ ले आटे हैं। बिना किसी शर्म के, हम उन्ही विदेशी वस्तुओं से खुद को सजाते हैं और गर्व से सिर उठाकर चलते हैं। हालाँकि हम टेक्नॉलजी के क्षेत्र में काफी उन्नत दिखते हैं, लेकिन हमारी सोच उस स्तर तक नहीं पहुँच पाई है। जितना हम अपनी प्रगति पर गर्व करते हैं, हम उससे कहीं अधिक मूर्ख हैं। सच बात तो यह है कि मिज़ो ही एकमात्र ऐसा जनजाति है जिसे 'ह्नम मोल' (पिछड़ी हुई जनजातियों) में गिना जा सकता हैं। हमारी बुद्धि और हमारी आधुनिकता एक कटी हुई पूँछ की तरह है, हम आधुनिकता और अज्ञानता को एक साथ चला रहे हैं, इसलिए हमारे राष्ट्र के लिए प्रगति होना कठिन होगा। कभी-कभी मुझे लगता है कि हम अफ्रीकी द्वीपों और रेगिस्तानों में रहने वाले अफ्रीकी असमृद्ध लोगों से भी अधिक अभागे हैं। भले ही वे पूरी तरह से मूर्ख है, लेकिन न तो उन्हें आधुनिक चीजों की चाहत है और न ही वे दुसरें देशों की प्रगति से कोई प्रेरणा नहीं लेते।

रास्ते में मेरी मुलाकात रिनओमा और कोकतू ज़ाईह्लुना की बेटी लिज़ी से हुई। उनसे ठोड़ी देर बात करने की वजह से काफी समय बीत गया और अंधेरा भी हो गया था। आगे चलकर मेरे मन में पु रोउछुआहा की कुछ बातें मुझे याद आया और मुझे ऐसा लगने लगा कि लिज़ी के परिवार के हाथों में किसी निर्दोष का खून लगा है! लियनज़ुआली (लिज़ी) और थेनज़ोल के एक अच्छा युवक रिनओमा दोनों भविष्य में कैसा परिवार बसाएँगे? इनके रिश्ते के बारे में तो हर कोई जानता है, वहीं एक ऐसा व्यक्ति भी है जो इन दोनों के रिश्ते के वजह से अपना पूरा जिंदगी गहरे दिल के दर्द के साथ जीने वाला है...

संदर्भ

[1] ईसाई धर्म के पुराने नियम के अनुसार मूसा लेवी जनजाति का इस्राएली और एक सुप्रसिद्ध नबी था। मिस्र के इस्राएली गुलामों को निकालने के लिए यहोवा द्वारा बुलाया गया था। उनके जन्म के तीन महीने बाद उसे छिपाया गया और फिरौन की बेटी द्वारा मिलने पर उसे फिरौन की बेटी ने मिस्र के दरबार में पाला था ताकि वह फिरौन के आदमियों द्वारा बाकी इस्राएली नर शिशुओं की तरह मारा न जाए। मिस्र से इस्राएलियों को छुड़ाने किस प्रकार छुड़ाया गया, किस प्रकार की मुश्किलें उन्हें सामने करना पड़ा, मिस्र से निकलने के बाद उनकी स्थिति आदि पुराने नियम के निर्गमन पुस्तक के दूसरे अध्याय से लेकर अठारह अध्याय तक में दिया गया है।

[2] मिज़ो संस्कृति में एक विवाहित महिलाओं या एक बुज़ुर्ग महिलाओं के लिए आदरसूचक शब्द

[3] मिज़ो संस्कृति में बेटी समान लड़कियों को प्यार से बुलाने का संबोधन

[4] 'दावत या त्योहार'

[5] मिज़ो संस्कृति में बेटी समान लड़कियों को प्यार से बुलाने का संबोधन

[6] जिसका अर्थ एक विधुर या तलाकशुदा पुरुष

[7] तुआलते, मिज़ोरम के चम्फाई जिले का एक गाँव है, जो खोज़ोल आर.डी. ब्लॉक में स्थित है।

[8] पुराने ज़माने का

[9] मिज़ो संस्कृति में गाँव के लोग अपने-अपने खेतों में खेती के लिए एक साथ जाते थे। मिज़ो लोगों के खेत उनके गाँव से दूर होने के कारण एक दूसरे के लिए इंतज़ार करने का स्थान भी बनाया जाता था, और उस स्थान से सभी एक साथ निकलते थे। उस इंतजार करने का स्थान को ही मिज़ो भाषा में 'इनङ्हा खोमना ह्मुन' कहा जाता है।

[10] मिज़ो संस्कृति में बेटी समान लड़कियों को प्यार से बुलाने का संबोधन

[11] चोङत्लाई, मिज़ोरम के चम्फाई जिले का एक गाँव है, जो खोज़ोल आर.दी ब्लॉक में ही स्थित है। चोङत्लाई और तुआलते गाँव 9.4 किलोमीटर की दूरी में स्थित है।

[12] लेखिका ने एक मिज़ो मुहावरे का प्रयोग किया है- 'तुबउह लेह दोउलुङ इनकारा त्लज़ेप'। अर्थात् 'तुबउह' और 'दोउलुङ' के बीच खतरनाक स्थिति में रहना। 'तुबउह' का अर्थ है' हथौड़ा' और 'दोउलुङ' का अर्थ है 'निहाई'। किसी वस्तु को निहाई पर रखकर हथौड़े से पीटा जाता है। इसलिए हथौड़े और निहाई के बीच पिटे जाने वाले के लिए इस मुहावरे का प्रयोग किया जाता है। इस मुहावरे का प्रयोग खासकर मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो विद्रोहियों और भारतीय सेना के बीच पिस रहे गाँव के साधारण लोगों की स्थिति को बताने के लिए किया गया है। हिन्दी में ठीक इसी भाव का एक मुहावरा है- 'दो पाटों के बीच पिसना'।

[13] 'ह्नम' का अर्थ है 'जाति अथवा जनजाति' और 'सिपई' का अर्थ है 'सेना'। जब एम.एन.एफ. का गठन हुआ था तब वह एक राजनीतिक पार्टी न होकर एक जनजातीय सेना थी, जिसका गठन अपने राज्य या जनजाति की स्वतंत्रता के लिए लड़ने वाली सेना के रूप में किया गया था।

[14] पारंपरिक मिज़ो या लुशाई घरों में कमरे की एक दीवार से सटी हुई जगह जहाँ आग जलायी जाती है और भोजन पकाया जाता है, उसे 'तपछक ज़ोल' कहा जाता है।

[15] पारंपरिक मिज़ो या लुशाई घरों के मुख्य द्वार पर लकड़ी के लट्ठों पर बाँस की चटाई डालकर बनाये गये चबूतरे को 'लेईका' कहते हैं और घरों के मुख्य द्वार के सामने अलग से लकड़ी के लट्ठों पर बाँस की चटाई डालकर बनाये गये चबूतरे को 'लेईकापुई' कहा जाता है।

[16] एक नए फिरौन जो यूसुफ के बारे में नहीं जानता था, राज्य बन गया और चूँकि इस्राएलियों की आबादी मिस्रियों से ज्यादा थी, इसलिए नए फिरौन ने उन्हें गुलाम बनाकर उन पर भार डालकर कठोरता से सेवा करवाया। मिस्र में 430 साल तक इस्राएली गुलाम बंकर रहे। विस्तार से जानने के लिए ईसाई धर्म के पुराने नियम के निर्गमन पुस्तक में पढ़ा जा सकता है।

[17] मिज़ो समाज में मिज़ो युवक रात को अपनी पसंदीदा युवती से मिलने उनके घर जाते हैं, उसे मिज़ो भाषा में 'नुलारीम' कहा जाता है। 'नुला' का अर्थ है युवती और 'रीम' का अर्थ है 'लुभाना'। अर्थात यह कहा जा सकता है कि मिज़ो युवक का अपनी पसंदीदा युवती को लुभाने के लिए उसके घर जाना 'नुलारीम' है। इसे संक्षेप में 'रीम' भी कहते हैं।

[18] दारथङपुई; मिज़ो लोग नाम को प्रायः संक्षिप्त करके बुलाते हैं। दारथङपुई को ही उपन्यास में कभी दारथङी, दारी और कभी दारपुई नाम से संबोधित किया गया है।

[19] मिज़ो लड़के मिज़ो लड़कियों द्वारा तंबाकू को कागज में लपेटकर बनाए गए सिगरेट को चाव से पीते हैं, जिसे लड़कियाँ लपेटकर अपने थूक से चिपकाती हैं।

[20] मिज़ो घर / झोपड़ी के छप्पर के अंदरूनी भाग को 'दीतिप' कहा जाता है।

[21] मिज़ो संस्कृति में जब एक शिकारी अपने शिकार / जंगली जानवर को मार गिराता है, तब गाँव के लोगों को सूचित करने के लिए एक जोरदार आवाज़ में वह अपनी जीत की घोषणा करता है, जिसे 'ह्ला दोउ छम' कहा जाता है।

[22] ईस्ट लुङदार गाँव को गाँव वाले प्यार से 'दार खोपुई' कहते हैं। 'खोपुई' का अर्थ है शहर या वह प्रमुख गाँव जहाँ मुखिया रहता है और 'दार' ईस्ट लुङदार का संक्षिप्त रूप है।

[23] नीचे की ओर पतली होती हुई एक लंबी, बारीकी से बुनी हुई बाँस की टोकरी को 'दोरोन' कहते हैं। इसे खास तौर पर चावल ढोने और मापने के लिए प्रयोग किया जाता है।

[24] मिज़ो समाज में युवती अपने पसंदीदा युवक के लिए सिगरेट बनाकर उसे अपने थूक से चिपकाती है। उस सिगरेट को उस युवती का प्रेमी चाव से पीता है।

[25] गुड़, जिसे मिज़ो संस्कृति में बिना चीनी वाली चाय के साथ खाया जाता है।

[26] मिज़ो समाज और संस्कृति में विवाहित, बुज़ुर्ग, वरिष्ठ या सम्मानित व्यक्ति के संबोधन के लिए 'क पू' शब्द का प्रयोग किया जाता है। पुरुषों के लिए 'क पू' और महिलाओं के लिए 'क पी' जैसे अदारसूचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इसे हिन्दी के 'महाशय' शब्द का स्थानापन्न माना जा सकता है।

[27] एक प्रकार की मछली।

[28] मिज़ो भाषा में युवक को 'त्लङवाल' कहा जाता है।

[29] मिज़ो भाषा में भारतीय लोगों (गैर मिज़ो) को 'वाई' कहा जाता है।

[30] मिज़ो भाषा में मिज़ोरम राज्य के बाहर के गैर मिज़ो भारतीय राज्यों को 'वाई रम' कहा जाता है। 'वाई रम' मतलब बाहरी लोगों का देश।

[31] मिज़ोरम एक पहाड़ी राज्य है जहाँ मिज़ो सुख और शांति से रहते हैं, और यहाँ का पर्यावरण और मौसम सुखद है, इसलिए मिज़ोरम को 'जोउत्लाङ रम नुआम' कहकर संबोधित किया जाता है। 'जोउ' का अर्थ है 'मिज़ो', 'त्लाङ' का अर्थ है 'पहाड़', 'रम' का अर्थ है 'देश' और 'नुआम' का अर्थ है 'सुखद'।

[32] मिज़ो विद्रोह के दौरान भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों (एम.एन.एफ.) ने मुख्यतः गुरिल्ला युद्ध की रणनीतियों को अपनाया था। उन्होंने भारतीय सैनिकों पर घात लगाकर हमला किया, मारो और भागो जैसा आक्रमण किया, छिपने के लिए घने जंगलों का प्रयोग किया था, जो गुरिल्ला युद्ध की पारंपरिक विशेषताएँ है। गुरिल्ला युद्ध में छोटे और गतिशील समूह अधिक शक्तिशाली सेना पर हमला करके तुरंत पीछे हट जाते हैं।

[33] मिज़ो में एक मुहावरा है 'ज़ोङा तुआर आई ङाउ इन अ तुआर' जिसका अर्थ है बंदर के अपराध की सजा लंगूर को भुगतनी पड़ती है अर्थात् दूसरों के बदले कष्ट सहना। 'जोङ' का अर्थ है बंदर और 'ङाउ' का अर्थ है 'लंगूर'। बंदर झूम खेती में शरारत करता है लेकिन डर कर भाग जाता है। लंगूर शरारती नहीं है, लेकिन बंदर के कारण वह पीड़ित होता है क्योंकि लोग जब बंदर को मारने की कोशिश करते हैं, तो वे गलती से लंगूर को मार देते हैं। इसलिए इस मुहावरे का उपयोग दूसरों के किए की सज़ा भुगतने के अर्थ में किया जाता है।

[34] रमबुआई का अर्थ है- मिज़ोरम में अशांति का समय। 1966 से 1986 तक चले मिज़ो विद्रोह की 20 वर्षों की अवधि को मिज़ो लोग रमबुआई यानि 'मिज़ोरम में अशांति का समय' कहते हैं।

[35] मिज़ो संस्कृति में बेटी समान लड़कियों को प्यार से बुलाने का संबोधन

[36] धान/चावल की फसल का एक विशिष्ट प्रकार जो धान की आम फसल की तुलना में जल्दी और पहले तैयार हो जाती है।

[37] हिन्दी में इसका अर्थ है– कटाई का औजार, दराँती या हँसुआ

[38] मिज़ो में एक मुहावरा है "ह्मारा ह्लीत फॉई अङ" जिसका शाब्दिक अनुवाद है नाक में घुसे हुए जोंक के निकल जाने जैसी राहत। मिज़ो में यह मुहावरा चिंता से मुक्त या समस्या से मुक्त के अर्थ में प्रयोग किया जाता है।

[39] यहाँ लेखिका ने एक मिज़ो कहावत का प्रयोग किया है "माह्नी ताना चकआई खोरह्" जिसका अर्थ है अपने लिए काम करना या स्वयं के प्रयासों का परिणाम प्राप्त करना। यहाँ 'चकआई' का अर्थ है 'केकड़ा' और 'माह्नी ताना' का अर्थ है अपने लिए। जब समूह में मिज़ो लोग केकड़ा पकड़ने जाते थे तब जो व्यक्ति जिस केकड़े को पकड़ता, वह केवल उसके अपने लिए होता था। इसी संदर्भ में मिज़ो भाषा में इस कहावत का प्रयोग किया जाता है।

[40] मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना का सहयोग करने वाले को 'कोकतू' कहा जाता था। उन्हें अपनी ही जाति को धोखा देने वाले के रूप में जाना जाता था। हिन्दी में इसका पर्याय 'मुखबिर' है। कोकतू की असली पहचान को गुप्त रखा जाता था।

[41] यहाँ मिज़ो मुहावरा 'बेङा रोङा लूत लोउ' का प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ है किसी बात को महत्त्व न देना या बातों को अनसुना करना।

[42] मिज़ो भाषा में इसे 'ठ्रीआन छन थिह ङम' कहा जाता है जो मिज़ो संस्कृति में बहुत ही प्रचलित है। 'ठ्रीआन' का अर्थ है 'दोस्त', 'छन' का अर्थ है 'बचाना', 'थिह ङम' का अर्थ है 'मौत से न डरना', अर्थात् दोस्त या किसी को बचाने के लिए अपना जान देना। इसका अर्थ यह है कि मिज़ो संस्कृति में अपने दोस्त ही नहीं किसी पराए को बचाने के लिए भी अपना जान देना एक बहादुरी का काम माना जाता है। यह बहादुरी आज भी मिज़ो लोगों के ह्रदय में गहरी तरह से मौजूद हैं।

[43] यहाँ मिज़ो मुहावरे 'बेङा रोङा लूत लोउ' का प्रयोग किया गया है जिसका हिन्दी में इस मुहावरे की सबसे नजदीकी मुहावरा 'कान पर जूँ रेंगना' का प्रयोग किया गया है।

[44] मिज़ो भाषा में युवतियों को संबोधन करने के लिए 'नुला' का प्रयोग किया जाता है।

[45] मिज़ो पूर्वजों के अनुसार 'लसी' वह होती है जो सभी जानवरों का शासक है, और वह एक अति सुंदर युवती हैं। हिन्दी में इसका अनुवाद 'जंगल की परी' कहा जा सकता है।

[46] मिज़ो शब्द में हिन्दी भाषा का 'तीतर'

[47] मिज़ो में एक मुहावरा है 'पान लोवह थोउ अ फु ङाई लोउ' जिसका अर्थ है 'केवल घाव में ही मक्खी बैठता है', अर्थात् जिस बारे में कई बार कहा गया हो, वह सच होना। 'पान' का अर्थ है 'चोट का घाव' और 'थोउ' का अर्थ है 'मक्खी'। मक्खी घाव पर ही बैठ जाता है, और यदि मक्खी को पसंद हो जाता है तो वह घाव ही होता है, इस प्रकार यदि किसी चीज को बार-बार बोला गया हो, वह सच निकल जाता है, इसलिए इसकी तुलना करके इस अर्थ में प्रयोग किया जाता है।

[48] मिज़ो औरतों द्वारा कमर में लुंगी की तरह लपेट पर पहना जाने वाला आयताकार कपड़ा

[49] मिज़ोरम के चर्च के सदस्यों द्वारा चुने गए सम्मानित और जिम्मेदार व्यक्ति

[50] यहाँ लेखिका ने एक मिज़ो कहावत का प्रयोग किया है "माह्नी ताना चकआई खोरह्"। अधिक जानकारी 43 में दिया गया गया है।

[51] जहाँ पहाड़ से रिस-रिस कर आ रहा पानी को इकट्ठा किया जाता है। हिन्दी में उसे जल-कुंड कहा जा सकता है।

[52] बेंत और बाँस से बनी चौकी, पुराने समय से हर मिज़ो घर में पाया जाता है।

[53] साफ किये गए चावल रखने का मिट्टी का पात्र

[54] 'अ दुहतू बान अ सेई' – मिज़ो में प्रसिद्ध कहावत है, जिसका हिन्दी शाब्दिक अनुवाद है – चाहने वाले के हाथ लंबे होते हैं। इस कहावत का अर्थ यह है कि जिसे किसी चीज़ की ज़रूरत है या जो किसी चीज़ को पाना चाहता है, कोशिश भी उसी को करनी चाहिए। हिन्दी में इसकी करीबी भाव एक कहावत है – 'प्यासा कुएँ के पास जाता है, कुआँ प्यासे के पास नहीं जाता।

[55] एक विशेष प्रकार का पाइप है जिसका उपयोग पुराने समय में मिज़ो पुरुष और महिलाएँ तंबाकू पीने के लिए करते थे। यह एक पारंपरिक हुक्का या तंबाकू पाइप होता है, जो मिज़ोरम की विरासत का एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण हिस्सा है।

[56] झूम का किनारा

[57] मिज़ो में सहेली या सखी को बुलाने का संबोधन

[58] यह एक ऐतिहासिक और बाइबल संबंधी रूपक है, जो 'छलपूर्ण परोपकार' की और दर्शाता है। यह 3 ज्योतिषियों से राजा हेरोडस के उस झूठे वादे को संदर्भित करता है जिसमें उसने नवजात शिशु यीशु की वंदना करने की बात कही थी। वास्तव में, यह यीशु को मारने की एक रणनीति चाल थी, जिसका अंत बेथ्लेहम और उसके आसपास के स्थानों के मासूम बच्चों, 2 वर्ष के या उससे छोटे, के नरसंहार में हुआ। हेरोडस की वंदना का यह संदर्भ पवित्र बाइबल के मत्ती रचित सुसमाचार, अध्याय 2:1-18 पद से लिया गया है। यहाँ हेरोडस की वंदना – 'मदद की दिखावा करना लेकिन वास्तव में विनाश करना' के अर्थ में लिया जा सकता है। भारतीय सरकार द्वारा हेलिकाप्टर से गिराए गए चावल

के बोर, जो मदद के नाम पर भेजे गए थे, वे गाँव वालों के घरों और सूलों की तबाही और मौतों का कारण बन गया था।

[59] मिज़ो संस्कृति में उम्र में बड़े जैसे दीदी, भाई को बुलाने का संबोधन

[60] पारंपरिक मिज़ो या लुशाई घर में, चूल्हे के ऊपर की मचान को 'रपचुङ' कहा जाता है।

[61] पारंपरिक मिज़ो या लुशाई घर के चूल्हे को थुक कहा जाता है।

[62] पारंपरिक मिज़ो संस्कृति में मांस के बचे हुए चर्बी को तला जाता है, चर्बी के पिघले हुए तेल को ही 'सशियाक' कहा जाता है। इसी तेल को ही खाना बनाने में प्रयोग किया जाता है।

[63] पारंपरिक मिज़ो या लुशाई घर का सामने का बरामदा, जहाँ धान कूटने के लिए बड़ा लकड़ी का ओखला स्थायी रूप से स्थापित किया जाता है।

[64] अर्थात दोनों सिपाहियों के दबाव और संघर्ष के बीच

[65] यहाँ लेखिका ने एक मिज़ो कहावत का प्रयोग किया है "ज़ोङा तुआर आई ङाउ इन अ तुआर"। विस्तृत विवरण के लिए देखें- संदर्भ संख्या 33।

अध्याय- 4

मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद की समस्याएँ

3.1 भाषिक भिन्नता: मिज़ो तथा हिन्दी भाषा की भिन्न प्रकृति

3.2 सांस्कृतिक भिन्नता: रचना की संवेदना के अनुवाद की समस्या

4. मिज़ो से हिन्दी अनुवाद की समस्याएँ

भारत बहुभाषा-भाषी देश है जहाँ लगभग हर राज्य की अपनी भाषाएँ और बोलियाँ हैं। भारत के प्रत्येक राज्यों का अपना अनूठा साहित्य है। जिस प्रकार हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध इतिहासकार आ. रामचन्द्र शुक्ल जी ने अपने पुस्तक 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' के कालविभाग विषय के अंतर्गत साहित्य और जनता के संबंध में लिखा है – *"जबकि प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है, ...जनता की चित्तवृत्ति बहुत कुछ राजनीतिक, सामाजिक, सांप्रदायिक तथा धार्मिक परिस्थिति के अनुसार होती है,"* उसी प्रकार साहित्य एक ऐसा महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी माध्यम है जो हर समाज और संस्कृति के विभिन्न पहलुओं तथा तत्वों को अन्य लोगों के सामने प्रस्तुत करता हैं। साहित्य उस राज्य की समाज एवं संस्कृति के साथ जुड़ा रहता है इसलिए भारतीय साहित्य अविश्वसनीय रूप से विविध है। परंतु इस विविधता के बीच एक ही देश में रहते हुए भी विभिन्न राज्यों में प्रचलित विभिन्न भाषाओं और बोलियों के कारण लोगों के बीच आपसी जुड़ाव तथा किसी दूसरे स्थान, समाज तथा संस्कृति के बारे में जानकारी प्राप्त करना कठिन हो जाता हैं।

साहित्य का संबंध एक विशेष देशकाल से होता है। लेखक प्रायः अपनी मातृभाषा में साहित्य रचना करता है। इस कारण उन रचनाओं का क्षेत्र सीमित हो जाता है। ऐसे में, किसी भी भाषा में उस विशेष साहित्य या साहित्यिक रचनाओं का अनुवाद उस विशेष भाषा के साहित्य के विस्तार में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अतः अन्य भाषा-भाषियों तक पहुँचाने के लिए उस विशेष भाषा के साहित्य का अनुवाद अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। अन्य भाषा में अनुवाद करने पर स्रोत भाषा के साहित्य और उस साहित्य से जुड़े समाज एवं संस्कृति को भी विस्तार मिलता है।

एक भाषा में कही गई बात को दूसरी भाषा में अर्थपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करने की प्रक्रिया अनुवाद है। *"किसी एक भाषा (स्रोत भाषा) की पाठ्य-सामग्री को किसी दूसरी भाषा (लक्ष्य भाषा) में उसी रूप में रूपांतरित करना अनुवाद है।"*[1] डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार, *"एक भाषा में व्यक्त विचारों को,*

यथासंभव समान और सहज अभिव्यक्ति द्वारा दूसरी भाषा में व्यक्त करने का प्रयास अनुवाद है।"[2] पट्टनायक के अनुसार, *"अनुवाद वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सार्थक अनुभव (अर्थपूर्ण संदेश या संदेश का अर्थ) एक भाषा-समुदाय से दूसरे भाषा-समुदाय को संप्रेषित किया जाता है।"*[3]

उपर्युक्त कथनों से यह प्रतीत होता है कि अनुवाद प्रक्रिया सहज एवं सरल कार्य नहीं है। अनुवादक को स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा दोनों भाषाओं का अच्छा ज्ञान होना आवश्यक है इसके साथ ही उसे विषय का गहन और गंभीर ज्ञान भी होना चाहिए। अनुवाद प्रक्रिया केवल शब्दों और वाक्यों का ही भाषांतरण करना नहीं होता बल्कि स्रोत भाषा की सामग्री में व्याप्त अर्थ, भाव आदि को अनुवाद में समाहित करना भी है। इसके साथ ही अनुवादक को दोनों भाषाओं के समाज के विभिन्न पहलुओं की अच्छी जानकारी भी अनिवार्य है। किसी साहित्यिक का अनुवाद केवल भाषा का रूपांतरण नहीं होता बल्कि स्रोत भाषा एवं लक्ष्य भाषा, दोनों के संस्कृतियों के बीच सेतु बनाता है।

जी. गोपीनाथन एवं एस. कंदस्वामी ने अपने पुस्तक 'अनुवाद की समस्यायें' में 'अर्थ' और 'शैली' की समस्याओं को अनुवाद की समस्याओं के दो कोटियों में वर्गीकृत किया है। उनके अनुसार *"अनुवाद में अर्थ की प्रमुख समस्या सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ के अन्तरण में पैदा होती है। सामाजिक-सांस्कृतिक विभिन्नताएँ हिन्दी एवं विदेशी भाषाओं के बीच में ही नहीं, हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के बीच भी द्रष्टव्य हैं। ये समस्याएँ सामाजिक-सांस्कृतिक शब्दावली, मुहावरों और लोकोक्तियों, लोक बिंब, अलंकार एवं मिथक तथा हास्य-व्यंग्य के अनुवाद में विशेष रूप से पैदा होती हैं... शैली की समस्याएँ स्रोत एवं लक्ष्य भाषा की व्यतिरेकी संरचनाओं के कारण पैदा होती हैं। ये समस्याएँ स्वनिम, शब्दकोश, रूप एवं वाक्य के स्तर की होती हैं।"*[4]

भारत के उत्तर पूर्वी भाग में स्थित मिज़ोरम राज्य की मातृभाषा 'मिज़ो' है और इस राज्य के रचनाकारों ने साहित्यिक रचना अधिकतर अपनी मातृभाषा में ही की हैं। "डॉ. जॉर्ज एब्राहम ग्रियर्सन ने मिज़ोउ भाषा को मंगोलिया भाषा परिवार के अंतर्गत तिब्बती-बर्मन भाषा परिवार के कूकी-चीन समूह में सम्मिलित किया है।"[5]

4.1 भाषिक भिन्नता : मिज़ो तथा हिन्दी भाषा की भिन्न प्रकृति

मिज़ो और हिन्दी, दोनों भाषाएँ दो भिन्न भाषिक परिवारों से संबंध रखती हैं – जहाँ मिज़ो भाषा तिब्बती-बर्मन भाषा परिवार से संबंध रखती है, वहीं हिन्दी आर्य भाषा परिवार की आर्य भाषा परिवार की भाषा है। इस कारण दोनों भाषाओं के बीच गहरी भाषिक भिन्नता है। इस भाषिक भिन्नता के कारण मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद करते समय अनेक समस्याएँ पैदा होती मिज़ो और हिन्दी की व्याकरणिक संरचनाएँ भिन्न है। हिन्दी में सामान्य रूप से वाक्य संरचना ‘कर्ता+कर्म+क्रिया’ होती है, वहाँ मिज़ो की वाक्य संरचना ‘कर्म+कर्ता+क्रिया’ होती है, लेकिन विशेष स्थिति में ‘कर्ता+कर्म+क्रिया’ क्रम भी प्रयोग किया जाता है। उदाहरण के लिए –

(i) ‘chaw ka ei mek’ (चो क एई मेक) यहाँ ‘चो’ कर्म, ‘क’ कर्ता और ‘एई मेक’ क्रिया है, अतः इसका मिज़ो वाक्य संरचना के आधार पर अनुवाद ‘खाना मैं खा रहा हुँ’ हो जाता है जो कि हिन्दी वाक्य संरचना से मेल नहीं रखता। इसका हिन्दी वाक्य संरचना के आधार पर सही अनुवाद होगा ‘मैं खाना खा रहा हुँ’।

(ii) ‘Kimi’n chaw a ei’ (किमी’न चो अ एई) यहाँ ‘किमी’न कर्ता, ‘चो’ कर्म और ‘एई’ क्रिया है। इस वाक्य में ‘अ’ सर्वनाम है जिसका अर्थ है ‘वह’। इस वाक्य का अनुवाद ‘किमी खाना खाती है’ हो जाता है। मिज़ो भाषा में कर्ता में ‘n’ (न) परसर्ग प्रमुख हैं। इस वाक्य की संरचना हिन्दी वाक्य संरचना के समान है लेकिन मिज़ो में काल और पक्ष को दर्शाने के लिए विशिष्ट अवयवों और प्रत्ययों का प्रयोग किया जाता है जिनका हिन्दी में नहीं किया जाता।

उसी प्रकार मिज़ो भाषा में विशेष प्रकार के क्रिया रूप भी होते हैं जिनका हिन्दी में अनुवाद नहीं किया जा सकता। मिज़ो और हिन्दी वाक्यों की व्याकरणिक संरचना में भिन्नता के कारण उपन्यास में प्रयोग किये गए लंबे और कठिन वाक्यों का अनुवाद अधिक कठिन हो जाता है। इस कारण मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद करते समय अर्थ की स्पष्टता में बाधा उत्पन्न हो जाती हैं।

‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ उपन्यास 1966 के मिज़ो विद्रोह और सामाजिक पीड़ा को दर्शाने वाला उपन्यास है। यह उपन्यास मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो समाज की संवेदना, संघर्ष, समुदायिकता और सांस्कृतिक मूल्यों को दर्शाता है। इस तरह के गहन भावनात्मक और सांकृतिक रूप से जटिल उपन्यास का हिन्दी में अनुवाद करना एक जटिल कार्य बन जाता है और भाषिक भिन्नता एक बड़ी चुनौती बन जाती है।

मिज़ो भाषा में कई तरह की लयात्मक ध्वनियाँ और टोन होते हैं जिससे उच्चारण के समय ले के उतार-चढ़ाव के कारण शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं, लेकिन हिन्दी में ऐसा नहीं होता। जैसे उपन्यास में प्रयुक्त ‘hmûi’ (ह्मुई) शब्द को देखा जा सकता है – “Hmûi hmanga eizawn tum hi an tam bawk si.”[6] प्रस्तुत वाक्य में प्रयुक्त ‘hmûi’ (ह्मुई) शब्द में ‘û’ में लगने वाला ‘^’ मात्रा मिज़ो भाषा में ‘falling tone’ (गिरता स्वर) का प्रतीक होता है, इसके सही उच्चारण के साथ सही अर्थ निकलता है। यदि ‘u’ में लगने वाला मात्रा को हटा दिया जाए या महत्त्व नहीं दिया जाए तो इसका अर्थ भिन्न हो जाता और अनुवाद करते समय वाक्य का अर्थ बदल जाता। ‘hmûi’ (ह्मुई) शब्द मिज़ो भाषा का मुहावरा है जिसका अर्थ है – आसान तरीके से। अतः उपर्युक्त वाक्य का सही अनुवाद है – ‘ऐसे बहुत से लोग हैं जो आसान तरीके से पैसे कमाना चाहते हैं।’ मिज़ो भाषा में कई शब्द ऐसे हैं जिनके उच्चारण के अनुसार अलग-अलग अर्थ होते हैं। ऐसे शब्दों के अनुवाद में कठिनाई होती है। अनुवाद करते समय संदर्भ के अनुसार उनके सही अर्थ को पकड़ना जरूरी होती है, वरना अर्थ का अनर्थ होने की पूरी संभावना होती है।

मिज़ो भाषा में कई शब्द हैं जिनके उच्चारण के अनुसार अलग-अलग अर्थ होते हैं। उपन्यास से लिए गए अनेकार्थी मिज़ो शब्दों के कुछ और उदाहरण निम्न हैं –

Bang(बङ) – एक जैसा दिखना, छोड़ना, दीवार, रुकना, लटकना, स्थापित करना, बचा हुआ ; Thawk (थोक) – काम करना, सेवा करना, सांस लेना; Phut (फूट) – चूर्ण, बेवकूफ, उम्मीद करना, अचानक; Tla (त्ला) – गिरना, पर्याप्त होना, चरना; Chhan (छन) – बचाना, कारण; Puan (पुआन) –

कपड़ा, घोषणा करना; Tar (तर) – बुढ़ापा, चिपकाना; Dai (दाई) – बाड़, बाहरी इलाका, पार करना; Fang (फङ) – एक बूंद, कुल्हाड़ी का सिर, भ्रमण करना; आदि।

मिज़ो भाषा में ऐसे कई शब्द हैं जो विशिष्ट स्थानीय अनुभवों और भावनाओं से जुड़े होते हैं जिनका हिन्दी में कोई सटीक शब्द या पर्याय नहीं होता। इसलिए मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद करते समय उस शब्द के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए परिभाषाओं की सहायता लिया गया है या हिन्दी के कुछ मिलती-जुलती शब्दों का प्रयोग किया गया है और कभी उस शब्द का लिप्यंतरण कर उसका अर्थ संदर्भ में दिया गया हैं। उदाहरण के लिए – 'Hnâwmtâm' (ह्नोमतम) और 'Sepsel' (सेपसेल) जैसे मिज़ो शब्द का हिन्दी में सटीक शब्द न होने के कारण 'कुछ दूसरी सामान्य चीजें' और 'छोटी-छोटी चीजों' जैसे शब्दों का क्रमशः प्रयोग किया जाता हैं। इसी प्रकार 'Vaihlo zial' (वाइह्लोउ ज़िआल) जिसका अर्थ है 'स्थानीय रूप से तंबाकू को कागज में लपेटकर बनाए गए सिगरेट' का हिन्दी में सबसे निकट पर्याय शब्द 'बीड़ी' का प्रयोग किया जाता है। मिज़ो का 'Nghaler' (ङ्हालेर) शब्द हिन्दी में नहीं है, जिसके कारण इसका लिप्यंतरण कर संदर्भ में स्पष्ट किया गया है।

'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में स्थानीय मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया गया हैं। मिज़ो के कुछ स्थानीय मुहावरों और लोकोक्तियों का हिन्दी में अनुवाद करते समय उनका अपना अर्थ और भाव खो जाता, जिस कारण समस्या उत्पन्न होता है। उपन्यास में मिज़ो की एक प्रसिद्ध मुहावरा 'Pan lovah tho a fu ngai lo' (पान लोवह थोउ अ फु ङाई लोउ)का प्रयोग किया गया है। हिन्दी में इस मुहावरें में निहित भाव को व्यक्त करने के लिए कोई विशिष्ट मुहावरा नहीं है। 'पान' का अर्थ है 'चोट का घाव' और 'थोउ' का अर्थ है 'मक्खी' 'फु ङाई लोउ' का अर्थ है 'नहीं बैठता'। जिस तरह मक्खी को किसी चोट के घाव या गंदगी से प्रेम होता है और वह बार-बार वही बैठ जाती है, उसी प्रकार यदि किसी चीज को बार-बार बोला गया हो, वह अंत में सच निकल जाता है, इसलिए इसकी तुलना करके इस अर्थ में प्रयोग किया जाता है। हिन्दी में अनुवाद इस प्रकार किया गया है : 'केवल घाव पर ही मक्खी

बैठता है’। इस अनुवाद से मुहावरे का शाब्दिक अर्थ को व्यक्त किया गया है लेकिन इस मुहावरें में छिपे भाव और अर्थ को पूरी तरह व्यक्त नहीं किया जा सकता। इससे अनुवाद कार्य में समस्या उत्पन्न होती है।

मिज़ो की कुछ लोकोक्ति और मुहावरा ऐसे भी हैं जो हिन्दी के कुछ मुहावरों और लोकोक्तियों से मिलती-जुलती हैं, अर्थात मिज़ो के लोकोक्ति और मुहावरों के समानार्थ भाव को व्यक्त करता है। जैसे – ‘Zawnga tuar ai ngau in a tuar’ (ज़ोङा तुआर आई ङाउ इन अ तुआर) जिसका अर्थ है दूसरों के बदले कष्ट सहना या इस मुहावरे का उपयोग दूसरों के किए की सज़ा भुगतने के अर्थ में किया जाता है। इस मुहावरे के लिए हिन्दी का मुहावरा ‘बलि का बकरी बनना’ उसी भाव को व्यक्त करता है। इसी तरह मिज़ो में प्रसिद्ध मुहावरा है ‘Tuboh leh Dolung inkara tlazep’(तुबउह लेह दोउलुङ इनकारा त्लज़ेप) जिसका शाब्दिक हिन्दी अनुवाद हो सकता है ‘हथौड़े और निहाई के बीच फँसना’। हिन्दी में इस मुहावरे का समान भाव को व्यक्त करने वाली हैं – ‘दो पाटों के बीच पिसना’। भले ही कुछ समतुल्य हिन्दी मुहावरे और लोकोक्ति भी हो, मिज़ो मुहावरों और लोकोक्तियों का उनके समाज और संस्कृति के साथ गहरा संबंध होता है, जिसके कारण स्रोत भाषा के लोकोक्ति और मुहावरे का अनुवाद करते समय उसमें निहित भावों को सटीक रूप से व्यक्त करना कठिन हो जाता है। इससे अनुवाद में समस्या उत्पन्न होती है।

उपन्यास में परिस्थिति के अनुरूप कविताओं और गीतों का प्रयोग किया गया हैं, जो केवल भाषा का सौन्दर्य ही नहीं बल्कि संवेदना का स्रोत भी है। हिन्दी में अनुवाद करते समय गीतों और कविताओं की ध्वनि, लय, काव्यात्मकता और गीतात्मकता को उसी भाव के साथ अनुवाद करना कठिन हो जाता है, जिससे अनुवाद में समस्या पैदा करती हैं। जैसे उपन्यास की नायक और नायिका अपने दुःख और पीड़ा को गीत एवं कविता के माध्यम से व्यक्त करते हैं लेकिन हिन्दी में अनुवाद करने पर गीतों में छिपे भावना को मूल संवेदना के साथ अनुवाद करना कठिन हो जाता है अतः अनुवाद में समस्या उत्पन्न होती है। एक उदाहरण –

मैं तुम्हें अपनी शुभकामनाएँ और सुरक्षा अर्पित करता हूँ,

जो हमेशा तुम्हारे साथ रहेगी,

सृष्टिकर्ता ने तुम्हें पूर्ण सौन्दर्य से सजाया है।

केवल मैं ही नहीं,

तुम्हारे माता-पिता भी तुम्हारी प्रशंसा करना नहीं छोड़ते।

युवक तुम्हें ही देखते और युवतियाँ तुमसे ईर्ष्या करते,

लेकिन, तुम्हारे स्तर तक कोई नहीं पहुँच सकता।

स्वर्ग के फ़रिश्ते भी तुमसे ईर्ष्या करते।

फ़रिश्ते भी तुम्हारे लिए अपने द्वार खोल देते,

क्या वे रास्ते में बाधा नहीं बनेंगे... अपने प्रेम का संदेश साझा कर रहे।

दुनिया की आलोचनाओं की परवाह नहीं करता,

उन्हें पुराने कपड़ों की तरह त्याग दिया है,

सुंदरी के कदमों के साथ चलने के लिए।

उपर्युक्त कविता का अनुवाद करते हुए उसकी लय और उसके छंद को मूल की तरह बनाये रख पाना संभव नहीं हो सका है।

अन्य भाषाओं की तरह मिज़ो में भी काव्यात्मक शब्दों का भंडार है, जैसे – Chun leh zua (चून लेह ज़ुआ) – 'माता–पिता', Chhawrthlapui leh Siar (छोरथ्लपुई लेह सिआर) – 'चाँद और सितारे', Hringmi (शिङमी) – मनुष्य , Ṭhuva (ठूवा) – कबूतर, Sikni (सिकनी) – जाड़े का मौसम,

Lanu (लानू) – युवती, Biahthu (बिअथू) – वाक्य , Luaithli (लुआईथ्ली) – आँसू, आदि। ऐसे काव्यात्मक शब्दों के अर्थ संदर्भ के साथ ही स्पष्ट होते हैं। ऐसे शब्दों का सही-सही अनुवाद अपने-आप में एक चुनौती है।

मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद की एक मूलभूत समस्या है – भाषिक भिन्नता। दोनों भाषाओं की वाक्य संरचना, ध्वन्यात्मकता की भिन्नता के साथ-साथ स्थानीय भाषा के शब्दों के प्रयोग के कारण भाव और अर्थ को पूरी तरह से संरक्षित करते हुए अनुवाद करना अनुवादक के लिए चुनौती बन जाता है और समस्या उत्पन्न हो जाती है।

4.2 सांस्कृतिक भिन्नता : रचना की संवेदना के अनुवाद की समस्या

किसी साहित्यिक रचना का अनुवाद न केवल भाषा का रूपांतरण है, बल्कि संस्कृति का आदान-प्रदान भी होता है। किसी भी साहित्यिक रचना के अनुवाद की सफलता के लिए उसमें निहित भावनाओं, प्रतीकों, सांस्कृतिक मूल्यों तथा सामाजिक संरचनाओं का रूपांतरण करना महत्त्वपूर्ण तथा आवश्यक है। मिज़ो भाषा में लिखे गए साहित्य का सांस्कृतिक आधार हिन्दी भाषी समाज से बहुत अलग है जिसके कारण अनुवाद के कार्य में जटिलता उत्पन्न करता है।

मिज़ो एक जनजातीय समाज है। उनका अपना इतिहास, संस्कृति, रीति-रिवाज, लोककथाएँ, विश्वास और सामाजिक प्रथाएँ हैं। मिज़ो साहित्यिक रचनाओं में उनकी अपनी सांस्कृतिक प्रतीकों की छवि दिखाई देती है। परंतु हिन्दी में अनुवाद करने पर इन सांस्कृतिक मूल्यों का मूल भाव लुप्त हो जाता है। हिन्दी में समतुल्य शब्द नहीं मिल पाता जिसके कारण भावपूर्ण रूप से अनुवाद में समस्या उत्पन्न होती है। मिज़ो और हिन्दी भाषा के बीच सांस्कृतिक और सामाजिक भिन्नता के कारण अनुवाद करना अधिक कठिन कार्य हो जाता है।

हर भाषा अपनी संस्कृति से जुड़ी होती है। मिज़ो भाषा में भी कई ऐसे शब्द हैं जो वहाँ के भूगोल, संस्कृति तथा सामाजिकता के साथ जुड़े होते हैं। इन स्थानीय एवं सांस्कृतिक शब्दों के लिए हिन्दी में कोई सटीक शब्द नहीं होता जिसके कारण हिन्दी में अनुवाद करते समय कठिनाई उत्पन्न होता है। हिन्दी में अनुवाद करते समय इन मिज़ो शब्दों का हिन्दी में उससे मिलते-जुलते पर्याय शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है और कहीं मूल मिज़ो शब्दों का लिप्यंतरण कर उन्हें अलग से संदर्भ के साथ स्पष्ट करना पड़ता है। परंतु इसके बावजूद, की बार वे मिज़ो संस्कृति के मूल भाव को व्यक्त नहीं कर पाते। उदाहरण के लिए - पारंपरिक मिज़ो संस्कृति में 'Nula rim' (नुला रीम) प्रचलित है। 'नुला' का अर्थ है – युवती और 'रीम' का अर्थ है – प्रणय करना। यह मिज़ो समाज में प्रेमालाप का एक पारंपरिक रूप है। पारंपरिक मिज़ो रीति-रिवाज के अनुसार, जब युवक रात में अपनी पसंदीदा युवती से मिलने उसके घर जाते है, उसे मिज़ो में 'नुला रीम' कहा जाता है। हिन्दी में 'नुला रीम' शब्द का कोई समानार्थी या पर्याय

नहीं है और न ही इस तरह की संस्कृति है। ऐसी स्थिति में 'नुला रीम' जैसे शब्द का उसके भीतर मौजूद पूरे सांस्कृतिक संदर्भ को अनूदित कर पाना मुश्किल काम होता है। इसलिए ऐसे सांस्कृतिक शब्दों का लिप्यंतरण कर दिया गया है और अलग से उनका अर्थ और संदर्भ स्पष्ट किया गया है।

इसी प्रकार उपन्यास में स्थानीय शब्द जैसे – Leikapui (लेईकापुई), Tapchhak zawl (तपछक ज़ोल) आदि का प्रयोग किया गया है, जिनका हिन्दी में अनुवाद नहीं किया जा सकता। पारंपरिक मिज़ो घरों को अलग तरीके से बनाया जाता था। उन्हें ज़मीन से तीन-चार फुट ऊपर बनाया जाता था तथा घरों की दीवारों को लकड़ी, फर्श को बाँस की चटाई और छत को घास-फूस से बनाया जाता था। पारंपरिक मिज़ो लोगों के घर के हर हिस्से का अपना नाम होता है । पारंपरिक मिज़ो घरों के मुख्य द्वार पर लकड़ी के लट्ठों पर बाँस की चटाई डालकर बनाये गये चबूतरे को 'लेईका' कहते हैं और घरों के मुख्य द्वार के सामने अलग से लकड़ी के लट्ठों पर बाँस की चटाई डालकर बनाये गये चबूतरे को 'लेईकापुई' कहा जाता है। वैसे ही पारंपरिक मिज़ो घरों में कमरे की एक दीवार से सटी हुई जगह जहाँ आग जलाकर भोजन पकाया जाता है, उसे 'तपछक ज़ोल' कहा जाता है। हिन्दी में ऐसे शब्द नहीं हैं जो उपर्युक्त शब्दों के अर्थ से पूरी तरह मेल खा सकें। उपन्यास में ऐसे और भी कई स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया गया है, जिनका हिन्दी में अनुवाद नहीं किया जा सकता। उदाहरण – Ditip (दीतिप), Dawrawn (दोरोन), Vai (वाई), Lasi (लसी), Nubawih (नूबोईह), Puan (पुआन), Tualte Vanglai (तुआलते वाङलाई), Zoram(ज़ोरम), Favah (फवाह), Zotlang Ram Nuam (जोउत्लाङ रम नुआम), Hnam Sipai (ह्नम सिपई) आदि। इसलिए, उपन्यास में पारंपरिक मिज़ो संस्कृति के आस्वाद को सुरक्षित रखने के लिए, अनुवाद करते समय इस शब्दों का केवल लिप्यंतरण किया गया है और अलग से उन्हें स्पष्ट कर दिया गया है।

मिज़ो समाज और संस्कृति में विवाहित लोगों या बुजुर्गों को अलग सम्बोधन से पुकारा जाता है। पुरुषों के लिए 'Pu' (पु) और महिलाओं के लिए 'Pi' (पी) जैसे अदारसूचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है, जो प्रस्तुत उपन्यास में भी मिलता है। उनके नाम से पहले इन अदारसूचक शब्दों का प्रयोग

किया जाता है या नाम पुकारे बिना उन्हें 'क पी', 'क पु' कहकर संबोधित किया जाता है। इन अदारसूचक शब्दों के लिए हिन्दी में निकटतम पर्याय शब्द श्री, श्रीमती जैसे शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है लेकिन स्थानीय शब्दों में निहित मिज़ो संस्कृति का मूल भाव लुप्त हो जाता है। इसलिए हिन्दी में अनुवाद करते समय मूल शब्दों का लिप्यंतरण किया गया है।

भारत के बाकी हिस्सों की तरह, मिज़ो समाज भी पारंपरिक रूप से खेती से जुड़ा रहा हैं। लेकिन मिज़ो संस्कृति में गाँव के लोग अपने-अपने खेतों में खेती के लिए एक साथ जाते थे। इसके साथ ही खेती अक्सर एक सामूहिक गतिविधि की तरह होती थी, जहाँ ग्रामीण सहयोग की भावना से एक दूसरे की मदद करते थे। मिज़ो लोगों के खेत उनके गाँव से दूर होने के कारण एक दूसरे के लिए इंतज़ार करने का स्थान भी बनाया जाता था, और उस स्थान से सभी एक साथ निकलते थे। उस इंतजार करने का स्थान को ही मिज़ो भाषा में 'Innghah khawmna hmun'(इनङ्हा खोमना ह्मुन) कहा जाता है। हिन्दी में अनुवाद करते समय इसे प्रतीक्षा स्थल भी कहा जा सकता है लेकिन ऐसा करने पर मिज़ो संस्कृति का वास्तविक मूल लुप्त हो जाता है।

उपन्यास में पारंपरिक मिज़ो संस्कृति से जुड़ा शब्द 'Hla do chham' (ह्ला दोउ छम) का प्रयोग किया गया है। प्रारम्भिक मिज़ो समाज में, छोटे से लेकर बड़े तक सभी जंगली जानवरों का शिकार करते थे। शिकार मांस का एक प्रमुख स्रोत था। पारंपरिक मिज़ो समाज में सफल शिकारियों का सम्मान किया जाता था तथा लड़कों को कुशल शिकारी बनने का आशीर्वाद भी दिया जाता था। गीतों के माध्यम से गाँव के सभी लोग शिकारियों की सफलता का जश्न मनाते थे। इस प्रकार पारंपरिक मिज़ो संस्कृति में शिकार/शिकारी का महत्त्वपूर्ण स्थान था। जब किसी शिकारी को शिकार में सफलता प्राप्त होता था, तब गाँव के लोगों को सूचित करने के लिए एक जोरदार आवाज़ में वह अपनी जीत की घोषणा करता था, जिसे 'ह्ला दोउ छम' कहा जाता है। अपनी सफलता को ऐलान के लिए वह किसी भी समय और स्थान पर 'ह्ला दोउ छम' कर सकता था। ऐसी सांस्कृतिक शब्दों का हिन्दी में अनुवाद करना मिज़ो संस्कृति

मूल्य के साथ अन्याय हो जाता। अतः 'ह्ला दोउ छम' को मूल भाषा में ही लिखा गया है और इसके सांस्कृतिक संदर्भ का स्पष्टीकरण किया गया है।

19वीं शताब्दी के अंत से मिज़ो समाज, संस्कृति, दैनिक जीवन, साहित्य, धार्मिक मान्यताओं आदि में ईसाई धर्म का गहरा प्रभाव पड़ा। हिन्दी में अनुवाद के समय धर्म एवं संस्कृति की संवेदनशीलता बनाए रखना एक चुनौतीपूर्ण काम बन जाता है। मिज़ोरम के गिरजाघरों की एक विशेष समिति होती है जो गिरजाघर के प्रमुख होते हैं। इस विशेष समिति का सदस्य बनने के लिए, गिरजाघर के सदस्यों द्वारा एक व्यक्ति को एक विशेष पद Kohhran Upa / Upa (काउश्रण उपा / उपा) के लिए चुना जाता है। अंग्रेजी में 'चर्च एलडर्स' शब्द का प्रयोग किया जाता है। मिज़ोरम में हिन्दी भाषी गिरजाघरों में 'काउश्रण' शब्द के लिए 'कलीसिया' और 'उपा' शब्द के लिए 'प्राचीन' का प्रयोग किया जाता है। उपन्यास के अनुवाद कार्य में 'कलीसिया के उपा' करके रखा गया गया। इसके साथ ही 'प्राचीन' शब्द को कोष्ठक में रखा गया है और टिप्पणी में स्पष्टीकरण किया गया है। इस तरह हिन्दी भाषी पाठकों को गिरजाघरों की संस्कृति समझने में सरलता हो।

'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' 1966 के मिज़ोरम विद्रोह पर केंद्रित उपन्यास है। इसलिए विद्रोह से संबंधित कई शब्दों का प्रयोग उपन्यास में किया गया हैं। उनमें से एक शब्द है – 'Kawktu' (कोकतू)। यह माना जाता है कि 'कोकतू' शब्द का जन्म मिज़ो विद्रोह से ही हुआ है। मिज़ोरम विद्रोह के दौरान 'कोकतू' को भारतीय सेना का सहयोगी माना जाता था। उस दौर में मिज़ो समाज में 'कोकतू' का भय बना रहता था। उनका चहरा ढका रहता था ताकि उनकी असली पहचान को गुप्त रखा जा सके। 'कोकतू' मिज़ो समाज का ही होता था। उन्हें अपने ही जाति को त्यागने वालों के रूप में माना जाता था। वे किसी को भी एम.एन.एफ का सदस्य बता देते थे और उनके कहे गए व्यक्ति को बिना पूछे ही भारतीय सेना उन्हें गिरफ्तार करते और कैद करके पीटा जाता था, और कभी-कभार उन्हें मार भी दिया जाता था। 'कोकतू' शब्द के लिए हिन्दी में 'मुखबिर' शब्द का प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन उपन्यास का अनुवाद करते समय 'कोकतू' शब्द के लिए 'मुखबिर' शब्द का प्रयोग करना अन्याय होगा। इससे मिज़ो समाज

में प्रचलित ‘कोकतू’ शब्द की उत्पत्ति और इसकी पृष्ठभूमि का ज्ञान लुप्त हो सकता है। इसलिए हिन्दी में अनुवाद करते समय मूल शब्द का लिप्यंतरण कर कोष्ठक में ‘मुखबिर’ शब्द का प्रयोग किया गया है और टिप्पणी में हिन्दी भाषी पाठकों के समझ के लिए व्याख्यायित करना पड़ा।

मुहावरे और लोकोक्तियाँ भाषा की सांस्कृतिक आत्मा होती हैं जो मिज़ो समाज की जीवनशैली, नैतिकता और सामुदायिक सोच से जुड़े होती हैं। मिज़ो और हिन्दी समाज में सांस्कृतिक भिन्नता के कारण मिज़ो मुहावरे और लोकोक्तियों का हिन्दी में अनुवाद करना कठिन कार्यों है। उदाहरण के लिए उपन्यास में मिज़ो की प्रचलित कहावत का प्रयोग किया गया है ‘Mahni tan a Chakai Khawrh’ (महनी ताना चकआई खोर:) जिसका शाब्दिक हिन्दी अनुवाद इस प्रकार हो सकता है ‘अपने लिए केकड़ा पकड़ना’। इस कहावत का अर्थ है ‘अपने लिए काम करना’। ‘चकआई’ का अर्थ है ‘केकड़ा’, ‘महनी तान’ का अर्थ ‘अपने लिए’ और ‘खोरः’ का अर्थ है पकड़ना। पारंपरिक मिज़ो समाज अपने जीविका के लिए केवल खेती पर निर्भर थे। हर साल वे बारिश और कड़ी धूप में बड़ी मेहनत से काम करते थे फिर भी उन्हें पूरे साल का भोजन पर्याप्त से नहीं मिल पाता था। इसलिए, उपने स्वार्थ के लिए नहीं बल्कि अपने परिवारों के लिए वे खेतों में रात बिताकर दूसरों से ज्यादा फसल उगाने के लिए कड़ी मेहनत करते थे, और वे सफल भी होते थे। इस तरह मिज़ो समाज में जब एक समूह केकड़ा पकड़ने जाते हैं, वे सिर्फ अपने लिए पकड़ते है, उनके साथ चलने वालों से भी बाँटा नहीं जाता। इस तरह यह कहावत अपने लिए कड़ी मेहनत करने जैसे सीख सीखाने का काम करता है। इस कहावत में छिपी मिज़ो पारंपरिक सीख को हिन्दी में स्पष्टता के साथ अनुवाद करना कठिन है।

मिज़ो संस्कृति के साथ ‘त्लोमङाइह्ना’ (Tlawmngaihna) का भाव जुड़ा हुआ है। हिन्दी में इसके निकटतम पर्याय के लिए ‘परोपकार’ का प्रयोग किया जा सकता है। मिज़ो संस्कृति में अपनी चिंता किये बिना निःस्वार्थ भाव से दूसरों की मदद करना, दूसरों के सुख-दुख में साथ देना, केवल अपने पहचान के लोगों की ही की नहीं बल्कि किसी अनजान की भी मदद करना जैसी परंपरा पूर्वजों से ही चलती आ रही है और इसे महत्त्व दिया जाता है। एक मिज़ो कहावत - ‘Thian chhan thih ngam’ (ठीआन छन थिह ङम) भी इसी भाव के साथ जुड़ा हुआ है। इसका अर्थ है - ‘दोस्त को बचाने के लिए

अपनी जान देना')। मिज़ो संस्कृति में जान-पहचान के लोगों की ही नहीं परंतु किसी पराए की मदद के लिए भी अपना सब कुछ न्योछावर करना, अपनी जान तक दे देने जैसा भाव इस कहावत में छिपा हुआ है। इस तरह हिन्दी शब्द 'परोपकार' मिज़ो संस्कृति से जुड़े 'त्लोमङाइह्ना' (Tlawmngaihna) के पीछे छिपे गहरे सांस्कृतिक अर्थ/ भाव को पूरी तरह स्पष्ट नहीं कर पाता और सम्पूर्ण सांस्कृतिक भाव को स्पष्ट करने वाला शब्द हिन्दी में नहीं मिलता है।

इस प्रकार मिज़ो मुहावरे और लोकोक्तियों का मिज़ो समाज और सांस्कृति के साथ गहरा संबंध होता है तथा मिज़ो मुहावरे और लोकोक्तियाँ मिज़ो लोगों की पारंपरिक जीवन दृष्टि और शिक्षाओं को प्रतिबिंबित करता है। इसलिए हिन्दी में अनुवाद करते समय उनमें निहित भाव तथा सांस्कृतिक बोध को दर्शाया नहीं जा सकता।

गीतों और कविताओं का मिज़ो संस्कृति में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। इस प्रकार 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में भी गीतों और कविताओं के छोटी-लंबी पंक्तियों को भी शामिल किया गया है। परंतु मिज़ो गीतों का हिन्दी में अनुवाद करते समय भाषिक के साथ-साथ सांस्कृतिक और सौन्दर्यात्मकता जैसे चुनौतियाँ उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए –

'Kei zawng ka ding rih dawn e, (केई ज़ोङ क दिङ रिह दोन ए,)

Thleng thei lo chung Pathian mah kan nghah chuan; (थ्लेङ थेई लौ चुङ पथिआन मह कन ङह चुआन;)

Ka nghak zel nang e, Chhingdawntuaii.'[7] (क ङहक ज़ेल नाङ ए, छीङदोनतुआई।')

उपर्युक्त गीत का इस प्रकार हिन्दी में अनुवाद किया गया है -

'मैं तो अभी उसके लिए रुका हूँ, हम ऊपर वाले ईश्वर की प्रतीक्षा करते हैं जो कभी नहीं पहुँचने वाला है; मैं उस प्यारी-सी सुंदर युवती छीङी की प्रतीक्षा करूँगा।'

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि किसी भी स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अनुवाद करना एक जटिल कार्य है, विशेषकर तब, जब दोनों भाषाओं के बीच भाषिक एवं सांस्कृतिक भिन्नता अधिक हो। एक अच्छा अनुवाद तभी संभव हो सकता है जब इन समस्याओं से जूझकर उनका समाधान ढूँढा जाये। अतः उपर्युक्त सभी समस्याओं के बावजूद दोनों भाषाओं की संस्कृति एवं प्रकृति की अच्छी जानकारी के साथ अच्छा और सफल अनुवाद किया जा सकता है।

संदर्भ

---

[1] डॉ. पूरनचन्द टण्डन, अनुवाद - साधना, अभिव्यक्ति प्रकाशन, दिल्ली, 2007, पृष्ठ सं. 20

[2] वही, पृष्ठ सं. 26

[3] डॉ. सुरेश कुमार, अनुवाद सिद्धान्त की रूपरेखा, विद्यानिधि 1/5971. कबूल नगर, शाहदरा, दिल्ली, 2005, पृष्ठ सं. 30

[4] जी. गोपीनाथन एवं एस. कंदस्वामी, अनुवाद की समस्यायें, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1993, पृष्ठ सं. 13

[5] डॉ. एच. देङकिमी, हिन्दी और मिज़ोउ भाषा की व्याकरणिक कोटियों का व्यतिरेकी अध्ययन, दि प्रिनट्स होम, 20/108, यमुना रोड, बेलनगंज, आगरा, पृष्ठ सं. 16

[6] मापेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आइज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 3

[7] वही, पृष्ठ सं. 6

अध्याय- 5

उपन्यास का विश्लेषण

5.1 मिज़ो विद्रोह के प्रति विद्रोहियों और सामान्य जनता का नजरिया

5.2 विद्रोह और मिज़ो स्त्री का संघर्ष

5.3 मिज़ो विद्रोह और भारतीय सेना

5.4 उपन्यास का कला पक्ष

5.5 अन्य विविध पक्ष

5.1 मिज़ो विद्रोह के प्रति विद्रोहियों और सामान्य जनता का नजरिया

मिज़ो विद्रोह का विद्रोहियों और सामान्य जनता पर अलग-अलग प्रभाव पड़ा। मिज़ो विद्रोहियों के लिए यह विद्रोह अपने राष्ट्र की स्वतंत्रता की सशस्त्र लड़ाई थी। सामान्य जनता के लिए भी यह उनकी अपनी राष्ट्र और जाति की स्वतंत्रता की लड़ाई थी परंतु मिज़ो विद्रोही उनके प्रतिनिधि थे। भारतीय सेना के साथ लड़ते हुए विद्रोहियों को भूमिगत होना पड़ा, लेकिन इस बीच सामान्य जनता को कई परेशानी, दुःख, पीड़ा भुगतना पड़ा। गोलीबारी में अपने परिवार के कुछ सदस्यों को खो दिए, अपने घर खो दिए, उनका गाँव जला दिया गया, उन्हें भारतीय सेना के लिए बिना वेतन के काम करना पड़ा, उनपर कर्फ्यू लागू कर दी गई, उन्हें भारतीय सेना की गाँव समूहीकरण जैसी नीति के कारण पर्याप्त कष्ट सहना पड़ा।

इस प्रकार इस उप-अध्याय में लेखिका की कल्पना और ऐतिहासिक तथ्यों दोनों को जोड़कर माफेली द्वारा लिखी गई 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में किस प्रकार अपने (मिज़ो) राज्य की स्वतंत्रता के लिए भारतीय सेना से लड़ने वाली मिज़ो सेना के विद्रोह और इस विद्रोह में पिसने वाली सामान्य मिज़ो जनता के संघर्षों पर प्रकाश डाला जाएगा। साथ ही विद्रोह के प्रति विद्रोहियों एवं आम मिज़ो जनता के दृष्टिकोण को समझने का प्रयास किया जाएगा।

माफेली का उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' रमबुआई कथा शैली में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है क्योंकि यह उपन्यास मिज़ोरम के ईस्ट लुङदार गाँव में रमबुआई के सबसे काले और अंधेरे समय की अनकही कहानी और मिज़ोरम के दर्दनाक सशस्त्र संघर्ष के बारे में ग्रामीणों के यथार्थवादी विवरण पर आधारित है। पीड़ितों के दृष्टिकोण से लिखा गया इस उपन्यास में विद्रोह के दौरान भारतीय सेना और एम.एन.एफ द्वारा मिज़ो सामान्य जनता पर की गई अनगणित क्रूरताओं का खुलासा किया गया। इस तरह लेखिका माफेली ने इस उपन्यास में मिज़ो विद्रोह के कारण मिज़ो लोगों की दुर्दशा और उनके जीवन की वास्तविकता को व्यक्त करने का प्रयास किया है। लेखिका ने मिज़ो विद्रोह के इतिहास के साथ-साथ विद्रोह के चश्मदीद बुजुर्गों से साक्षात्कार लेकर इस उपन्यास

को इतिहास और कल्पना के मेल से गढ़ा है और मिज़ो विद्रोह के दौरान लोगों की पीड़ा को चित्रित करने की पूरी कोशिश की है। यह माना जा सकता है कि लेखिका ने एकमात्र उद्देश्य ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर ईस्ट लुङदार गाँव और गाँववासियों के माध्यम से मिज़ोरम की सामान्य जनता के संघर्ष को पूरी प्रामाणिकता से प्रस्तुत करती है।

मिज़ो विद्रोह भारत सरकार के खिलाफ एक विद्रोह था जिसका उद्देश्य मिज़ो लोगों के लिए एक संप्रभु राष्ट्र और राज्य की स्थापना करना था। एम.एन.एफ द्वारा अहिंसक तरीकों को अपनाने की बात जारी रखते हुए वॉलनटियर्स की स्थापना के साथ सशस्त्र विद्रोह की तैयारी भी चल रही थी। मिज़ो विद्रोह से संबंधित कई पुस्तकों में यह बताया गया है कि मिज़ो नैशनल वॉलनटियर्स (एम.एन.वी) की गठन 22 अक्टूबर 1963 को एम.एन.एफ द्वारा अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए किया गया था। वॉलनटियर्स को जंगलों में हथियार चलाने का प्रशिक्षण दिया जाता था और इसके साथ-साथ उन्हें यह भी सिखाया गया था कि भारत की स्वतंत्रता मिज़ो लोगों की आज़ादी का दिन न होकर, भारत की गुलामी होने की शुरुआत का दिन है। एम.एन.वी (जिसे एम.एन.एफ सेना भी कहा जा सकता है) के गठन की खबर केवल मिज़ोरम की राजधानी आइज़ोल में ही नहीं बल्कि मिज़ोरम के गाँवों में भी फैल गई। उपन्यास में भी लेखिका ने इसका उल्लेख किया है। मिज़ो विद्रोह की कुछ खबरें फैलने के बाद 'इंडिपेंडेंट' शब्द के कारण कुछ लोगों का मानना है कि स्वतंत्र राष्ट्र या राज्य लोगों के लिए अच्छा होगा, इसलिए तकरीबन 15000 वॉलनटियरों की भर्ती भी हुई थी तथा 'इंडिपेंडेंट' शब्द को लेकर कई लोगों में उत्साह पैदा किया और उन्हें लगा कि भारतीय सरकार को आसानी से धमकाया जा सकता है। यह मिज़ो लोगों की नादानी को पूर्ण रूप से दर्शाता है। उपन्यास में लेखिका ने सामान्य जनता के मन में 'इंडिपेंडेंट' शब्द के कुछ अर्थों को भी रेखांकित किया है।

''गाँव की तरफ से भी एक नए दल एम.एन.एफ. ह्नम सिपई के गठन की अफवाह रह-रहकर सुनायी पड़ रही थी।''[1]

"जो एम.एन.एफ. और उसकी गतिविधियों के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी रखते थे, वे पूरे जोश के साथ कहते कि 'इंडिपेंडेंट' होना एक अच्छी बात हो सकती है। कई लोग थे जो बड़ी हिम्मत वाली बातें करते थे। उनमें से कई ऐसे भी थे जो इस मामले में कुछ नहीं जानते थे, फिर भी इसमें दिलचस्पी लेते थे।...कुछ ऐसे भी थे जो 'इंडिपेंडेंट' होने की लड़ाई के जोश में अंधे हो गए थे।"[2]

"शाङथङआ, जो खुद को उनमें से सबसे ज़्यादा होशियार समझता है, ने दारपुई द्वारा बनाई गई बीड़ी को फूंककर नाक से धुआँ निकालते हुए कहा- "बेकार की बात है। तुम इतना क्यों डर रही हो? वे अधिक देर तक यहाँ नहीं टिकेंगे। ह्मम सिपई जल्द ही भारतीय सेना को यहाँ से बाहर खदेड़ देगी।"[3]

मिज़ो विद्रोहियों का नजरिया और उनका विद्रोह:

एम.एन.एफ. अध्यक्ष ललदेङा ने 1 मार्च 1966 को मिज़ोरम की स्वतंत्रता की घोषणा की थी। वर्ष 1966 मिज़ो लोगों के लिए सबसे भयानक समय की शुरुआत थी। स्वतंत्रता के लिए एम.एन.एफ. विद्रोह शुरू करने के लिए सावधानीपूर्वक योजनाबद्ध कदम को 'ऑपरेशन जेरिको' नाम दिया गया और इस योजना के तहत आवश्यकतानुसार केवल आइज़ोल शहर ही नहीं मिज़ोरम के अन्य महत्त्वपूर्ण शहरों – जैसे लुङलेई, चम्फाई और जहाँ-जहाँ भारतीय सेना तथा पुलिस स्टेशन थे, उनपर हमला करने के लिए विभिन्न कमांड नियुक्त किए गए थे। 2017 में एम.एन.एफ मुख्यालय द्वारा प्रकाशित की गई पुस्तक 'Documenatry of Mizoram War of Independence 1966 to 1986' के अंतर्गत ईस्ट लुङदार गाँव के पूर्व वीसीपी पु के. ललङाइज़ुआला और ईस्ट लुङदार गाँव के हेडमास्टर (सेवानिवृत) पु शाङह्लेईआ ने 15 नवम्बर, 1966 की रात को उनके गाँव में मिज़ो विद्रोहियों द्वारा गोलीबारी करने का उल्लेख किया है। उन्होंने लिखा हैं कि 15 नवम्बर, 1966 के करीब 2 बजे ललदेङा के आदेश पर कुछ मिज़ो विद्रोहियों ने उस दिन ही आई भारतीय सेना पर गोलीबारी शुरू कर दी। उन्हें लगा कि कम संख्या वाली भारतीय सेना को वे हरा पाएंगे, जिनके पास

अभी तक कोई सुरक्षित जगह नहीं थी। ईस्ट लुङदार गाँव एम.एन.एफ. सेना का सबसे बड़ा मुख्यालय, 31 वीं डिवीजन का मुख्यालय था।

16 नवम्बर, 1966 को साईलुलाक गाँव में मिज़ो सिपाही वरिष्ठ अधिकारियों की बैठक होने वाली थी जिसमें ललदेङा भी शामिल होने वाला था। मिज़ो विद्रोहियों को ईस्ट लुङदार गाँव में भारतीय सेना के आने की खबर भी थी। इसलिए ललदेङा ने भारतीय सेना पर गोलीबारी करने का आदेश दिया था। उन्होंने उस समय चैन की नींद सोने वाले गाँव वालों की परवाह किये बिना सुबह की 2 बजे से भोर तक गोलीबारी जारी रखी।[4] इस पूरे ऐतिहासिक तथ्य का वर्णन उपन्यास में लेखिका ने किया है।

"अन्य रातों की तरह 15 नवम्बर की रात भी वे एक अच्छा सपना देखने की उम्मीद में सोने चले गए। पूरा गाँव शांत था।... अपने प्यार के कारण चिंतित मन से उसने गहरी सांस ली और तभी दारपुई को धमाके की आवाज सुनाई पड़ी।... अब थोड़ी-थोड़ी देर में ही विस्फोट की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी। निःसंदेह यह गोली चलने की आवाज थी। रोउछुआहआ ने तुरंत ही यह अनुमान लगा लिया कि यह ज़रूर भारतीय सेना के खिलाफ ह्मम सिपई की गोलीबारी की आवाज़ है।... लेकिन, समय बीतने के साथ-साथ गोलीबारी की आवाज गाँव के अंदर से आने लगी।"[5]

उपन्यास में अन्यत्र लेखिका लिखती हैं -

"बंदूकें लगातार चलने लगीं। गाँव वालों की घबराहट और बेचैनी बढ़ने लगी। चिल्लाने और गोली चलने की आवाजें फिर से आने लगीं।..."[6]

और आगे भी -

"उनके हेडकॉर्टर का रखवाला पु बिआकछूङअ, जिसे दोपहर में गाँव के नेता जाकर मिले थे, उन्होंने सेना पर हमला ना करके, अपने पार्लियामेंट बैठक के लिए सीधा चलने के लिए सुझाव

दिया। लेकिन, शायद उनका प्रेसीडेंट पु ललदेङआ ने सोचा होगा कि ऐसा करना बेकार है, इसलिए वह जानबूझकर उनमें से कुछ लोगों से बात जारी रखा।

"उन्हें लगा भारतीय सेना की टुकड़ी में मात्र सौ सैनिक हैं, जो दोपहर में ही यहाँ पहुँचे हैं और थके हुए हैं। उनके पास न तो अभी कोई कैम्प था और न ही ट्रेंच के लिए समय मिल था। उन्हें विश्वास था कि एक जोरदार गोलीबारी से वे उन्हें आसानी से हरा देंगे, इसलिए उन्होंने उस क्षेत्र के रखवाले की बातों पर ध्यान नहीं दिया और अनसुना कर दिया। काफी देर तक उनके बीच बहस चलती रही। अंततः जब उनके मुख्य ने ललकारते हुए कहा, "मैं तुम्हारी बंदूकों की गूँज सुनना चाहता हूँ," तो उसके बाद बहस की कोई गुंजाइश ही नहीं बची। अपने राज्य और जाति के लिए प्राण न्योछावर करने को तत्पर उन जवानों को और अधिक उकसाने की आवश्यकता नहीं थी। कुछ ही पलों में, सन्नाटे को चीरती हुई गोलियों की आवाजें गूँजने लगी।"[7]

गाँव में भारतीय सेना बसने लगे थे, इसलिए एम.एन.एफ वॉलन्टियर्स को खुद को बचाने के लिए भूमिगत होना पड़ा। चूँकि वे भूमिगत थे, उनके लिए भोजन की आपूर्ति पर्याप्त नहीं हो पाता था, इसलिए वे रात में भोजन और अपने जरूरतों की तलाश में चुपके से गाँव में आ जाते थे। मिज़ो समाज में मिज़ो युवक रात को अपनी पसंदीदा युवती से मिलने उनके घर जाते हैं, जिसे मिज़ो भाषा में 'नुलारीम' कहा जाता है। 'नुला' का अर्थ है युवती और 'रीम' का अर्थ है 'लुभाना'। अर्थात मिज़ो युवक का अपनी पसंदीदा युवती को लुभाने के लिए उसके घर जाना 'नुलारीम' कहा जाता है। एम.एन.एफ वॉलन्टियर्स भी गाँव के युवकों के बीच चले जाते थे।

"केवल गाँव के युवक ही नहीं बल्कि वॉलन्टियर भी गाँव में प्रवेश करके युवतियों के घर आया करते थे।"

"भले ही वॉलन्टियर के लिए हमले का डर बना रहता था, लेकिन युवतियों के घर जाना और उन्हें प्रणय- निवेदन करना उन्हें भी अच्छा लगता था। जिन युवतियों के घर वालंटियार जाते थे,

वे अपने सखियों के बीच में अपने आप को सौभाग्य मानते थे और गर्व करते थे। उनके पीने के लिए तंबाकू बनाते थे, साथ ही ले जाने के लिए भी बनाया करते थे। चाय और कुरताई के अलावा अन्य खाने का चीज उनके ले जाने के लिए रख देते थे। लगभग प्रत्येक गाँव में ऐसा होता था इसलिए अपने राज्य के लिए लड़ने वालों के लिए चोरी चुपके युवतियों के घर जाना आनंददायक था।"[8]

भूमिगत विद्रोहियों के गाँव में प्रवेश के कारण गाँव के लोगों को भारतीय सेना के कई ज़ुल्म भुगतने पड़ते थे। जब गाँव में शांति थी, तो वॉलन्टियर्स उनके बीच रहना चाहते थे, जिससे गाँव वालों के बीच काफी हद तक समस्याएं पैदा हो जाती थी।

"माहौल जितना शांत होता, उतने ही अधिक वॉलन्टियर भाइयों को उनके बीच आने की उत्सुकता होता था जिससे कुछ लोगों के लिए स्थिति बहुत कठिन और परेशानी भरी हो जाति थी। उस दिन भी, उनके गाँव के प्रवेश द्वार के तरफ रहने वालों के पास चाय और उबली हुई अरुम का आनंद लेने के लिए कुछ मेहमान आ गए थे।... जिन्हें पता था कि उनके गाँव में मेहमान आए हैं, उनकी साँसे थम सी गई।"[9]

रमबुआई आधारित उपन्यासों ने यह भी दर्शाया कि भारतीय सेना का डर मिज़ो लोगों का एकमात्र भयानक अनुभव नहीं था। मिज़ो भूमिगत विद्रोहियों की कार्रवाइयों के कारण लोगों के बीच वॉलन्टियर्स के प्रति भय पैदा किया। इस तरह माफेली का उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' विद्रोह के दौरान ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों के अनुभव पर आधारित है। ईस्ट लुङदार गाँव वालों की पीड़ा में भारतीय सेना के हाथों की पीड़ा को भूमिगत विद्रोहियों द्वारा पहुँचाई गई पीड़ाओं से भी बढ़ गई थी। परिवारों और पूरे समुदाय द्वारा झेले गए आघात, शारीरिक और मानसिक कष्टों को स्पष्ट रूप से चित्रित किया गया हैं।

सामान्य जनता का नजरिया और उनका संघर्ष :

ईस्ट लुङदार गाँव वालों ने दो विरोधी ताकतों के बीच की लड़ाई का अनुभव किया था। *"ईस्ट लुङदार, दारखोपुई, जहाँ वे खुशी से रहते थे, वह जंग लड़ने का एक मैदान बन गया!"*[10] 15 नवम्बर, 1966 की इस गोलीबारी से सबसे अधिक नुकसान और कष्ट ईस्ट लुङदार के गाँव वालों को झेलना पड़ा। गाँव वालों की परवाह किये बिना एम.एन.एफ विद्रोहियों के इस गोलीबारी के कारण गाँव वालों की स्थिति अधिक दयनीय हो गई। उस रात ईस्ट लुङदार गाँव वालों के सदमा और चिंता को बयान नहीं किया जा सकता। गाँव के घरों को मिज़ो विद्रोहियों ने अपनी ढाल के रूप में प्रयोग कर रहे थे।[11]

"बंदूकें लगातार चलने लगीं। गाँव वालों की घबराहट और बेचैनी बढ़ने लगी। चिल्लाने और गोली चलने की आवाजें फिर से आने लगीं। भारतीय सेना ने भी जवाबी कार्रवाई शुरू की। भारतीय सेना की बेहतर बंदूकों की आवाज ज़ोरदार थी। अब गाँव वालों के लिए सोना असंभव हो गया था। कुछ घर तो गोलियों की चपेट में भी आ गए। इसलिए लोग घबराने लगे और जान बचाने के लिए अपने बिस्तर छोड़ने लगे।..."[12]

"बाँस की चटाई और घास के छप्पर से बने उनके घर धमाओं से हिल रहा था। बंदूक की गोलियां उन कच्ची दीवारों को चीर रही थीं। अब बिस्तर पर लेते रहना भी असंभव हो गया था। इसलिए ना तो कोई बैठ सकते थे और न ही इधर-उधर भाग सकते थे। गोलियों से बचने के लिए बच्चों को सुरक्षा के लिए बिस्तर के नीचे छिपने को कहा गया। हर परिवार अपनी जान बचाने के लिए परेशान हो गए थे।"[13]

रात के अंधेरे में लगभग नंगे बदन में जंगल की ओर गोलीबारी के बीच जाने के अलावा अपनी जान बचाने का और कोई रास्ता नहीं था, और मशाल जलाने से भी डरते थे। इसके साथ-साथ गाँव के घरों को मिज़ो विद्रोहियों ने अपने सुरक्षा के रूप में प्रयोग कर रहे थे।

“कुछ जगहों पर आग लग गयी, तब सब लोग अपने-अपने घरों से हड़बड़ी में जैसे-तैसे निकल पड़े।...ऐसे उथल-पुथल में दिमाग काम नहीं करता, इसलिए भले ही वे सभी अपने-अपने घर से भाग कर आए थे, मगर उन्होंने ढंग के कपड़े नहीं पहने थे, इसलिए जब वे वहाँ पर पहुँचे तो उनमें से अधिकांश लगभग नग्न थे। डर के मारे भागने के कारण उन्हें ठंड या शर्म का एहसास ही नहीं हुआ।”[14]

मिज़ोरम में स्वतंत्रता की घोषणा का सामान्य मिज़ो लोगों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा था। मिज़ो विद्रोहियों और भारतीय सेना के बीच की इस गोलीबारी में गाँव के कुछ ग्रामीणों ने अपनी जान गंवा दिए तथा गोलीबारी के बाद गाँव से भागने में असमर्थ लोगों को भारतीय सेना द्वारा पकड़ लिए गए थे। ईस्ट लुङदार गाँव के हेडमास्टर (सेवानिवृत) पु शाङह्लेईआ ने अपने लेख में यह भी लिखा है कि इस संघर्ष में लोग न केवल भारतीय सेना के हाथों मारे गए, बल्कि कुछ ऐसे भी थे जो मिज़ो वॉलन्टियर्स के हाथों भी मारे गए थे।[15]

भोर तक गोलीबारी चलने के बाद पलक झपकते ही ईस्ट लुङदार गाँव जलकर राख हो गया और गाँव वालों को अपराधियों का कभी पता नहीं चला, चाहे वे सेना हों या भूमिगत मिज़ो विद्रोही। *“भोर होने तक गोलीबारी खत्म नहीं हुई। तकरीबन 2 बजे गाँव वालों को बताए बिना ही ईस्ट लुङदार गाँव को जला दिया गया! यह समझना बहुत मुश्किल था कि इसे भारतीय सेना ने जलाया था या ह्नम सिपई ने।”*[16] ईस्ट लुङदार गाँव के मुखिया की बेटी की भी गोलीबारी में मौत हो गई थी।

गोलीबारी में ढाल के रूप में होना गाँव के लोगों के लिए बहुत बुरा था, अब उनका गाँव जलकर राख हो जाना अधिक दुखदायी था। गाँव वालों की हालत भयावह थी। ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों के लिए अपने घर और गाँव को खो देने का नुकसान से बढ़कर कुछ नहीं था। *“डबडबाई आँखों से अपने जलते हुए गाँव और आसमान में ऊपर की ओर उठते आग के काले धुएँ को वे देख रहे थे। वे अच्छी तरह जानते थे कि अपने सामानों को बचाने के लिए वे कुछ नहीं कर सकते थे। उन्हें*

जिन मुश्किलों का सामना करना था, वे उन्हें ही करना था, उसके लिए कोई भी और आने वाला नहीं था। उनके दिल को जो ठेस पहुँची है, उसे कोई और नहीं समझ सकता।"[17]

उनके ऐसे हालत में खाने और कपड़ों के बारे में कैसे सोच सकते थे! सुबह होने पर बच्चे भूखे हो गए थे और खाना के लिए रो रहे थे, जिससे गाँव वालों को बच्चों की चिंता होने लगी। अब उनका घर राख में बदल गया था। *"सूरज चढ़ रहा था, बच्चे नाश्ते के लिए बिलखने लगे। वयस्क भी लगभग नग्न थे, इसलिए कई तरह की समस्या होने लगी। उनके ऊपर अचानक बड़ी विपत्ति आ गयी थी, मानो आसमान टूट पड़ा हो।"*[18]

उनके घरों और गाँव को राख में जला देने के बाद, अब उनके पास वापस जाने के लिए कोई घर भी नहीं था। उन्हें अलग-अलग दुसरें गाँव में जाने के अलावा और कोई विकल्प नहीं था। *"वे सब अपनी-अपनी सहूलियत के अनुसार इधर-उधर निकल गए। सब ने रोते हुए एक-दूसरे को विदा करके अपने-अपने रास्ते अलग किए।"*[19]

लेखिका माफेली ने अपने 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में मिज़ो विद्रोहियों और भारतीय सेना के बीच गोलीबारी चलने और इस बीच अपनी जान बचाने के लिए सर्दियों के बीच ईस्ट लुङदार गाँव वालों की सुआङओक नदी तट में शरण लेने का चित्रण प्रस्तुत किया है। उपन्यास की लेखिका ने अपने इस उपन्यास में ईस्ट लुङदार गाँव की इस दयनीय स्थिति को ऐतिहासिक तथ्य और कल्पना का सहारा लेते हुए अत्यंत यथार्थवादी ढंग से प्रस्तुत किया है।

मिज़ो विद्रोहियों और भारतीय सेना के बीच की इस गोलीबारी के कारण तीन लोगों की जान चली गई, जिनमें से दो युवकों की मौत संदेह के चलते गोली लगने से हो गई तथा एक की जान रात के समय चलती हुई गोली लगने से चली गई।[20] *"उस घटना में तीन लोगों की मौत भी हुई। खासकर जब किसी युवक की मौत हो जाए तो यह उसके परिवार और गाँव के लिए कितना अधिक दर्दनाक*

होगा! ऐसा नहीं है कि जो युवा मारे गए वे बदमाश या बदतमीज़ थे, बल्कि अपने परिवार की चिंता करने के कारण उन्हें गोली लगी थी!"[21]

मिज़ो विद्रोह के दौरान अलग कारणों से भारतीय सेना और भूमिगत विद्रोहियों से सामान्य जनता को समान रूप से डर लगा रहता था। सामान्य जनता केवल भारतीय सेना द्वारा ही नहीं बल्कि भूमिगत सेना द्वारा भी पीड़ित थे, इसलिए मिज़ो विद्रोह के दौरान लोगों की स्थिति के वर्णन के लिए 'तुबओह लेह दोउलुङ इनकारः ओम कन नी' अर्थात 'हथौड़े और निहाई के बीच रहना' जिसका हिन्दी में समान भाव का मुहावरा है- दो पाटों के बीच पिसना, वाक्यांश का उपयुक्त रूप से प्रयोग किया जाता है। दोनों सेना के अलावा, कुछ नागरिकों ने भी उनकी भावनाओं को ठेस पहुंचाने वाले अपने दुश्मनों से बदला लेने के लिए इस विद्रोह का अवसर का उपयोग किया।

रमबुआई उपन्यास की एक प्रमुखता यह है कि वह केवल व्यक्तियों द्वारा नहीं बल्कि पूरे समाज द्वारा रमबुआई के दौरान सहन की गई कठिनाइयों और पीड़ाओं को उजागर करने की कोशिश करता है। इस विद्रोह के दौरान सामान्य जनता का भारतीय सेना और भूमिगत सेना के बीच पिसे रहने और उनमें दोनों सेना का डर पैदा हुआ। इस विद्रोह ने सामान्य जनता को शारीरिक पीड़ा के साथ-साथ मानसिक पीड़ा भी पहुंचाई है।

मिज़ो विद्रोह के दौरान भारत सरकार द्वारा अपनाया गया सबसे भयावह उपाय था - गाँव का समूहीकरण, जिसे मिज़ो भाषा में 'खोखोम' या 'खो सोईखोम' कहा जाता है। गाँवों के समूहीकरण से लोगों को गंभीर और अनगणित कष्टों का सामना करना पड़ा था। भारत सरकार ने कई गाँवों को मिलाकर इसका नाम 'प्रग्रेसिव एण्ड प्रोटेकटेड विलेजेस' (पी.पी.वी.) अर्थात प्रगतिशील और संरक्षित गाँव रखा गया। गाँवों का समूहीकरण 1967 और 1968 में किया गया था। पहले चरण में 75 गाँवों को 15 समूहीकरण केंद्रों में समूहीकृत किया गया था और दूसरा चरण 1968 से 1970 तक चलाया गया था, जिसके दौरान 367 गाँवों को 73 समूहीकरण केंद्रों में समूहीकृत किया गया था।[22] गाँव का समूहीकरण का मुख्य उद्देश्य भूमिगत सेना को दबाने के लिए था। मिज़ोरम में दोबारा शासन

हासिल करने और इस तरह के युद्ध के खिलाफ लड़ने के लिए गाँव समूहीकरण का प्रयोग किया गया। इसलिए, समूहीकरण लोगों के लिए केवल दुःख और पीड़ा का एक साधन था।

रमबुआई उपन्यास में गाँवों का समूहीकरण एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि इसे व्यक्तियों और समाज द्वारा झेली गई अनेक पीड़ा के मुख्य कारणों में एक माना जाता है। मिज़ो विद्रोह के दौरान सामान्य जनता को विभिन्न प्रकार की भयंकर यतनाएं सहनी पड़ी, लेकिन उनमें से गाँव के समूहीकरण ने उनपर दर्दनाक प्रभावों के साथ एक अमीट निशान छोड़ दिया गई। अधिकांश मामलों में मिज़ो नागरिकों को अपना सामान बांधकर पी.पी.वी. में जाने के लिए एक ही दिन का नोटिस दिया गया था। समूहीकरण के लिए चुने गए गाँव को सूचित किया गया कि वे केवल अपना अधिकांश सामान समूहीकरण केंद्र पर ले जाए। भारतीय सेना ने उन्हें बंदूक की नोक पर अपने घर छोड़ने के लिए मजबूर किया। अतः समूहीकरण को लागू किये जाने से पहले ही गाँव वालों को मानसिक पीड़ा का सामना करना पड़ा था।

माफेली के उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' में यह चित्रित किया गया है कि गाँव के समूहीकरण ने व्यक्तियों और पूरे मिज़ो समाज के शारीरिक और मानसिक जीवन को किस तरह प्रभावित किया। लेखिका ने अपने उपन्यास में यह चित्रित करने का प्रयास किया हैं कि विभिन्न गाँवों के लोगों के अलग-अलग समूह बनाकर उन्हें किसी गाँव के ग्रूपिंग सेंटर में एक साथ रखने की प्रक्रिया ने किस प्रकार समाज की एकता को बाधित किया है।

"ईस्ट लुङदार गाँव को भी एक ग्रूपिंग सेंटर के रूप में इस्तेमाल किया गया था। अलग-अलग मिजाज के लोगों को वहाँ एक साथ रखा गया, जिनका एक साथ रहना मुश्किल था। लोगों के बीच आपसी मतभेद होने लगे थे। ... उनकी मर्जी के बिना उन्हें अपना घर और ज़मीन छोड़ने का आदेश दिया गया था। उन्हें इंडिपेंडेंस के लिए उस जगह को छोड़ना पड़ा, जिसे उन्होंने कड़ी मेहनत से बसाया था..." [23]

"खुशी से दूसरों के गाँव में जाकर बस जाना उनके लिए बहुत ही मुश्किल हुआ होगा। मर्द, जिसे खुद पर भरोसा था, उसके लिए दूसरे गाँव में जाकर डर-डर के रहना और भी मुश्किल हुआ होगा। इसलिए, उनके मन में कुछ बुरे खयाल भी थे, तो इसमें उनकी कोई गलती नहीं थी। और उसके साथ ही उस गाँव के मालिकों (गाँव वासियों) के लिए भी दूसरे गाँव के लोगों, मेहमानों द्वारा उनके गाँव को उथल-पुथल कर देना सहन करना मुश्किल हुआ होगा। और सबसे ज़्यादा दुःख की बात यह थी कि जिस परिस्थिति का उन्हें सामना करना पड़ रहा था, उसके जिम्मेदार वे स्वयं नहीं थे।"[24] इस तरह समाज में एकता टूट गई।

इस गाँव समूहीकरण के समय मिज़ो लोगों को भारतीय सेना के लिए मजदूरी करने के लिए मजबूर किया गया था। केवल पुरुषों को ही नहीं बल्कि महिलाओं को भी सेना के लिए मजदूरी करने के लिए मजबूर किया गया था। उन्हें सेना के लिए छोटे-मोटे काम करने पड़ते थे जैसे कि उनके बैरक बनाना, बंकर और खाईयाँ खोदना। उन पर लगाए गए सभी जबरन श्रम के कारण, उनके पास खेती के लिए अपने झूम में जाने का समय नहीं होता था। ईस्ट लुङदार गाँव के लोग भी इस जबरन मजदूरी से पीड़ित थे। उनके पास अपने घरों और गाँव को फिर से बनाने के लिए पर्याप्त समय नहीं था जिसे जला दिया गया था। *"कड़ी धूप में वे भारतीय सेना के लिए काम करते थे। थोड़ी देर के लिए भी आराम से सांस लेने में भी उन्हें डर लगता था। हर जगह भारतीय सेना खड़े थे।"*[25]

"उन्हें सैनिकों के लिए एक सुरक्षित स्थान और बारिक भी बनाना था। तब से मर्दों को अपने सुंदर पहाड़ों और मैदान सैनिकों के छिपने की जगह के लिए खुदाई करके नष्ट करना पड़ा... अपना पूरा समय उसी काम में लगा देने के कारण उनकी मुख्य निर्भरता, चावल की फसल की अच्छी कटाई नहीं हो पाई।"[26]

"सैनिकों के लिए शिविर खोदना बंद नहीं हुआ, इसके साथ ही उन्हें अपने ही टूटे हुए घर की मरम्मत भी करना था। और खाने के लिए उन्हें खेती भी करना था, इससे कई अधिक कष्ट उन्हें आगे चलकर झेलना भी पड़ने वाला था।"[27]

भारतीय सेना द्वारा गाँव पर कर्फ्यू लागू करने के कारण भारतीय सेना द्वारा संदेह किये जाने के डर से हर कोई सावधानी से रह रहे थे और यहाँ तक कि अपने पड़ोसियों के घर जाने से भी डरते थे। मिज़ो समाज में सभी लोग मिलनसार स्वभाव के थे और वे खासकर रात में अपने पड़ोसियों और युवतियों के घर आजादी के साथ जा सकते थे। लेकिन कर्फ्यू के लागू होने से उनके इस आज़ादी को छीन लिया गया, अर्थात उनकी समाज की एक परंपरा को बाधित कर दिया गया। परंपरागत रूप से, मिज़ो लोग अपनी आजीविका के लिए झूम की कटाई और जलाने की प्रणाली पर निर्भर थी। सफाई से लेकर कटाई तक सख्त अनुक्रम का पालन न करने से निश्चित रूप से उत्पादन में गिरावट होती थी।[28] मिज़ो लोगों के लिए गाँव समूहीकरण एक भयानक दुःस्वप्न था क्योंकि इससे उनकी पारंपरिक अर्थव्यवस्था के बर्बाद होने के कारण सामान्य जनता को केवल अकल्पनीय पीड़ा और दुःख ही मिलता था। लगातार कर्फ्यू लगाए जाने के कारण खेती का समय कम हो गया, इसके अलावा, भारतीय सेना से उन्हें पास लेना अनिवार्य था और झूम खेती के समय कर्फ्यू लागू करने पर उन्हें जल्द गाँव वापस जाना होता था, जिससे काम के घंटे भी कम हो जाते थे। इस तरह जबरन मजदूरी और कर्फ्यू लागू ने झूम खेती में उनकी भागीदारी को प्रभावित किया और आओने जीवनयापन के लिए भी पर्याप्त भोजन पैदा नहीं कर पाए। ईस्ट लुङदार गाँव वालों ने भी *''अपना पूरा समय उसी काम में लगा देने के कारण उनकी मुख्य निर्भरता, चावल की फसल की अच्छी कटाई नहीं हो पाई।''*[29]

''उनके ऊपर हमेशा कर्फ्यू घोषित किया जा रहा था। वे थोड़े समय के लिए ही स्वतंत्र थे जब उन्हें कुछ खाने के लिए और अरबी सब्जी जैसे लेने की अनुमति दिए जाते थे। लेकिन अरबी निकालने के लिए कभी-कभी खुदाई कर रहे होते हैं, उस समय भी कर्फ्यू की घोषणा कर देते थे। सभी हड़बड़ी में घर वापस चले जाते थे। उन्हें ड्यूटी पर तैनात सैनिकों को अपनी सफाई देनी भी पड़ती थी। और कुछ लोगों को पिटाई भी पड़ता था।''[30]

विद्रोह के दौरान मिज़ो लोग अकाल से भी पीड़ित थे। भारत सरकार ने गाँव समूहीकरण मे रहने वाले लोगों के लिए आटा दिया, लेकिन मिज़ो लोगों द्वारा आटा को भोजन नहीं माना गया

क्योंकि उनके पूर्वजों के दिनों से उनका मुख्य भोजन चावल है। भले ही उन्होंने दिए गए आटे से अपनी भूख मिटाने की कोशिश की लेकिन चावल के अलावा उनका भूख मिटाने वाला और कोई दूसरा भोजन नहीं था। माफेली ने अपने उपन्यास ‘ड्हिल्ह हर कन तुआर’ में यह स्पष्ट रूप से चित्रित किया है कि भोजन में अचानक परिवर्तन होना गाँव वालों के लिए काफी हद तक दर्दनाक था क्योंकि लोग आटे को भोजन के रूप में स्वीकार नहीं कर सकते थे। पर्याप्त भोजन न मिलने के कारण गाँव वालों को बुरे काम करने के लिए मजबूर होना पड़ा।

“रमबुआई के कठिन समय के साथ-साथ उन्हें अकाल का भी सामना करना पड़ा। जब परिवारों के पास पर्याप्त भोजन न होने के कारण लाचारी से बैठे है, तब दिमाग में कई प्रकार के नकारात्मक ख्याल आ सकता है और यह कहा जा सकता है कि उस विचार से कई गलत कामों का जन्म भी हुआ।”[31] लेकिन, माफेली ने इस बात पर टिप्पणी करती है कि *“जब किसी व्यक्ति को उनकी सहनशक्ति से अधिक मजबूर किया जाता है, तो दिमाग को शांत और स्थिर रखना बहुत कठिन हो जाता है।”*[32]

“एक और बहुत बड़ी परेशानी यह थी कि उन्हें अकाल का सामना करना कि पड़ा था, वे कितने भूखे थे, इसका वर्णन करना भी मुश्किल है। वे आटा पर निर्भर होने लगे थे, लेकिन मिज़ो, हमेशा से चावल खाने वालों के लिए इसे सहना बहुत कठिन था। बच्चे भी इस बात को समझ नहीं पा रहे थे। वे आते को भोजन के रूप में स्वीकार नहीं कर पा रहे थे। आटा खाने के बाद भी वे यहीं कहते थे कि उन्होंने अभी तक खाना नहीं खाया है! हालाँकि उनका कोई दोष नहीं था, उन्हें भोजन की कमी कभी-भी नहीं होती थी। वे ऐसे बच्चे थे जो सुबह, दोपहर और रात को चावल की एक गांठ लेकर बाहर खेलते थे।”[33]

बच्चों की भूख और चावल की कमी के कारण माता-पिता अक्सर आँसू बहाते थे। घर के पुरुष इस पर भी कुछ नहीं कर सकते थे। वे यह जानते थे कि मिज़ो समाज में परिवार के लिए पर्याप्त चावल नहीं काट पाना अपमानजनक माना जाता है, लेकिन इसके बावजूद भी वे अपने परिवार को

निराशा में देखते थे। *"साहसी माताओं के लिए भी अपने बच्चों की भूख को देखना कठिन था। वे नहीं जानतीं थीं कि उनके बच्चे द्वारा माँगे जो भोजन की व्यवस्था कैसे करें, इसलिए वे चुपके से अपने आँसू पोंछ लिया करती थीं। पिता भी अपने भूखे परिवार को निराशा भरी नज़रों से देखते रहते थे।"*[34]

भारतीय सेना और भूमिगत विद्रोहियों के ताकतों के डर के अलावा सामान्य जनता के बीच 'कोकतू' की मौजूदगी के कारण लोगों की दयनीय स्थिति होती थी। मिज़ो विद्रोह के समय गाँव के कुछ पुरुष भारतीय सेना के पक्ष में रहने के लिए उनके लिए 'कोकतू' बन जाते थे। 'कोकतू' का अर्थ है मुखबिर या सूचना देने वाला। ये लोग एक ही समुदाय के थे और इसका नतीजा यह हुआ कि समुदाय के भीतर संदेह की स्थिति पैदा हो जाती थी। यह माना जाता था कि लोगों को केवल संदेह के आधार पर ही गिरफ्तार किया जाता था, उन्हें कैद करके पीटा जाता था, और कभी-कभार उन्हें मार भी दिया जाता था। चूँकि 'कोकतू' की असली पहचान को हमेशा गुप्त रखा जाता था, उनके बारे में केवल गपशप के अलावा उनकी असली पहचान का पता नहीं लगाया जा सकता था, इसलिए सभी अपने करीबियों तक से सावधान रहा करते थे। पूरा समुदाय 'कोकतू' से डरता था।

पूर्व मिज़ो समाज में प्रचलित अपने किसी मित्र की सुरक्षा के लिए अपने प्राणों की आहुति देने की प्रथा धीरे-धीरे व्यक्तिगत सुरक्षा की भावना में बदल गई और 'कोकतू' शब्द लोगों के बीच अधिक प्रसिद्ध हो गई। मिज़ो विद्रोह के दौरान 'कोकतू' का खौफ बना रहता था और लोग बहुत सावधान रहते थे। चूँकि उनकी असली पहचान गुप्त रखा जाता था इसलिए सामान्य जनता अपने संपर्कों के बारे में बहुत ही सतर्क रहते थे। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में लेखिका माफेली ने ईस्ट लुङदार गाँव में 'कोकतू' से संबंधित घटना का वर्णन किया। ईस्ट लुङदार गाँव में एक 'कोकतू' ने भारतीय सेना के सामने एक निर्दोष ग्रामीण पु ललज़ामा को एम. एन. एफ. का नेता पु ललदेङा होने का आरोप लगा देता है, जिसकी वजह से उसे पूरी रात भारतीय सेना के द्वारा क्रूरतापूर्वक पूछताछ की जाती है जिससे वह जीवन भर के लिए शारीरिक रूप से विकलांग हो जाता है।

"एक दिन ईस्ट लुङदार गाँव में 'कोकतू' आया। गाँव के एक व्यक्ति ललज़ामा की ओर उँगली उठाकर भारतीय सैनिक से वह कहने लगा, 'यही है एम.एन.एफ. का नेता ललदेङा!' गाँव वालों के कहने पर भी कि वह ललदेङा नहीं है, भारतीय सैनिकों ने उनकी बात को कोई महत्व नहीं दिया। ललज़ामा को अलग रखा गया और भारतीय सैनिकों ने जितना चाहा, उसे सताया। पूरी रात उसकी चीख बंद नहीं हुई। इसी से समझा जा सकता है कि उसे पूरी रात बेरहमी से पीटा गया था। ललज़ामा के रिश्ते के भाइयों के लिए यह बहुत ही पीड़ादायक रहा होगा। स्कूल के एक कमरे में उनके भाई के ऊपर अत्याचार हो रहा था, वह चीख रहा था और वे दूसरे कमरे में रस्सी से बँधे हुए थे और कुछ नहीं कर सकते थे। पूर्वजों के जमाने से ही मिज़ो लोगों के मन में 'दोस्त के लिए अपनी जान दे देने' का विचार गहराई से बैठा हुआ था। इस बीच ललज़ामा को बचाने वाला कोई नहीं था और उसकी दर्द के मारे जोर-जोर से चीखने की आवाज़ सुनकर उसके साथ सहानुभूति रखने वालों का दिल फूट-फूटकर रो रहा होगा।"[35]

"पहले ही नकाबपोश व्यक्ति, जिसे 'कोकतू' कहते थे, ने ललज़ामा पर यह झूठ आरोप लगाया था कि 'यह एम.एन.एफ. का प्रेसीडेंट ललदेङा है'। अब उसे मूत्र संबंधी गंभीर समस्या हो गई थी। उसके शरीर पर पिटाई के गहरे निशान काले पड़ गए थे। उसे पीटने के निशान जो घर्षण घाव हो गए थे, उन्हें गर्म पानी से धोकर बड़ी सावधानी से साफ किया जाता था। वह हिलने-डुलने में भी असमर्थ था और पेशाब की समस्या के कारण लगातार कम मात्रा में उसका पेशाब विसर्जन हो रहा था।"[36] मिज़ो विद्रोह से 'कोकतू' शब्द का जन्म हुआ और 'कोकतू' ने कई मिज़ो के दिलों को घायल कर दिया और मिज़ो विद्रोह के अंत के बाद भी यह घाव मिट नहीं पाया।

ईस्ट लुङदार गाँव को जंग की मैदान बनाकर जला देने की घटना ने लोगों के मन में भूमिगत विद्रोहियों के प्रति भय पैदा कर दिया। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास का नायक रोछुआहअ और उसके दोस्त झूम की ओर जाते समय भूमिगत सेना के एक दल से मिले, जिस पर उसने और उसके दोस्तों ने मौन रहते हुए उनकी उपस्थिति पर सवाल उठाया। जब उनका गाँव सेना के

नियंत्रण में है, तो वे गाँव में क्यों घुस रहे थे? उनके इरादे चाहे जो कुछ भी हो, उनके मन में यह डर था कि निहत्थे गाँववाले ही अंतिम शिकार होंगे। यहाँ तक कि जब उपन्यास की नायिका दारपुई ने भूमिगत सेना से विनती की कि *"कृपया दोस्तों, कृपया करके कोई हानिकारक काम मत करो। तुम्हारे कर्मों का फल जिनको मिलने वाला है, वह हमारे ही गाँव के भोले-भाले लोग है।"*[37] लेकिन उसकी विनती का उन भूमिगत सेना के मन पर कोई असर नहीं हुआ। उल्टा उन्होंने कहा, *"नुला(युवती), हमारे कर्मों का फल तो तुम लोगों को मिलने वाला है। जब हमें इंडिपेंडेंस मिलेगा, तब तुम लोग ही खुश होने वाले हों।"*[38] उसके इस जवाब ने उनके मन में अधिक अशान्ति पैदा कर दी और सभी आत्मचिंतन में खो गए। *"ह्मम सिपई से अलग होने के बाद, किसी के मुँह से एक शब्द न निकला। लेकिन सभी के विचार एक समान थे। झूम पर जाने की न तो उनमें कोई उत्सुकता थी और न ही ज़रा भी इच्छा। उनके मन में कवेयल यही चिंता थी कि अब गाँव में क्या होने वाला है।"*[39]

उनके इस सोच और चिंतन से यह साबित करता है कि ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों के लिए भूमिगत विद्रोही भारतीय सेना से अधिक सुरक्षित नहीं थे। उन्हें दोनों सेना से सावधान रहना था। गाँव में भूमिगत विद्रोहियों की उपस्थिति के बारे में अफवाह फैलने पर सभी परेशान हो जाते थे और सभी चाहते थे कि वे जल्दी ही गाँव से चले जाएं। गाँव में भूमिगत विद्रोहियों की मौजूदगी के अनेक परिणाम हो सकते थे, उनका गाँव दोबारा जलकर राख हो सकता था, गोलीबारी में फँस सकते थे, पुरुषों और सरेंडर करने वालों से पूछताछ की जा सकती थी और यहाँ तक कि औरते भी सुरक्षित नहीं रहते। उपन्यास में दारपुई की माँ, पी मोइई कुछ कपड़ों के साथ जल्दी से घर के अंदर भाग आई और वह डरी हुई थी। दारपुई और उसकी सहेली, ज़ेलई को इस बात का पता चल गया था कि कुछ गड़बड़ है। जब दारपुई की माँ ने बताया कि पु त्लाङखूमअ के घर पर करीब 10 भूमिगत सेना ने भोजन किया था, तो दारपुई और ज़ेलई दोनों परेशान हो गए। दारपुई की माँ ने जब उन्हें बताया *कि "अगर आज पूरे दिन सैनिकों को कुछ पता नहीं चलता, तो उन्होंने रात का खाना खाने के बाद जाने की योजना बनाया हैं।" "रात का खाना खाने के बाद," दारपुई ने धीरे से कहा। सब का विचार एक*

जैसा था। अभी तो दोपहर की शुरुआत ही हुई थी, और रात के खाने का समय तो बहुत बहुत ही दूर की बात थी। अब उन्हें डरे हुए मन के साथ सूरज ढलने और अंधेरा होने का इंतज़ार करना होगा!"[40]

गाँव समूहीकरण के कारण भूमिगत विद्रोहियों को भोजन के मामले में बहुत कठिनाई होती थी। उपन्यास में भी समूहीकृत गाँव के लोग अकाल से पीड़ित तो थे ही साथ ही भोजन की कमी से भी पीड़ित थे, इसलिए भूमिगत विद्रोहियों को हमेशा भोजन उपलब्ध नहीं करा सकते थे। ईस्ट लुङदार गाँव वालों की यही दुविधा थी। भूमिगत विद्रोहियों के सामने गाँव वालों ने अपनी समस्याएँ बताई, लेकिन उनपर कोई असर नहीं पड़ा। *"हमारी स्थिति बहुत ही खराब है। हमारे ऊपर जो कष्ट और कठिनाइयाँ आ रही हैं, उससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता। उन्होंने धमकी दी है कि अगर आज शाम अंधेरा होने तक उन्हें उनकी जरूरत के सामान नहीं मिला, तो वे आज रात ही गाँव को जला देंगे।"*[41] इसलिए उनके पास भारी मन से हार मानने के अलावा कोई और रास्ता नहीं था। उपन्यास का नायक रोछुआहअ को इस बात से दर्द हुआ कि उनकी (मिज़ो लोगों की) स्वतंत्रता के लिए विद्रोह करने वाले विद्रोहियों ने उनके ही जात के गाँव को जलाने की धमकी दी थी। उसका विलाप यह था कि *""उन्होंने बिना सोचे-समझे इंडिपेंडेंस की घोषणा कर दी, यह पूछे बिना कि हम इसे चाहते हैं या नहीं। उनके कारण हमारा गाँव जलकर राख हो गया और हमारे ही लोगों ने अपनी जान गँवा दी। ... उनकी सुरक्षा के लिए हमने सरेंडर किया और दर्द सहा। उनके लिए इतना कुछ करने के बाद भी कृतज्ञता दिखाने के बजाय वे हमें हमारा गाँव जलाने की धमकी देने की हिम्मत कर रहे हैं? पिताजी, हमारे ह्नम सिपई किस प्रकार की मानसिकता रखने वाले लोग हैं?""*[42]

गाँव समूहीकरण और कर्फ्यू लागू करने के बाद भी भूमिगत विद्रोही, गाँव के कुछ युवतियों के साथ प्रणय-निवेदन और अपने दैनिक जरूरतों जैसे भोजन, तंबाकू आदि के लिए गुप्त रूप से प्रवेश करते थे। इस बात की खबर भारतीय सेना को पता चलने पर उन्हें धमकाया जाता। *"उन्होंने उनसे कहा "हमें वालंटियार की सूची मिली है, वे तुरंत सरेंडर कर ले (वे सलेन्डर कहते थे), अन्यथा पूरे गाँव को भुगतना पड़ेगा।""*[43] गाँव वालों ने भूमिगत सेना को बचाने के लिए गाँव के कुछ लोगों ने सरेंडर भी

किया। उन्हें भारतीय सेना के कई ज़ुल्म भुगतना पड़ता था। यदि वॉलन्टियर्स गाँव में प्रवेश न करते तो यह नौबत नहीं आती। *"काफी सवाल-जवाब के बाद सेना एक साथ इकट्ठा होकर बात करने लगे। सभी पुरुषों को मैदान में कड़कती धूप में मुर्गा बनने के लिए कहा गया। लेकिन महिलाओं को अपने सिर पर लकड़ी का एक भारी लट्ठा रखने के लिए कहा गया। उन्हें इस तरह रखने के बाद भारतीय सेना ने घुटने के बल बैठे पुरुषों पर पीछे से बर्बरतापूर्वक प्रहार करना शुरू कर दिया... कड़ी धूप में इतनी प्रताड़ना झेलने के बावजूद उनमें कुछ लोग ऐसे भी थे जो खराब बातें कर रहे थे। उनमें से कुछ गिर पड़े, क्योंकि तेज धूप में लगातार पिटाई सहना आसान नहीं था। किसी के पास हिलने-डुलने तक की शक्ति शेष नहीं रहा।"*[44]

मिज़ो विद्रोह के दौरान उनके गाँव और घर जलकर राख हो गए, लोग बेघर हो गए और उनके पास खाने के लिए भोजन की कमी भी हो गई थी। भारतीय सेना के हाथों उन्होंने जो कष्ट झेले थे, उसकी कोई सीमा नहीं थी, उसी बीच उनके प्रतिनिधि, मिज़ो भूमिगत विद्रोही उन्हें स्वयं को सामान्य जनता से अधिक श्रेष्ठ मानने लगे और उनकी माँग को पूरा न करने के बदले उन्हें पीड़ित करने लगे। लेकिन जिस मिज़ो विद्रोही को भारतीय सेना के हाथों से बचाने के लिए अनेक कष्ट उठाने के लिए तैयार रहते थे, जिनको वे पूजते थे, लोग अब उनसे भी डरने लगे, उन्हें नाराज करने का हमेशा खतरा भी बना रहता था। सामान्य जनता को दोनों तरफ से कई तरह की परेशानी और पीड़ा भुगतनी पड़ी।

5.2 विद्रोह और मिज़ो स्त्री का संघर्ष

विद्रोह का स्वाभाविक परिणाम है 'हिंसा'। सामान्य रूप से किसी भी विद्रोह का गहरा प्रभाव मनुष्य के जीवन पर पड़ता है, लेकिन स्वाभाविक रूप से किसी भी विद्रोह के सर्वाधिक पीड़ादायक परिणाम महिलाओं पर शारीरिक एवं मानसिक शोषण के रूप में देखे जाते हैं। 1966 से 1986 तक चलने वाले मिज़ो विद्रोह ने मिज़ो लोगों को गहरा आघात पहुँचाया। दो दशकों तक चलने वाले इस मिज़ो विद्रोह का काल मिज़ोरम के अधिकांश लोगों के लिए हिंसा और असुरक्षा का काल था। मिज़ो विद्रोह के दौरान भी मिज़ो महिलाएँ सर्वाधिक असुरक्षित थीं। वे एक तरफ भारतीय सेना और दूसरी तरफ एम.एन.एफ. के डर के बीच जी रही थीं। स्त्रियाँ विद्रोह में सीधे-सीधे प्रतिभागी न होते हुए भी विद्रोह के विनाशकारी परिणाम का सबसे अधिक शिकार थीं। विद्रोह के दौरान स्त्रियों के संघर्षों का अनुभव पुरुषों से अलग प्रतीत होता है।

मिज़ो विद्रोह के दौरान स्त्रियाँ पीड़ित होने के साथ-साथ वे एजेंट भी थे। उन्होंने विद्रोह के हर पहलुओं में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई जैसे भूमिगत वॉलन्टियर्स के रूप में, परिवार की देखभाल करने वाली, अपने गाँव से एम.एन.एफ. की समर्थक के रूप में तथा पीड़ित के रूप में। स्त्रियाँ एम.एन.एफ. और भारतीय सेना के डर के बीच फँसी होती थी। कुछ स्त्रियाँ ऐसी भी थीं जो खुद को और अपने समाज को सुरक्षित रखने के लिए एम.एन.एफ. या भारतीय सेना की मदद करने के लिए मजबूर होती थीं।

लेखिका माफेली ने अपने उपन्यास 'ड्हिल्ह हर कन तुआर' में मिज़ो विद्रोह और संघर्ष की स्थिति में ईस्ट लुङदार गाँव की स्त्रियों के माध्यम से मिज़ो स्त्रियों की दर्दनाक और संकटपूर्ण स्थिति को छोटे-छोटे अंशों में कुछ ऐतिहासिक तथ्यों के साथ प्रस्तुत किया है। मिज़ो स्त्रियों खासकर युवतियों के लिए, मिज़ो विद्रोह के दौरान अपनी गरिमा की रक्षा करने और अपने देश तथा जाति के लिए सबसे उच्चतम कार्य था गैर मिज़ो के साथ संबंध न रखना। स्त्री के लिए अपने को इससे बचाए रखना सबसे बड़ी चुनौती थी।

मिज़ो विद्रोह के दौरान गाँव को जला देने की धमकी देना अधिक होता था। गाँव के समूहीकरण के कारण भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों को कई समस्याओं का सामना करना पड़ा था। अब वे पहले की तरह गाँव में अपने इच्छानुसार प्रवेश नहीं कर सकते थे। उनके पास खाने के लिए भोजन की कमी होती थी और वे अक्सर गाँव वालों से भोजन की माँग करते थे, बिना यह सोचे कि उन्हें भोजन देने वाले को किस खतरनाक स्थिति का सामना करना पड़ सकता हैं। विद्रोह के दौरान मिज़ोरम के कई गाँवों में भारतीय सेना बसे हुए थे और गाँव वालों को अपने दम पर गाँव के बाहर जाने की इजाज़त नहीं थी, और साथ ही एम.एन.एफ की मदद करने की अनुमति नहीं थी, मदद करने पर गाँव के भीतर ही कई तरह की समस्या पैदा हो सकती थी।

प्रस्तुत उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' में भी इस प्रकार की घटना का विवरण दिया गया है। उपन्यास में लेखिका ने ठुआमखूमी और कापमोई जैसी स्त्री पात्रों के माध्यम से ऐसी ही दुखद स्थिति में रहने वाले स्त्री की पीड़ा को प्रस्तुत किया है। भारतीय सरकार ने भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों और सामान्य जनता को अलग-थलग करने के लिए ग्राम समूहीकरण जैसी नीति को अपनाया। इस नीति के कारण भूमिगत मिज़ो विद्रोही आजादी से गाँव में घुस नहीं सकते थे। परिणामस्वरूप उन्हें भोजन और अन्य जरूरतों की आपूर्ति के लिए गाँववालों की मदद लेनी पड़ती थी। इस उपन्यास में भी भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों द्वारा ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों से भोजन और अन्य ज़रूरी सामान पहुँचाने की माँग और माँग पूरी न करने पर उनके गाँव को जला देने की धमकी का चित्रण किया गया है। उपन्यास में भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों को भोजन और जरूरत के सामान पहुँचाने के लिए पाँच युवतियों को चुना जाता है क्योंकि महिलाओं पर प्रायः कम संदेह किया जाता है। बीच रास्ते में दो भारतीय सैनिक ड्यूटी पर तैनात थे। युवतियों ने ड्यूटी पर तैनात भारतीय सैनिकों से बहाना बनाया कि वे तुईखुर (जहाँ पहाड़ से रिस-रिस कर आ रहे पानी को इकट्ठा किया जाता है।) से पानी लाने और कपड़े धोने जा रही हैं। उनके मना करने के बाद भी ड्यूटी पर तैनात दोनों भारतीय सैनिक उन युवतियों के साथ चलने लगे। इस प्रसंग में युवतियों के मन में चलने वाले उधेड़बुन से उनकी मानसिक दशा और उनके दोहरे शोषण का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। दोनों सैनिकों ने उनके बहाने को

नज़रअंदाज़ करके जबरन उन्हें अपने साथ ले जाने के लिए कहा। वे उन्हें मना नहीं कर सकती थीं, अन्यथा उन्हें एम.एन.एफ. को भोजन दिए बिना ही गाँव वापस लौटना पड़ता। यदि वे उन सैनिकों को अपने साथ चलने से माना कर देतीं तो वे गुप्त रूप से उनका पीछा कर सकते थे और गंतव्य पर पहुँचने पर दंगा होना निश्चित था।

ठूआमखूमी जानती थी कि यदि दोनों भारतीय सैनिक उनके साथ उनके गंतव्य स्थान पर पहुँच गए तो एम.एन.एफ. के साथ-साथ वे दोनों और उनका पूरा गाँव संकट में पड़ जाएंगे, इसलिए उन्होंने दोनों सैनिकों के साथ यौन संबंध बनाने का फैसला किया। *"ठूआमी चिंतित थी और वह मन ही मन सोच रही थी कि "अपने देश के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने से बढ़कर और क्या होगा तथा इससे महान और क्या हो सकता है?"*[45] *"...लेकिन उसे यह भी लग रहा था कि उस रात अपने गाँव और वॉलन्टियरों को बचाने के लिए उन सिपाहियों को अपना कीमती कौमार्य देना ही होगा।"*[46] उनमें से उम्र में सबसे बड़ी कापमोई को अपना फैसला भी बता देती है। *"वह धीरे से कहने लगी, "ठ्रीआनी, वॉलन्टियरों ने अब तक हमारे देश के लिए इतना कुछ सहा है। हमारे बारे में सोचने के कारण, अपने पूरे गाँव और वॉलन्टियरों की सुरक्षा के लिए, हमें इन दो वाई सिपाहियों के साथ सोना होगा।"*[47] पहले कापमोई को समझ नहीं आया लेकिन उसे भी अपने सखी की बात सच लगी और वह भी राज़ी हो गयी। *"वह अपनी सहेली ठूआमी से फुसफुसाते हुए कहने लगी, "ठ्रीआनी, तुम मुझे यहाँ से जाने के लिए नहीं कह सकती। मैं भी अपने देश के लिए वह सब कुछ करूँगी जो मैं कर सकती हूँ। वैसे भी, एक के जाने से बेहतर दो का जाना है।""*[48] दोनों युवतियों ने उनके साथ चलने वाले दो भारतीय सैनिकों को उनके साथ दूसरे रास्ते पर चलने के लिए बहकाया ताकि उनकी दूसरी सखी गंतव्य स्थान तक आराम से पहुँच सके और भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों को भोजन दे सके। अतः ठूआमखूमी और कापमोई ने अपने गाँव को जलने से तथा भारतीय सेना से भूमिगत विद्रोहियों को बचाने के लिए अपनी सबसे कीमती चीज का बलिदान कर दिया। इस तरह ठूआमखूमी और कापमोई, ईस्ट लुङदार की दो युवतियाँ भूमिगत एम.एन.एफ. के द्वारा अपने गाँव को जलाए जाने से बचाने के लिए ड्यूटी पर तैनात भारतीय सैनिकों को अपना कौमार्य बलिदान कर देती हैं।

जैसा कि पहले भी वर्णित किया गया है कि मिज़ो स्त्रियों खासकर युवतियों के लिए, मिज़ो विद्रोह के दौरान अपनी गरिमा की रक्षा करने और अपने देश तथा जाति के लिए सबसे उच्चतम कार्य था गैर मिज़ो के साथ संबंध न रखना। समाज में प्रत्येक स्त्री के लिए अपनी शुद्धता और पवित्रता को बनाए रखना एक मूल्य था। परंतु मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो स्त्रियों के बीच ही ईर्ष्या उत्पन्न हो गयी और और झूठे दोषारोपण होने लगे। ऐसे ही 'ङहिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की नायिका दारपुई पर भी गलत तरीके से भारतीय सेना के प्रमुख के साथ संबंध रखने का आरोप लगाया गया था। उस दौरान यह माना जाता था कि जो स्त्री भारतीय सेना के साथ संबंध रखती थी, वह देशद्रोही है। ऐसी स्त्रियों को समाज द्वारा निंदित और तिरस्कृत किया जाता था। उन झूठे आरोपों के कारण दारपुई के मन को बहुत दुःख पहुँचा और उसे दर्द महसूस हुआ। यहाँ तक कि पूरे गाँव में इस झूठे आरोप के फैलने के बाद उसने घर से बाहर निकलना भी बंद कर दिया था। उसकी पवित्रता पर उँगली उठाया जाना उसके लिए गहरा सदमा था। इस तरह इस झूठे आरोप के कारण दारपुई को गहरे भावनात्मक संकट का सामना करना पड़ा।

"...उन्होंने सिर झुकाकर बैठी दारपुई की ओर देखा और बोले, "जैसा कि हमारे वीसीपी साहब ने कहा है कि एक व्यक्ति पूरे गाँव का प्रतिनिधि होता है। यदि विदेश और वाईरम (मिज़ोरम से बाहर के शहर) में भी कोई मिज़ो व्यक्ति गलत काम करता है, तो लोग अक्सर पूरी जाति को बदनाम करते हुए कहते है कि 'मिज़ो लोग ऐसे ही होते है'। इसलिए, आज रात हम वहीं करने आए हैं जिसके संबंध में हमें रिपोर्ट मिली है। इसमें किसी भी प्रकार की व्यक्तिगत नफरत या घृणा का स्थान नहीं है।" ...हमें जो रिपोर्ट मिली है, मैं उसे स्पष्ट शब्दों में सबके सामने रख देता हूँ। हमें रिपोर्ट मिली है कि युवती दारथङपुई कई बार भारतीय सेना के कैम्प में जा चुकी है और उसके सेना अधिकारी के साथ करीबी संबंध है। यह सूचना हमें केवल एक बार ही नहीं बल्कि दो-तीन बार मिल चुकी है इसलिए आज रात आपको यहाँ बुलाया गया है।"[49]

दारपुई की एक ही आशा थी रोउछुआहा- उसके प्रेमी का विश्वास। लेकिन रोउछुआहा भी अब दारपुई के घर नहीं जाता था और न ही उसे मिलता था, जिसने दारपुई के दुख और दर्द को और अधिक बढ़ा दिया था। साथ ही एक दिन रोउछुआहा जब गाँव में टहल रहा था तब उसने दारपुई को भारतीय सेना शिविर से वापस आते हुए देख लिया था जिस कारण रोउछुआहा उन झूठे अफवाहों पर विश्वास करने लगा था। उसके ऊपर से रोउछुआहा का विश्वास टूटते हुए देखकर दारपुई असहाय महसूस करने लगी और अपनी आशा खोने लगी।

"दिन बीतता गया और दारपुई की चिंता बढ़ती गई। हालाँकि उसने खुद को यह समझाने की कोशिश की कि वह कभी उसके घर आ जाएगा, लेकिन अब उसे खुद पर और अपनी उम्मीदों पर भरोसा नहीं रहा था।"[50]

एक शाम दोनों तुईखुर(पानी की बिन्दु) पर मिले और दोनों के बीच बड़े ही मुश्किल से बात हुई। अब रोउछुआहा भी उन अफवाहों पर विश्वास करने लगा था क्योंकि उसने अपने ही आँखों से दारपुई को भारतीय सेना शिविर से वापस आते हुए देख लिया था। इस बीच उसके सख्त शब्दों ने दारपुई को ओर अधिक दुख पहुँचाया और अपने भारतीय सेना शिविर के जाने का कारण अपनी चचेरी बहन रमज़ाउई से पूछने के लिए भी कहा। रोउछुआहा का दोस्त रमज़ाउई से जब पूछने जाता है तब रमज़ाउई उसे झूठ बता देती है जिसे दारपुई दूर से सुन लेती है। उसे बहुत दुख होता है और अपनी आशा खोने लगती है। अब उसे लगने लगता है कि रोउछुआहा और वह एक दूसरे के लिए नहीं बने थे। लेकिन जिससे वह पूरे दिल से प्रेम करती थी उसके सख्त शब्दों और विश्वास उठ जाने से उसका दर्द बढ़ जाता है।

"जबकि मिज़ो लोग उज्ज्वल भविष्य की प्रतीक्षा में दुःख के बीच बैठे हुए थे उस बीच दारथङपुई और रोउछुआहा भी प्रेम के कारण दुःख के धुंधली कुहासे में डूब रहे थे। सच जानने वाली दारपुई के लिए अपने प्रेमी को दूसरों के छल में रहते हुए देख दुखी होते हुए भी उसे सच बताने और स्वीकार कराने के लिए वह कुछ नहीं कर सकती थी। वह प्रत्येक रात बिस्तर पर लैटते हुए आँसू के

साथ परमेश्वर को बुलाती थी। अपनी सच्चाई साबित करने के लिए वह परमेश्वर के समय की प्रतीक्षा करने के अलावा कुछ नहीं कर सकती थी।

"हे यहोवा, अपने शत्रुओं के कारण मैं गिर गई हूँ। यदि मेरी पिछली सभी सेवाओं से मुझे आपकी कृपा प्राप्त हुई है, तो कृप्या मेरी सच्चाई उजागर कर दीजिए। अब तो उचित समय पर आपके नाम की स्तुति करना और प्रार्थना करना भी मेरे लिए लज्जा की बात बन गई है। लोग अब मुझे हेय दृष्टि से देखने लगे हैं," कहकर वह फुट-फुटकर रोती थी। वह अपनी सारी कठिनाईयाँ परमेश्वर को सौंप देती थी और मदद मांगती थी, लेकिन परमेश्वर मनुष्य की इच्छाओं और समय के अनुसार कार्य नहीं करते हैं। उस व्यक्ति के लिए परमेश्वर के कार्य करने के समय की प्रतीक्षा करना कितना पीड़ादायक होगा जो हर दिन दूसरों की बदनामी और मुसीबतें झेल रही है!"[51]

"दारपुई शरद ऋतु के चाँदनी रात में अपने गाँव के दृश्यों को निहारती रही। पुराने समय में जहाँ वे अपने प्रेमियों के साथ खुशी से घूमा करते थे, वह सुंदर घास का मैदान अब खूबसूरत नहीं रहें। उसे ऐसा लगने लगा था कि रात को चहचहाने वाले पक्षी उसका मज़ाक उड़ा रहे हैं। उसने मन ही मन कहा, "हे सुंदर गायक पक्षी, तुम मुझ पर क्यों हँस रहे हो? मेरे दर्द असहनीय हैं, कम से कम तुम मेरी मासूमियत का गाना नहीं गाओगे?' उसके परिवार वाले गहरी नींद में सो रहे थे, उनकी साँसों की आवाज़ से उसे अकेलापन महसूस हुआ जिसने उसे यह सोचने में मजबूर कर दिया कि वह अकेली हो गई है। उसकी चहेरी बहन रमज़ाउई, चुपके से रोउछुआहा के पीछे-पीछे जंगल जाने की बात से उसके दिल को बहुत दुःख भी पहुँचाया।

'हे परमेश्वर मेरे यहोवा, आप इस सत्य को कब तक छिपाए रखेंगे? जब सच्चाई सामने आएगी तो कहीं ऐसा न हो कि मैं अपने प्रिय के लिए देर कर चुकी हूँ। प्रभु, क्या आपने मुझे त्याग दिया है? प्रेम ईर्ष्या भी साथ लाता है, हे न? वह भी एक ही परिवार के भीतर! यह कितनी आश्चर्य की बात है! लेकिन रमज़ाउई थङखूमा से बहुत प्रेम करती थी, हे न? फिर वह अपनी ही बहन के बीच क्यों आ रही है? यह औरत वास्तव में चाहती क्या है? क्या वह सच में रोउछुआहा से प्रेम करती है?

चूँकि उनका रहन-सहन सम्पन्न हैं, तो क्या वह उसे केवल अपने एशो-आराम और बेहतर जीवन के लिए चाहती है? प्रभु, सच भले ही कड़वा हो, कृपया उसे सामने लाना,' कहकर वह बड़बड़ाने लगी।''[52]

केवल मिज़ो स्त्रियों के लिए ही नहीं हर स्त्री के लिए अपनी पवित्रता बनाए रखना उनके लिए सबसे मूल्यवान है। लेकिन मिज़ोरम विद्रोह के कारण मिज़ो स्त्रियों के लिए अपनी पवित्रता बनाए रखना एक कठिन हो गया था। भारतीय सेना द्वारा उन्हें बलात्कार किए जा रहे थे। ऐसा कहा जा सकता है कि बलात्कार युद्ध से जुड़ा हुआ है और बलात्कार को युद्ध के एक हिस्से के रूप में भी देखा जा सकता हैं। केवल मिज़ोरम के स्वतंत्रता के लिए लड़े जाने वाले युद्ध ही नहीं बल्कि इस पूरे विश्व में युद्ध के दौरान स्त्रियों के बलात्कार का वर्णन हमें कई इतिहास और उनके साहित्य में भी देखने को मिलता है। कई मिज़ो लेखक, जिन्होंने मिज़ोरम रमबुआई के बारे में लिखा हैं, उन्होंने विद्रोह के दौरान मिज़ो स्त्रियों के बलात्कार और उनपर किए गए अत्याचारों का भी उल्लेख किया हैं। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में किसी विशेष बलात्कार पीड़ित स्त्री का उल्लेख नहीं किया गया है लेकिन यह उल्लेख किया गया है कि विद्रोह के दौरान मिज़ो स्त्री सुरक्षित नहीं थे, उन्हें बलात्कार किया जाता था, चाहे वह अविवाहित हो या विवाहित हो। यह भी उल्लेख किया गया है कि विभिन्न गाँव की युवतियों ने बलात्कार से बचने के लिए कैसे-कैसे कदम उठाए। इससे यह स्पष्ट होता है कि मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना द्वारा मिज़ो स्त्रियों के साथ बलात्कार करने के साथ-साथ उन्हें प्रताड़ित भी किया गया हैं।

''मिज़ोरम संघर्ष की स्थिति में था और हर जगह सैन्य शासन चल रहा था, इसलिए उनकी आजीविका बहुत बड़ी संकट में थी। कुछ गांवों में गैर मिज़ो सैनिकों ने महिलाओं के साथ बलात्कार किया, और वे यह भी नहीं सोचते थे कि वे युवतियाँ हैं या माँ। युवतियाँ सुरक्षित नहीं थे, और माँ भी नहीं। युवतियाँ बाहर जाने के लिए पड़ोसियों के बच्चों को अपने पीठ में लादकर ले जाते थे, और

अगर ऐसा कोई बच्चा नहीं होता था तो वे किसी बच्चे के हाथ पकड़ने के लिए ढूंढते थे। कुछ गांवों में अधिकतर युवतियाँ स्वयं को कालिख लगाती थीं।''[53]

''कई महिलाएँ जिन्होंने बलात्कार के कारण अपना पवित्रता खो दिया और जिन्होंने अपनी जान गँवा दी, उन्हें कभी भी अपना जीवन, अपना सम्मान और पवित्रता वापस नहीं मिलेगी।''[54]

उपन्यास में ईस्ट लुङदार गाँव भारतीय सेना और मिज़ो विद्रोहियों के जंग का मैदान बन गया था। इस गोलीबारी में ईस्ट लुङदार गाँव के मुखिया की बेटी को भी मारा गया था। इसकी प्रामाणिकता हमें 'डाक्यूमेंट्री ऑफ मिज़ोरम वार ऑफ इंडिपेंडेंस 1966 टू 1986' में मिलता है। 'डाक्यूमेंट्री ऑफ मिज़ोरम वार ऑफ इंडिपेंडेंस 1966 टू 1986' के चौथे अध्याय मिज़ो नेशनल मूवमेंट (आम जनता के संघर्ष) के अंतर्गत ईस्ट लुङदार गाँव के निवासी श्राङहलेइअ जो उस समय के प्रधानध्यापक थे, उनके द्वारा लिखे गए लेख में जिनकी उस गोलीबारी में उस सूची में उनके गाँव की मुखिया की बेटी का नाम भी आता है।[55]

गाँव के जलने के बाद उसका पुनर्निर्माण किया गया। उसके बाद भारतीय सेनाओं के लिए दिन-रात बिना आराम किए गाँव के युवक-युवतियाँ काम करने लगे जो उनके जीवन का मकसद लगने लगा था। इस दौरान भारतीय सेना द्वारा कुछ युवतियों के प्रति मौखिक दुर्व्यवहार भी दिखता है।

''चूँकि अपने इच्छाओं और हितों के बारे में सोचे बिना वे ह्मम सेना और भारतीय सेना की सेवा में व्यस्त थे, ऐसा सोच जा सकता है कि यह उनके जीवन का मुख्य मकसद बन गया था। यह खासकर युवक और युवतियों के लिए बहुत ही थकावट काम था। कड़ी धूप में भारतीय सेना के लिए काम करते थे। थोड़ी देर के लिए भी आराम से सांस लेने में भी उन्हें डर लगता था। हर तरफ भारतीय सेना खड़े थे। उनके द्वारा युवतियों के लिए भले ही अपशब्दों का प्रयोग करने पर भी वे (युवक) केवल मन ही मन गुस्सा और घृणा कर सकते थे, उनके लिए आवाज नहीं उठा पाते थे और न ही खड़े हो सकते थे।''[56]

आज तक लगभग प्रत्येक समाज में स्त्रियों पर मौखिक रूप से दुर्व्यवहार किया जाता है। मिज़ो विद्रोह के दौरान भी युवतियों पर इस प्रकार का व्यवहार भारतीय सेना द्वारा किया जाता था जो कामुक होती थी जिसे यौन हिंसा या शोषण के रूप में गिना जा सकता है। इस प्रकार के यौन शोषण का युवतियों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार के हिंसा पर युवतियाँ ही नहीं युवक भी आवाज नहीं उठा पाते थे और न ही उनके लिए खड़े हो सकते थे क्योंकि उस समय उनकी स्थिति खराब थी और भले ही वे अपने गाँव में रहते थे लेकिन वे भारतीय सेना के शासन के अधीन थे।

विद्रोह के दौरान भारतीय सरकार द्वारा गाँव समूहीकरण के कारण विस्थापन और पुनर्वास का प्रभाव पूरे समाज पर पड़ा लेकिन स्त्रियों के लिए और भी अधिक दर्दनाक प्रभाव पड़ा।

मिज़ो विद्रोह ने मिज़ो स्त्रियों को कई तरह से आघात पहुँचाया। स्त्री के लिए सबसे कीमती चीज उनका कौमार्य है, लेकिन विद्रोह के दौरान भारतीय सेना द्वारा स्त्रियों के देह को हथियार के रूप में प्रयोग करते हुए उनके साथ बलात्कार किया गया। विद्रोह उन्हें एक कठिन परिस्थिति में डाल देता है जहाँ उन्हें अपने देश और जाति, अपने गाँव को बचाने के लिए अपनी सबसे कीमती चीज, अपने कौमार्य का त्याग करना पड़ता है, जिससे उनके मन को गहरा सदमा पहुँचता है। विद्रोह के दौरान स्त्रियाँ सीधी प्रतिभागी नहीं होते हुए भी विद्रोह के विनाशकारी परिणामों की सबसे ज्यादा शिकार थीं।

5.3 मिज़ो विद्रोह और भारतीय सेना

मिज़ो विद्रोह, 1966 से 1986 के बीच पूर्वोत्तर भारतीय राज्य मिज़ोरम में एक महत्त्वपूर्ण विद्रोह था और यह स्वतंत्र भारत में सबसे तीव्र और लंबे समय तक चलने वाले विद्रोहों में से एक है। यह विद्रोह मिज़ो नैशनल फ्रन्ट (एम.एन.एफ.) और भारतीय सेना के बीच संघर्ष था जो 20 वर्षों तक चला।

28 फरवरी, 1966 को शुरू हुआ मिज़ो विद्रोह, एम.एन.एफ. द्वारा भारतीय सरकार के खिलाफ एक विद्रोह था जिसका मूल उद्देश्य मिज़ो लोगों के लिए एक अलग राष्ट्र या राज्य की स्थापना करना था। 1 मार्च, 1966 को एम.एन.एफ. ने भारत से स्वतंत्रता की घोषणा की और सशस्त्र विद्रोह शुरू किया क्योंकि वे माउताम अकाल के दौरान भारत सरकार द्वारा राहत की प्रतिक्रिया से असन्तुष्ट थे और साथ ही उनका मानना था कि शेष भारत से उनकी सांस्कृतिक और जातीय में विभिन्नताएँ थी। 28 फरवरी, 1966 को एम.एन.एफ ने मिज़ो जिले के विभिन्न क्षेत्रों में भारतीय सरकारी कार्यालयों और सुरक्षा बलों की चौकियों को निशाना बनाकर उनपर हमला किया। इस पर भारत सरकार ने जवाबी कार्रवाई शुरू कर दी और उन्होंने मिज़ोरम में भारतीय सेना को तैनात कर दिया।

2 मार्च, 1966 को असम सरकार ने असम अशांत क्षेत्र अधिनियम, 1955 और सशस्त्र बल अधिनियम, 1958 को लागू किया और पूरे मिज़ो जिले को "अशांत क्षेत्र" घोषित कर दिया गया। भारतीय सेना ने मिज़ो लोगों पर फिर से नियंत्रण पाने के लिए कई रणनीति और अभियान चलाए। इस प्रकार भारतीय सरकार ने 1966 से 1980 के दशक के प्रारंभ तक मिज़ो विद्रोह का मुकाबला करने के लिए केन्द्रीय भूमिका निभाई।

4-5 मार्च, 1966 को एक दुर्लभ और विवादास्पद कदम के रूप में, भारतीय सरकार के आदेश से भारतीय वायु सेना ने विद्रोहियों के गढ़ों को नष्ट करने के लिए लड़ाकू विमानों का उपयोग

किया और आइज़ोल पर बमबारी की। इस हवाई बमबारी के कारण आइज़ोल के कई महत्त्वपूर्ण हिस्से नष्ट हो गए।[57] इस बमबारी ने मिज़ो लोगों में व्यापक रूप से गुस्सा फैल गया और एम.एन.एफ की आज़ादी की कहानी को बल मिला और इसे भारतीय सेना की क्रूर और असंगत कार्रवाई के रूप में देखा गया। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास से भी यह स्पष्ट रूप से चित्रित किया गया है कि आइज़ोल में बमबारी ने लोगों की मानसिकता को बहुत हद तक बदल दिया। *"5 मार्च, 1966 को मिजोरम की राजधानी आइज़ोल पर एक विमान से बमबारी की गयी। कुछ ही देर में यह खबर पूरे मिज़ोरम में फैल गयी।... कुछ ऐसे भी थे जो 'इंडिपेंडेंट' होने की लड़ाई के जोश में अंधे हो गए थे। उस समय मिज़ो लोगों की हालत ऐसी हो गई थी कि हवा का रुख जिस ओर होता, वे उसी ओर झुक जाते।"*[58] आइज़ोल पर बमबारी से क्षेत्र में शांति स्थापित न होकर अशान्ति जारी रही और मिज़ो लोगों पर इसका गहरा मनोवैज्ञानिक असर पड़ा। लोगों के चर्चा का विषय बदलने लगा वैसे ही ईस्ट लुङदार गाँव की चर्चा का विषय भी बदलने लगा था।

विभिन्न स्थानों पर हवाई जहाज, हेलिकाप्टर से भारतीय सेना को आइज़ोल पहुँचाया गया तथा सिलचर से पैदल चलकर आने वाली टुकड़ी भी विद्रोहियों द्वारा लगाए गए सड़क अवरोधों के कारण मार्च के दूसरे हफ्ते में आइज़ोल शहर पहुँच गयें। इसके बाद वे मिज़ोरम के विभिन्न शहर के लिए निकले। लुङदार के वी.सी.पी बी.हुङलिआना ने ईस्ट लुङदार में भारतीय सेना के साथ अपने मुठभेड़ में लिखा था कि *'ईस्ट लुङदार एक सुखद और मनमोहक गाँव है और आजादी की घोषणा के तुरंत बाद कई वॉलन्टियर्स को वहाँ रहना पड़ा था। मिज़ो नैशनल वॉलन्टियर्स का 31 वां डिवीजन ब्रिगेडियर जनरल बिआकछूङा के अधीन था और वे गाँव में ही रह रहे थे। इससे पहले कि वे कुछ कर पाए और गाँव से निकल पाते, असम राइफल्स की करीब 200 जवानों वाली टुकड़ी अचानक गाँव में घुस आई।... ईस्ट लुङदार गाँव भारतीय सेना के लिए एक महत्त्वपूर्ण रणनीतिक स्थान होने के कारण गाँव में एक स्थायी चौकी बनाने की तैयारी की गई।'*[59] *"एम.एन.एफ. द्वारा ईस्ट लुङदार और बूङज़ुङ गाँवों में अपना हेडकॉर्टर बनाने के कारण भारतीय सेना ने भी ईस्ट लुङदार अपना ठिकाना बनाने की कोशिश की।"*[60] जैसे ही भारतीय सेना मिज़ोरम के पहाड़ियों में स्थान बनाने लगे, उन्होंने

मिज़ो लोगों को विद्रोहियों के साथ भाग लेने से हतोत्साहित करना शुरू कर दिया और उन्हें आश्वस्त दिलाया कि वे उनके पक्ष में हैं और उनका समर्थन करने की सलाह भी दी। *"सेना के जवानों ने कहा कि वे लोग भारत सरकार की इच्छा के अनुसार इसी गाँव में रहेंगे और गाँव वालों को निर्देश दिया गया कि वे एम.एन.एफ. का पक्ष न लेकर भारत की मदद करें। उन्हें यह समझाया गया कि एम.एन.एफ. के लोग जो करना चाहते हैं, वह सही नहीं है और भारत सरकार मिज़ो लोगों को प्यार करती है।"*[61]

1966 के मिज़ोरम सरकार के उप-राष्ट्रपति ललनुनमोइअ ने वॉलन्टियर्स को ईस्ट लुङदार गाँव में जा रहे भारतीय सेना टुकड़ी पर हमला करने का आदेश जारी किया। 15 नवम्बर, 1966 को बिना किसी पूर्व-नियोजित व्यवस्था के एम.एन.एफ वॉलन्टियरों ने दूर से ईस्ट लुङदार गाँव में उसी दिन आए भारतीय सेना पर गोलीबारी शुरू कर दी।[62] मिज़ो विद्रोहियों और भारतीय सेना के बीच की इस गोलीबारी में ईस्ट लुङदार के कुछ लोगों ने अपनी जान गंवा दी तथा गोलीबारी के बाद गाँव से भागने में असमर्थ लोगों को भारतीय सेना द्वारा पकड़ लिए गए थे। ईस्ट लुङदार गाँव के पूर्व वी.सी.पी पु के. ललङाईज़ुआला ने अपने लेख में यह वर्णित किया है कि गोलीबारी के बाद जो लोग गाँव से भागने में असमर्थ थे और जो अपने घर में सामान बचाने के लिए आए थे, उन्हें भारतीय सेना ने पकड़ लिया।[63] लुङदार के वी.सी.पी बी.हुङलिआना ने ईस्ट लुङदार में भारतीय सेना के साथ अपने मुठभेड़ के विषय के अंतर्गत लिखा था कि 'सेना ने महिलाओं और बच्चों सहित जो भी उन्हें मिल सका, पकड़कर उन्हें स्कूल में रखा।

"जो लोग उस रात गाँव से भागने में सफल नहीं रहे, उन्हें भारतीय सैनिकों ने पकड़ लिया था।... ऐसा नहीं है कि जो युवा मारे गए वे बदमाश या बदतमीज़ थे, बल्कि अपने परिवार की चिंता करने के कारण उन्हें गोली लगी थी!"[64]

"...उस रात मुखिया की बेटी – जो मानसिक रूप से आम व्यक्ति से कम थी – उसी के घर के अंदर गोली मार दिया जाना, ये घाव बहुत गहरे थे। अगले दिन सूर्योदय के बाद खबर लेने निकले

युवकों को भारतीय सैनिकों द्वारा मौत के घाट उतार दिया गया और अपने पिता की मदद करने पहुँचे युवक को भी गोली मार दिया गया...''[65]

ईस्ट लुङदार गाँव जलकर राख होने के बाद लोग बेघर हो गए, उन्हें अपने आस-पास के गाँव में तित्तर-बित्तर होना पड़ा। इसके बाद गाँव के वी.सी और भारतीय सेना के बीच बातचीत हुई और फिर से गाँव को बसाने का फैसला किया गया। अपने गाँव को फिर से बसाने का काम करने के पश्चात गाँव वालों को भारतीय सेना द्वारा उनके लिए जबरन मजदूरी कराई गई। *''गाँव की मरम्मत के लिए गाँव वालों के इकट्ठे होने के कुछ ही समय बाद, सैनिकों ने ईस्ट लुङदार और उसके आस-पास के गाँवों को बुलाया।... लेकिन, उन्हें सैनिकों के लिए एक सुरक्षित स्थान और बारिक भी बनाना था।''*[66] उनकी इच्छा और हितों के बारे में सोचे बिना पूरा दिन कड़ी धूप में भारतीय सेना के लिए जबरन काम कराया जा रहा था।*''कड़ी धूप में वे भारतीय सेना के लिए काम करते थे। थोड़ी देर के लिए भी आराम से सांस लेने में भी उन्हें डर लगता था। हर जगह भारतीय सेना खड़े थे।''*[67]

भारतीय सरकार और सेना के कई आदेशों के बावजूद भी, मिज़ो विद्रोह के शुरुआती दौर में मिज़ो विद्रोहियों को अधिकतर सामान्य मिज़ो लोगों का समर्थन प्राप्त था, साथ ही वे यह जानते थे कि उनके ही स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे हैं, इसलिए विद्रोहियों को गाँवों में सुरक्षा और शरण मिल रही थी, कई छोटे गाँवों पर उनका नियंत्रण था, जहाँ से भी वे भारतीय सेना के सुरक्षा बलों पर हमला करते थे और उसके बाद गाँव वालों के बीच विलीन हो जाते थे। इसलिए विद्रोहियों को स्थानीय मिज़ो लोगों से अलग करने के लिए भारतीय सरकार ने एक उग्रवादी विरोधी नीति अपनाया जिसे 'खोखोम' अर्थात् गाँव समूहीकरण कहा गया। इस नीति को भारतीय सेना द्वारा 1967 से 1970 तक चलाया गया *था। ''वर्ष 1967 मिजोरम के लोगों के लिए एक बुरा वर्ष था। 'सबसे बुरा चीज जिसका हमें सामने करना पड़ा वह थी 'गाँव का समूहीकरण' गाने का जन्म का कारण निकलने वाला था।''*[68]

यह भारतीय सेना द्वारा की गई भयावह सैन्य कार्रवाइयों में से एक था। 'गाँव समूहीकरण' को 'ऑपरेशन एक्मिप्लशमेंट' नाम दिया गया। *''न केवल उन्हें अपने पूर्वजों से विरासत में मिले घरों,*

बगीचों, फसलों और खेतों को छुड़वाया गया, बल्कि उन्हें समूहों में रहने के लिए मजबूर किया गया, वो भी दूसरे गाँव में, जिन्हें पी.पी.वी कहा जाता हैं...''[69] लोगों को अपने गाँवों से अपने सामान के साथ प्रगतिशील गाँवों में जाने के लिए केवल एक ही दिन का नोटिस दिए जाते थे। गाँव से निकलने के बाद उनके छोड़ दिए गए गाँव, उनकी संपत्ति, फसल आदि को भारतीय सेना द्वारा जला दिया जाता था। *''विभिन्न गाँवों के अलग-अलग समूह बनाया जा रहा था। गाँवों ने भी आग लगने की खबरें सुनने में आ रहे थे।''*[70] गाँव समूहीकरण नीति के अंतर्गत कई गाँवों को ग्रूपींग सेंटर के रूप में इस्तेमाल किये गए जिसे भारतीय सेना के सुरक्षा बलों के नियंत्रण में रखे गए। *''हर समूहीकृत गाँव, ग्रूपींग सेंटर एक सैन्य अड्डा बंता जा रहा था।''*[71] *''अब मिज़ोरम एक विद्रोह क्षेत्र बनता जा रहा था, और हर जगह लोगों को सैन्य नियंत्रण के अनुसार रहना पड़ रहा था, इसलिए उनकी आजीविका अधिक कठिन हो गई।''*[72] उसी प्रकार *''ईस्ट लुङदार गाँव को भी एक ग्रूपिंग सेंटर के रूप में इस्तेमाल किया गया था।''*[73] *''कुछ समय के बाद गाँव को समूहीकृत करने की जगह, जिसे पी पी वी, प्रोटेक्टिव प्रोग्रेस विलेज कहा जाता है, वह ए.ओ., ऐड्मिनिस्ट्रेटिव ऑफिसर के अधिकार के क्षेत्र में रहने लगे...''*[74]

गाँव समूहीकरण एक खुली जैल जैसे थी। सुबह से रात तक भारतीय सेना द्वारा कर्फ्यू लागू किया जाता था ताकि कोई भी व्यक्ति अनुपस्थिति न हो और रात में गाँव के अंदर कोई भी गतिविधि न हो। इस तरह भारतीय सेना गाँव पर अपना नियंत्रण करने लगे। सेना की चौकस निगरानी और कर्फ्यू के प्रतिबंधों के कारण लोग केवल सीमित समय के लिए अपने झूम में काम कर सकते थे। लेकिन उनका झूम कुछ पास में था और कुछ दूर और यदि वे देर से आते, तो उन्हें ड्यूटी पर मौजूद सेना को अपनी सफाई देनी पड़ती थी। *''उनके ऊपर हमेशा कर्फ्यू लागू किया जा रहा था। उन्हें बस थोड़े समय के लिए कुछ खाने के लिए और अरबी सब्जी जैसे लेने की अनुमति दिए जाते थे। लेकिन कभी-कभार अरबी निकालने के लिए खुदाई करते समय भी कर्फ्यू की घोषणा कर देते थे। सभी हड़बड़ी में घर वापस चले जाते थे। उन्हें ड्यूटी पर तैनात सैनिकों को अपनी सफाई देनी भी पड़ती थी। और कुछ लोगों को पिटाई भी पड़ता था।''*[75]

भारतीय सेना द्वारा रात में अधिकतर समय कर्फ्यू लागू करने ने मिज़ो समाज में एक बड़ी सांप्रदायिक परिवर्तन लाया। अंधेरा होने के बाद किसी को भी अपने घरों से बाहर निकलने की अनुमति नहीं थी, और गाँव वालें भी कर्फ्यू के समय बाहर जाने से डरते थे। *"सच बात तो यह है कि जब से विद्रोह शुरू हुआ था तब से कर्फ्यू लगाया जाने के कारण कोई भी शाम में बाहर जाने का हिम्मत नहीं रखते थे।"*[76] रात में कर्फ्यू लागू करना मिज़ो लोगों के लिए एक बड़ी सज़ा की तरह थी जो पूर्वजों से ही सामाजिक रूप से घुलने-मिलने वाले लोग थे। मिज़ो समाज अपने पूर्वजों के समय से ही एक घनिष्ट रूप से जुड़ा हुआ समाज रहा हैं। मिज़ो लोगों का यह मानना है कि अपने पड़ोसियों से दुश्मनी करने से बेहतर है सात गाँवों से दुश्मनी करना। वे अपने पड़ोसियों का सही मूल्य जानते थे। समाज में मृत्यु होने पर, सभी पड़ोसी शोक संतप्त परिवार को सांत्वना देने के लिए रात में इकट्ठा होते थे, जो मिज़ो समाज की परंपर थी। रात में कर्फ्यू लागू के कारण लोग ऐसे स्थिति में भी अपने पड़ोसियों के घर जाने से भी डरने लगे थे। *"उस समय किसी परिवार में मृत्यु होना एक भयानक और चरम स्थिति थी। किसी को भी एक-दूसरे को सांत्वना देने की हिम्मत नहीं हुई। शोक संतप्त परिवार को भी चुपचाप अकेले ही अपना पीड़ा अकेले सहना पड़ रहा था।"*[77]

मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना के कई तरीके अपनाने के बाद भी उन्हें समस्याओं का सामना करना पड़ा था। भूमिगत सेना और उनके कार्रवाई के बारे में जानकारी प्राप्त करना उनकी मुख्य समस्या थी क्योंकि गाँववालें अपने ही लोगों के विरुद्ध जाना नहीं चाहते थे। इसलिए भारतीय सेना ने घेराबंदी और तलाशी जैसे अभियानों का भी प्रयोग किया। इन अभियानों का उद्देश्य गाँवों में छिपे मिज़ो विद्रोहियों की पहचान करना और उन्हें पकड़ना, उनका हथियार जब्त करना और एम.एन.एफ के बीच के संचार को बाधित करना था। इसके लिए भारतीय सेना ने कुछ नागरिक मिज़ो लोगों को अपने पक्ष में करके या कुछ लोग अपने ही हितों के लिए भारतीय सेना के पक्ष में रहते थे, और उन्हें 'कोकतू' (मुखबिर) बना दिया ताकि उनका उपयोग उन वॉलन्टियर्स की पहचान करने के लिए किया जा सके जो सामान्य जनता के बीच घुलमिले हुए थे। *"कुछ पुरुष ऐसे भी थे जो सैन्य शिविरों के पक्षधर बनना चाहते हैं। वे सैन्य शिविरों से दूध और चाय की पत्ती, तंबाकू घर ले जाने लगे।"*[78]

'मुखबिर' नकाबपोश होते थे इसलिए उनकी असली पहचान सामान्य जनता के सामने गुप्त रखा जाता था। यह मुखबिर अपनी अँगुली से वॉलन्टियर्स या किसी निर्दोष की ओर इशारा कर देते थे और उसे बिना किसी देरी के भारतीय सेना पकड़कर गिरफ्तार कर लेते थे। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास के ईस्ट लुङदार गाँव में भी एक 'कोकतू' ने एक निर्दोष ग्रामीण पु ललज़ामा को एम.एन.एफ का नेता पु ललदेङा होने का आरोप लगा देता है, जिसकी वजह से उसे पूरी रात भारतीय सेना के द्वारा क्रूरतापूर्वक पूछताछ की जाती है और वह जीवन भर के लिए शारीरिक रूप से विकलांग हो जाता है। *"ललज़ामा को अलग रखा गया और भारतीय सैनिकों ने जितना चाहा, उसे सताया। पूरी रात उसकी चीख बंद नहीं हुई। इसी से समझा जा सकता है कि उसे पूरी रात बेरहमी से पीटा गया था।"* [79] *"पहले ही नकाबपोश व्यक्ति, जिसे 'कोकतू' कहते थे, ने ललज़ामा पर यह झूठ आरोप लगाया था कि 'यह एम.एन.एफ. का प्रेसीडेंट ललदेङा है'। अब उसे मूत्र संबंधी गंभीर समस्या हो गई थी। उसके शरीर पर पिटाई के गहरे निशान काले पड़ गए थे। उसे पीटने के निशान जो घर्षण घाव हो गए थे, उन्हें गर्म पानी से धोकर बड़ी सावधानी से साफ किया जाता था। वह हिलने-डुलने में भी असमर्थ था और पेशाब की समस्या के कारण लगातार कम मात्रा में उसका पेशाब विसर्जन हो रहा था।"*[80] भारतीय सेना विद्रोहियों से संबंध रखने के संदेह वाले गाँव वालों या गाँव के वीसीपी से पूछताछ भी करते थे। सैनिक घर-घर जाकर हथियारों, मिज़ो विद्रोहियों या एम.एन.एफ से संबंधित कुछ प्रतिबंधित सामग्रियों की तलाश करने लगे। *"वे किसी के घर में एम.एन.एफ. की तलाश करने जाते थे..."*[81]

मिज़ो विद्रोह के दौरान, भारतीय सेना ने वॉलन्टियर्स को सरेंडर करने के लिए मजबूर करने के लिए दबाव और प्रोत्साहन जैसे रणनीति को भी अपनाया गया। जैसे-जैसे भारतीय सेना ने गाँव वालों पर दबाव डाला, विद्रोह में शामिल न होने के बावजूद सरेंडर कर देते थे। मिज़ोरम के गाँव एम.एन.एफ के समर्थक थे लेकिन वॉलन्टियर्स की सहायता करने का संदेह भारतीय सेना को होने के कारण वॉलन्टियर्स की सुरक्षा और भारतीय सेना को शांत करने तथा अपने पूरे समाज को पीड़ा से बचाने के लिए समूहों में सरेंडर किया। जब भी भारतीय सेना को गाँव में वॉलन्टियर्स की मौजूदगी की

भनक पड़ती, सरेंडर करने के लिए आदेश देते और सरेंडर न करने पर धमकी दिया जाता था कि पूरे गाँव को भुगतना पड़ेगा। *"भारतीय सैनिकों ने एक दिन गाँव के नेताओं को बुलाया और उनसे कहा "हमें वॉलन्टियरों की सूची मिली है, वे तुरंत सरेंडर कर दें (असल में उन्होंने 'सलेन्डर' कहा), अन्यथा पूरे गाँव को भुगतना पड़ेगा।""*[82] *"गुस्से में सैन्य अधिकारी ने जवाब दिया, "मुझपर शक कर रहे हो? अगर हम कहते हैं कि हमें इसकी जानकारी है, तो इसका मतलब वह हमें मिला है। उन्हें एक हफ्ते के अंदर सरेंडर करना होगा।""*[83] इस तरह भले ही एम.एन.एफ से कोई संबंध न रखते हुए भी गाँव के कुछ सदस्य अपने समाज को भारतीय सेना के क्रूरता और यातनाओं से बचाने के लिए भारतीय सेना के दबाव में पड़कर सरेंडर करने पर मजबूर हो जाते।

भारतीय सेना की जबरन सरेंडर की माँग एक कठोर विद्रोह विरोधी रणनीति का हिस्सा था। सरेंडर करने वालों के ऊपर कठोर दंड भी दिया जाता था। सरेंडर करने वाले को पूछताछ के साथ उन्हें प्रताड़ित किया जाता था। इसी तरह माफेली के 'ड्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में भी ईस्ट लुङदार गाँव को भारतीय सेना के हाथों कई कष्ट सहना पड़ा। अपने गाँव को भारतीय सेना यातनाओं से बचाने के लिए कई युवक-युवतियों ने मजबूरी में भारतीय सेना के सामने सरेंडर किया। जब भी एम.एन.एफ वाले घाट लगाते, भारतीय सेना ने ईस्ट लुङदार गाँव के सरेंडर करने वालों को स्कूल या मैदान में बुलाकर पूछताछ करते-करते उनपर अत्याचार करते। *"कड़ी धूप में उन्हें मुर्गा बनने के लिए कहा जाता था, भारतीय सैनिक जितना चाहें उन्हें पीटते थे। कौन इतनी यातनाएँ चुपचाप सह सकता था! कुछ लोग भले ही पिटाई से बच जाते, लेकिन चिलचिलाती धूप में खड़े रहने के कारण उन्हें चक्कर आ जाता और वे गिर जाते थे।"*[84]

चूँकि सरेंडर करने वालों में से एम.एन.एफ के साथ संबंध रखने वाले कोई भी न होने के कारण भारतीय सेना के सवालों का जवाब किसी के पास नहीं होता था। इसके लिए भी भारतीय सेना के पास दंड देने के कई तरीके होते थे। *"सभी पुरुषों को मैदान में कड़कती धूप में मुर्गा बनने के लिए कहा गया। लेकिन महिलाओं को अपने सिर पर लकड़ी का एक भारी लट्ठा रखने के लिए कहा गया।*

उन्हें इस तरह रखने के बाद भारतीय सेना ने घुटने के बल बैठे पुरुषों पर पीछे से बर्बरतापूर्वक प्रहार करना शुरू कर दिया।"[85]

भारतीय सेना के उपायों जैसे गाँव समूहीकरण और आइज़ोल बमबारी ने मिज़ो विद्रोह की विरोधी गतिविधियों की जटिलताओं को प्रदर्शित किया। उनके घेराबंदी और तलाशी जैसे अभियान एम.एन.एफ. को दबाने में प्रभावी साबित हुए लेकिन इसके गंभीर अनपेक्षित परिणाम भी हुए। इन अभियानों के द्वारा मिज़ो विद्रोहियों के संचार नेटवर्क को कमजोर किया गया परंतु सामान्य मिज़ो जनता के भीतर भारत विरोधी भावना को बढ़ावा मिला। इसके साथ ही भारतीय सेना द्वारा जबरन सरेंडर की माँग और उनके द्वारा दी जाने वाली सज़ा और अत्याचार अक्सर कठोर और अंधाधुंध थी, जिसके कारण मिज़ो विद्रोह और भी बदतर हो जाता था। उनके अत्याचारों से कुछ लोगों को आजीवन अपाहिज होने के साथ-साथ कलंक का सामना करना पड़ा। भारतीय सेना की इन सब कार्रवाइयों ने मिज़ो लोगों के भीतर भारी पीड़ा और अलगाव की भावना को पैदा किया। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में लेखिका माफेली ने ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों के ऊपर भारतीय सेना की ऐसी क्रूर कार्रवाइयों का चित्रण किया है। आज इन घटनाओं को मिज़ोरम के इतिहास में एक दर्दनाक अध्याय के रूप में याद किया जाता है।

5.4 उपन्यास का कला पक्ष

5.4.1 भाषा

भाषा संचार का वह साधन है जिसके माध्यम से हम (मनुष्य) अपने विचारों और भावनाओं की अभिव्यक्त करते हैं। जिस माध्यम से व्यक्ति एक दूसरे से अपने विचारों का आदान-प्रदान करता है, उसे भाषा कहते हैं। डॉ. श्यामसुंदर दास के अनुसार *"मनुष्य और मनुष्य के बीच वस्तुओं के विषय में अपनी इच्छा और मति का आदान-प्रदान करने के लिए व्यक्त ध्वनि-संकेतों का जो व्यवहार होता है उसे भाषा कहते हैं।"*[86] पाश्चात्य विद्वान हेनरी स्वीट के अनुसार *"जिन व्यक्त ध्वनियों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति होती है उन्हें भाषा कहते हैं।"(Language may be defined as the expression of thought by means of speech sounds.)*[87] भाषा मनुष्य की रचनात्मकता, मानसिक एवं सामाजिक विकास का साधन है।

मनुष्य के साथ-साथ साहित्य, भाषा के बिना अधूरा है। पूरे विश्व में लगभग सात हजार से अधिक भाषाएँ बोली जाती हैं। भारत में भाषाओं की बड़ी संख्या हैं जिनमें मिज़ो या लुशाई भाषा का प्रयोग पूर्वोत्तर भारत के एक छोटा-सा राज्य मिज़ोरम के लोगों द्वारा प्रयोग किया जाता हैं। मिज़ो भाषा मिज़ोरम का प्रमुख, साहित्यिक एवं आधिकारिक भाषाओं में से एक है। हालाँकि कुछ मिज़ो लेखकों ने अंग्रेजी में लेखन किया हैं, लेकिन अधिकांश मिज़ो लेखकों ने मिज़ो भाषा का प्रयोग करके रचना रचे हैं।

माफेली द्वारा लिखे गए उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' की भाषा सरल एवं सहज है। यह उपन्यास भले ही मिज़ो भाषा में लिखा गया हो, लेकिन इसमें अंग्रेजी और हिन्दी भाषा के कुछ शब्द भी मिलते हैं। हिन्दी और अंग्रेजी भाषा के ऐसे कुछ शब्द हैं जो मिज़ो लोगों के बीच सामान्य रूप से प्रयोग किये जाते हैं और मिज़ो भाषा में घुल-मिल गए हैं।

अंग्रेजी के शब्द

1894 में मिज़ोरम में ईसाई मिशनरियों के आने के बाद, ईसाई मिशनरियों द्वारा मिज़ो लोगों के लिए मिज़ो भाषा के लिपि और शिक्षा को महत्त्व देने के कारण मिज़ो लोगों और समाज पर उनका अधिक गहरा प्रभाव पड़ा। ऐसे कई अंग्रेजी शब्द हैं जो मिज़ो लोग आम-तौर पर अपने ही मिज़ो भाषा की तरह प्रयोग करते हैं और कुछ ऐसे अंग्रेजी शब्द भी हैं जिनका मिज़ो भाषा में अनूदित रूप भी नहीं होता जैसे अंग्रेजी शब्द का 'क्रिश्चियन' को मिज़ो भाषा में 'क्रिस्टियन' कहा जाता है, **एम.एल.ए, बुलडोज़र, क्रिसमस, वी.सी.पी** जैसे शब्दों को ज्यों-का-त्यों प्रयोग किया जाता है। भले ही मिज़ो भाषा में महीनों का नाम रखा गया है, लेकिन सामान्य रूप से अंग्रेजी भाषा के महीनों के नाम से कहा जाता हैं। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास मिज़ो विद्रोह केंद्रित उपन्यास होने के कारण उपन्यास में लेखिका ने **'इंडिपेंडेंट', वॉलन्टियर, कर्फ्यू, सरेंडर, रिपोर्ट, हेडकॉर्टर, पार्लियामेंट** जैसे शब्दों का कई बार प्रयोग किया हैं, इसके अलावा उपन्यास में प्रयुक्त किये गए अंग्रेजी शब्द निम्न इस प्रकार हैं :

"10 **मार्च**, 2010 की सुबह सूरज के उगने से पहले जागने वालों को सूर्य के उदय के साथ ही यह पता चल जाता है कि आज का दिन गर्म होने वाला है।"[88]

"चुनाव के समय आत्मनिर्भर राज्य, राज्य का विकास जैसे ***कैंपेन*** के नारों पर जोर दिया जाता है।"[89]

"हम ऐसे जाति के लोग है जो किसी दूसरी राजनैतिक ***पार्टी*** को चुनने और परखने के बजाय लंबे समय तक राज करने वालों को ही घुमा फिराकर चुनते रहते हैं।"[90]

"मुझे लगता है कि राज्य के सबसे छोटे नागरिक से लेकर सबसे बड़े नागरिक तक, सभी ***पॉलिटिक्स*** से घिरे हुए हैं।"[91]

"चुनाव से पहले ***पोलिटिकल पार्टी*** द्वारा बांटे गए ***मैनिफेस्टो*** और किए गए वादे कहाँ चले गए?"[92]

"***इंडिपेंडेंट*** होने की अफवाहों से भी रोउछुआहआ और उनके दोस्तों को कोई फर्क नहीं पड़ा।"[93]

"5 **मार्च**, 1966 को मिजोरम की राजधानी आइज़ोल पर एक विमान से ***बॉम्ब*** गिराई गई।"[94]

"इससे पहले साल 1965 के अंतिम दिनों में ही एम.एन.एफ. द्वारा ईस्ट लुङदार और बूङज़ुङ गाँवों में अपना ***हेडकॉर्टर*** बनाने के कारण भारतीय सेना ने भी यहाँ अपना ठिकाना बनाने की कोशिश की।"[95]

"भले ही वे भारतीय सेना के ***कैंप*** पर कब्ज़ा करना चाहते थे,"[96]

"***इंडिपेंडेंट*** पाने या ***इंडिपेंडेंट*** के लिए लड़ने के दस तरीके जानने *वाले मिज़ो नेशनल फ्रन्ट* के ***फाउन्डर*** स्व. पु ललदेङआ भी इनका सही-सही जवाब नहीं दे पाते।"[97]

"मुखिया के घर और स्कूल के बीच दो पहाड़ थे- एक था ***सिग्नल*** पर्वत और दूसरा जहाँ घंटा बजता था।"[98]

"बाद में पता चला कि सिआलसीर गाँव में एम.एन.एफ. का ***पार्लियामेंट*** सम्मेलन होने वाला था, तो उसके पहले सभी ***सीनियर*** सैनिकों को बैठक के लिए साईलुलाक गाँव में बुलाया गया था। ***प्रेसीडेंट***, पु ललदेङआ भी ***मीटिंग*** में शामिल होने जा रहे थे।"[99]

"उस क्षेत्र की ***मीटिंग*** और ***पार्लियामेंट*** के ***कमांडर*** पु बिआकछूङआ भी इस गोलीबारी से खुश नहीं थे।"[100]

"आस-पास के गाँवों में जिनके रिश्तेदार थे, उन्होंने ***रिपोर्ट*** किया।"[101]

"तब से मर्दों को अपने सुंदर पहाड़ों और ***फील्ड*** सैनिकों के छिपने की जगह के लिए खुदाई करके नष्ट करना पड़ा जहाँ युवक-युवतियाँ और बच्चे टहलने और खेलने के लिए जाते थे, जहाँ वे **क्रिसमस** और नए साल के दौरान इकट्ठा होते थे। और सभी औरतें फूस निकालने का काम करने लगे।"[102]

“सैनिकों के ***कैम्प*** के लिए खोदना बंद नहीं हुआ, इसके साथ ही उन्हें अपने ही टूटे हुए घर की मरम्मत भी करना था।”[103]

“उनके ऊपर हमेशा ***कर्फ्यू*** लागू किया जा रहा था। उन्हें बस थोड़े समय के लिए कुछ खाने के लिए और अरबी सब्जी जैसे लेने की अनुमति दिए जाते थे।”[104]

“उन्हें ***ड्यूटी*** पर तैनात सैनिकों को अपनी सफाई देनी भी पड़ती थी।”[105]

“हर समूहीकृत गाँव, **ग्रूपींग सेंटर** एक सैन्य अड्डा बंता जा रहा था।”[106]

“इस पूरे वर्ष में ईस्ट लुङदार निवासियों को सैनिकों के तोमकूक **(बंकर)** खोदना पड़ता था…”[107]

“केवल गाँव के युवक ही नहीं बल्कि ***वॉलन्टियर*** भी गाँव में प्रवेश करके युवतियों के घर आया करते थे।”[108]

“उन्होंने उनसे कहा “हमें ***वॉलन्टियर रोल*** मिली है, वे तुरंत ***सरेंडर*** कर ले (वे *सलेन्डर* कहते थे), अन्यथा पूरे गाँव को भुगतना पड़ेगा।”[109]

“लोगों ने सुना कि वह ***सेंट्रल*** सरकार में सभी महत्त्वपूर्ण और आवश्यक कार्यों में व्यस्त हैं।”[110]

“तब, ***सरेंडर*** करने वाले ईस्ट लुङदार ***वॉलन्टियर*** से सैनिकों ने कुछ सवाल पूछे और जैसा कि उन्होंने वी सी ***मेम्बर*** को बताया था, उन्हें तीन महीने के भीतर सुबह पाँच बजे और शाम पाँच बजे ***रिपोर्ट*** करने के लिए कहा गया और सबको अच्छे से घर भेज दिए जाते थे।”[111]

*“यह सोचा जा सकता है कि **रूलिंग पार्टी** नहीं बल्कि **ऑपोज़ीशन पार्टी** ही देश से प्रेम करने वाले होते हैं, इसलिए अगर **ऑपोज़िशन** सरकार बना देते तो अच्छा होगा?!”* [112]

“तुआलते गाँव से ह्मम सेना में दाखिला करने वालों में से ऐसे भी थे जो ***ट्रैनिंग*** प्राप्त करने के बाद ***सिविल*** के रूप में लौट आए।”[113]

“शायद यही वजह है कि विद्रोह के ज़माने के ज्यादातर लोगों को सिर दर्द, चक्कर और ***साइटिका*** की समस्या है? कुछ इस तरह हमारे देश ने ***स्टेट*** का दर्जा हासिल किया है!”[114]

“कुछ लड़कियाँ भारतीय सैनिकों के पक्ष में रहने की चाह में भारतीय सेना के ***ऑफिसर*** से प्यार करने लगीं!”[115]

“***31st डिवीजन वॉलन्टियर हेडकार्टर्स कमांडर*** पु बिआकछूङअ, जो एक अच्छे और मिलनसार व्यक्ति था, से तुरंत बात करने चले गए थे।”[116]

“उनके पास न तो अभी कोई ***कैम्प*** था और न ही ***ट्रेंच*** के लिए समय मिला था।”[117]

“**वी.सी.पी.** के बैठने के साथ वहाँ के ***सेक्रेटरी*** धीरे से खड़े हुए।”[118]

“आज का ***सारमोन*** (उपदेश) बहुत ही अच्छा था। आजकल के समय में ऐसे अच्छे ***सारमोन*** देने वालों की बहुत जरूरत है”[119]

“जब उनके पास खाने के लिए कुछ नहीं होता, तो हवाई जहाजों के माध्यम से ***सिविल सप्लाइ*** का चावल गिराया जाता था।”[120]

“उन्हें ***सिविल सप्लाई*** के रूप में जो कुछ भी मिलती थी वह केवल चावल था। ***हेलीकॉप्टर*** चावल की बोरियों को अलग-अलग नहीं गिराते थे, बल्कि वे बड़ा ***पार्सल*** ले जाता था जिसके अंदर चावल की 6 बोरियाँ भरी होती थीं …”[121]

“स्कूल के ***हेड टीचर*** अनुशासित व्यक्ति थे और उनका मानना था कि ***ऑफिस*** को ऐसे ही खुला नहीं छोड़ा जा सकता।”[122]

“चावल के ***पार्सल*** ने सीधे ***मिडल स्कूल*** की कक्षा IV,V और VI के कमरे को कुचल दिया। ***प्राइमारी स्कूल*** के कक्षा III के कमरे एवं ***ऑफिस*** का दरवाजा भी बुरी तरह टूट गया।”[123]

"लेकिन, इसमें कोई संदेह नहीं है कि परमेश्वर ने उनके ***हेड टीचर*** की जान बचा ली।"[124]

"सैनिक की ***लाइट*** उस पर बहुत तेज चमकी जिससे उसकी आँखों के सामने अंधेरा छा गया।"[125]

"उनके पास ***सरेंडर लिस्ट*** में उसकी तस्वीर थी इसलिए उसे आराम से **कैम्प** के अंदर ले गए।"[126]

"उसके हरे रंग का **सूट**, ***हंटर बूट*** और कंधे पर एक बड़ा काला कपड़ा देखकर उसे कुछ समझ में आ गया।"

"कुछ समय के बाद गाँव को समूहीकृत करने की जगह, जिसे **पी पी वी, प्रोटेक्टिव प्रोग्रेस विलेज** कहा जाता है, वह **ए.ओ., ऐड्मिनिस्ट्रेटिव ऑफिसर** के अधिकार के क्षेत्र में रहने लगे…"[127]

हिन्दी के शब्द

कुछ मिज़ो शब्द ऐसे भी हैं जो हिन्दी भाषा के मूल शब्द हैं लेकिन उनकी वर्तनी और उच्चारण मूल हिन्दी से थोड़े अलग हैं। इनका कोई मिज़ो अनूदित शब्द नहीं हैं इसलिए इन शब्दों का प्रयोग सामान्य रूप से मिज़ो लोगों द्वारा मिज़ो भाषा के शब्दों के रूप में किया जाता हैं। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में भी ऐसे ही हिन्दी के कुछ शब्दों जैसे **सिपई (सिपाही), सोरकार(सरकार), बारिक, आट्रा(आटा)** का प्रयोग किया गया हैं।

मिज़ो मुहावरे और लोकोक्तियाँ

प्रसिद्ध मिज़ो मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग लेखिका ने अपने लेखन को अधिक रोचक बनाने के लिए और प्रसंगों के सही अर्थ और स्थिति को चित्रित करने के लिए किया है। ऐसे कुछ मिज़ो मुहावरे और लोकोक्तियाँ हैं जिनका हिन्दी में पर्याय मिलता है लेकिन कुछ ऐसे भी हैं जिनका पर्याय नहीं मिलता। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की लेखिका माफेली ने भी अपने उपन्यास में कई मिज़ो मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग किया है।

1) Tuboh leh Dolung inkara tlazep (तुबोउह लेह दोउलुङ इनकारा त्लाज़ेप)

अर्थात् हथौड़े और निहाई के बीच पिसना। इस मुहावरे का प्रयोग खासकर मिज़ो विद्रोह के दौरान विद्रोहियों और सेना के बीच पिस रहे गाँव के लोगों की स्थिति के लिए किया जाता है। हिन्दी में इसका समानार्थी मुहावरा 'दो पाटों के बीच पिसना' हो सकता है।

2) Zawnga tuar ai ngau in a tuar (ज़ोङआ तुअर आई ङाउ इन अ तुआर)

अर्थात् दूसरों के बदले कष्ट सहना।

3) Mahni tana chakai khawrh (मा:नी ताना चकआई खोरः)

अर्थात् अपने लिए काम करना या अपने ही प्रयासों का परिणाम स्वयं को मिलना।

4) Thian chhan thih ngam (ठीआन छन थिह ङम)

अर्थात् दोस्त या किसी को बचाने के लिए अपनी जान देना।

5) Pan lovah tho a fu ngai lo (पन लोवाह थोउ अ फु ङाई लोउ)[128]

अर्थात् जिस बारे में कई बार कहा जा रहा हो उसका सच निकलना।

हिन्दी में इसका समानार्थी मुहावरा 'जहाँ धुआँ है, वहाँ आग होगी' हो सकता है।

निष्कर्षतः 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की भाषा सरल एवं सहज है। इस उपन्यास में मिज़ो लोगों में प्रचलित कुछ हिन्दी शब्दों और कई अंग्रेजी शब्दों का प्रचुरता के साथ प्रयोग किया गया है। साथ ही, लेखिका ने प्रसंग के अनुसार मिज़ो समाज के प्रसिद्ध मुहावरों और लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया है।

5.4.2 शैली

"शैली अभिव्यक्ति के उन गुणों को कहते हैं जिन्हें लेखक या कवि अपने मन के प्रभाव को समान रूप में दूसरों तक पहुँचाने के लिए अपनाता है।"[129] लेखक को अपने लेखन को अधिक रोचक बनाने और उसके सौन्दर्य को बढ़ाने के लिए शैली का प्रयोग करना अनिवार्य हैं, जिस प्रकार मनुष्य के लिए अपने सौन्दर्य को अधिक बढ़ाने के लिए आभूषण अनिवार्य होता हैं।

माफेली के 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में पूर्वदीप्ति शैली, वर्णनात्मक शैली, संवदात्मक शैली तथा काव्यात्मक शैली जैसे विभिन्न प्रकार के शैलियों को प्रचुरता के साथ प्रयुक्त किया गया हैं।

1. पूर्वदीप्ति शैली

अंग्रेजी की 'फ्लैशबैक' शैली ही हिन्दी में पूर्वदीप्ति शैली है। पूर्वदीप्ति शैली एक ऐसा साहित्यिक तकनीक है जिसमें लेखक अपने उपन्यास में अतीत की घटनाओं को वर्तमान घटनाक्रम के साथ जोड़ता है। पूर्वदीप्ति शैली के माध्यम से लेखक अतीत की घटनाओं का उल्लेख किसी वर्तमान पात्र की स्मृति के माध्यम से करता है। यह उपन्यास 1966 से 1986 के बीच के मिज़ो विद्रोह पर केंद्रित है। लगभग सम्पूर्ण उपन्यास को लिखने में लेखिका ने पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया है। लेखिका माफेली ने पु रोउछुआहा की स्मृति के माध्यम से उपन्यास की कथावस्तु को प्रस्तुत किया है।

"फिर उन्होंने गंभीर स्वर में कहा, "बोईहई, शायद तुम्हें दो पाटों के बीच पीसने का अनुभव नहीं हुआ है। मैंने भी उस दौर के बाद दोबारा ऐसा अनुभव नहीं किया है। लेकिन उस दौर को भूलना अब मुमकिन नहीं है। जब तक मैं अपनी याददाश्त खो न दूँ, मैं उस बात को बताना बंद नहीं करूँगा।" दीवार से टेक लगाते हुए उन्होंने अपनी आँखें बंद कर लीं, मानो बीते हुए समय को याद कर रहे हों।""[130]

पूरे गाँव के लोगों के झूम खेती के लिए परिवार के मुख्य द्वारा जगह चुना जाता था। पी हाङलोमी एक विधवा थि, इसलिए उसके सोलह साल के बेटे ने अपने पिता के जगह चुनने के लिए अपने किसी रिश्तेदार पु ज़ोमा के साथ जाता है। लेकिन वहाँ पहुँचकर उसे पता चलता है कि गरीबों से ज्यादा गाँव के कुछ सम्मानित लोगों को ज्यादा महत्त्व दिया जा रहा था। इस बात से वह गुस्सा हो गया और इसलिए पी लोमी अपने बेटे ललज़ेदिङा के मन को शांत करने के लिए अपने समय की गरीबों की स्थिति के बारे में बताती है-

““मामा (बेटा), ऐसी बातें नहीं कहते। कहीं कोई हमारी बात सुन न ले। हमें अपने बातों पर सावधान रहना चाहिए। अब देखो, जब हम बच्चे थे, तब गरीबों की स्थिति आज से कहीं अधिक दयनीय थी। हमारा गाँव तब एक सच्चा गाँव था। हमारे पड़ोस में एक निर्धन विधवा रहती थी। विडंबन यह थी कि केवल बड़े ही नहीं, बच्चे भी उन्हें हेय और घृणा दृष्टि से देखते थे। केवल मेरे पिताजी ही थे जो उन पर दया करते थे और हम उनके लिए घर से हरी सब्जियाँ लेकर जाते थे। आज हमारी स्थिति उस विधवा की तुलना में कहीं अधिक बेहतर है। और सच कहूँ तो, अन्य गाँवों की तुलना में हमारे गाँव के लोग बहुत ही उदार और सहृदय हैं।”

वह अपनी बात जारी रखते हुए बोली, “मामा (बेटा), एक समय था जब मिज़ो जाति के प्रमुख, साइलों प्रमुख भी अत्यंत निर्धनता में जीवन व्यतीत करते थे। उनकी स्थिति इतनी विकत थी कि उन्हें गाँव की सीमा के भीतर भी नहीं रह सकते थे। वे गाँव के बाहरी इलाकों में तिरस्कृत जीवन जीते थे, और लोग उनसे इतनी घृणा करते थे कि अक्सर उनके घरों की दीवारों पर पत्थर फेंका करते थे। उसी कठिन दौर में जब उनके घर दूसरे बेटे कअ जन्म हुआ, तो उसका नाम ज़देङा रखा गया। उन लोगों ने अपनी बुद्धि और परमेश्वर के शक्ति पर भरोसा रखा और उसका सही उपयोग करना जानते थे, और अब वे सम्मानजनक स्थान पर आ पहुँचे हैं।””[131]

2. वर्णनात्मक शैली

वर्णनात्मक शैली का प्रयोग करके लेखक पाठकों तक घटना, स्थान आदि की एक वास्तविक और विश्वसनीय छवि पहुँचाना चाहता है। वर्णनात्मक शैली के माध्यम से किसी व्यक्ति, स्थान और घटना का वर्णन किया जाता है। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में भी वर्णनात्मक शैली देखने को मिलती है। 16 नवम्बर, 1966 को साईलुलाक गाँव में मिज़ो सेना के वरिष्ठ अधिकारियों की बैठक होने वाली थी जिसमें ललदेङा भी शामिल होने वाला था। मिज़ो विद्रोहियों को ईस्ट लुङदार गाँव में भारतीय सेना के आने की खबर भी थी। इसलिए ललदेङा ने भारतीय सेना पर गोलीबारी करने का आदेश दिया था। उन्होंने उस समय चैन की नींद सोने वाले गाँववालों की परवाह किये बिना सुबह के 2 बजे से भोर तक गोलीबारी जारी रखी।[132] इस ऐतिहासिक तथ्य का वर्णन करते हुए लेखिका ने उपन्यास में ईस्ट लुङदार गाँव के रात्रि दृश्य का वर्णन किया - *"अन्य रातों की तरह 15 नवम्बर की रात भी वे एक अच्छा सपना देखने की उम्मीद में सोने चले गए। पूरा गाँव शांत था।... अपने प्यार के कारण चिंतित मन से उसने गहरी सांस ली और तभी दारपुई को धमाके की आवाज सुनाई पड़ी।... अब थोड़ी-थोड़ी देर में ही विस्फोट की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी। निःसंदेह यह गोली चलने की आवाज थी। रोउछुआहा ने तुरंत ही यह अनुमान लगा लिया कि यह ज़रूर भारतीय सेना के खिलाफ ह्मम सिपई की गोलीबारी की आवाज़ है।... लेकिन, समय बीतने के साथ-साथ गोलीबारी की आवाज गाँव के अंदर से आने लगी।"*[133]

भूमिगत सेना और भारतीय सेना के बीच गोलीबारी के बाद ईस्ट लुङदार गाँव को जला दिया गया था। जले हुए गाँव का वर्णन करते हुए लेखिका कहती है – *"जहाँ वे खुशियों की दावत करते थे, जहाँ रात भर अपने प्रेमी के साथ चाँद के नीचे बैठकर गुनगुनाया करते थे, अब वह जगह भूतों की गली जैसी भयानक होती जा रही थी।"*[134]

अपने जलते हुए गाँव को देखकर लोगों की अनकही दर्द और दयनीय स्थिति का वर्णन लेखक इस प्रकार करते है – *"डबडबाई आँखों से अपने जलते हुए गाँव और आसमान में ऊपर की*

ओर उठते आग के काले धुएँ को वे देख रहे थे। वे अच्छी तरह जानते थे कि अपने सामानों को बचाने के लिए वे कुछ नहीं कर सकते थे। उन्हें जिन मुश्किलों का सामना करना था, वे उन्हें ही करना था, उसके लिए कोई भी और आने वाला नहीं था। उनके दिल को जो ठेस पहुँची है, उसे कोई और नहीं समझ सकता।"[135] *"...अपने जलते हुए गाँव को देखकर उनकी सारी शक्ति और उनका सारा उत्साह आंसुओं के साथ बह गया था।"*[136]

उपन्यास में लेखिका ने भारतीय सेना के नियंत्रण में रहने के बाद ईस्ट लुङदार गाँववालों की असहाय जीवन का वर्णन करते हैं- *"सैनिकों के कैम्प के लिए खोदना बंद नहीं हुआ, इसके साथ ही उन्हें अपने ही टूटे हुए घर की मरम्मत भी करना था। और खाने के लिए उन्हें खेती भी करना था..."*[137]

"अब गाँव को जला दिए जाने और बलात्कार जैसी घटनाओं के बीच सैनिकों के नियंत्रण में रहना उनकी नियति हो गयी थी। अब ऐसा कोई गाँव नहीं बचा था जहाँ लोग खुशी से रह रहे हों और सुरक्षित हों। उनके ऊपर हमेशा कर्फ्यू लागू किया जा रहा था। बस थोड़े समय के लिए उन्हें खाने के लिए गाँव की सीमा पर से अरबी और दूसरी चीजें लाने की अनुमति दी जाती थी और यही थोड़ा-सा वक्त उनकी आज़ादी का वक्त हुआ करता था। लेकिन कभी-कभी मिट्टी से खोदकर अरबी निकालते समय ही कर्फ्यू की घोषणा कर दी जाती थी। ऐसे में सभी हड़बड़ी में घर वापस भाग जाते थे। उन्हें ड्यूटी पर तैनात सैनिकों को अपनी सफाई भी देनी पड़ती थी। और कुछ लोगों की पिटाई भी हो जाती थी।"[138]

"इस पूरे साल में ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों को भारतीय सेना के लिए तोमकूक (बंकर) खोदना पड़ा, साथ ही उन्हें खेतों में अपनी फसल भी काटनी पड़ी, इसलिए उनकी थकान दोगुनी हो गई थी।"[139]

"कड़ी धूप में वे भारतीय सेना के लिए काम करते थे। वे थोड़ी देर के लिए भी चैन की साँस लेने से डरते थे। हर तरफ बंदूकों के साथ भारतीय सैनिक मौजूद थे। वे मिज़ो युवतियों के लिए अपशब्द बोलते, तब भी गुस्सा और नफरत के बावजूद मिज़ो युवक उनके खिलाफ न आवाज उठा सकते थे और न ही खड़े हो सकते थे।"[140]

तुआलते गाँव का युवक, त्लाङचुआना, जिसे ईर्ष्या के कारण मार गया था के बारे में लेखिका वर्णन करती है – *"तुआलते गाँव का एक सुंदर युवक त्लाङचुआना जो अब प्रायः बर्मा में रहता है और बिक्री के लिए मिर्च की तलाश में बीच-बीच में गाँव आता रहता है, बर्मा जाने से पहले अपने गाँव की लड़कियों के बीच बहुत लोकप्रिय था। दूसरे लड़के उसका मुकाबला नहीं कर सकते थे।"'*[141]

लेखिका ने उपन्यास में यह भी वर्णित किया है कि किस तरह भारतीय सेना द्वारा लोगों को प्रताड़ित एवं उनपर अत्याचार किया गया है – *"उनके लिए ज्यादा कष्टदायक यह था कि जब भी एम.एन.एफ. की तरफ से किसी घटना की खबर आती, तब उनसब को एक साथ मैदान और स्कूल में बुलाया जाता था और हर बार उनकी पिटाई होती। कड़ी धूप में उन्हें मुर्गा बनने के लिए कहा जाता था, भारतीय सैनिक जितना चाहें उन्हें पीटते थे। कौन इतनी यातनाएँ चुपचाप सह सकता था! कुछ लोग भले ही पिटाई से बच जाते, लेकिन चिलचिलाती धूप में खड़े रहने के कारण उन्हें चक्कर आ जाता और वे गिर जाते थे।"*[142]

"सभी पुरुषों को मैदान में कड़कती धूप में मुर्गा बनने के लिए कहा गया। लेकिन महिलाओं को अपने सिर पर लकड़ी का एक भारी लट्ठा रखने के लिए कहा गया। उन्हें इस तरह रखने के बाद भारतीय सेना ने घुटने के बल बैठे पुरुषों पर पीछे से बर्बरतापूर्वक प्रहार करना शुरू कर दिया।

भले ही वे पुरुष थे, फिर भी वे अपनी चीखों पर नियंत्रण नहीं रख सके। उनकी दर्द भरी चीखें सुनना उन महिलाओं के लिए असहनीय रहा होगा जो सिर पर लकड़ी की एक लट्ठा लिए उनके बगल में खड़े थीं।"[143] उपन्यास में वर्णनात्मक शैली के ऐसे कई उदाहरण हमें मिलते हैं।

3. संवाद शैली

संवाद को वार्तालाप भी कहा जाता है। संवाद शैली के माध्यम किसी दो या दो से अधिक पत्रों के बीच होने वाली बातचीत के माध्यम से उपन्यास की कथा को प्रस्तुत किया जाता हैं। कथा को अधिक रोचक बनाने और सजीवता लाने के लिए किसी पात्र या प्रसंग के अनुसार इस शैली का प्रयोग किया जाता हैं। पात्रों के बीच संवाद के माध्यम से कथा आगे बढ़ता हैं। लेखिका ने 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में कई जगह संवाद शैली का प्रयोग किया है। कुछ उद्धरण निम्न हैं –

भारतीय सेना के कहने पर गाँव के कुछ युवक-युवतियों ने सरेंडर किया था, और जब भी एम.एन.एफ. के तरफ से कुछ गतिविधि होती थी, सरेंडर करने वालों को भारतीय सेना द्वारा पूछताछ के लिए बुलाया जाता था। उन्हें देख पी मोइई जल्दी से घर के अंदर दौड़ कर जाती है और अपनी बेटी दारपुई के साथ उनका वार्तालाप होता है –

"दारपुई, बहुत बुरी खबर है! कल रात हमारी सेना की ओर से कुछ ऐसा माहौल बनाया गया, जिसके कारण वाई सेना द्वारा हमारे युवक-युवतियों को, जिन्होंने सरेंडर किया था, उनको फिर से बुलाया जा रहा है। रास्ते में मुझे रोउछुआहा भी मिला।"

"माँ, यह तो बहुत बुरी खबर है। मैंने पहले भी रोउछुआहा से अपने इस डर के बारे में कहा था। लेकिन, अपने पिता के पद के कारण, उन्हें लगा कि वे ऐसा नहीं करने की स्थिति में नहीं हैं, और मैं उनकी बात टाल नहीं पायी। माँ, क्या आपको लगता है कि सेना उनके ऊपर हाथ उठाएँगे? सच में उठाएँगे न?" वह अपनी माँ से तो बात कर रही थी लेकिन, उनके जवाब पर ध्यान नहीं दिया।"

"अपने बेटी को सहलाने के लिए उसकी माँ ने कहा, "हाँ, हमारी स्थिति अच्छी नहीं है। सरेंडर करने वालों की स्थिति ओर भी बुरी है। परंतु हमें अपने समुदाय की सुरक्षा के बारे में भी सोचना है। हमें अपने इन परेशानियों को परमेश्वर के सामने रखना होगा और वह हमें रास्ता दिखाएँगे। दारपुई, ज्यादा चिंता मत करो।" उन्होंने यह बात तो कह दी, लेकिन वह स्वयं भी चिंतित थी। भला, अपनी वर्तमान स्थिति को देखते हुए, वे चिंता कैसे नहीं करते।"[144]

भारतीय सेना का गाँव पर नियंत्रण होने के कारण एम.एन.एफ. सेना को भूमिगत होना पड़ा था। गाँववालों के दयनीय स्थिति और पीड़ा को सोचे बिना वे अपने खान-पान और अन्य ज़रूरी चीजों की मांग गाँव वालों से करते थे तथा उन्हें धमकी भी दिया जाता था। इस दृश्य का चित्रण रोछुआहा और उसके माता-पिता के संवाद से प्रस्तुत किया जाता है –

"माँ, इतनी हड़बड़ी में आप क्या कर रही हो?"

"हमारे ह्मम सिपई के पास अब खाने के लिए कुछ नहीं बचा है। उन्हें गाँव में घुसने से डर लग रहा है, इसलिए वे बाहर से ही खाने की माँग कर रहे हैं।"

"माँ, कुछ दिन पहले भी वे लोग लेकर गए थे न? फिर से उन्हें देने की क्या जरूरत है?

"लगता उन्हें देना अब खत्म नहीं होगा। यदि हमारे अपने ही आदमी भूखे रह रहे हैं तो उन्हें अनदेखा नहीं कर सकते। और वैसे भी, वे हमारे लिए ही तो लड़ाई लड़ रहे हैं। हमें हर संभव तरीके से उनकी मदद करनी होगी।"

"अगर वे लोग गाँव में घुसने की हिम्मत नहीं कर पा रहे हैं, तो उन्हें खान देने कौन जा रहा है?" कहकर उसने अपनी माँ से प्रश्न पूछा।

"लगता है हमारे युवतियाँ पानी भरने का बहाना बनाकर उन्हें खाना देने जा रही हैं। इसके अलावा कोई और रास्ता भी नहीं है।"

यहीं चीज हैं जो मुझे अच्छी नहीं लगती। माँ, यदि सेना हमारी युवतियों की तलाशी लेने लगेगी, तो हमारे गाँव के लिए और भी बुरा हो सकता है। क्या वे लोग यहाँ आने का कोई और तरीका नहीं ढूंढ सकते है? क्या ऐसा नहीं कहा जाता है कि जिसे जरूरत हो, वह खुद आए? और वैसे भी पिताजी कहाँ हैं?"

"वालते, ऐसा तो नहीं हो सकता न। हमें अपने ही आदमियों के बचाव के लिए भी सोचना होगा।" लेकिन, अपने बेटे की इस सोच से वह सहमत थीं।

"उन्हें बचाने के लिए चक्कर में हम लोग भी यहाँ प्रताड़ित हो रहे हैं। हमें कष्ट में न डालने का कोई रास्ता निकालकर, अपना पेट भरने के लिए उन्हें खुद कोई रास्ता निकालना चाहिए।"

उसकी माँ ने भी अपने बेटे की मन की बातों को समझते हुए उत्तर दिया, "सही बात है।"

अपने पिताजी को देखते ही रोउछुआहा ने तुरंत सवाल पूछा, "पिताजी, वॉलनटियरों ने अपनी जरूरतों का संदेश किसके पास भेजा?"

उसके पिताजी खाँसने लगे और फिर उत्तर दिया, "कल उन्होंने पु ज़ाखोला की पत्नी से कहा था जो अपने झूम से सब्जियाँ लेने गई थी। आज सुबह पानी भरने जाने वालों के ज़रिए भी यह संदेश भेजा गया था कि यह अब मुश्किल होगा। लेकिन..."

"'लेकिन' क्या पिताजी?"

पिताजी ने कहा, ".. वालते, हमारी स्थिति बहुत ही खराब है। हमारे ऊपर जो कष्ट और कठिनाइयाँ आ रही हैं, उससे उन्हें कोई फर्क नहीं पड़ता। उन्होंने धमकी दी है कि अगर आज शाम अंधेरा होने तक उन्हें उनकी जरूरत के सामान नहीं मिला, तो वे आज रात ही गाँव को जला देंगे। हम सबकी भलाई के बारे में सोचने के लिए आज सुबह भोजन के बाद एक बैठक बुलाई गयी और इस बात पर चर्चा की गयी। अंत में हमने उनकी माँग को पूरा करने का निर्णय लिया है। इसलिए उनकी जरूरतें

पहुँचाने वालों का चुनाव भी उसी समय कर लिया गया। शाम को आखिरी बार पानी भरने जाने वाले सामान लेकर जाएँगे।"

उसके पिता की बातों से रोउछुआहा खुश नहीं था। वह कहने लगा, "उन्होंने बिना सोचे-समझे इंडिपेंडेंस की घोषणा कर दी, यह पूछे बिना कि हम इसे चाहते हैं या नहीं। उनके कारण हमारा गाँव जलकर राख हो गया और हमारे ही लोगों ने अपनी जान गँवा दी। हमारे समुदाय को सुशोभित करने वाली सारी प्राकृतिक सुंदरता को भारतीय सेना के बंकरों के लिए नष्ट कर दिया गया। जिसे बलपूर्वक खोदा गया था। उनकी सुरक्षा के लिए हमने सरेंडर किया और दर्द सहा। उनके लिए इतना कुछ करने के बाद भी कृतज्ञता दिखाने के बजाय वे हमें हमारा गाँव जलाने की धमकी देने की हिम्मत कर रहे हैं? पिताजी, हमारे ह्नम सिपई किस प्रकार की मानसिकता रखने वाले लोग हैं?""[145]

भूमिगत सेना तक खाना और उनके जरूरतों को पहुँचाने के लिए गाँव से चार युवतियाँ निकल पड़े। रास्ते में उन्हें ड्यूटी पर तैनात दो सेना मिला जिन्होंने उनसे पूछताछ करने के बाद उनके साथ चलने लगे। युवतियों को डर था कि कहीं भूमिगत सेना तक पहुँचने पर समस्या पैदा हो जाएगा, इसलिए इस बीच उनमें से सबसे बड़ी ठूआमी ने अपने गाँव और भूमिगत सेना को बचाने के लिए दोनों सेना के साथ सोने का निर्णय लिया। वह अपना निर्णय अपने सहेली कापमोई को बताती है।

"ठ्रीअनी, हमें पता है कि हम अपनी पूरी कोशिश के साथ वॉलनटियर की मदद कर रहे हैं। मुझे पता है कि तुम भी जानती होगी कि अभी हम वॉलनटियर और अपने पूरे गाँव के लिए काम कर रहे हैं। अपने देश और राष्ट्र के लिए जो महान काम करने जा रहे है, वह हमारे आने वाले जीवन के लिए भी सुखद होगा। और हम जानते भी हैं कि अगर हम वॉलनटियर को उनके खाने-पीने के समान नहीं पहूँचाया तो हमारा गाँव फिर से जलकर राख बन जाएगा। इसलिए मैंने यह फैसला तभी ले लिया था जब सिपाही ड्यूटी पर तैनात थे।"

थोड़ी हैरानी के साथ कापमोई पूछने लगी, "तुम्हारे कहने का क्या मतलब है? मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा है! क्या हम इन सिपाहियों को मरने वाले है? या फिर वॉलनटियर के हाथों सौंप देंगे? जल्दी से साफ-साफ बताओं, मुझे कुछ समझ नहीं आ रहा है कि तुमने क्या फैसला लिया है?"

वह धीरे से कहने लगी, "ट्रीअनी, वॉलनटियरों ने अब तक हमारे देश के लिए इतना कुछ सहा है। हमारे बारे में सोचने के कारण, अपने पूरे गाँव और वॉलनटियरों की सुरक्षा के लिए, हमें इन दो वाई सिपाहियों के साथ सोना होगा। समझ में आया? ये लोग सिर्फ हमारे शरीर के लिए हमारे साथ आए हैं, और कुछ नहीं।"

उसने गहरी साँस ली और कहने लगी, "ट्रीअन ट्रूआम, मुझे नहीं लगता है कि ऐसा काम करना उचित है। ऐसा ना हो कि कहीं तुम्हें बाद में पछतावा हो! मैं चाहती हूँ कि तुम इस बारे में फिर से अच्छी तरह सोच लो।"

ट्रूआमी को पता था कि उनके पास तर्क-वितर्क करने का समय नहीं है, इसलिए वह कहने लगी, "ट्रीआनी, वॉलनटियरों के छिपने के स्थान तक पहुँचने से पहले मैं उन सिपाहियों को थोड़ा अलग ले जाऊँगी, और तुम हमारे दूसरे साथियों को लेकर आगे बढ़ते रहना। उसने आगे कहा, "मेरे दादाजी ने बताया था कि जर्मन शत्रुओं के साथ लड़ाई के समय भी वे युवतियों का सहारा लेते थे। वे अन्य देशों के वीर सैनिकों को भी हराकर, उनके रहस्य उगलवा लेते थे। सच बात तो यह है कि अपने देश और राष्ट्र को बचाने के लिए लोग कुछ भी करने को तैयार होते हैं।" यह कहकर वह अपने सखी को रास्ते की ओर खींचकर ले गई।

कापमोई ने भी किया और अपने साथियों से कहा, "चलो, हमें और तेज गति से चलना चाहिए। हमें बहुत देर हो जाएगी और हमारे परिवार वालें भी चिंतित होंगे।"

अचानक वह यह सोचने लगी कि 'यह मेरा भी देश और राष्ट्र है। मैं क्यों अपने देश के लिए कुछ बीए बिना भाग जाऊँ'! वह अपने साथियों से फुसफुसाते हुए सलाह देने लगी, "साथियों, देखों हम पहुँचने

वाले हैं। ट्रूआमी और मैंने सिपाहियों को अलग करने की योजना पहले से ही बना चुके हैं। तुम लोग जल्दी से आगे बढ़ते रहना, जल्दी से हमारे पुआन को भीगा देना, और हम जल्दी ही तुमसे फिर मिलते हैं। अच्छे और सही तरीके से काम करके आना। तुम लोग हमारी चिंता मत करना, लेकिन यह हमेशा याद रखना कि हम भी यहाँ अपनी पूरी कोशिश कर रहे हैं। अगर कुछ समस्या पैदा हो गई, तो तुरंत गाँव की ओर लौट जाना।"

वह अपने सहेली ट्रूआमी से फुसफुसाते हुए कहने लगी, "ट्रीआनी, तुम मुझे यहाँ से जाने के लिए नहीं कह सकती। मैं भी अपने देश के लिए वह सब कुछ करूँगी जो मैं कर सकती हूँ। वैसे भी, एक के जाने से बेहतर दो का जाना है।"[146]

4. काव्यात्मक शैली

लेखक द्वारा काव्यात्मक शैली का प्रयोग कथा को अधिक रोचक और प्रभावशाली बनाने के लिए किया जाता है। इस शैली के अंतर्गत गीत, कविता आदि आते हैं। मिज़ो संस्कृति और गीत एक दूसरे से गहराई से जुड़ी हुई हैं, इसलिए मिज़ो लेखक अपनी रचनाओं में गीतों और कविताओं को एक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक उपकरण के रूप में शामिल करते हैं। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में भी संवेदनाओं को सघन बनाने के लिए बीच-बीच में गीतों व कविताओं को रखा गया है जिससे उपन्यास में कुछ हद तक काव्यात्मकता का भी समावेश हो पाया है।

गाँव में दारपुई के सेना कैम्प में जाने और सेना प्रमुख के साथ उसके संबंधों के बारे में झूठी अफवाह फैलाई गई थी। सभी गाँव वालें इस अफवाह को सच मानने लगे, लेकिन उसके प्रेमी रोछुआहा इस बात को सच नहीं मानना चाहता था जब तक वह अपने आँखों से देख उसे साबित न कर ले। उसे लगा कि यह सब दारपुई से ईर्ष्या रखने वालों द्वारा फैलाया गया अफवाह है। वह इस बात को सोचकर गुनगुनाता है :

मैं तुम्हें अपनी शुभकामनाएँ और सुरक्षा अर्पित करता हूँ,

जो हमेशा तुम्हारे साथ रहेगी,

सृष्टिकर्ता ने तुम्हें पूर्ण सौन्दर्य से सजाया है।

केवल मैं ही नहीं,

तुम्हारे माता-पिता भी तुम्हारी प्रशंसा करना नहीं छोड़ते।

युवक तुम्हें ही देखते और युवतियाँ तुमसे ईर्ष्या करते,

लेकिन, तुम्हारे स्तर तक कोई नहीं पहुँच सकता।

स्वर्ग के फ़रिश्ते भी तुमसे ईर्ष्या करते।

फ़रिश्ते भी तुम्हारे लिए अपने द्वार खोल देते,

क्या वे रास्ते में बाधा नहीं बनेंगे... अपने प्रेम का संदेश साझा कर रहे।

दुनिया की आलोचनाओं की परवाह नहीं करता,

उन्हें पुराने कपड़ों की तरह त्याग दिया है,

सुंदरी के कदमों के साथ चलने के लिए। ”[147]

यह स्पष्ट है की लेखिका ने ‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ उपन्यास में विभिन्न शैलियों और प्रविधियों का सफलतापूर्वक प्रयोग कर उसे अधिक प्रभावशाली एवं रोचक बनाया। इसके साथ ही मिज़ो समाज के साथ गहरा संबंध रखने वाले गीतों को आधार बनाकर काव्यात्मक शैली का प्रयोग करके मिज़ो समाज और संस्कृति को सजीव ढंग से प्रस्तुत किया है।

5.5 अन्य विविध पक्ष

उपर्युक्त उप-अध्यायों में अनूदित उपन्यास के अध्ययन के आधार पर विश्लेषित पहलुओं के अलावा उपन्यास में मिज़ो समाज और संस्कृति के कुछ अन्य पहलुओं और समस्याओं की भी अभिव्यक्ति हुई है। इस उप-अध्याय में उन अन्य पहलुओं और समस्याओं को विवेचित करने का प्रयास किया जाएगा।

5.5.1 मिज़ो समाज में चोरी का जन्म

अपने पूर्वजों के समय से मिज़ो जनजाति अपने दरवाजे को बंद करने के लिए केवल एक मोटी-सी लकड़ी का प्रयोग करती आ रही थी, जिसे उनके ईमानदार व्यवहार का प्रतीक माना जा सकता है। लेकिन मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना द्वारा गाँव समूहीकरण जैसे उपायों को अपनाकर अलग-अलग गाँव के लोगों को एक साथ रखा गया, अलग-अलग सोच-विचार उत्पन्न हुए और इस बीच लगातार कर्फ्यू लागू करने के कारण अपने आस-पड़ोस के साथ भी जान-पहचान बनाना मुश्किल हो गया। एक-दूसरे से अपनी जरूरत की वस्तुएँ मांगने में कठिनाई होना अनिवार्य था। इसके चलते सदियों पुरानी मिज़ो ईमानदारी की जगह मिज़ो समाज में बेईमानी और चोरी जैसी बुराइयों का जन्म हुआ। इस तरह ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों के माध्यम से इस उपन्यास में लेखिका दिखाने का प्रयास करती हैं कि किस तरह मिज़ो विद्रोह और सैन्य कार्रवाई के कारण अव्यवस्था और स्वार्थ ने मिज़ो समाज में अपनी जगह बना ली।

"कुछ लोगों का मानना है कि जब रमबुआई के कारण विभिन्न गाँवों के लोगों के अलग-अलग समूह बनाये गये थे तब अलग-अलग विचार और मत रखने वालों को एक साथ रहना पड़ा, जिससे चोरी करने की इच्छा भी पैदा हुई। निश्चित रूप से यह दृष्टिकोण कुछ हद तक सही भी है।"[148]

ज़ेली ने दूसरी बात छेड़ी, "अरे देखो, कल हमारी कुछ सब्जियाँ गायब हो गई। जब हम अपने खेत में गए तो हम अवाक रह गए। पु लला की भी कुछ फसलें भी चोरी हो गई हैं, मैं सच मुच

हैरान थी। मुझे कभी नहीं पता था कि हमारे गाँव में चोरी करने वाले लोग भी हैं।''[149] इस कथन से यह स्पष्ट होता है कि मिज़ो लोगों ने धीरे-धीरे अपने पड़ोसियों से चीजें चुराना शुरू कर दिया था। पुराने ज़माने में मिज़ो अपने दरवाजे को सिर्फ एक छोटे से लकड़ी से बंद कर देते थे जिसे उनकी ईमानदारी का प्रतीक माना जाता था। अपने पड़ोसियों से चोरी करने के अलावा गाँव के लोग छोड़ दिए गाँव में जाकर उनके कुछ बर्तन और फसल भी चुराना या लेना शुरू किया।

रोछुआहा ने बात बदलते हुए कहा, ''कार्यक्रम खत्म होने के बाद मैं थरकिमा के साथ थोड़ी देर बात कर रहा था। कल वे लोग मुआलचेङ गाँव गए थे। मुआलचेङ गाँव के निवासी जो अपने घर-बार छोड़के चले गए थे, उनके घरों और खेतों से कुछ बर्तन उठाकर ले आए हैं। गाँव वालों ने जंगल में अपना कुछ सामान छिपायें भी थे, जो शायद उन्होंने अपने वापस लौटने के समय के लिए रखे होंगे।''[150]

एक दिन रोछुआहअ के आँगन में साङकुङा और उसके दोस्त सब्जियों और अन्य चीजें से भरे हुए थैले को लेकर बातचीत करते हुए जा रहे थे कि रोछुआहअ की माँ, पी राङी ने उन्हें देखा और उनके भरी हुई थैली और सब्ज़ियों की तारीफ की। साङकुङा ने उन्हें कुछ सब्ज़ियाँ देने की पेशकश करते हुए कहा कि यह सब उन्होंने उस जगह से लिया हैं जहाँ कोई जाने की हिम्मत नहीं करते हैं। रोछुआहअ की माँ को समझ नहीं आता, तभी साङकुङा गर्व से कहता है,

''यह सब विद्रोह के कारण है। लेङ गाँव जिसे खाली कर दिया गया था, हम उस तरफ गए थे। अब उनके लिए वहाँ जाना आसान नहीं रहा, उनके छोड़े हुए खेतों में बहुत अच्छी सब्जियाँ उगी हई थी और हम उन्हें ले आए। क पी, इन सब्जियों के अलावा हमें घाँस के बीच कुछ बर्तन भी मिले,'' यह कहते हुए उसने लाई हई सब्जियाँ पी राङी के हाथ में थमा दीं।''[151]

दारपुई और उसकी सहेली ज़ेली पानी की बिन्दु से वापस जाते समय पी थ्लुआई के आँगन पहुँचते ही उन्हें पी थ्लुआई के चिल्लाने की आवाज़ सुनाई दी। पिछले दिन ठूआमई चाय की पत्ती

तोड़ने गई थी लेकिन उनसे पहले किसी ने तोड़ लिया था, इस कारण पी थ्लुआई गुस्से में चिल्ला रही थी। *"कितनी अजीब बात है। हमारे गाँव में पहले कभी चोरियाँ नहीं होती थी। मुझे समझ नहीं आ रहा है कि रमबुआई के कारण आजकल कुछ न कुछ गायब होता जा रहा है। किस बदमाश का किया हुआ होगा! अगर उसे चाहिए था तो कम से कम अच्छे से माँग लेता।"*[152] पी थ्लुआई, ज़ेली और दारपुई के बातों को सुनकर उनकी पड़ोसी ने भी कहा, *"अरे, हमने तो इस साल की नई सब्जियाँ भी नहीं चखी; कोई और ही हमसे पहले सब ले जा रहा है। सबके सामने इस तरह की बातें करना शोभा नहीं देता, पता नहीं हमें क्या हो गया है?"*[153] *दारपुई ने भी अपनी बात जोड़ी, "अरे, कुछ दिन पहले हमारे पड़ोसियों की कुछ जलाऊ लकड़ी भी चोरी हो गई थी। वाकई में चोरी की खबरे बार-बार बार-बार सुनने में आ रही है।"*[154]

अपनी इच्छानुसार कभी भी खेतों या जंगलों में जाना अब संभव नहीं रह गया था, क्योंकि खेतों और गाँवों के बीच की दूरी भी अधिक थी, इसलिए उनके लिए कर्फ्यू के बीच आना-जाना मुमकिन नहीं था। (उदाहरण के लिए पु हुलिआना के छोटी खेत उनके अपने घर की तुलना में समूहीकरण के कारण रखे गए पु कामलीआना के परिवार के ज्यादा करीब था। इस कारण पु कामलीआना का परिवार, पु हुलीआना से पहले उनके खेत की उपज का फायदा उठा लेते थे।)

इस प्रकार, परिस्थितियों के बाबाव में आकार लोग वे काम करने लगे जो उन्होंने पहले कभी नहीं किए थे। जैसा कि हम जानते हैं, स्थानीय लोग भी इस काम में कोई कसर नहीं छोड़ी। वे खाली किए गए गाँवों में जाकर वहाँ से अपनी जरूरत का सामान ले लेते थे। शायद इन्हीं सब अफर-तफरी के बीच से ही मिज़ो लोगों के मन में बेईमानी और भ्रष्टाचार ने अपनी जगह बना लिया है। लेकिन, ये कोई आश्चर्य की बात नहीं है। समय और परिस्थितियाँ मनुष्य के स्वभाव और मन को बहुत अधिक बदल सकती है।"[155]

मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना द्वारा गाँव समूहीकरण जैसे उपायों को अपनाकर अलग-अलग गाँव के लोगों को एक साथ रखा गया, अलग-अलग सोच-विचार उत्पन्न हुए और इस

बीच लगातार कर्फ्यू लागू करने के कारण अपने आस-पड़ोस के साथ भी जान-पहचान बनाना मुश्किल हो गया, एक दूसरे की मदद से अपनी जरूरतों को पूरा करने में कठिनाई होना अनिवार्य था, जिसके चलते सदियों पुरानी मिज़ो ईमानदारी की जगह बेईमानी और चोरी जैसी बुराईयों ने ले ली थी।

5.5.2 मिज़ो लोगों के बीच प्रतिशोध

मिज़ो विद्रोह के दौरान नागरिकों के बीच विश्वासघात और संघर्ष बढ़ने लगा। व्यक्तिगत संघर्ष अक्सर विश्वासघात और हत्याओं में बदल जाते थे। मिज़ो विद्रोह ने व्यक्तिगत दुश्मनी का बदला लेने का मौका भी लोगों को दिया। जिन लोगों के अपने ही कुछ लोगों के साथ संबंध खराब थे, उन्होंने अपना बदला लेने के लिए भी विद्रोह का सहारा लिया। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में तुआलते गाँव के त्लाङचुआना नामक युवक की हत्या के ज़रिए इस प्रकार के प्रतिशोध का चित्रण किया गया है।

तुआलते गाँव में त्लाङचुआना नामक एक युवक था, जो बर्मा में मिर्च बेचने का काम करता था। बर्मा जाने से पहले वह गाँव की युवतियों के बीच बहुत ही प्रसिद्ध हुआ करता था और गाँव के अन्य युवक उसका मुकाबला नहीं कर सकते थे। इसलिए उससे ईर्ष्या रखने वाले और निंदा करने वाले बहुत थे। तुआलते गाँव के कुछ युवक मिज़ो सेना में दाखिल होकर सैन्य प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए गए थे जिनमें से दो युवक प्रशिक्षण प्राप्त लरने के बाद एम.एन.एफ. भूमिगत सेना के रूप में न रहकर गाँव वापस आ गए थे। सैन्य प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद दोनों बंदूक चलाना जान गए थे। *"विद्रोह शुरू होने के बाद जब वह मिर्ची लेने अपने गाँव लौटा, तब उसे रात में बाहर बुलाया गया और गाँव के बाहर ले जाकर गोली मार दी गई। ... विद्रोह के कारण हमेशा कर्फ्यू लागू रहने की वजह से उस युवक के शव को वहीं छोड़ दिया गया।"*[156] *"जिन लोगों ने ह्नम सिपई में भर्ती होने के लिए प्रशिक्षण लिया था वे लोग देश और जाति की रक्षा के लिए कदम बढ़ाने की बजाय त्लाङचुआना, जिसका वे युवतियों के बीच लोकप्रियता के मामले में मुकाबला नहीं कर सकते थे, की जान लेने के*

लिए ज़्यादा बेचैन थे!"[157] विद्रोह के दौरान भारतीय सेना द्वारा मारा जाना पहले से ही मृतक के परिवारों के लिए भयानक और दु:खद था लेकिन तथाकथित मिज़ो सेना यानि अपनी ही जाति के लोगों द्वारा मारा जाना मृतक के परिवार वालों के लिए अधिक पीड़ादायी और दर्दनाक था। इस प्रकार मिज़ो विद्रोह कुछ लोगों के लिए व्यक्तिगत दुश्मनी का बदला लेने का अवसर भी बन गया।

5.5.3 मिज़ो जाति के बीच जातीय एकता

मिज़ो विद्रोह ने ईर्ष्या और अन्य कई गलत बातों को जन्म दिया है, लेकिन इसके साथ-साथ मिज़ो लोगों के बीच एकता की भावना को भी पैदा किया। मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना के डर से तथा अपने हितों के लिए अपने बीच से ही कोई कोकतू (मुखबिर) बन गया, चोरी होने लगी, हत्याएँ होने लगीं, लेकिन इस बीच लोगों के मन में जातीय एकता भी अधिक जागृत हुई। उनके लिए स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ने वालों के लिए लोगों ने भारतीय सेना के हाथों अनेक पीड़ा सही। मिज़ो भूमिगत विद्रोहियों को बचाने के लिए कुछ गाँव वालों ने भारतीय सेना के हाथ स्वयं को सरेंडर भी किया। मिज़ो अपने ही लोगों के साथ विश्वासघात नहीं कर सकते थे। *"यह उस व्यक्ति का सच्चा रवैया है जो अपने दोस्त के लिए मरने का साहस (ट्रीआन छन थिह ङम) करता है। मिज़ो विद्रोह का दौर वास्तव में वह समय था जब हम ट्रीआन छन थिह ङम के वास्तविक अर्थ को अपने जीवन में उतार रहे थे।... कई लोग ऐसे हैं जो देश और राष्ट्र के लिए लड़ने वालों को बचाने के लिए अपनी पूरी कोशिश कर रहे थे ..."*[158]

5.5.4 मिज़ो समाज में विधवा और गरीब की स्थिति

मिज़ो समाज मुख्य रूप से झूम खेती पर निर्भर था। लोग अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए कृषि उपज, पशुधन और वन उत्पादों से आदान-प्रदान करने, जंगलों से सामान इकट्ठा करने, बांस की टहनियाँ इकट्ठा करने आदि पर निर्भर थे। चूँकि अधिकतर मिज़ो कृषि पर निर्भर थे, उनके पास वैकल्पिक स्रोत कम होते थे। अच्छी ज़मीन और मजबूत सामुदायिक समर्थन के बिना लोगों का

जीवन संघर्षपूर्ण बन जाता था। खास तौर पर विधवा स्त्रियों को अक्सर अपनी आजीविका के लिए संघर्ष करना पड़ता था। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में लेखिका माफेली ने पी शाङलोमी और उसके परिवार के माध्यम से मिज़ो समाज में विधवा और गरीबों की स्थिति का चित्रण किया है।

मिज़ो विद्रोह के कारण मिज़ो लोगों की ज़िंदगी मुश्किलों और परेशानियों से भरी पड़ी थी, लेकिन विद्रोह से पहले ही पी शाङलोमी का परिवार मुश्किलों से भरा जीवन जी रहा था, उनके परिवार के मुख्य आधार उनके पिता की मौत के कारण अब बिन पिता के उनका भविष्य और भी अंधकारमय था। *उसके मन में बस यही सवाल उमड़ रहा था कि "मौत गरीबों पर दया क्यों नहीं करती?""*[159]

झूम खेती के लिए जगह चुनने का समय आने पर पी शाङलोमी के सबसे बड़े बेटे ललज़ेदिङा, जो केवल 16 साल का था और जिसे पता था कि उसे अपने पिता की जगह जाना है क्योंकि अब उनके परिवार में वही इकलौता मर्द है। कम उम्र के होते हुए भी उसे अपने कर्तव्य का एहसास था और उसकी माँ को भी इस बात पर गर्व था। उन्हें लगा कि उनके परिवार से ज्यादा गरीब परिवार उनके गाँव में ओर कोई नहीं होगा इसलिए गाँव के मुख्य भी शायद उनपर दया करेंगे। गाँववालों और नेताओं के दया और आभार की आशा रखने के अलावा उनके पास कुछ नहीं था।

मिज़ो विद्रोह से पहले, मिज़ो समाज एक सुसंगठित समुदाय के रूप में काम करता था जहाँ गरीबों और विधवा की देखभाल मजबूत सामाजिक और सांस्कृतिक परंपराओं के माध्यम से किया जाता था। इसलिए *"यह सोचा गया था कि विधवाओं, अनाथों और पूर्व मुखिया परिवार के लोगों को अच्छी ज़मीन दिया जाएगा।"*[160] लेकिन गरीबों के बारे में न सोचकर गाँव के शक्तिशाली और धनी परिवार वाले अपने झूम खेती के लिए अच्छे-अच्छे ज़मीनों का चयन करने लगे। गाँव वालों का मानना था कि गरीबों से ज्यादा गाँव के कुछ सम्मानित लोगों को खुश न करना बुरी बात हो सकती थी। ऐसा लग रहा था कि गाँव वालों में मिज़ो व्यक्ति की वास्तविक मानसिकता – निःस्वार्थ सेवा की

भावना (त्लोमङाइहना) खत्म हो गयी थी। इस स्थिति को देखकर अपने समय का बेसब्री इंतज़ार करने वाला ललज़ेदिङा को दुःख हुआ।

घर में पिता के रहते हुए रिश्तेदार वाले अपनी रिश्तेदारी निभाते थे, लेकिन पिता के न रहने के बाद रिश्तेदारों का व्यवहार भी बदल जाता है। घर के पिता के मरने के बाद पी शाङलोमी के रिश्तेदार पु ज़ोमा का व्यवहार भी बदल गया। वह पी शाङलोमी के परिवार से ज़्यादा अपने से धनी लोगों के बारे में ही सोच रहे थे। *''हमारे पु ज़ोमा कुछ काम के भी नहीं है। उनके मन में हमारे लिए न तो प्रेम है और न ही दया। वह हमसे तब तक प्रेम रखते थे जब तक पिताजी जिंदा थे।''*[161] पी शाङलोमी के बेटे ज़े-अ के इन शब्दों से इस बात का स्पष्ट होता है।

5.5.5 मिज़ो समाज पर ईसाइयत का प्रभाव

19वीं सदी के अंत में वेल्श मिशनरियों द्वारा ईसाई धर्म की शुरुआत के बाद से मिज़ो समाज पर ईसाई धर्म का गहरा प्रभाव पड़ा। ईसाई धर्म ने केवल मिज़ो लोगों की धार्मिक मान्यताओं को ही नहीं बदला बल्कि आधुनिक मिज़ो पहचान को आकार देने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसने सामाजिक एकता, प्रगति और शैक्षिक उन्नति लाने के सात-साथ राजनीतिक और संस्कृति को भी प्रभावित किया है। मिशनरियों ने औपचारिक शिक्षा के साथ-साथ मिज़ो भाषा के लिए लिपि भी उपलब्ध कराए। ईसाई मिशनरियों के लिपि उपलब्ध कराने के बाद पूर्व मिज़ो कथाओं का लिखित रूप भी सामने आने लगी। तब से लेकर आज तक अधिकतर मिज़ो लेखकों ने अपनी उपन्यासों में ईसाई जीवन मूल्यों का चित्रण करते हैं।

1966 से 1986 के बीच चले मिज़ो विद्रोह के दौरान ईसाई धर्म ने मिज़ो समाज में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। विद्रोह के बीच भी भारतीय सेना द्वारा कर्फ्यू ढीली होने पर चर्च ने विद्रोह की कठिनाइयों के बावजूद धार्मिक सेवाएँ और चर्च सभाएँ आयोजित करना जारी रखा। विद्रोह के कारण मिज़ो लोगों में व्यापक रूप से भय, पीड़ा और विस्थापन की स्थिति पैदा हुई। इस उथल-पुथल, हिंसा

और अस्थिरता से पीड़ित मिज़ो लोगों को आराम, उम्मीद और स्थिरता प्रदान करने में चर्च ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में इससे जुड़े कुछ प्रसंगों का चित्रण किया गया है।

उपन्यास के एक प्रसंग में रविवार के दिन कर्फ्यू लागू न करने के कारण ईस्ट लुङदार गाँव में लेङ गाँव से आए उनके कलीसिया के प्राचीन पु थङरूमा ने ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों को पवित्र बाइबिल के भजन संहिता 91:2,37:29; यूहन्ना 3:16; मत्ती 22:37, 7:17-20; 1यूहन्ना 5:3; यशायाह 48:17,18 को अपना आधार बनाकर एक महान उपदेश दिया - *"अभी हम इसी तरह के तूफ़ानी दौर से गुजर रहे हैं। यह बात हम रोजाना विभिन्न खबरों के माध्यम से भी जान सकते हैं। लेकिन हमारे पास एक ऐसा पेड़/ छत है जो हमें इन आपदाओं से बचा सकता है। यदि हम बाइबिल की शिक्षाओं को देखें, वहाँ लिखा हैं कि 'मैं यहोवा से विनती करता हूँ, 'तु मेरा सुरक्षा स्थल है मेरा गढ़, हे परमेश्वर, मैं तेरे भरोसे हूँ,' (भजन संहिता 91:2)।*

"...सृष्टिकर्ता, स्वर्ग और पृथ्वी का सर्वोच्च प्रभु, हमारी सुरक्षा हो सकता है। वह हमें नुकसान पहूँचाने वाली किसी भी चीज़ की तुलना में अधिक शक्तिशाली होने के कारण हमारी रक्षा कर सकता है। सेनाओं का परमेश्वर यहोवा, सभी बुरे परिणामों को पूरी तरह से मिटा सकता है। लेकिन, ऐसा होने के लिए, हमें उस पर अटूट विश्वास रखना होगा। जैसा कि पवित्र बाइबिल हमें पहले ही बता चुका है, 'अपने आप को परमेश्वर के प्रेम में बनाए रखें'।

"परमेश्वर के प्रेम में बने रहने के लिए, हमें यह समझना होगा कि उसने हमारे प्रति अपना प्रेम कैसे प्रकट किया है। सृष्टिकर्ता होने के नाते, उसने हमें यह पृथ्वी रहने के लिए एक सुखद स्थान के रूप में दी है। उसने इसे भोजन, विभिन्न प्रकार के जीवों और सुंदर प्राकृतिक दृश्यों से भर दिया है। इसके अलावा, बाइबिल बताती है कि उसने अपने इकलौते पुत्र को इस संसार पर भेजा और हमारे लिए दुःख सहकर मरने दिया (यूहन्ना 3:16)। उस पुत्र का बलिदान हमारे लिए कौन-सा आशीष लेकर आया है? वह हमारे लिए अनंत काल तक सुख प्राप्त करने का आशीष है।

"वह अनंत सुख यहोवा के अन्य कार्यों पर भी निर्भर करता है। उन्होंने एक स्वर्गीय सरकार की स्थापना किया है। जो सभी दुःख और कष्टों को समाप्त कर देगी और पृथ्वी को एक स्वर्ग में बदल देगा। तब हम सुख और शांति से रह सकेंगे (भजन संहिता 37:29)। तब तक, परमेश्वर हमें आज भी सर्वोत्तम जीवन जीने के लिए मार्गदर्शन दे रहा है। साथ ही, उसने हमें प्रार्थना का उपहार भी दिया है, ताकि हम उससे बात कर सकें। ये तो उसके प्रेम को दिखाने का केवल कुछ ही तारीकें हैं।

"...यीशू मसीह ने 'सम्पूर्ण मन से, सम्पूर्ण आत्मा से और सम्पूर्ण बुद्धि से तुझे अपने परमेश्वर प्रभु से प्रेम करना चाहिए' (मत्ती 22:37) को सबसे बड़ी आदेश माना है। निश्चित रूप से हमारे पास उससे प्रेम करने के कई कारण हैं। लेकिन क्या केवल मन में प्रेम की भावना होना ही काफी है?

बाइबल के अनुसार, परमेश्वर से प्रेम करना केवल एक भावना मात्र नहीं है। वास्तव में, हृदय का प्रेम आवश्यक है, लेकिन यह केवल एक शुरुआत है। उदाहरण के लिए, एक परिपक्व संतरे के पेड़ के लिए संतरे का बीज होना जरूरी है; लेकिन बीज तो केवल शुरुआत है। यदि आपको संतरा खाने की इच्छा हो और कोई आपको केवल बीज ही दे दे तो क्या आप संतुष्ट होंगे? बिल्कुल नहीं। इसी तरह, मन में परमेश्वर के लिए प्रेम होना केवल एक शुरुआत है। बाइबल हमें बताती है कि 'क्योंकि परमेश्वर से प्रेम रखना यह है कि हम उसकी आज्ञाओं को मानें; और उसकी आज्ञाएँ कठिन नहीं' (1 यूहन्न 5:3)। सच तो यह है कि परमेश्वर के प्रति प्रेम का परिणाम अच्छा होना चाहिए। हमें भलाई दिखानी चाहिए (मत्ती 7:17-20)।

"परमेश्वर के प्रति हमारा प्रेम उसकी आज्ञाओं और सिद्धांतों के अनुसार जीने से प्रकट होता है। यह बहुत कठिन कार्य नहीं है, बल्कि उसका व्यवस्था हमारे लिए एक अच्छा, खुशहाल और संतुष्ट जीवन जीने के लिए बनाए गए हैं। लेकिन, दुःख की बात यह है कि आज बहुत कम लोग उसके प्रेम के अनुसार जीवन जी रहे हैं। हम उन दस कोढ़ियों में नौ कोढ़ियों के समान हो गए हैं जिन्हें यीशू मसीह ने चंगा किया था, जिनमें से केवल एक ही धन्यवाद देने लौटा था। हम सब उसके आशीष चाहते हैं, लेकिन हम उसे वापस प्रेम नहीं करना चाहते। चंगा किए गए दस कोढ़ियों में से एक

की तरह, आइए हम उसके प्रेम के लिए उसे धन्यवाद दें और उसकी आज्ञाओं के अनुसार जीएँ, इससे पहले कि बहुत देर हो जाए।

परमेश्वर कहता है- "मैं ही तेरा परमेश्वर यहोवा हूँ जो तुझे तेरे लाभ के लिए शिक्षा देता हूँ, और जिस मार्ग से तुझे जाना है उसी मार्ग पर तुझे ले चलता हूँ। बहाल होता कि तू ने मेरी आज्ञाओं को ध्यान से सुना होता! तब तेरी शांति नदी के समान और तेरा धर्म समुद्र की लहरों के समान होता" (यशायाह 48:18,18)।[162] इस तरह चर्च नेताओं ने लचीलापन बढ़ाने के लिए ईसाई धर्म ग्रंथ बाइबिल का प्रयोग करके अपने उपदेशों में दृढ़ता, ईश्वरीय न्याय और अंततः शांति जैसे विषयों पर ध्यान केंद्रित किया। इसके साथ-साथ वे इस बात पर भी जोर देते थे कि मिज़ो लोग परमेश्वर के चुने हुए लोग हैं इसलिए परमेश्वर कठिनाइयों का सामना करने में भी उनकी सहायता करेगा।

संदर्भ

---

[1] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आईज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 9 (अनुवाद मेरा)

[2] वही, पृष्ठ सं. 9,10

[3] वही, पृष्ठ सं. 11

[4] MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, Swapna Printing Works Pvt. Ltd., Kolkata, 2017, पृष्ठ सं.848 & 899 (अनुवाद मेरा)

[5] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, पृष्ठ सं. 12,13

[6] वही, पृष्ठ सं. 14

[7] वही, पृष्ठ सं. 47,48

[8] वही, पृष्ठ सं. 24

[9] वही, पृष्ठ सं. 158

[10] वही, पृष्ठ सं. 48

[11]MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, Swapna Printing Works Pvt. Ltd., Kolkata, 2017, पृष्ठ सं.848 (अनुवाद मेरा)

[12] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, पृष्ठ सं. 14

[13] वही, पृष्ठ सं. 48

[14] वही, पृष्ठ सं. 14

[15]MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, पृष्ठ सं. 902 (अनुवाद मेरा)

[16] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, पृष्ठ सं. 15

[17] वही, पृष्ठ सं. 16 (अनुवाद मेरा)

[18] वही, पृष्ठ सं. 17

[19] वही, पृष्ठ सं. 18

[20] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, J.P.Offset Printers, Aizawl,2014, पृष्ठ सं. 238 (अनुवाद मेरा)

[21] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, पृष्ठ सं. 19

[22] C.Zama, Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986), Power Printers, New Delhi, पृष्ठ सं.82 (अनुवाद मेरा)

[23] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आईज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 56 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[24] वही, पृष्ठ सं. 56

[25] वही, पृष्ठ सं. 23

[26] वही, पृष्ठ सं. 20

[27] वही, पृष्ठ सं. 22

[28] Chawngsailova, Mizoram During 20 Dark Years, EBH Publishers, Guwahati, 2012, पृष्ठ सं. 68

[29] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आईज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 20 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[30] वही, पृष्ठ सं. 22

[31] वही, पृष्ठ सं. 105

[32] वही, पृष्ठ सं. 105

[33] वही, पृष्ठ सं. 107

[34] वही, पृष्ठ सं. 107

[35] वही, पृष्ठ सं. 42-43

[36] वही, पृष्ठ सं. 110

[37] वही, पृष्ठ सं. 44

[38] वही, पृष्ठ सं. 44

[39] वही, पृष्ठ सं. 45

[40] वही, पृष्ठ सं. 123

[41] वही, पृष्ठ सं. 94

[42] वही, पृष्ठ सं. 94-95

[43] वही, पृष्ठ सं. 25

[44] वही, पृष्ठ सं. 80-81

[45] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आईज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 99

[46] वही, पृष्ठ सं. 101

[47] वही, पृष्ठ सं. 101

[48] वही, पृष्ठ सं. 103

[49] वही, पृष्ठ सं. 59

[50] वही, पृष्ठ सं. 120

[51] वही, पृष्ठ सं. 143

[52] वही, पृष्ठ सं. 148-149

[53] वही, पृष्ठ सं. 38

[54] वही, पृष्ठ सं. 125

[55] MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, Swapna Printing Works Pvt. Ltd., Kolkata, 2017, पृष्ठ सं. 900

[56] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आईज़ोल, 2010 पृष्ठ सं. 23

[57] C.Zama, Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986), Power Printers, New Delhi, पृष्ठ सं.32 (अनुवाद मेरा)

[58] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आईज़ोल, 2010, पृष्ठ सं.9 (अनुवाद मेरा)

[59]Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, J.P.Offset Printers, Aizawl,2014, पृष्ठ सं. 237, 238 (अनुवाद मेरा)

[60] वही, पृष्ठ सं. 10

[61] वही, पृष्ठ सं. 11

[62] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, J.P.Offset Printers, Aizawl,2014, पृष्ठ सं. 238 (अनुवाद मेरा)

[63]MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, Swapna Printing Works Pvt. Ltd., Kolkata, 2017, पृष्ठ सं.848 (अनुवाद मेरा)

[64] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आईज़ोल, 2010, पृष्ठ सं.19 (अनुवाद मेरा)

[65] वही, पृष्ठ सं. 45

[66]वही, पृष्ठ सं. 20

[67] वही, पृष्ठ सं. 23

[68] वही, पृष्ठ सं. 23

[69] वही, पृष्ठ सं. 166

[70] वही, पृष्ठ सं. 119

[71] वही, पृष्ठ सं. 23

[72] वही, पृष्ठ सं. 38

[73] वही, पृष्ठ सं. 56

[74] वही, पृष्ठ सं. 166

[75] वही, पृष्ठ सं. 22

[76] वही, पृष्ठ सं. 97

[77] वही, पृष्ठ सं. 119

[78] वही, पृष्ठ सं. 42

[79] वही, पृष्ठ सं. 42

[80] वही, पृष्ठ सं. 110

[81] वही, पृष्ठ सं. 38

[82] वही, पृष्ठ सं. 25

[83] वही, पृष्ठ सं. 26

[84] वही, पृष्ठ सं. 41

[85] वही, पृष्ठ सं. 80

[86] डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, डॉ. उदय प्रताप सिंह, भाषा विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा, मीनाक्षी प्रकशन, मेरठ, 2011, पृष्ठ सं. 24

[87] वही, पृष्ठ सं. 25

[88] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, आइज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 1 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[89] वही, पृष्ठ सं. 1

[90] वही, पृष्ठ सं. 1

[91] वही, पृष्ठ सं. 2

[92] वही, पृष्ठ सं. 3

[93] वही, पृष्ठ सं. 9

[94] वही, पृष्ठ सं. 9

[95] वही, पृष्ठ सं. 10

[96] वही, पृष्ठ सं. 14

[97] वही, पृष्ठ सं. 15

[98] वही, पृष्ठ सं. 16

[99] वही, पृष्ठ सं. 18

[100] वही, पृष्ठ सं. 18

[101] वही, पृष्ठ सं. 18

[102] वही, पृष्ठ सं. 20

[103] वही, पृष्ठ सं. 22

[104] वही, पृष्ठ सं. 22

[105] वही, पृष्ठ सं. 22

[106] वही, पृष्ठ सं. 23

[107] वही, पृष्ठ सं. 23

[108] वही, पृष्ठ सं. 24

[109] वही, पृष्ठ सं. 25

[110] वही, पृष्ठ सं. 32

[111] वही, पृष्ठ सं. 32

[112] वही, पृष्ठ सं. 36

[113] वही, पृष्ठ सं. 39

[114] वही, पृष्ठ सं. 41

[115] वही, पृष्ठ सं. 42

[116] वही, पृष्ठ सं. 46

[117] वही, पृष्ठ सं. 47

[118] वही, पृष्ठ सं. 59

[119] वही, पृष्ठ सं. 72

[120] वही, पृष्ठ सं. 106

[121] वही, पृष्ठ सं. 108

[122] वही, पृष्ठ सं. 109

[123] वही, पृष्ठ सं. 109

[124] वही, पृष्ठ सं. 109

[125] वही, पृष्ठ सं. 154

[126] वही, पृष्ठ सं. 154

[127] वही, पृष्ठ सं. 166

[128] वही,पृष्ठ सं. 61

[129] डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, डॉ. उदय प्रताप सिंह, भाषा विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, 2011, पृष्ठ सं. 323

[130] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स,मिशन वेङ, आइज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 8 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[131] वही, पृष्ठ सं. 55

[132] MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, Swapna Printing Works Pvt. Ltd., Kolkata, 2017, पृष्ठ सं.848 & 899 (अनुवाद मेरा)

[133] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, आइज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 12 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[134] वही, पृष्ठ सं. 17

[135] वही, पृष्ठ सं. 16

[136] वही, पृष्ठ सं. 20

[137] वही, पृष्ठ सं. 22

[138] वही, पृष्ठ सं. 22

[139] वही, पृष्ठ सं. 23

[140] वही, पृष्ठ सं. 23

[141] वही, पृष्ठ सं. 40

[142] वही, पृष्ठ सं. 41

[143] वही, पृष्ठ सं. 80

[144] वही, पृष्ठ सं. 79

[145] वही, पृष्ठ सं. 92-95

[146] वही, पृष्ठ सं. 100-103

[147] वही, पृष्ठ सं. 114

[148] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, आईज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 134 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[149] वही, पृष्ठ सं. 66

[150] वही, पृष्ठ सं. 67-68

[151] वही, पृष्ठ सं. 111

[152] वही, पृष्ठ सं. 131

[153] वही, पृष्ठ सं. 132

[154] वही, पृष्ठ सं. 132

[155] वही, पृष्ठ सं. 134

[156] वही, पृष्ठ सं. 40

[157] वही, पृष्ठ सं. 40

[158] वही, पृष्ठ सं. 77

[159] वही, पृष्ठ सं. 49

[160] वही, पृष्ठ सं. 51

[161] वही, पृष्ठ सं. 53

[162] वही, पृष्ठ सं. 69-72

उपसंहार

उपसंहार

मिज़ो साहित्य में उपन्यास विधा का उद्भव दुनिया की दूसरी भाषाओं के साहित्य की तुलना में देर से हुआ है। 1893 के बाद ईसाई मिशनरियों द्वारा मिज़ो भाषा के लिए लिपि उपलब्ध कराने के बाद 20वीं शताब्दी में मिज़ो साहित्य में उपन्यास विधा का जन्म हुआ और उसके बाद यह विधा तीव्र गति से विकसित हुई। मिज़ो साहित्य के शुरुआती दौर में कहानी और उपन्यास में अंतर स्पष्ट नहीं था और किसी भी कथा विधा को समान रूप से 'थोंथू' कह दिया जाता था। परंतु मिज़ो साहित्य के इतिहासकार डॉ. के.सी.वानङ्हाका ने अपनी पुस्तक 'Literature Zungzam' में उपन्यास को कहानी से अलग करते हुए 'थोंथू फुअःथर' की संज्ञा दी और बी. ललथङलिआना ने अपनी पुस्तक 'Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature' में उपन्यास को 'थोंथू सेई' की संज्ञा दी है।

1966 से 1986 के बीच मिज़ोरम में मिज़ो विद्रोहियों और भारतीय सेना के बीच भीषण संघर्ष चलता रहा। इस ऐतिहासिक घटना ने मिज़ो साहित्य में 'रमबुआई साहित्य' नामक एक नई साहित्यिक कोटि को जन्म दिया। रमबुआई साहित्य केवल मिज़ो विद्रोह का वर्णन नहीं है बल्कि उन बीस काले और अंधेरे वर्षों का जीवंत दस्तावेज है। रमबुआई साहित्य के माध्यम से मिज़ो लेखकों ने मिजोरम में बीस वर्षों की अशांति के इतिहास का मार्मिक रूप से चित्रण किया है। रमबुआई संबंधित उपन्यासों को 'रमबुआई के दौर में लिखे गए रमबुआई आधारित उपन्यास' और 'रमबुआई के बाद लिखे गए रमबुआई आधारित उपन्यास' के आधार पर विभाजित किया गया है। माफेली ने 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की रचना के माध्यम से रमबुआई साहित्य में अपने लिए एक विशिष्ट स्थान बना लिया है।

1966 से 1986 तक चलने वाले सशस्त्र संघर्ष के काल को 'मिज़ो रमबुआई का काल' या 'मिज़ोरम में अशांति का काल' कहा जाता है। मिजोरम में 1959 में पड़े 'माउताम' नामक भीषण अकाल की स्थिति में असम सरकार द्वारा की गयी उपेक्षा के प्रति असंतोष और अनेक वजहों से

बाहरी लोगों के प्रति पहले से मौजूद अलगाववादी भावना के कारण यह विद्रोह फूटा। भारतीय सेना के हस्तक्षेप और भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों की गतिविधियों के बीच पिस रहे आम मिज़ो लोगों के लिए यह समय केवल मानसिक संकट का ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक संकट का भी समय था।

मूल उपन्यास छोटे आकार की पुस्तक के रूप में कुल 172 पृष्ठों का है जिसका हिन्दी में अनुवाद लगभग 142 पृष्ठों में हो पाया है। उपन्यास का अनुवाद करते समय मिज़ो और हिन्दी की भाषिक और सांस्कृतिक भिन्नता के कारण कई समस्याओं का सामना करना पड़ा। मिज़ो और हिन्दी भाषा दो भिन्न भाषा परिवार की भाषाएँ हैं। इस कारण वाक्य संरचना, व्याकरणिक संरचना, लोकोक्ति एवं मुहावरों के स्तर पर अनेक प्रकार की समस्या उत्पन्न हुई और अनुवाद करते समय कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। ऐसी स्थिति में जहां संभव हो सका वहाँ हिन्दी के समानार्थी शब्दों का प्रयोग किया गया है और कई जगहों पर स्थानीय शब्दों का लिप्यंतरण कर उसे अलग से स्पष्ट किया गया है। मिज़ो भाषा के तान भाषा होने के कारण वाक्य के संदर्भ के अनुसार उन शब्दों का सही अर्थ पकड़ना होता है जिससे अनुवाद कार्य और जटिल बन जाता है। उपन्यास में स्थानीय प्रचलित कहावतों एवं मुहावरों का प्रयोग किया गया है जिनका अनुवाद करना और उसके मूल भाव को सही-सही व्यक्त कर पाना चुनौतीपूर्ण रहा।

उपन्यास में मिज़ो सांस्कृतिक शब्दों और भावनाओं से जुड़ी शब्दों का प्रयोग होने के कारण अनुवाद करते समय समस्या उत्पन्न हुई। मिज़ो संस्कृति और स्थानीय शब्दों का हिन्दी में कोई सटीक शब्द उपलब्ध नहीं है। अनुवाद करते समय कुछ स्थानीय एवं संस्कृति शब्दों का लिप्यंतरण किया गया और कभी हिन्दी में उन शब्दों से मिलते-जुलते शब्दों का प्रयोग किया गया।

अपने (मिज़ो) राज्य की स्वतंत्रता के लिए भारतीय सेना से लड़ने वाली मिज़ो भूमिगत सेना के विद्रोह और इस विद्रोह में पिसने वाली सामान्य मिज़ो जनता के संघर्षों की अभिव्यक्ति उपन्यास में हुई है। भारतीय सेना का डर मिज़ो लोगों का एकमात्र भयानक अनुभव नहीं था। मिज़ो भूमिगत विद्रोहियों की कार्रवाइयों ने लोगों के बीच वॉलन्टियरों के प्रति भय पैदा किया। विद्रोह के दौरान ईस्ट

लुङदार गाँव के लोगों को भूमिगत विद्रोहियों द्वारा दी गयी यातना भारतीय सेना द्वारा दी गयी यातना से भी बढ़कर थी।

भारतीय सेना ने मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो विद्रोहियों को आम लोगों से अलग करने के लिए गाँव समूहिकरण जैसी नीति को अपनाना, वॉलन्टियरों के जबरन सरेंडर की माँग और उन्हें कठोर दंड देना, गाँव में कर्फ्यू लागू करना जैसी अनेक रणनीतियों का चित्रण करके लेखिका ने आम लोगों की पीड़ा और उनकी दर्दनाक स्थिति का चित्रण किया है।

दो दशकों तक चलने वाले मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो लोगों को केवल भारतीय सेना का भय नहीं था, बल्कि भूमिगत मिज़ो सेना की धमकियों और कई तरह की कार्रवाइयों ने लोगों के बीच उनके प्रति भी भय पैदा किया। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में ईस्ट लुङदार गाँव के निवासियों पर भारतीय सेना द्वारा की गयी ज़्यादतियों के साथ-साथ भूमिगत मिज़ो सेना द्वारा किये गए अत्याचारों को भी चित्रित किया गया है।

स्वाभाविक रूप से किसी भी विद्रोह के सर्वाधिक पीड़ादायक परिणाम महिलाओं पर शारीरिक एवं मानसिक शोषण के रूप में देखे जाते हैं। मिज़ो विद्रोह के दौरान भी मिज़ो महिलाएँ सर्वाधिक असुरक्षित थीं। वे एक तरफ भारतीय सेना और दूसरी तरफ एम.एन.एफ. के डर के बीच जी रही थीं। उपन्यास में लेखिका ने ठुआमखूमी और कापमोई जैसी स्त्री पात्रों के माध्यम से इसे प्रस्तुत किया है।

'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की भाषा सरल एवं सहज है। इस उपन्यास में मिज़ो लोगों में प्रचलित कुछ हिन्दी शब्दों और कई अंग्रेजी शब्दों का प्रचुरता के साथ प्रयोग किया गया है। साथ ही, लेखिका ने प्रसंग के अनुसार मिज़ो समाज के प्रसिद्ध मुहावरों और लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया है।

'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में पूर्वदीप्ति शैली, वर्णनात्मक शैली, संवाद शैली तथा काव्यात्मक शैली जैसी विभिन्न प्रकार की शैलियों का प्रचुरता के साथ प्रयोग किया गया है। पूर्वदीप्ति शैली के माध्यम से लेखक अतीत की घटनाओं का उल्लेख किसी वर्तमान पात्र की स्मृति के माध्यम से करता है। यह उपन्यास 1966 से 1986 के बीच के मिज़ो विद्रोह पर केंद्रित है। लगभग सम्पूर्ण उपन्यास को लिखने में लेखिका ने पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया है। लेखिका माफेली ने पु रोउछुआहा की स्मृति के माध्यम से उपन्यास की कथावस्तु को प्रस्तुत किया है। उपन्यास में कई प्रसंगों में विभिन्न पात्रों के बीच संवाद दिखाते हुए लेखिका ने कथा की संवाद शैली का भी प्रयोग किया है। इसके साथ ही संवेदनाओं को सघन बनाने के लिए बीच-बीच में गीतों व कविताओं को भी रखा गया है जिससे उपन्यास में कुछ हद तक काव्यात्मकता का भी समावेश हो पाया है।

मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना द्वारा लगातार कर्फ्यू लागू करने के कारण समाज में उत्पन्न गरीबी ने चोरी जैसी सामाजिक कुरीतियों को जन्म दिया और व्यक्तिगत प्रतिशोध और बदला लेने का अवसर लोगों को मिलने लगा। ईसाई मिशनरियों के आने के बाद मिज़ो समाज में ईसाई धर्म का गहरा प्रभाव पड़ा। उपन्यास के विश्लेषण से यह पता चलता है कि मिज़ो विद्रोह के दौरान चर्च ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। परमेश्वर के न्याय, शांति, दृढ़ता जैसे विषयों का उपदेश देते हुए चर्च ने आम मिज़ो लोगों में शांति की भावना स्थापित करने का प्रयास किया। विद्रोह के बीच भी भारतीय सेना द्वारा कर्फ्यू ढीली होने पर चर्च ने विद्रोह की कठिनाइयों के बावजूद धार्मिक सेवाएँ और चर्च सभाएँ आयोजित करना जारी रखा। विद्रोह के कारण मिज़ो लोगों में व्यापक रूप से भय, पीड़ा और विस्थापन की स्थिति पैदा हुई। इस उथल-पुथल, हिंसा और अस्थिरता से पीड़ित मिज़ो लोगों को आराम, उम्मीद और स्थिरता प्रदान करने में चर्च ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में इससे जुड़े कुछ प्रसंगों का चित्रण किया गया है।

यह कहा जा सकता है कि लेखिका ने इस उपन्यास में ऐतिहासिक घटनाओं के साथ साहित्यिक कल्पना का सहारा लेते हुए मिज़ो विद्रोह की अवधि के दौरान मिज़ो लोगों की पीड़ा और

संघर्ष को केन्द्रीय विषय बनाया है। इस उपन्यास में मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ोरम के ईस्ट लुङदार गाँव के माध्यम से भारतीय सेना और भूमिगत मिज़ो सेना, दोनों के हमलों के बीच फँसे आम मिज़ो लोगों की असह्य पीड़ा को तथ्यपरक एवं जीवंत रूप से चित्रित करने का प्रयास किया गया है। उपन्यास के शीर्षक का हिंदी अनुवाद है- 'दर्द, जिसे भूलना मुश्किल है'। उपन्यास के कथानक से इस शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट रूप से प्रकट होती है। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास एम.एन.एफ. या भारतीय सरकार की राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं के बजाय इस संघर्ष के मानवीय पहलुओं पर केंद्रित है। इस उपन्यास में मिज़ो विद्रोह के बीच पिसती आम जनता की स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है। निश्चय ही मिज़ो विद्रोह की पृष्ठभूमि में लिखा गया यह एक महत्त्वपूर्ण मिज़ो उपन्यास है। उम्मीद है इस उपन्यास के अनुवाद के माध्यम से हिन्दी समाज को मिज़ो विद्रोह के स्वरूप, विद्रोह के दौरान आम जनमानस की स्थिति और विद्रोह के प्रति उनके नजरिए को समझने में सहूलियत होगी।

शोध-प्रबंध के महत्वपूर्ण निष्कर्ष:

1. हिन्दी और दुनिया की कई दूसरी भाषाओं में उपन्यास का उद्भव 18वीं-19वीं शताब्दी से माना जाता है, परंतु 1893 में मिज़ोरम में ईसाई मिशनरियों के आने और फिर उनके द्वारा मिज़ो भाषा के लिए लिपि तैयार करने के बाद ही मिज़ो साहित्य का लिखित रूप सामने आना शुरू हुआ। ऐसे में मिज़ो साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा 'उपन्यास' का जन्म 20वीं सदी में जाकर हुआ।
2. मिज़ो साहित्य में पारंपरिक मिज़ो उपन्यास का उद्देश्य है सामाजिक मूल्यों को पहचानना और बनाए रखना। इस दौर के लेखकों ने अपने उपन्यासों में 'त्लोमङाइह्ना' के दो अलग-अलग पक्षों को रेखांकित किया है- पहला मिज़ो त्लोमङाइह्ना, जो एक महत्वपूर्ण मिज़ो सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य है और जिसका अर्थ है दूसरों की नि:स्वार्थ सेवा या परोपकार और दूसरा त्लोमङाइह्ना या भाईचारे की ईसाई अवधारणा।
3. भयानक रमबुआई (अशांति का काल) ने मिज़ो कथा साहित्य के अंतर्गत 'रमबुआई साहित्य' नामक एक नई साहित्यिक कोटि को जन्म दिया। रमबुआई साहित्य मिज़ो विद्रोह और उस अवधि के दौरान मिज़ोरम के अशांत माहौल को संबोधित करता है। रमबुआई साहित्य का मिज़ो साहित्य के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।
4. मिज़ो साहित्य में रमबुआई से संबंधित उपन्यासों को दो आधारों पर विभाजित किया गया है– पहला रमबुआई के दौर में लिखे गए रमबुआई पर आधारित उपन्यास और दूसरा रमबुआई के बाद लिखे गए रमबुआई पर आधारित उपन्यास।
5. 1959 में पूरे मिज़ोरम में 'माउताम' नामक भीषण अकाल पड़ा। मिज़ो इसे 'माउताम ट्रामपुई' कहते हैं। 'माउताम' का अर्थ है 'बाँस के फूल का खिलना' और 'ट्रामपुई' का अर्थ है 'अकाल का कहर'। बाँस के इन फूलों और बीजों को खाने से चूहों की प्रजनन क्षमता बढ़ जाती है। परिणामतः चूहों की आबादी में भारी वृद्धि हो गई। ये असंख्य चूहे अनाज चट कर गये और फसलों को बर्बाद कर दिया। इससे मिज़ोरम में अकाल की स्थिति उत्पन्न हो गयी। अकाल

अपने-आप में विद्रोह का कारण नहीं था। मिज़ोरम तब असम राज्य का हिस्सा था। अकाल की इस त्रासद स्थिति में असम सरकार की उपेक्षा से मिज़ो लोगों के मन में असंतोष पैदा हुआ तथा उनके भीतर अलगाववादी भावनाएँ बढ़ने लगीं।

6. 1961 में जब 'माउताम' भीषण अकाल समाप्त हुआ, तब एम.एन.एफ.एफ. (मिज़ो नैशनल फेमाइन फ्रन्ट) के नेताओं ने मिज़ो लोगों में अलगाववादी भावना को और अधिक बढ़ावा देना शुरु किया, इसलिए इस उद्देश्य से एम.एन.एफ.एफ. का नाम बदलकर एम.एन.एफ. (मिज़ो नैशनल फ्रन्ट) कर दिया गया और इसे एक राजनीतिक दल में रूपांतरित कर दिया गया।
7. मिज़ो और हिन्दी, दोनों भाषाएँ दो भिन्न भाषिक परिवारों से संबंध रखती हैं – जहाँ मिज़ो भाषा तिब्बती-बर्मन भाषा परिवार से संबंध रखती है, वहीं हिन्दी आर्य भाषा परिवार की भाषा है। इस कारण दोनों भाषाओं के बीच गहरी भाषिक भिन्नता है। इस भाषिक भिन्नता के कारण मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद करते समय अनेक समस्याएँ पैदा होती हैं।
8. मिज़ो भाषा में कई तरह की लयात्मक ध्वनियाँ और टोन होते हैं जिससे उच्चारण के समय लय के उतार-चढ़ाव के कारण शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं, लेकिन हिन्दी में ऐसा नहीं होता। मिज़ो भाषा में कई शब्द ऐसे हैं जिनके उच्चारण के अनुसार अलग-अलग अर्थ होते हैं। ऐसे शब्दों के अनुवाद में कठिनाई होती है। संदर्भ के अनुसार उनके सही अर्थ को पकड़ना जरूरी होता है, वर्ना अर्थ का अनर्थ होने की पूरी संभावना होती है।
9. मिज़ो के कुछ स्थानीय मुहावरों और लोकोक्तियों का हिन्दी में अनुवाद करते समय उनका अपना सांस्कृतिक अर्थ और भाव खो जाता, जिस कारण समस्या उत्पन्न होती है। मुहावरे और लोकोक्तियाँ भाषा की सांस्कृतिक आत्मा होती हैं जो समाज की जीवनशैली, नैतिकता और सामुदायिक सोच से जुड़ी होती हैं। मिज़ो और हिन्दी समाज में सांस्कृतिक भिन्नता के कारण मिज़ो मुहावरे और लोकोक्तियों का हिन्दी में अनुवाद करना कठिन है।
10. हर भाषा अपनी संस्कृति से जुड़ी होती है। मिज़ो भाषा में भी कई ऐसे शब्द हैं जो वहाँ के भूगोल, संस्कृति तथा सामाजिकता के साथ जुड़े होते हैं। इन स्थानीय एवं सांस्कृतिक शब्दों के लिए

हिन्दी में कोई सटीक शब्द नहीं होता जिसके कारण हिन्दी में अनुवाद करते समय कठिनाई उत्पन्न होता है। हिन्दी में अनुवाद करते समय इन मिज़ो शब्दों का हिन्दी में उससे मिलते-जुलते पर्याय शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है और कहीं मूल मिज़ो शब्दों का लिप्यंतरण कर उन्हें अलग से संदर्भ के साथ स्पष्ट करना पड़ता है। परंतु इसके बावजूद, की बार वे मिज़ो संस्कृति के मूल भाव को व्यक्त नहीं कर पाते।

11. भारतीय सेना का डर मिज़ो लोगों का एकमात्र भयानक अनुभव नहीं था। मिज़ो भूमिगत विद्रोहियों की कार्रवाइयों ने लोगों के बीच वॉलन्टियरों के प्रति भय पैदा किया। विद्रोह के दौरान ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों को भूमिगत विद्रोहियों द्वारा दी गयी यातना भारतीय सेना द्वारा दी गयी यातना से भी बढ़कर थी।

12. मिज़ो विद्रोह के दौरान सामान्य जनता के बीच अलग-अलग कारणों से भारतीय सेना और भूमिगत विद्रोहियों दोनों से समान रूप से डर बना रहता था। आम जनता केवल भारतीय सेना द्वारा ही नहीं बल्कि भूमिगत सेना द्वारा भी पीड़ित थी, इसलिए मिज़ो विद्रोह के दौरान लोगों की स्थिति के वर्णन के लिए 'तुबओह लेह दोउलुङ इनकारः ओम कन नी' अर्थात 'हथौड़े और निहाई के बीच रहना' मुहावरे का प्रयोग किया जाता है, जिसके लिए हिन्दी में समान भाव का मुहावरा है- दो पाटों के बीच पिसना।

13. मिज़ो विद्रोह के दौरान स्त्रियाँ सबसे अधिक पीड़ित थीं। विद्रोह के दौरान स्त्रियों की भूमिका कई रूपों में दिखाई पड़ती है- जैसे भूमिगत वॉलन्टियरों के रूप में, परिवार की देखभाल करने वाली स्त्री के रूप में, अपने गाँव से एम.एन.एफ. की समर्थक के रूप में तथा सर्वाधिक पीड़ित के रूप में। स्त्रियाँ एम.एन.एफ. और भारतीय सेना के डर के बीच फँसी हुई थीं। कुछ स्त्रियाँ ऐसी भी थीं जो खुद को और अपने परिवार और समाज को सुरक्षित रखने के लिए एम.एन.एफ. या भारतीय सेना की मदद करने के लिए मजबूर थीं।

14. विद्रोह के दौरान मिज़ोरम के कई गाँवों में भारतीय सैनिक बसे हुए थे और गाँववालों को अपनी मर्ज़ी से गाँव के बाहर जाने की इजाज़त नहीं थी और साथ ही एम.एन.एफ. की मदद करने की

अनुमति नहीं थी। एम.एन.एफ. की मदद करने पर गाँव के भीतर कई तरह की समस्या पैदा हो सकती थी।

15. विद्रोह महिलाओं को एक कठिन परिस्थिति में डाल देता हैं जहाँ उन्हें अपने देश और अपनी जाति, अपने गाँव को बचाने के लिए अपनी सबसे कीमती चीज, अपने कौमार्य का त्याग करना पड़ता है, जिसका उनके वजूद पर गहरा असर पड़ता है। विद्रोह में प्रतिभागी न होते हुए भी स्त्रियाँ विद्रोह के विनाशकारी परिणामों की सबसे ज़्यादा शिकार होती हैं।

16. विद्रोहियों को स्थानीय मिज़ो लोगों से अलग करने के लिए भारतीय सरकार ने एक उग्रवाद विरोधी नीति अपनाया जिसे मिज़ो में 'खोखोम' अर्थात् ग्राम समूहीकरण कहा गया। ग्राम समूहीकरण की प्रक्रिया भारतीय सेना द्वारा 1967 से 1970 तक चलायी गयी।

17. मिज़ो लोगों का यह मानना है कि अपने पड़ोसियों से दुश्मनी करने से बेहतर है सात गाँवों से दुश्मनी करना। वे अपने पड़ोसियों का सही मूल्य जानते थे। समाज में मृत्यु होने पर, सभी पड़ोसी शोक संतप्त परिवार को सांत्वना देने के लिए रात में इकट्ठा होते थे, जो मिज़ो समाज की परंपर थी। रात में कर्फ्यू लागू रहने के कारण लोग शोक की स्थिति में भी अपने पड़ोसियों के घर जाने से डरने लगे थे।

18. उपन्यास की भाषा सरल एवं सहज है। इस उपन्यास में मिज़ो लोगों में प्रचलित कुछ हिन्दी शब्दों और कई अंग्रेजी शब्दों का प्रचुरता के साथ प्रयोग किया गया है।

19. उपन्यास में पूर्वदीप्ति शैली, वर्णनात्मक शैली, संवदा शैली तथा काव्यात्मक शैली जैसी विभिन्न प्रकार की कथा शैलियों का सफलतापूर्वक प्रयोग कर उसे अधिक प्रभावशाली, विश्वसनीय एवं रोचक बनाया गया है।

20. मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना द्वारा गाँव समूहीकरण जैसे उपायों को अपनाकर अलग-अलग गाँव के लोगों को एक साथ रखा गया, अलग-अलग सोच-विचार उत्पन्न हुए और इस बीच लगातार कर्फ्यू लागू करने के कारण अपने आस-पड़ोस के साथ भी जान-पहचान बनाना मुश्किल हो गया। एक-दूसरे से अपनी जरूरत की वस्तुएँ मांगने में कठिनाई होना अनिवार्य था।

इसके चलते सदियों पुरानी मिज़ो ईमानदारी की जगह मिज़ो समाज में बेईमानी और चोरी जैसी बुराइयों का जन्म हुआ।

21. 19वीं सदी के अंत में वेल्श मिशनरियों द्वारा ईसाई धर्म की शुरुआत के बाद से मिज़ो समाज पर ईसाई धर्म का गहरा प्रभाव पड़ा। विद्रोह के कारण मिज़ो लोगों में व्यापक रूप से भय, पीड़ा और विस्थापन की स्थिति पैदा हुई। इस उथल-पुथल, हिंसा और अस्थिरता से पीड़ित मिज़ो लोगों को आराम, उम्मीद और स्थिरता प्रदान करने में चर्च ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

22. इस उपन्यास में मिज़ो विद्रोह के बीच पिसती आम जनता की स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है। निश्चय ही मिज़ो विद्रोह की पृष्ठभूमि में लिखा गया यह एक महत्त्वपूर्ण मिज़ो उपन्यास है। इस उपन्यास के अनुवाद के माध्यम से हिन्दी समाज को मिज़ो विद्रोह के स्वरूप, विद्रोह के दौरान आम जनमानस की स्थिति और विद्रोह के प्रति उनके नजरिए को समझने में सहूलियत होगी।

परिशिष्ट

लेखिका माफेली का साक्षात्कार

लेखिका माफेली का साक्षात्कार

(यह साक्षात्कार शोधार्थी द्वारा स्वयं लेखिका के साथ बातचीत के रूप में लिया गया है। लेखिका माफेली ने अपने जवाब मौखिक रूप से मिज़ो भाषा में दिये हैं जिनका हिन्दी में अनुवाद शोधार्थी द्वारा ही किया गया है।)

सवाल 1. आपकी कितनी रचनाएँ प्रकाशित हो चुकी हैं और वे कौन-कौन सी है?

जवाब : अभी तक मेरे चार उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। इसके अलावा कुछ लेख और छोटी कविताएँ भी लिखी हैं लेकिन उन्हें अलग से प्रकाशित नहीं किया गया है। मैं अपनी कुछ कविताओं को अपने उपन्यासों के अंतिम पृष्ठों में संकलित कर देती हूँ।

प्रकाशित उपन्यास:

1) कन्फेशन (2006)

2) बोईह (2007)

3) अगोनी (2009)

4) ङ्हिल्ह हर कन तुआर (2010)

सवाल 2. आपने कब से लिखना आरंभ किया और प्रथम उपन्यास के लेखन की प्रेरणा कहाँ से मिली?

जवाब : 2 साल की उम्र से ही मुझे बोन मैरो की बीमारी थी इसलिए पढ़ना-लिखना सीखने के बाद अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए मैंने मिज़ो उपन्यास पढ़ना शुरू किया। कई कहानियाँ और उपन्यास पढ़ने के बाद मुझे लेखन में रुचि हुई। मेरी सहेली और मेरे बीच लेखन को लेकर जो आपसी प्रोत्साहन था, उसी का परिणाम मेरा पहला उपन्यास 'कन्फेशन' था। चूँकि यह उपन्यास मेरी एक

सहेली के वास्तविक कन्फेशन और मेरी कल्पनाओं के मेल से बना है, इसलिए मैंने शीर्षक के रूप में 'कन्फेशन' को ही चुना।

सवाल 3. मिज़ो विद्रोह के विषय को लिखने की प्रेरणा आपको कहाँ से मिली?

जवाब : मेरी माँ मिज़ो विद्रोह के दौर की गवाह रही हैं। साथ ही, हमारे घर पर अक्सर बुजुर्ग आते रहते थे जो उस दौर के गवाह रहे हैं और मुझे मिज़ो विद्रोह के दौर की बहुत-सी कहानियाँ सुनाया करते थे। जब आप अपने देश और राज्य से प्रेम करते हैं और राजनीति में रुचि रखते हैं, तो ऐसी घटनाएँ स्वाभाविक रूप से आपके हृदय पर गहरा प्रभाव डालती हैं। इन्ही सब प्रेरणाओं के कारण मैंने मिज़ो विद्रोह आधारित उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' लिखा है।

सवाल 4. मिज़ो विद्रोह पर आधारित कई उपन्यासों से अलग हटकर आपने 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में स्त्री पात्रों का अलग ढंग से चित्रण क्यों किया है?

जवाब : मिज़ो विद्रोह पर आधारित कई उपन्यासों में हमने पढ़ा है कि स्त्रियाँ अक्सर बलात्कार का शिकार हुई हैं। इसलिए, मैं अपने इस उपन्यास में उन्हीं तथ्यों को फिर से नहीं दोहराना चाहती थी। इसका मतलब यह बिल्कुल नहीं है कि ऐसी घटनाएँ नहीं हुई थीं। मैंने अपनी माँ से सुना था कि मिज़ो विद्रोह के दौरान कुछ गाँव ऐसे भी थे जहाँ बलात्कार जैसी घटनाएँ नहीं हुई थीं। मैंने अपने उपन्यासों में स्त्रियों का जो चित्रण किया है, वह भी कुछ हद तक सुनी हुई बातों पर आधारित है। इसलिए, मैंने स्त्रियों के संघर्ष और उनके मानसिक आघात को अलग और नए नजरिए से चित्रित करने का निर्णय लिया।

सवाल 5. आपका यह उपन्यास मिज़ो विद्रोह पर आधारित अन्य उपन्यासों से किस प्रकार भिन्न है?

जवाब : जैसा कि आपने मेरा उपन्यास पढ़ा है, तो आप जानती होंगी कि अन्य मिज़ो विद्रोह पर आधारित उपन्यासों से अलग, जहाँ तक मैंने पढ़ा और जाना है, मेरे इस उपन्यास का केन्द्रीय विषय

मिज़ो विद्रोह के दौरान भूमिगत मिज़ो सेना(एम.एन.एफ.) और भारतीय सेना, दोनों के हमलों के बीच पिस रहे आम मिज़ो लोगों का संघर्ष, पीड़ा, अत्याचार और उनके मानसिक आघात को चित्रित करना है।

सवाल 6. क्या इस उपन्यास को 'ऐतिहासिक उपन्यास' कहा जा सकता है?

जवाब : बिल्कुल। यह उपन्यास मिज़ो विद्रोह के दौर के बुज़ुर्गों से सुनी हुई बातों, इतिहास और मेरी अपनी कल्पना के मेल से लिखा गया है। इसलिए, मेरा मानना है कि इसे एक ऐतिहासिक उपन्यास के रूप में पढ़ा जा सकता है।

सवाल 7. क्या उपन्यास में प्रस्तुत किए गए विचार और टिप्पणियाँ आपकी व्यक्तिगत वैचारिक मान्यताओं को दर्शाती हैं?

जवाब : बिल्कुल। जो विचार मैंने कथानक के बीच प्रस्तुत किए हैं, वह सच में मेरी अपनी सोच और विचार हैं। मुझे राजनीति में रुचि भी है और अगर मुझे इस तरह की बीमारी नहीं होती तो मुझे लगता है कि अब तक राजनीति में कदम रख चुकी होती।

सवाल 8. क्या आपकी रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद किया गया है? मिज़ो रचनाओं के हिन्दी में अनुवाद को लेकर आपके क्या विचार हैं?

जवाब : नहीं, अभी तक मेरी किसी रचना का हिन्दी में या अंग्रेजी में भी अनुवाद नहीं हुआ है। भारत में रहते हुए भी हिन्दी न जानने के कारण हमारी पहुँच बहुत ही सीमित रह गई है। इसलिए दूसरों तक अपने साहित्य को पहुँचाने के लिए मिज़ो रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद करना बहुत जरूरी है।

सवाल 9. क्या आप इस समय कोई नई कहानी या उपन्यास लिख रही हैं?

जवाब : नहीं, स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के कारण फिलहाल कुछ नया लिखने का विचार नहीं है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ:

माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आईज़ोल, 2010

(Mafeli, Nghilh har kan tuar, Samaritan Printers, Mission Veng, Aizawl, 2010)

सहायक ग्रंथ

हिन्दी ग्रंथ:

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरीप्रचारणी सभा, वाराणसी, 2008
2. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, अनुवाद कला, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2009
3. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, अनुवाद: भाषाएँ-समस्याएँ, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2007
4. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, व्यावहारिक अनुवाद, प्रतिभा प्रतिष्ठान, नयी दिल्ली, 2009
5. कृष्ण कुमार गोस्वामी, अनुवाद विज्ञान की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2016
6. गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2010
7. जी. गोपीनाथन एवं एस. कंदस्वामी, अनुवाद की समस्याएँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1993
8. डॉ. एच. देङकिमी, हिन्दी और मिज़ोउ भाषा की व्याकरणिक कोटियों का व्यतिरेकी अध्ययन, दि प्रिनट्स होम, आगरा
9. डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल, अनुवाद: सिद्धांत एवं व्यवहार, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2006
10. डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, डॉ. उदय प्रताप सिंह, भाषा विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा, मीनाक्षी प्रकशन, मेरठ, 2011

11. डॉ. पूरनचन्द टण्डन, अनुवाद - साधना, अभिव्यक्ति प्रकाशन, दिल्ली, 2007

12. डॉ. भोलानाथ तिवारी, अनुवाद विज्ञान: सिद्धांत एवं प्रविधि, किताबघर प्रकाशन, दिल्ली, 2011

13. डॉ. सुरेश कुमार, अनुवाद सिद्धान्त की रूपरेखा, विद्यानिधि, दिल्ली, 2005

14. मधुरेश, हिन्दी उपन्यास का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009

अंग्रेजी ग्रंथ:

1. Bijay Kumar Das, A handbook of Translation Studies, Atlantic Publishers and Distributors, New Delhi, 2008
2. C.Zama, Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986), Power Printers, New Delhi,
3. Chawngsailova, Mizoram During 20 dark years, EBH Publishers, Guwahati, 2012
4. Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, J.P.Offset Printers, Aizawl,2014
5. Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, Mizoram Publication Board, Aizawl, 2007
6. Dr. Laltluangliana Khiangte, A study of Mizo Novel, ISPCK, Delhi, 2014
7. Dr. Zoramdinthara, Mizo Fiction: Emergence and Development, Ruby Press & Co, New Delhi, 2013
8. Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, Cambridge Scholars Publishing, UK, 2012

9. Dr.Lalramchuani Sena Samuelson, Mizo Independence Movement, Goodwill Press, Imphal, 2023,
10. JB Bhattacharjee, Roots of Insurgency in North east India, Akansha Publishing, 2007
11. Jeremy Munday, Introducing Translation Studies: Theories and Applications, Routledge, Abingdon, England, 2012
12. Jiri Levy, The art of Translation, John Benjamins Publishing Company, Amsterdam/Philadelphia, 2011
13. John Vanlal Hluna, Church and Political Upheavel in Mizoram, Mizo History Association, Aizawl, 1985
14. Joy L. Pachuau, Being Mizo: Identity and Belonging in North east India, Oxford University Press, 2014
15. Malsawmdawngliana & Rohmingmawii, Mizo Narratives: accounts from Mizoram, South Eastern Book Agencies, Guwahati, 2021
16. Margaret Ch. Zama & C. Lalawmpuia Vanchiau, After Decades of Silence, Voices from Mizoram, A brief Review of Mizo Literature, 2016, Centre for North East Studies and Policy Research, New Delhi,
17. Mona Baker, In Other Words: A Coursebook On Translation, Routledge, Abingdon, England, 2011
18. P. Lalnithanga IAS (Rtd), Emergence of Mizoram, Third Edition, Lengchhawn Press, Aizawl, 2010

19. Prof. LH Chhuanawma, Dr. Lalthakima, Dr. Lal Lawmzuali, Dr. Zonunmawia, Dr. Lalnundika Hnamte, Government and Politics of Mizoram 5th Edition, Southern Book Agencies, Guwahati, 2024

20. R.Kumar & S.Ram, Insurgency in North East India, Commonwealth Publishers, 2013

21. Sarthak Sengupta, Ethnicity in North East India, Gyan Publishing,New Delhi, 2014

मिज़ो ग्रंथ:

1. B. Lalthangliana, Mizo Chanchin (A short Account of Mizo History), Gilzom Offset, Electric Veng, 2021

2. B. Lalthangliana, Mizo Literature (Mizo Thu leh Hla), Gilzom Offset, Electric Veng, 2019

3. C. Lalawmpuia Vanchiau, Rambuai Literature, Lengchhawn Press, Gilzom Offset, Electric Veng, 2014

4. C. Lalawmpuia Vanchiau, Rambuai Literature, Lengchhawn Press, Gilzom Offset, Electric Veng, 2023

5. Documentary of Mizoram War Of Independence 1966 to 1986, MNF General Headquarters, Aizawl, Mizoram, 2017

6. Dr. K.C Vannghaka, Literature Zungzam, Lois Bet Print & Publication, Chanmari, 2014

7. Dr. K.C. Vannghaka, Mizo Novel Zirchianna (A critical Study of Mizo Novel), Lengchhawn Offset, Khatla, 2015

8. Dr. Laltluangliana Khiangte, Mizo thu leh hla chanchin, Department of Mizo, Mizoram University, 2022
9. R. Lalianzuala, Mizo Novel Golden Jubilee (1937-1987) Souvenier, Gilzom Offset, Aizawl, 2024,
10. R. Zamawia, Zofate Zinkawngah- Zalenna mei a mit tur a ni lo, Lengchhawn Press, Aizawl, 2007
11. Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, Dingdi Press, Aizawl, 2017

कोश:

1. Dr. J.T. Vanlalngheta, The Britam Mizo-English Dictionary, Hlawndo Publishing House, Aizawl, 2020
2. प्रो. सी. ई. जीनी, हिन्दी-अंग्रेजी-मिज़ो शब्द-कोश, भारतीय भाषा व साहित्य संस्थान (प्रेमचंद पीठ), आइज़ोल, 2018
3. बृहत् हिन्दी कोश, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, 2014

पत्रिकाएँ:

1. Mizo Studies, July – September 2012, Department of Mizo, Mizoram University
2. Mizo Studies, July – September 2020, Department of Mizo, Mizoram University
3. Lal Rinawma, Mizo Novel lo chhuah leh than zel dan Thu leh Hla, A monthly Literary Journal of the Mizo Academy of Letters, January, 2012

ई-बुक्स:

1. B. Lalthangliana, Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature, RTM Press, Chhinga Veng, 1999 https://indianculture.gov.in/ebooks/ka-lungkham-introduction-mizoliterature-book-year-hmasa-ber-1989

वेबसाईट:

1. https://northeastreview.wordpress.com/2015/05/22/rambuai-literature/
2. https://in.boell.org/sites/default/files/after_decades_of_silence_voices_from_mizoram.pdf

थीसिस :

1. K.C Lalthansanga, Women's perspective of Mizo Insurgency in Rinawmin and Silaimu Ngaihawm by James Dokhuma, Published Ph.D Thesis submitted to MZU, Aizawl, 2018
2. Lalropuia, A critical study of Rambuai in selected Mizo novels, Phublished Thesis submitted to MZU, Aizawl, 2022

<u>बायोडाटा</u>

1.	**नाम**	**:**	जुदिथ ज़ोपारी
2.	**पिता का नाम**	**:**	स्व. आर. ललथ्लामुआना
3.	**माता का नाम**	**:**	श्रीमती आर. ललरिनछूङी
4.	**पता**	**:**	मिशन वेङथ्लाङ, आइज़ोल, मिज़ोरम – 796005
5.	**जन्मतिथि**	**:**	28.08.1992
6.	**शैक्षणिक योग्यता**	**:**	क) दसवीं (2008) – प्रथम श्रेणी ख) बारहवीं (2012) – प्रथम श्रेणी ग) स्नातक (2015) – प्रथम श्रेणी घ) स्नातकोत्तर (2016) – प्रथम श्रेणी ङ) एम.फिल. (2018) – प्रथम श्रेणी
7.	**मोबाईल**	**:**	8794096324 / 9402355263
8.	**ईमेल**	**:**	renthleizopari28@gmail.com
9.	**भाषा ज्ञान**	**:**	मिज़ो, हिन्दी, अंग्रेजी

10. **प्रकाशित शोध पत्र** **:**

i) जुदिथ ज़ोपारी एवं डॉ. अमिष वर्मा, *मिज़ो विद्रोह का औपन्यासिक दस्तावेज़: 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास,* सत्राची (पीयर रिव्यूड), अंक- 44-45, वर्ष-13, ISSN 2348-8425, अप्रैल-सितंबर, 2025, पृ. 22-29

11. **संगोष्ठियों में पत्र वाचन :**

क्रम सं.	शीर्षक	आयोजक	तिथि
1.	मिज़ो उपन्यास में मिज़ो विद्रोह का चित्रण	हिन्दी विभाग, भूपेन्द्र नारायण मण्डल वाणिज्य महाविद्यालय, साहुगढ़, मधेपुरा, बिहार	29 नवम्बर, 2023
2.	मिज़ो उपन्यास और प्रकृति	मानविकी एवं भाषा संकाय, मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल	29 फरवरी, 2024
3.	भाषाई और सांस्कृतिक आदान-प्रदान में अनुवाद की भूमिका (मिज़ो साहित्य के हिन्दी अनुवाद के विशेष संदर्भ में)	हिन्दी विभाग, मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइज़ोल, मिज़ोरम हिन्दी प्रशिक्षण महाविद्यालय, आइज़ोल एवं हिन्दी विभाग, गवर्नमेंट आइज़ोल कॉलेज	23 सितंबर, 2025

(जुदिथ ज़ोपारी)

अनुसंधित्सु का विवरण

नाम	:	जुदिथ ज़ोपारी
उपाधि	:	पीएच. डी
विभाग	:	हिन्दी
शोध-प्रबंध का शीर्षक	:	**मिज़ो विद्रोह केंद्रित उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' का हिन्दी उनुवाद और विश्लेषण**
प्रवेश तिथि	:	29.08.2022
शोध प्रस्ताव की संस्तुति		
1) विभागीय शोध समिति की तिथि	:	13.03.2023
2) बी.ओ.एस. की तिथि	:	21.04.2023
3) स्कूल बोर्ड की तिथि	:	12.05.2023
मिज़ोरम विश्वविद्यालय पंजीयन संख्या	:	1600684
पीएच. डी पंजीयन संख्या	:	MZU/Ph.D./2201 of 29.08.2022
अवधि विस्तार (एक्स्टेन्शन)	:	-

(प्रो. संजय कुमार)

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग

मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइजोल

शोध-प्रबंध सार

ABSTRACT

मिज़ो विद्रोह केंद्रित उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' का हिन्दी अनुवाद और विश्लेषण

(MIZO VIDROH KENDRIT UPANYAS 'NGHILH HAR KAN TUAR' KA HINDI ANUVAD AUR VISHLESHAN)

[मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइजोल के हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध का सारांश]

AN ABSTRACT SUBMITTED IN PARTIAL FULFILLMENT OF THE REQUIREMENTS FOR THE DEGREE OF DOCTOR OF PHILOSOPHY

जुदिथ ज़ोपारी

JUDITH ZOPARI

MZU REGD. NO.: 1600684

Ph.D. REGD. NO.: MZU/Ph.D./2201 OF 29.08.2022

हिन्दी विभाग

शिक्षा एवं मानविकी संकाय

DEPARTMENT OF HINDI

SCHOOL OF HUMANITIES AND LANGUAGES

मार्च, 2026

MARCH, 2026

मिज़ो विद्रोह केंद्रित उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' का हिन्दी अनुवाद और विश्लेषण

(MIZO VIDROH KENDRIT UPANYAS 'NGHILH HAR KAN TUAR' KA HINDI ANUVAD AUR VISHLESHAN)

प्रस्तुतकर्ता

जुदिथ ज़ोपारी

हिन्दी विभाग

By

JUDITH ZOPARI

DEPARTMENT OF HINDI

शोधनिर्देशक

डॉ. अमिष वर्मा

हिन्दी विभाग

SUPERVISOR

DR. AMISH VERMA

DEPARTMENT OF HINDI

मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आइजोल के शिक्षा एवं मानविकी संकाय के अंतर्गत
हिन्दी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि के
लिए अपेक्षित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबंध का सारांश

Submitted in partial fulfilment of the requirement of the degree of Doctor of Philosophy in Hindi of Mizoram University, Aizawl.

अध्याय योजना

भूमिका

अध्याय 1: मिज़ो उपन्यास का विकास तथा 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की लेखिका का परिचय

1.1 मिज़ो उपन्यास का उद्भव एवं विकास

1.2 उपन्यासकार माफेली का परिचय

अध्याय 2: मिज़ो विद्रोह का स्वरूप

अध्याय 3: 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास का हिन्दी अनुवाद

अध्याय 4: मिज़ो से हिन्दी अनुवाद की समस्याएँ

4.1 भाषिक भिन्नता: मिज़ो तथा हिन्दी भाषा की भिन्न प्रकृति

4.2 सांस्कृतिक भिन्नता: रचना की संवेदना के अनुवाद की समस्या

अध्याय 5: उपन्यास का विश्लेषण

5.1 मिज़ो विद्रोह के प्रति विद्रोहियों और सामान्य जनता का नजरिया

5.2 विद्रोह और मिज़ो स्त्री का संघर्ष

5.3 मिज़ो विद्रोह और भारतीय सेना

5.4 उपन्यास का कला पक्ष

5.5 अन्य विविध पक्ष

उपसंहार

परिशिष्ट

माफेली का साक्षात्कार

संदर्भ ग्रंथ सूची

शोध-प्रबंध सार

मिज़ो विद्रोह केंद्रित उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' का हिन्दी अनुवाद और विश्लेषण

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य के इतिहास' की नींव रखते हुए स्पष्ट किया था कि "प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिंब होता है।" यह सिद्धांत साहित्य और समाज के अटूट संबंध को रेखांकित करता है। साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं, बल्कि उसकी स्मृतियों का संरक्षक भी होता है। साहित्य एक ऐसा महत्त्वपूर्ण माध्यम है जो समाज और संस्कृति के विभिन्न पहलुओं तथा तत्वों को प्रस्तुत करता है। मिज़ो साहित्य का आरंभिक रूप मौखिक परंपराओं में मिलता है जिसमें लोककथाएँ, गीत आदि शामिल हैं। लेकिन 1894 के बाद ईसाई मिशनरियों द्वारा मिज़ो भाषा के लिए लिपि उपलब्ध कराए जाने के बाद मिज़ो साहित्य का लिखित रूप भी सामने आने लगा।

मिज़ो इतिहास में 1966 से 1986 तक के 20 वर्षों के समय को 'मिज़ो रमबुआई का काल' या 'मिज़ोरम में अशांति का काल' कहा जाता है। 'मिज़ो विद्रोह' मिज़ो इतिहास की सबसे महत्त्वपूर्ण एवं भयावह घटना है जिसने मिज़ो साहित्य के अंतर्गत 'रमबुआई साहित्य' नामक एक नई साहित्यिक कोटि को जन्म दिया। रमबुआई साहित्य भारत से स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए 1966 से 1986 के बीच घटित मिज़ो विद्रोह और उस अवधि के दौरान मिज़ोरम के अशांत माहौल को संबोधित करता है। मिज़ो साहित्य के अंतर्गत मिज़ो विद्रोह एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा है।

इस शोध-प्रबंध में अनुवाद एवं विश्लेषण के लिए माफेली द्वारा रचित मिज़ो उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' को चुना गया है। यह उपन्यास रमबुआई साहित्य में एक महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है क्योंकि यह उपन्यास मिज़ोरम के ईस्ट लुङदार गाँव में रमबुआई के सबसे काले और अंधेरे समय की अनकही कहानी और मिज़ोरम में दर्दनाक सशस्त्र संघर्ष के बारे में गाँववालों के यथार्थवादी

विवरण पर आधारित है। पीड़ितों के दृष्टिकोण से लिखे गये इस उपन्यास में विद्रोह के दौरान भारतीय सेना और भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों (एम.एन.एफ.) द्वारा सामान्य मिज़ो जनता पर किये गये अत्याचारों का मार्मिक वर्णन किया गया है। लेखिका ने मिज़ो विद्रोह के इतिहास के अध्ययन के साथ-साथ विद्रोह के चश्मदीद बुज़ुर्गों से साक्षात्कार लेकर इस उपन्यास को इतिहास और कल्पना के मेल से गढ़ा है। मिज़ो विद्रोह के दौरान आम लोगों की पीड़ा को चित्रित करने की पूरी कोशिश लेखिका ने अपने उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' में की है।

अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत शोध–प्रबंध को पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है। प्रथम अध्याय **'मिज़ो उपन्यास का विकास तथा 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की लेखिका का परिचय'** है। इसके प्रथम उप-अध्याय 'मिज़ो उपन्यास का उद्भव एवं विकास' के अंतर्गत मिज़ो उपन्यास के ऐतिहासिक विकास-क्रम को स्पष्ट करने के साथ-साथ मिज़ो साहित्य में 'रमबुआई उपन्यास' की स्थिति को भी समझने का प्रयास किया गया है। अन्य समाजों और भाषाओं के साहित्य के विपरीत, मिज़ो साहित्य के शुरुआती दौर में कहानी और उपन्यास में अधिक अंतर नहीं किया गया था, परंतु मिज़ो साहित्य के इतिहासकार डॉ. के.सी.वानङ्हाका ने अपनी पुस्तक **'Literature Zungzam'** के तीसरे अध्याय **'Mizo Novel Tobul leh Hmasawn Dan (मिज़ो उपन्यास का उद्भव और विकास)'** में उपन्यास को कहानी से अलग करते हुए 'थोंथू फुअःथर'[1] की संज्ञा दी और बी. ललथङलिआना ने अपनी पुस्तक जिसे मिज़ो साहित्य के इतिहास की पहली पुस्तक माना जाता है **'Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature'** के **'Mizo Novel'** अध्याय में उपन्यास को 'थोंथू सेई'[2] की संज्ञा दी है। हिन्दी और दुनिया की कई दूसरी भाषाओं में उपन्यास का उद्भव 18वीं-19वीं शताब्दी से माना जाता है, परंतु 1894 में मिज़ोरम में ईसाई मिशनरियों के आने और फिर उनके द्वारा मिज़ो भाषा के लिए लिपि तैयार करने के बाद ही मिज़ो साहित्य का लिखित रूप सामने आना शुरू हुआ। ऐसे में मिज़ो साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा 'उपन्यास' का जन्म 20वीं सदी में जाकर हुआ। एल. बिआकलिआना को प्रथम मिज़ो उपन्यासकार माना जाता है जिन्होंने 1936 में 'होइलोउपारी' उपन्यास और 1937 में 'लली

(ललओमपुई)' नामक कहानी की रचना की। 'लली' को लेकर भी मिज़ो साहित्य का इतिहास स्पष्ट नहीं है कि इसे कहानी माना जाए या उपन्यास। कहानी होते हुए भी इसे मिज़ो साहित्य में द्वितीय उपन्यास का स्थान दिया जाता है।[3] दूसरे मिज़ो उपन्यास लेखक के रूप में कापह्लेइआ आते हैं जिन्होंने 1939 में 'छीङपुई' उपन्यास लिखा जिसे तीसरा मिज़ो उपन्यास माना जाता है। उक्त तीन उपन्यास ही 1940 से पहले लिखे गए उपन्यास थे और इसलिए मिज़ो साहित्य में इन्हें महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। 1940-41 के आसपास ललजुईथङा आते हैं जिन्होंने अनेक प्रकार के उपन्यास लिखने शुरू किए। उनके उपन्यास 'थ्लश्राङ' (भूत) को चौथा मिज़ो उपन्यास माना जा सकता है जो 1940-41 में लिखा गया था। इन तीन प्रथम उपन्यास लेखकों ने तीन चरणों में उपन्यास लेखन की शुरुआत की। बी. ललथङलिआना ने अपनी पुस्तक **'Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature'** में लिखा है कि "जिस तरह अंग्रेजी साहित्य में रिचर्डसन, हेनरी फील्डिंग, लॉरेंस स्टर्न और तोबीयस जी. स्मॉलेट को अंग्रेजी उपन्यास के चार पहिए माना गया है, उसी प्रकार मिज़ो साहित्य में इन तीन उपन्यासकारों, एल. बिआकलिआना, कापह्लेइआ और ललजुईथङा को मिज़ो उपन्यास के तीन पहिए माना जा सकता है।"[4]

मिज़ो साहित्य के इतिहास में मिज़ो कथा का कोई व्यवस्थित एवं कालानुक्रमिक अध्ययन नहीं किया गया है, लेकिन डॉ. ज़ोरमदिनथरा ने अपनी पुस्तक **'Mizo Fiction : Emergence and Development'** में मिज़ो साहित्य के इतिहास के अंतर्गत मिज़ो कथा के विकास को अध्ययन की सुविधा के लिए तीन खंडों में विभाजित करने का निम्न प्रकार से प्रयास किया है -

1. स्वतंत्रता पूर्व मिज़ो कथा साहित्य: 1936 – 1946 (Pre Independence Mizo Fiction: 1936 – 1946)

2. स्वातंत्र्योत्तर मिज़ो कथा साहित्य: 1947 – 1986 (Post-Independence Mizo Fiction: 1947 – 1986)

3. आधुनिक मिज़ो कथा साहित्य: 1986 – 2000 (Modern Mizo Fiction: 1986 – 2000)

मिज़ो कथा साहित्य के अंतर्गत मिजोरम में दो दशकों (1966-1986) के अशांति के दौर ने 'रमबुआई साहित्य' नामक एक नई साहित्यिक कोटि को जन्म दिया। मिज़ो विद्रोह ने मिज़ो कविता, नाटक, कथा साहित्य आदि साहित्य की विभिन्न विधाओं को काफी प्रभावित किया है। मारगरेट चो. ज़ामा और सी. ललओमपुईआ वानचिआऊ द्वारा संपादित किताब 'आफ्टर डेकेड्स ऑफ साइलेन्स, वॉइसेस फ्रॉम मिज़ोरम: अ ब्रीफ़ रिव्यू ऑफ मिज़ो लिटरचर' में रमबुआई साहित्य को इस प्रकार परिभाषित किया गया है:

"रमबुआई साहित्य का शाब्दिक अनुवाद है 'अशांत भूमि का साहित्य'... अर्थात् मिज़ो नैशनल फ्रन्ट मूवमेंट के अशांत इतिहास से उत्पन्न कथा, गैर-कथा, गीत और कविताएँ, चाहे वे एम.एन.एफ. या गैर-एम.एन.एफ. कथाएँ हों, वे इस प्रकार की रचना में शामिल हैं जो लगातार बढ़ रही हैं और आने वाले वर्षों में इसकी वृद्धि जारी रहने की संभावना है।"[5]

मिज़ो कथा साहित्य के क्षेत्र में मिज़ो विद्रोह का काफी प्रभाव पड़ा है। ललओमपुईआ वानचिआऊ ने अपनी पुस्तक 'रमबुआई लिटरेचर' में कहा है कि "रमबुआई से संबंधित सभी मिज़ो कथा साहित्य को रमबुआई कथा साहित्य कहा जा सकता है।"[6] इस रमबुआई ने मिज़ो कविता, नाटक, कथा साहित्य आदि साहित्य की विभिन्न विधाओं को प्रभावित किया है। दो दशकों तक चले विद्रोह का समय मिज़ो लोगों के लिए संकट और संघर्ष का समय था। इसी रमबुआई ने मिज़ो साहित्य, विशेष रूप से रमबुआई से संबंधित कथा साहित्य के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। मिज़ो साहित्य के क्षेत्र में कविता और नाटक की तुलना में कथा साहित्य में रमबुआई का प्रभाव बहुत अधिक है। जहाँ कविता और नाटक के क्षेत्र में रमबुआई का प्रभाव धीरे-धीरे कम होता दिखता है, वहीं कथा साहित्य में इसका प्रभाव 1976 में प्रथम रमबुआई कथा के प्रकाशित होने के बाद से आज तक लगातार बढ़ रहा है और यह प्रभाव इतना अधिक है कि मिज़ो साहित्य में 'रमबुआई उपन्यास' को एक उप-विधा भी माना जाने लगा है। मिज़ो साहित्य में रमबुआई से संबंधित उपन्यासों को दो आधारों पर विभाजित किया गया है– पहला रमबुआई के दौर में लिखे गए रमबुआई पर आधारित उपन्यास और दूसरा रमबुआई के बाद लिखे गए रमबुआई पर आधारित उपन्यास।[7]

रमबुआई और उससे संबंधित पहलू जो मिज़ो कथा साहित्य में परिलक्षित हैं, मिज़ो साहित्य की समृद्धि में योगदान देते हैं। इसके साथ ही, रमबुआई की कथा लिखने वाले मिज़ो कथा साहित्य के महत्व को बढ़ाने में भी योगदान देते हैं। 'द मिज़ो एकेडमी ऑफ लेटर्स' ने भी रमबुआई से संबंधित चार उपन्यासों– समसोन थनरूमा द्वारा लिखा गया *'बेइसेईना मितत्तुई'* (2010), ललपेककिमा द्वारा लिखा गया *'थिङलुबुल'* (2013), सी. ललनुनचङा द्वारा लिखा गया *'कोलकिल पिआह लमत्लुआङ'* (2015) और ललएङ्जुआला द्वारा लिखा गया *'फलुङ'* (2019) को 'बुक ऑफ द ईयर' से सम्मानित किया था। रमबुआई से संबंधित सबसे पहला उपन्यास मिज़ोरम विधानसभा के पूर्व उपाध्यक्ष वानललङेना द्वारा लिखा गया 'क दी वे खा' (Ka Di Ve Kha) है जो 1975 में साइक्लोस्टाइल में प्रकाशित हुआ था, लेकिन अब यह उपन्यास उपलब्ध नहीं है।[8] जेम्स दोउखूमा का 'रिनओमिन'(1976), पी. सी. ललबिआकथङा का 'शिङनुन' (1984), वानललछुआङा का 'रिनओमना राह' (1985) आदि रमबुआई से संबंधित उल्लेखनीय उपन्यास हैं। माफेली एकमात्र लेखिका हैं जिन्होंने रमबुआई से संबंधित मिज़ो उपन्यास लिखा है।

ललओमपुईआ वानचिआऊ अपनी पुस्तक 'रमबुआई लिटरेचर' में 1986 से 2022 के बीच प्रकाशित 66 रमबुआई कथाओं का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि "ये वे कथाएँ हैं जो पुस्तक के रूप में उपलब्ध हैं। कम-से-कम सत्तर (70) रमबुआई कथाएँ होनी चाहियें, जिनमें वे भी शामिल हैं जो अब पुस्तक के रूप में उपलब्ध नहीं हैं।"[9] दो दशकों तक चलने वाले मिज़ो विद्रोह के संकटग्रस्त दौर में भी मिज़ो साहित्य के अंतर्गत मिज़ो कथा साहित्य का अधिक विकास हुआ, खास तौर पर रमबुआई आधारित उपन्यास के क्षेत्र में। उन दो दशकों के दौरान पीड़ा, वेदना, संकट आदि अनुभवों को रमबुआई आधारित उपन्यासों में मार्मिक रूप से चित्रित किया गया और दो दशकों तक चलने वाला मिज़ो विद्रोह मिज़ो साहित्य के लिए एक छिपे हुए वरदान की तरह बन गया। रमबुआई से संबंधित अनेक उपन्यासों का प्रकाशित होना निश्चित रूप से मिज़ो कथा साहित्य के लिए एक बड़ी उपलब्धि है।

प्रथम अध्याय के दूसरे उप-अध्याय 'उपन्यासकार माफेली का परिचय' में उपन्यासकार माफेली का परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है। रमबुआई से संबंधित उपन्यास लिखने वाले उपन्यासकारों में माफेली ने अपने लिए एक विशिष्ट स्थान बनाया है। उनका पूरा नाम ललरेममोई है परंतु उन्हें प्यार से माफेली बुलाया जाता है। उनका जन्म मिज़ोरम के मुआलफेङ गाँव में 21 मार्च, 1982 को हुआ था। वह चार भाई-बहनों में सबसे छोटी हैं। 2 साल की उम्र से ही उनको बोन मैरो की बीमारी हो गयी जिसके कारण वह शारीरिक रूप से अक्षम हो गयीं। इस बीमारी के कारण उन्होंने बचपन में अपना ज्यादा समय अस्पतालों में बिताया, जहाँ उनकी माँ ने उन्हें पढ़ना-लिखना सिखाया। उन्होंने 7 साल की उम्र में स्कूल जाना शुरू किया, उन्होंने आठवीं कक्षा तक की शिक्षा प्राप्त की, लेकिन दवाओं के साइड इफेक्ट के कारण वह अपनी पढ़ाई आगे जारी नहीं रख पायीं। अपने अकेलेपन को दूर करने के लिए उन्होंने मिज़ो उपन्यास पढ़ना शुरू किया और वहीं से उन्हें लेखन में रुचि हुई। मिज़ो उपन्यासों की एकरसता से ऊब जाने के कारण उनमें कुछ नया लिखने की इच्छा पैदा हुई और उन्होंने 2006 में अपना पहला उपन्यास *'कन्फेशन'* (Confession) लिखना शुरू किया। लेकिन पारिवारिक जीवन की कठिनाईयों और नयी लेखिका होने के कारण अपनी पुस्तक को प्रकाशित करने में वह हिचकिचाने लगीं। इस समय एक प्रेस ने उनकी मदद की और उनके उपन्यास को प्रकाशित किया। प्रकाशन के 29 दिन बाद ही उस उपन्यास का दूसरा संस्करण निकाला गया और उसकी 6000 प्रतियाँ बिक गयीं। इसके बाद उन्होंने 2007 में *'बोईह'* (Bawih) और 2009 में *'अगोनी'* (Agony) उपन्यास लिखा। *'ङहिल्ह हर कन तुआर'* उपन्यास 2010 में प्रकाशित हुआ और यह उनका चौथा और अभी तक का अंतिम उपन्यास है। माफेली ने उपन्यास के साथ-साथ कहानी और लेख भी लिखे हैं, लेकिन इनका अलग से प्रकाशन नहीं किया गया है। इन्होंने 2010-2012 के बीच मिज़ोरम ब्लाइंड सोसाइटी की सहायता करने के लिए सोसाइटी द्वारा निकलने वाली मासिक पत्रिका के लिए अनेक लेखों का अनुवाद किया। वह वर्तमान में मिज़ोरम टीवी केबल नेटवर्क एल पी एस विज़न के लिए अनुवादक के रूप में काम कर रहीं हैं।

माफेली को उनके उपन्यास ‘कन्फेशन’ के लिए 2006 में ‘ज़ोनेट अवार्ड, 2006’ से सम्मानित किया गया और 2018 में मिजोरम सरकार के समाज कल्याण विभाग द्वारा विकलांग महिलाओं के बीच उच्च उपलब्धि के लिए ‘आइज़ोल डिस्ट्रिक्ट अवार्ड फॉर हाई आचीवर अमंग वीमेन विद डिसेबिलिटी सर्टिफिकेट’ से भी सम्मानित किया गया।

‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ उपन्यास माफेली का चौथा और अंतिम उपन्यास है, जो 2010 में समारितन प्रिंटर्स, आईज़ोल से प्रकाशित हुआ। ‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ उपन्यास मिज़ो विद्रोह से संबंधित एक उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखिका ने मिज़ोरम के ईस्ट लुङदार गाँव में रमबुआई के सबसे काले और अंधेरे समय का तथ्यपरक वर्णन किया है और महिलाओं की आवाज को उठाया है जो उस दौर में अत्याचारों की सबसे बुरी शिकार रहीं। लेखिका ने भारतीय सेना और भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों, दोनों के हमलों के कारण ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों की पीड़ा का भी मार्मिक वर्णन किया है।

शोध प्रबंध का दूसरा अध्याय **‘मिज़ो विद्रोह का स्वरूप’** है। इसके अंतर्गत मिज़ो विद्रोह के संक्षिप्त इतिहास पर प्रकाश डाला गया है। इसके साथ ही गहराई से मिज़ो विद्रोह के स्वरूप का विश्लेषण भी किया गया है। 1 मार्च, 1966 को मिज़ोरम के एक नये राजनीतिक दल ‘मिज़ो नैशनल फ्रन्ट’ (एम.एन.एफ.) के अध्यक्ष पु ललदेङा के नेतृत्व में भारतीय संघ से मिज़ोरम की पूरी तरह स्वतंत्रता की घोषणा के साथ विद्रोह की शुरुआत हुई । 30 जून, 1986 को नयी दिल्ली में भारत सरकार और एम.एन.एफ. के बीच शांति समझौते (Mizoram Peace Accord) पर हस्ताक्षर के साथ मिज़ो विद्रोह का अंत हुआ।

भारत को 1947 में ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता प्राप्त हुई और इसके साथ मिज़ो जिला, जिसे पहले लुशाई हिल्स जिला कहा जाता था, भारत के असम राज्य का एक स्वायत्त जिला बन गया। इस स्वतंत्रता प्राप्ति ने मिज़ो लोगों के शिक्षित वर्ग के मन को प्रभावित किया और परिणाम यह हुआ कि उनमें राष्ट्रवाद और देशभक्ति की भावनाएं जागृत हुई और उसके साथ राजनीतिक चेतना उत्पन्न हुई।

भारत सरकार अधिनियम, 1935 के तहत लुशाई हिल्स को भारतीय संघ से बहिष्कृत क्षेत्र में रखा गया था, जिसने मिज़ो लोगों को भारत के अन्य लोगों से अलग कर दिया इसके साथ ही मिज़ो की अलग संस्कृति, रीति-रिवाज, भाषा और परंपराएँ थी जो भारतीय लोगों की संस्कृति से बहुत ही अलग थी। इसलिए प्रशासन के संदर्भ में मिज़ो हिल्स के भविष्य को तैयार करने की आवश्यकता महसूस की गई।[10] भारत के साथ घनिष्ठ संपर्क के दौरान मिज़ो लोग भारतीयों के साथ या भारत में घर जैसा महसूस नहीं कर पाये।[11] मिज़ो हिल्स को बहिष्कृत क्षेत्र में रखने के कारण, भारत के संविधान का निर्माण करने वाली संविधान सभा में कोई मिज़ो प्रतिनिधि नहीं था, इसलिए मिज़ो लोगों के लिए यह संविधान एक "थोपा हुआ संविधान" के रूप में माना जाता है और यही मिज़ोरम संघर्ष का एक मुख्य कारण भी था।[12]

भारत की स्वतंत्रता से उभरी राजनीतिक चेतना के उदय के साथ ही मिज़ो राजनीतिक नेताओं के बीच अलग-अलग विचार उभरने लगे और राजनीतिक भ्रम की स्थिति पैदा हो गयी। कुछ लोग भारत की बजाय बर्मा में शामिल होना चाहते थे, जबकि अन्य लोग भारत का हिस्सा बने रहना चाहते थे। वहीं, कुछ लोग भारतीय संघ का हिस्सा बने रहने के बजाय स्वनिर्धारित होना चाहते थे।[13] कुछ लोग पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) में शामिल होना चाहते थे क्योंकि उनका कहना था कि यह मिज़ोरम के निकट है और आसानी से उपयोगी चीजें एकत्रित की जा सकती हैं। कुछ लोगों का मानना यह भी था कि ब्रिटिश सरकार के अधीन एक क्राउन कॉलोनी के रूप में रहना अच्छा होगा।[14]

1959 में पूरे मिज़ोरम में 'माउताम' नामक भीषण अकाल पड़ा। 'माउताम' का अर्थ है 'बाँस के फूल का खिलना'। बाँस के इन फूलों और बीजों को खाने से चूहों की प्रजनन क्षमता बढ़ जाती है। परिणामतः चूहों की आबादी में भारी वृद्धि हो गई। ये असंख्य चूहे अनाज चट कर गये और फसलों को बर्बाद कर दिया। इससे मिज़ोरम में अकाल की स्थिति उत्पन्न हो गयी। अकाल अपने-आप में विद्रोह का कारण नहीं था। मिज़ोरम तब असम राज्य का हिस्सा था। अकाल की इस त्रासद स्थिति में असम सरकार की उपेक्षा से मिज़ो लोगों के मन में असंतोष पैदा हुआ तथा उनके भीतर अलगाववादी

भावनाएँ बढ़ने लगीं। अकाल से पीड़ित मिज़ो लोगों की मदद के लिए 1960 में ललदेङा के नेतृत्व में एम.एन.एफ.एफ. (मिज़ो नैशनल फैमिन फ्रन्ट) नामक एक गैर-सरकारी संगठन की स्थापना की गयी। 1961 में अकाल समाप्त होने पर एम.एन.एफ.एफ. के नेताओं ने गैर-मिज़ो लोगों के प्रति मिज़ो लोगों के मन में अलगाववादी भावना को और अधिक बढ़ावा देने के उद्देश्य से इस संगठन का नाम बदलकर एम.एन.एफ. (मिज़ो नैशनल फ्रन्ट) कर दिया और इसे एक राजनीतिक दल में रूपांतरित कर दिया। एम.एन.एफ. का मुख्य उद्देश्य मिज़ोरम और मिज़ोरम के पड़ोसी राज्यों में रहने वाले मिज़ो जाति के सभी लोगों के लिए पूर्ण रूप से स्वतंत्रता हासिल करना था।[15]

1 मार्च 1966 को एम.एन.एफ. अध्यक्ष पु ललदेङा और उनके साथियों ने मिज़ो विद्रोह की घोषणा कर दी। इसके बाद असम सरकार ने मिज़ो जिले को अशांत क्षेत्र घोषित कर दिया और विद्रोह को समाप्त करने के लिए भारतीय सेना की सहायता से मिज़ोरम पर सैन्य हमला कर दिया। भारतीय सरकार से मिज़ोरम की पूर्ण स्वतंत्रता के लिए छेड़े गये सशस्त्र विद्रोह के जवाब में भारत सरकार ने मिज़ोरम पर सैन्य कार्रवाई की जिसका परिणाम हिंसक झड़पों, हवाई हमलों और मिज़ो गाँवों के जबरन स्थानांतरण के रूप में सामने आया। भारतीय सेना और मिज़ो विद्रोहियों के बीच लंबा सशस्त्र संघर्ष चला। 20 वर्षों तक मिज़ोरम में अशांति छायी रही। 30 जून, 1986 को नयी दिल्ली में भारत सरकार और एम.एन.एफ. के बीच शांति समझौते पर हस्ताक्षर किया गया।

शोध-प्रबंध का तीसरा अध्याय **'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास का हिन्दी अनुवाद'** है। इस अध्याय में मिज़ो उपन्यास 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' (दर्द, जिसे भूलना मुश्किल है) का हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत किया गया है। मूल सामग्री कुल 172 पृष्ठों की है, जिसका अनुवाद लगभग 141 पृष्ठों में हो पाया है।

शोध प्रबंध का चौथा अध्याय **'मिज़ो से हिन्दी अनुवाद की समस्याएँ'** है। इस अध्याय के अंतर्गत दो उप-अध्याय रखे गए हैं। प्रथम उप-अध्याय 'भाषिक भिन्नता: मिज़ो तथा हिंदी भाषा की भिन्न प्रकृति' है। इस उप-अध्याय के अंतर्गत मिज़ो और हिंदी की भाषागत भिन्नता के कारण

अनुवाद में आने वाली समस्याओं का विवेचन किया गया है। मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद की एक मूलभूत समस्या है – भाषिक भिन्नता क्योंकि मिज़ो और हिंदी भाषा की प्रकृति एक दूसरे से काफी भिन्न है। दोनों भाषाओं की वाक्य संरचना, ध्वन्यात्मकता में भिन्नता के साथ-साथ स्थानीय भाषा के प्रयोग के कारण भाव और अर्थ को पूरी तरह से संरक्षित करते हुए मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद करना अनुवादक के लिए चुनौती बन जाता है और समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

मिज़ो भाषा दरअसल एक तान भाषा (Tonal Language) है जिसमें कई तरह की लयात्मक ध्वनियाँ और टोन होते हैं जिससे उच्चारण के समय आवाज के उतार-चढ़ाव से शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं, जबकि हिन्दी में ऐसा नहीं होता, जिसके कारण उच्चारण और ध्वनि के आधार पर मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद कठिन हो जाता है। मिज़ो भाषा में कई शब्द ऐसे हैं जिनके उच्चारण के अनुसार अलग-अलग अर्थ होते हैं। उपन्यास में प्रयुक्त अनेकार्थ वाले मिज़ो शब्दों के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं – Bang(बङ) – छोड़ना, दीवार, रुकना, लटकना, स्थापित करना, बचा हुआ ; Thawk (थोक) – काम करना, सांस लेना; Phut (फूट) – चूर्ण, उम्मीद करना, अचानक; Tla (त्ला) – गिरना, पर्याप्त होना, चरना; Chhan (छन) – बचाना, कारण; Puan (पुआन) – कपड़ा, घोषणा करना; Tar (तर) – बुढ़ापा, चिपकाना आदि। ऐसे शब्दों के अनुवाद में कठिनाई होती है। संदर्भ के अनुसार उनके सही अर्थ को पकड़ना जरूरी होता है, वर्ना अर्थ का अनर्थ होने की पूरी संभावना होती है।

मिज़ो भाषा के कुछ स्थानीय मुहावरे और लोकोक्तियाँ हिन्दी में अनुवाद करते समय अपना अर्थ और भाव खो बैठती हैं, जिस कारण समस्या उत्पन्न होती है। मिज़ो भाषा के एक प्रसिद्ध मुहावरे ‘Pan lovah tho a fu ngai lo’ (पान लोवह थोउ अ फु ङाई लोउ) का प्रयोग उपन्यास में किया गया है। हिन्दी में इस मुहावरे में निहित भाव को व्यक्त करने के लिए कोई विशिष्ट मुहावरा नहीं है। ‘पान’ का अर्थ है ‘चोट का घाव’ और ‘थोउ’ का अर्थ है ‘मक्खी’ ‘फु ङाई लोउ’ का अर्थ है ‘नहीं बैठता’। जिस तरह मक्खी को किसी चोट के घाव या गंदगी से प्रेम होता है और वह बार-बार वहीं

बैठ जाती है, उसी प्रकार यदि किसी चीज को बार-बार बोला गया हो, तो वह अंत में सच निकल जाता है, इसलिए इसकी तुलना करके इस अर्थ में प्रयोग किया जाता है। हिन्दी में अनुवाद इस प्रकार किया गया है : 'मक्खी घाव पर ही बैठती है'। इस अनुवाद से मुहावरे का शाब्दिक अर्थ को व्यक्त किया गया है लेकिन इस मुहावरे में छिपे भाव और अर्थ को पूरी तरह व्यक्त कर पाना बहुत कठिन है। इससे अनुवाद कार्य में समस्या उत्पन्न होती है।

गीतों और कविताओं का मिज़ो संस्कृति में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। उपन्यास में परिस्थिति के अनुरूप कविता और गीतों का प्रयोग किया गया है, जो केवल भाषा का सौन्दर्य ही नहीं हैं बल्कि एक खास तरह की संवेदना के भी स्रोत हैं। अन्य भाषाओं की तरह मिज़ो में भी काव्यात्मक शब्दों का भंडार है, जैसे – Chun leh zua (चून लेह ज़ुआ) – 'माता–पिता', Chhawrthlapui leh Siar (छोरथ्लपुई लेह सिआर) – 'चाँद और सितारे', Hringmi (शिङमी) – मनुष्य , Ṭhuva (ठूवा) – कबूतर, Sikni (सिकनी) – जाड़े का मौसम, Lanu (लानू) – युवती, Biahthu (बिअथू) – वाक्य , Luaithli (लुआईथ्ली) – आँसू, आदि। ऐसे काव्यात्मक शब्दों के अर्थ संदर्भ के साथ ही स्पष्ट होते हैं। ऐसे शब्दों का सही-सही अनुवाद अपने-आप में एक चुनौती है।

तीसरे अध्याय का दूसरा उप-अध्याय 'सांस्कृतिक भिन्नता: रचना की संवेदना के अनुवाद की समस्या' है। इसके अंतर्गत मिज़ो–हिंदी समाज की भिन्न-भिन्न सांस्कृतिक संरचना के कारण रचना की संवेदना के अनुवाद की समस्याओं को विवेचित किया गया है। मिज़ो एक जनजातीय समाज है। उनका अपना इतिहास, संस्कृति, रीति-रिवाज, लोककथाएँ, विश्वास और सामाजिक प्रथाएँ हैं। मिज़ो साहित्यिक रचनाओं में उनके अपने सांस्कृतिक प्रतीकों की छवि दिखाई देती है। परंतु हिन्दी में अनुवाद करने पर इन सांस्कृतिक प्रतीकों का मूल भाव कई बार लुप्त-सा हो जाता है।

हर भाषा अपनी संस्कृति से जुड़ी होती है। मिज़ो भाषा में भी कई ऐसे शब्द हैं जो वहाँ के भूगोल, संस्कृति तथा सामाजिकता के साथ जुड़े होते हैं। इन स्थानीय एवं सांस्कृतिक शब्दों के लिए हिन्दी में कोई सटीक शब्द नहीं होता जिसके कारण हिन्दी में अनुवाद करते समय कठिनाई उत्पन्न

होता है। हिन्दी में अनुवाद करते समय इन मिज़ो शब्दों का हिन्दी में उससे मिलते-जुलते पर्याय शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है और कहीं मूल मिज़ो शब्दों का लिप्यंतरण कर उन्हें अलग से संदर्भ के साथ स्पष्ट करना पड़ता है। परंतु इसके बावजूद, की बार वे मिज़ो संस्कृति के मूल भाव को व्यक्त नहीं कर पाते। उदाहरण के लिए - पारंपरिक मिज़ो संस्कृति में 'Nula rim' (नुला रीम) प्रचलित है। 'नुला' का अर्थ है – युवती और 'रीम' का अर्थ है – प्रणय करना। यह मिज़ो समाज में प्रेमालाप का एक पारंपरिक रूप है। पारंपरिक मिज़ो रीति-रिवाज के अनुसार, जब युवक रात में अपनी पसंदीदा युवती से मिलने उसके घर जाते है, उसे मिज़ो में 'नुला रीम' कहा जाता है। हिन्दी में 'नुला रीम' शब्द का कोई समानार्थी या पर्याय नहीं है और न ही इस तरह की संस्कृति है। ऐसी स्थिति में 'नुला रीम' जैसे शब्द का उसके भीतर मौजूद पूरे सांस्कृतिक संदर्भ को अनूदित कर पाना मुश्किल काम होता है।

उपन्यास में स्थानीय शब्द जैसे – Leikapui (लेईकापुई), Tapchhak zawl (तपछक ज़ोल) आदि का प्रयोग किया गया है, जिनका हिन्दी में अनुवाद नहीं किया जा सकता। पारंपरिक मिज़ो घरों को अलग तरीके से बनाया जाता था। उन्हें ज़मीन से तीन-चार फुट ऊपर बनाया जाता था तथा घरों की दीवारों को लकड़ी, फर्श को बाँस की चटाई और छत को घास-फूस से बनाया जाता था। पारंपरिक मिज़ो लोगों के घर के हर हिस्से का अपना नाम होता है । पारंपरिक मिज़ो घरों के मुख्य द्वार पर लकड़ी के लट्ठों पर बाँस की चटाई डालकर बनाये गये चबूतरे को 'लेईका' कहते हैं और घरों के मुख्य द्वार के सामने अलग से लकड़ी के लट्ठों पर बाँस की चटाई डालकर बनाये गये चबूतरे को 'लेईकापुई' कहा जाता है। वैसे ही पारंपरिक मिज़ो घरों में कमरे की एक दीवार से सटी हुई जगह जहाँ आग जलाकर भोजन पकाया जाता है, उसे 'तपछक ज़ोल' कहा जाता है। हिन्दी में ऐसे शब्द नहीं हैं जो उपर्युक्त शब्दों के अर्थ से पूरी तरह मेल खा सकें। इसलिए, उपन्यास में पारंपरिक मिज़ो संस्कृति के आस्वाद को सुरक्षित रखने के लिए, अनुवाद करते समय इस शब्दों का केवल लिप्यंतरण किया गया है और अलग से उन्हें स्पष्ट कर दिया गया है।

मिज़ो संस्कृति में एक विवाहित या बुज़ुर्ग के लिए ‘Pu’ और ‘Pi’ जैसे आदरसूचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। पुरुषों के लिए ‘Pu’ (पु) और महिलाओं के लिए ‘Pi’ (पी) का प्रयोग किया जाता है। उनके नाम से पहले इन आदरसूचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है या नाम पुकारे बिना उन्हें ‘क पी’, ‘क पु’ कहकर संबोधित किया जाता है। इन आदरसूचक शब्दों के लिए हिन्दी में निकटतम पर्याय शब्द श्री और श्रीमती या महाशय/महाशया का प्रयोग किया जा सकता है लेकिन इससे स्थानीय शब्दों में निहित मिज़ो संस्कृति का मूल भाव लुप्त हो जाता है। इसलिए हिन्दी में अनुवाद करते समय इन मूल शब्दों का ही लिप्यंतरण किया गया है।

उपन्यास में पारंपरिक मिज़ो संस्कृति से जुड़े शब्द ‘Hla do chham’ (ह्ला दोउ छम) का प्रयोग किया गया है। प्रारम्भिक मिज़ो समाज में, छोटे से लेकर बड़े शिकार तक, जंगली जानवरों का शिकार किया जाता था। शिकार मांस का एक प्रमुख स्रोत था। पारंपरिक मिज़ो समाज सफल शिकारियों का सम्मान करता था तथा लड़कों को कुशल शिकारी बनने का आशीर्वाद भी दिया जाता था। गीतों के माध्यम से गाँव के सभी लोग शिकारियों की सफलता का जश्न मनाया करते थे। इस प्रकार पारंपरिक मिज़ो संस्कृति में शिकार/शिकारी का महत्त्वपूर्ण स्थान था। जब एक शिकारी को शिकार में सफलता प्राप्त होती है, तब गाँव के लोगों को सूचित करने के लिए एक जोरदार आवाज़ में वह अपनी जीत की घोषणा करता है, जिसे ‘ह्ला दोउ छम’ कहा जाता है। अपनी सफलता का ऐलान करने के लिए वह किसी भी समय और स्थान पर ‘ह्ला दोउ छम’ कर सकता है। ऐसे सांस्कृतिक शब्दों का हिन्दी में अनुवाद करना मुश्किल है। अतः ऐसे शब्दों को मूल रूप में ही लिखते हुए अलग से उसके सांस्कृतिक संदर्भ का स्पष्टीकरण कर दिया गया है।

मुहावरे और लोकोक्तियाँ भाषा की सांस्कृतिक आत्मा होती हैं। मिज़ो भाषा में प्रयुक्त बहुत से ऐसे मुहावरे और ऐसी कहावतें भी हैं जो मिज़ो समाज की जीवनशैली, नैतिकता, संस्कृति और सामुदायिक सोच से जुड़ी हैं। मिज़ो और हिन्दी भाषा की सांस्कृतिक भिन्नता के कारण हिन्दी में इसका समानार्थी मुहावरा नहीं मिलता है। जैसे - मिज़ो की एक प्रचलित कहावत - ‘Mahni tan a

Chakai Khawrh' (महनी ताना चकआई खोरः) का शाब्दिक हिन्दी अनुवाद हो सकता है 'अपने लिए केकड़ा पकड़ना'। इस कहावत का अर्थ है – **अपनी भलाई के लिए काम करना।** पारंपरिक मिज़ो समाज जब एक समूह केकड़ा पकड़ने जाता तो हर व्यक्ति सिर्फ अपने लिए केकड़ा पकड़ता है, और उसे अपने साथ चलने वालों से भी बाँटा नहीं जाता। इस तरह यह कहावत मिज़ो समाज में अपने लिए कड़ी मेहनत करने जैसी सीख देने का काम करता है।

मिज़ो संस्कृति के साथ 'त्लोमङाइह्ना' (Tlawmngaihna) का भाव जुड़ा हुआ है। हिन्दी में इसके निकटतम पर्याय के लिए 'परोपकार' का प्रयोग किया जा सकता है। मिज़ो संस्कृति में अपनी चिंता किये बिना निःस्वार्थ भाव से दूसरों की मदद करना, दूसरों के सुख-दुख में साथ देना, केवल अपने पहचान के लोगों की ही की नहीं बल्कि किसी अनजान की भी मदद करना जैसी परंपरा पूर्वजों से ही चलती आ रही है और इसे महत्त्व दिया जाता है। एक मिज़ो कहावत - 'Thian chhan thih ngam' (ठीआन छन थिह ङम) भी इसी भाव के साथ जुड़ा हुआ है। इसका अर्थ है - 'दोस्त को बचाने के लिए अपनी जान देना'। मिज़ो संस्कृति में जान-पहचान के लोगों की ही नहीं परंतु किसी पराए की मदद के लिए भी अपना सब कुछ न्योछावर करना, अपनी जान तक दे देने जैसा भाव इस कहावत में छिपा हुआ है। इस तरह हिन्दी शब्द 'परोपकार' मिज़ो संस्कृति से जुड़े 'त्लोमङाइह्ना' (Tlawmngaihna) के पीछे छिपे गहरे सांस्कृतिक अर्थ/ भाव को पूरी तरह स्पष्ट नहीं कर पाता और सम्पूर्ण सांस्कृतिक भाव को स्पष्ट करने वाला शब्द हिन्दी में नहीं मिलता है।

शोध प्रबंध का पंचम अध्याय **'उपन्यास का विश्लेषण'** है। इस अध्याय के अंतर्गत पाँच उप-अध्याय रखे गए हैं। इस अध्याय का पहला उप-अध्याय **'मिज़ो विद्रोह के प्रति विद्रोहियों और सामान्य जनता का नजरिया'** है। इसमें अपने (मिज़ो) राज्य की स्वतंत्रता के लिए भारतीय सेना से लड़ने वाली मिज़ो भूमिगत सेना के विद्रोह और इस विद्रोह में पिसने वाली सामान्य मिज़ो जनता के संघर्षों की औपन्यासिक अभिव्यक्ति का विश्लेषण किया गया है। साथ ही विद्रोह के प्रति विद्रोहियों एवं आम मिज़ो जनता के दृष्टिकोण को समझने का प्रयास भी किया गया है। भारतीय सेना

का डर मिज़ो लोगों का एकमात्र भयानक अनुभव नहीं था। मिज़ो भूमिगत विद्रोहियों की कार्रवाइयों ने लोगों के बीच वॉलन्टियरों के प्रति भय पैदा किया। विद्रोह के दौरान ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों को भूमिगत विद्रोहियों द्वारा दी गयी यातना भारतीय सेना द्वारा दी गयी यातना से भी बढ़कर थी।

ईस्ट लुङदार गाँव एम.एन.एफ. का सबसे बड़ा मुख्यालय, 31वीं डिवीजन का मुख्यालय था। 15 नवम्बर, 1966 को देर रात करीब 2 बजे पु ललदेङा के आदेशानुसार कुछ मिज़ो विद्रोहियों ने उसी दिन चमफाई से ईस्ट लुङदार गाँव में आयी भारतीय सेना पर गोलीबारी शुरू कर दी। मिज़ो विद्रोहियों का मानना था कि उनसे कम संख्या वाली भारतीय सेना को वे हरा देंगे, क्योंकि अभी उनके पास कोई सुरक्षित जगह नहीं थी। मिज़ो सेना के वरिष्ठ अधिकारियों की बैठक 16 नवम्बर, 1966 को साईलुलाक गाँव में होने वाली थी, जिसमें ललदेङा भी शामिल होने वाले थे। ईस्ट लुङदार गाँव में भारतीय सेना के आने की खबर मिज़ो विद्रोहियों को मिली थी। इसलिए ललदेङा ने भारतीय सेना पर गोलीबारी करने का आदेश दिया था। उन्होंने उस समय चैन की नींद सोने वाले गाँव वालों की परवाह किये बिना देर रात 2 बजे से भोर तक गोलीबारी जारी रखी।[16]

इस ऐतिहासिक घटना का वर्णन उपन्यास में लेखिका द्वारा किया गया है:

"अन्य रातों की तरह 15 नवम्बर की रात भी वे एक अच्छा सपना देखने की उम्मीद में सोने चले गए। पूरा गाँव शांत था।...अपने प्यार के कारण चिंतित मन से उसने गहरी साँस ली और तभी दारपुई को धमाके की आवाज सुनाई पड़ी।...अब थोड़ी-थोड़ी देर में ही विस्फोट की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी। निःसंदेह यह गोली चलने की आवाज थी। रोउछुआहआ ने तुरंत ही यह अनुमान लगा लिया कि यह ज़रूर भारतीय सेना के खिलाफ ह्नम सिपई की गोलीबारी की आवाज़ है।...लेकिन, समय बीतने के साथ-साथ गोलीबारी की आवाज गाँव के अंदर से आने लगी।"[17]

मिज़ोरम की स्वतंत्रता की घोषणा का सामान्य मिज़ो लोगों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा था। मिज़ो विद्रोहियों और भारतीय सेना के बीच की इस गोलीबारी में कुछ गाँववालों ने अपनी जान

गंवा दी तथा गोलीबारी के बाद गाँव से भागने में असमर्थ लोगों को भारतीय सेना द्वारा पकड़ लिया गया। ईस्ट लुङदार गाँव के हेडमास्टर (सेवानिवृत) पु शाङह्लेईआ ने अपने लेख में यह भी लिखा है कि इस संघर्ष में लोग न केवल भारतीय सेना के हाथों मारे गए, बल्कि कुछ ऐसे भी थे जो मिज़ो वॉलन्टियरों के हाथों भी मारे गए थे।[18]

मिज़ो विद्रोहियों को स्थानीय मिज़ो लोगों से अलग करने के लिए भारतीय सेना ने गाँववालों को समूहबद्ध करने का तरीका अपनाया जिसे मिज़ो में 'खोखोम' अर्थात् 'गाँवों का समूहीकरण' कहा गया। हजारों गाँव वालों को संरक्षित बस्तियों (गाँवों का समूह) में जबरन बसाया गया। भारतीय सेना की इन कार्रवाइयों का उद्देश्य था - एम.एन.एफ. का जन समर्थन खत्म करना। लेकिन इससे स्थानीय मिज़ो लोगों को भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, क्योंकि उन्होंने अपने घर और अपनी आजीविका खो दी थी।

उपन्यास की लेखिका माफेली ने उपन्यास में चित्रित किया है कि गाँव के समूहीकरण ने मिज़ो जनता तथा पूरे मिज़ो समाज के मानस को किस तरह प्रभावित किया और विभिन्न गाँवों के लोगों के अलग-अलग समूह बनाकर उन्हें किसी गाँव के ग्रूपिंग सेंटर में एक साथ रखने की प्रक्रिया ने किस प्रकार मिज़ो समाज की एकता को छिन्न-भिन्न कर दिया। भारतीय सेना द्वारा कर्फ्यू लागू किया गया और निगरानी व कर्फ्यू जैसे प्रतिबंधों के कारण मिज़ो लोगों को सीमित समय के लिए ही झूम में काम करने की इजाज़त दी जाती।

भारतीय सेना और भूमिगत विद्रोहियों की ताकत के डर के अलावा सामान्य जनता के बीच 'कोकतू' की मौजूदगी के कारण लोगों की स्थिति दयनीय होती थी। मिज़ो विद्रोह के समय गाँव के कुछ पुरुष भारतीय सेना के पक्ष में रहने के लिए उनके लिए 'कोकतू' बन जाते थे। 'कोकतू' का अर्थ है मुखबिर या सूचना देने वाला। ये लोग एक ही समुदाय के थे और इसका नतीजा यह हुआ कि समुदाय के भीतर संदेह की स्थिति पैदा हो गयी। 'कोकतू' के इशारे पर लोगों को केवल संदेह के आधार पर ही गिरफ्तार कर लिया जाता था, उन्हें कैद करके पीटा जाता था, और कभी-कभार उन्हें

मार भी दिया जाता था। चूँकि 'कोकतू' की असली पहचान को हमेशा गुप्त रखा जाता था, उनके बारे में केवल गपशप के अलावा उनकी असली पहचान का पता नहीं लगाया जा सकता था, इसलिए सभी अपने कारीबियों तक से सावधान रहा करते थे। पूरा समुदाय 'कोकतू' से डरता था।

दो दशकों तक चलने वाले मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो लोगों को केवल भारतीय सेना का भय नहीं था, बल्कि भूमिगत मिज़ो सेना की धमकियों और कई तरह की कार्रवाइयों ने लोगों के बीच उनके प्रति भी भय पैदा किया। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में ईस्ट लुङदार गाँव के निवासियों पर भारतीय सेना द्वारा की गयी ज़्यादतियों के साथ-साथ भूमिगत मिज़ो सेना द्वारा किये गए अत्याचारों को भी चित्रित किया गया है। ईस्ट लुङदार गाँव दो विरोधी ताकतों के बीच लड़ाई का केंद्र बना, जिसमें कुछ लोगों ने अपनी जान गँवा दी, पलक झपकते ही वह गाँव जलकर राख हो गया और जलाने वाले का कभी पता नहीं चला। भयभीत गाँव वाले जैसे-तैसे, कई तो अर्ध-नग्न हालत में ही जंगल की ओर भाग गए।

पाँचवें अध्याय का दूसरा उप-अध्याय **'विद्रोह और मिज़ो स्त्री का संघर्ष'** है, जिसमें मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो स्त्रियों की स्थिति और उनके संघर्षों को विवेचित किया गया है। स्वाभाविक रूप से किसी भी विद्रोह के सर्वाधिक पीड़ादायक परिणाम महिलाओं पर शारीरिक एवं मानसिक शोषण के रूप में देखे जाते हैं। मिज़ो विद्रोह के दौरान भी मिज़ो महिलाएँ सर्वाधिक असुरक्षित थीं। वे एक तरफ भारतीय सेना और दूसरी तरफ एम.एन.एफ. के डर के बीच जी रही थीं। उपन्यास में लेखिका ने ठुआमखूमी और कापमोई जैसी स्त्री पात्रों के माध्यम से इसे प्रस्तुत किया है। भारतीय सरकार ने भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों और सामान्य जनता को अलग-थलग करने के लिए ग्राम समूहीकरण जैसी नीति को अपनाया। इस नीति के कारण भूमिगत मिज़ो विद्रोही आजादी से गाँव में घुस नहीं सकते थे। परिणामस्वरूप उन्हें भोजन और अन्य जरूरतों की आपूर्ति के लिए गाँववालों की मदद लेनी पड़ती थी। इस उपन्यास में भी भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों द्वारा ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों से भोजन और अन्य ज़रूरी सामान पहुँचाने की माँग और माँग पूरी न करने पर उनके गाँव को जला देने

की धमकी का चित्रण किया गया है। उपन्यास में भूमिगत मिज़ो विद्रोहियों को भोजन और जरूरत के सामान पहुँचाने के लिए पाँच युवतियों को चुना जाता है क्योंकि महिलाओं पर प्रायः कम संदेह किया जाता है। बीच रास्ते में दो भारतीय सैनिक ड्यूटी पर तैनात थे। युवतियों ने ड्यूटी पर तैनात भारतीय सैनिकों से बहाना बनाया कि वे तुईखुर (जहाँ पहाड़ से रिस-रिस कर आ रहे पानी को इकट्ठा किया जाता है।) से पानी लाने जा रही हैं। उनके मना करने के बाद भी ड्यूटी पर तैनात दोनों भारतीय सैनिक उन युवतियों के साथ चलने लगे। इस प्रसंग में युवतियों के मन में चलने वाले उधेड़बुन से उनकी मानसिक दशा और उनके दोहरे शोषण का अंदाज़ा लगाया जा सकता है।

मिज़ो स्त्रियों खासकर युवतियों के लिए, मिज़ो विद्रोह के दौरान अपनी गरिमा की रक्षा करने और अपने देश तथा जाति के लिए सबसे उच्चतम कार्य था गैर मिज़ो के साथ संबंध न रखना। स्त्री के लिए अपने को इससे बचाए रखना सबसे बड़ी चुनौती थी। परंतु मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो स्त्रियों के बीच ही ईर्ष्या उत्पन्न हो गयी और और झूठे दोषारोपण होने लगे। ऐसे ही 'ङहिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की नायिका दारपुई पर भी गलत तरीके से भारतीय सेना के प्रमुख के साथ संबंध रखने का आरोप लगाया गया था। उस दौरान यह माना जाता था कि जो स्त्री भारतीय सेना के साथ संबंध रखती थी, वह देशद्रोही है। ऐसी स्त्रियों को समाज द्वारा निंदित और तिरस्कृत किया जाता था। उन झूठे आरोपों के कारण दारपुई के मन को बहुत दुःख पहुँचा और उसे दर्द महसूस हुआ। यहाँ तक कि पूरे गाँव में इस झूठे आरोप के फैलने के बाद उसने घर से बाहर निकलना भी बंद कर दिया था। उसकी पवित्रता पर उँगली उठाया जाना उसके लिए गहरा सदमा था। इस तरह इस झूठे आरोप के कारण दारपुई को गहरे भावनात्मक संकट का सामना करना पड़ा।

पाँचवें अध्याय का तीसरा उप-अध्याय **'मिज़ो विद्रोह और भारतीय सेना'** है। इसके अंतर्गत मिज़ो विद्रोह के प्रति भारतीय सेना के नजरिए और उनकी कार्रवाईयों का विश्लेषण किया गया है। सी. जामा ने अपनी किताब Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986) में उल्लेख किया है कि एक दुर्लभ और विवादास्पद कदम के रूप में भारतीय सरकार के आदेश से भारतीय वायु सेना ने विद्रोहियों के गढ़ों को नष्ट करने के लिए लड़ाकू

विमानों का उपयोग किया और आइज़ोल पर बमबारी की।[19] इस बमबारी से मिज़ो लोगों में व्यापक रूप से गुस्सा फैल गया और एम.एन.एफ. की आज़ादी की कहानी को बल मिला और इसे भारतीय सेना की क्रूर और असंगत कार्रवाई के रूप में देखा गया।

भारतीय सरकार और सेना के कई आदेशों के बावजूद मिज़ो विद्रोह के शुरुआती दौर में मिज़ो विद्रोहियों को अधिकतर सामान्य मिज़ो लोगों का समर्थन प्राप्त था, साथ ही वे यह जानते थे कि वे उनकी ही स्वतंत्रता के लिए लड़ रहे हैं, इसलिए विद्रोहियों को गाँवों में सुरक्षा मिल रही थी। कई छोटे-छोटे गाँवों पर उनका नियंत्रण था, जहाँ से वे भारतीय सैनिकों पर हमला करते थे और उसके बाद गाँववालों के बीच विलीन हो जाते थे। इसलिए विद्रोहियों को स्थानीय मिज़ो लोगों से अलग करने के लिए भारतीय सरकार ने 'खोखोम' अर्थात् गाँव समूहीकरण की नीति अपनायी। इस नीति को भारतीय सेना द्वारा 1967 से 1970 तक चलाया गया था। इस नीति के अनुसार कई गाँवों को ग्रूपिंग सेंटर बनाया गया जिन्हें भारतीय सेना के नियंत्रण में रखा गया। उपन्यास में इसका ज़िक्र कई स्थानों पर हुआ है। यह भारतीय सेना द्वारा की गई भयावह सैन्य कार्रवाइयों में से एक थी। 'गाँव समूहीकरण' को 'ऑपरेशन एकम्प्लिशमेंट' नाम दिया गया। ग्रूपिंग सेंटर खुली जेल की तरह थे। भारतीय सेना द्वारा लगभग चौबीस घंटा कर्फ़्यू लागू किया जाता था। भारतीय सेना ने घेराबंदी और तलाशी जैसे अभियानों का भी प्रयोग किया। वे कुछ मिज़ो नागरिकों को अपने पक्ष में करते और उन्हें 'कोकतू' (मुखबिर) बना देते ताकि उनका उपयोग उन वॉलन्टियरों की पहचान करने के लिए किया जा सके जो सामान्य जनता के बीच घुले-मिले हुए थे।

भारतीय सेना ने वॉलन्टियरों को सरेंडर करने के लिए मजबूर करने के लिए दबाव और प्रोत्साहन जैसी रणनीति को भी अपनाया। जैसे-जैसे भारतीय सेना ने गाँववालों पर दबाव डाला, वे विद्रोह में शामिल न होने के बावजूद सरेंडर कर देते थे। जब भी भारतीय सेना को गाँव में वॉलन्टियरों की मौजूदगी की भनक पड़ती, वे सरेंडर करने के लिए आदेश देते और सरेंडर न करने पर धमकी दी जाती कि इसका अंजाम पूरे गाँव को भुगतना पड़ेगा। भारतीय सेना की जबरन सरेंडर की माँग एक कठोर रणनीति का हिस्सा थी। सरेंडर करने वालों को कठोर दंड भी दिया जाता था। सरेंडर करने वाले

से पूछताछ के साथ उन्हें प्रताड़ित किया जाता था। माफेली के 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में भी ईस्ट लुङदार गाँव को भारतीय सेना के हाथों कई कष्ट सहने पड़े। अपने गाँव को भारतीय सेना की यातनाओं से बचाने के लिए कई युवक-युवतियों ने मजबूरी में भारतीय सेना के सामने सरेंडर किया। जब भी एम.एन.एफ. वाले घात लगाते, भारतीय सेना ईस्ट लुङदार गाँव के सरेंडर करने वालों को स्कूल या मैदान में बुलाकर उनसे पूछताछ करती और उनपर अत्याचार करती।

भारतीय सेना के उपायों जैसे गाँव समूहीकरण और आइज़ोल बमबारी ने मिज़ो विद्रोह की विरोधी गतिविधियों की जटिलताओं को प्रदर्शित किया। उनके घेराबंदी और तलाशी जैसे अभियान एम.एन.एफ. को दबाने में प्रभावी साबित हुए लेकिन इसके गंभीर अनपेक्षित परिणाम भी हुए। इन अभियानों के द्वारा मिज़ो विद्रोहियों के संचार नेटवर्क को कमजोर किया गया परंतु सामान्य मिज़ो जनता के भीतर भारत विरोधी भावना को बढ़ावा मिला। इसके साथ ही भारतीय सेना द्वारा जबरन सरेंडर की माँग और उनके द्वारा दी जाने वाली सज़ा और अत्याचार अक्सर कठोर और अंधाधुंध थी, जिसके कारण मिज़ो विद्रोह और भी बदतर हो जाता था। उनके अत्याचारों से कुछ लोगों को आजीवन अपाहिज होने के साथ-साथ कलंक का सामना करना पड़ा। भारतीय सेना की इन सब कार्रवाइयों ने मिज़ो लोगों के भीतर भारी पीड़ा और अलगाव की भावना को पैदा किया। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में लेखिका माफेली ने ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों के ऊपर भारतीय सेना की ऐसी क्रूर कार्रवाइयों का चित्रण किया है।

पाँचवें अध्याय का चौथा उप-अध्याय **'उपन्यास का कला-पक्ष'** है, जिसके अंतर्गत मूल मिज़ो उपन्यास के कथा-शिल्प और भाषिक विशिष्टताओं का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास की भाषा सरल एवं सहज है। इस उपन्यास में मिज़ो लोगों में प्रचलित कुछ हिन्दी शब्दों और कई अंग्रेजी शब्दों का प्रचुरता के साथ प्रयोग किया गया है। साथ ही, लेखिका ने प्रसंग के अनुसार मिज़ो समाज के प्रसिद्ध मुहावरों और लोकोक्तियों का भी प्रयोग किया है। कुछ उदाहरण देखे जा सकते हैं:

हिंदी के शब्द : सिपई (सिपाही), सोरकार (सरकार), बारिक, आटा (आटा)

अंग्रेजी के शब्द : इंडिपेंडेंट, वॉलन्टियर, कर्फ्यू, सरेंडर, रिपोर्ट, हेडकॉर्टर, पार्लियामेंट, बॉम्ब आदि। प्रसिद्ध मिज़ो मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग लेखिका ने अपने लेखन को अधिक रोचक बनाने के लिए और प्रसंगों के सही अर्थ और स्थिति को चित्रित करने के लिए किया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं:

1) Tuboh leh Dolung inkara tlazep (तुबोउह लेह दोउलुङ इनकारा त्लाज़ेप)

अर्थात् हथौड़े और निहाई के बीच पिसना। इस मुहावरे का प्रयोग खासकर मिज़ो विद्रोह के दौरान विद्रोहियों और सेना के बीच पिस रहे गाँव के लोगों की स्थिति के लिए किया जाता है। हिन्दी में इसका समानार्थी मुहावरा ‘दो पाटों के बीच पिसना’ हो सकता है।

2) Zawnga tuar ai ngau in a tuar (ज़ोङआ तुअर आई ङाउ इन अ तुअर)
अर्थात् दूसरों के बदले कष्ट सहना।

3) Mahni tana chakai khawrh (मा:नी ताना चकआई खोरः)
अर्थात् अपने लिए काम करना या अपने ही प्रयासों का परिणाम स्वयं को मिलना।

4) Thian chhan thih ngam (ठीआन छन थिह ङम)
अर्थात् दोस्त या किसी को बचाने के लिए अपनी जान देना।

‘ङ्हिल्ह हर कन तुआर’ उपन्यास में पूर्वदीप्ति शैली, वर्णनात्मक शैली, संवाद शैली तथा काव्यात्मक शैली जैसी विभिन्न प्रकार की शैलियों का प्रचुरता के साथ प्रयोग किया गया है। पूर्वदीप्ति शैली के माध्यम से लेखक अतीत की घटनाओं का उल्लेख किसी वर्तमान पात्र की स्मृति के माध्यम से करता है। यह उपन्यास 1966 से 1986 के बीच के मिज़ो विद्रोह पर केंद्रित है। लगभग सम्पूर्ण उपन्यास को लिखने में लेखिका ने पूर्वदीप्ति शैली का प्रयोग किया है। लेखिका माफेली ने पु रोउछुआहा की स्मृति के माध्यम से उपन्यास की कथावस्तु को प्रस्तुत किया है।

वर्णनात्मक शैली के माध्यम से किसी व्यक्ति, स्थान और घटना का वर्णन किया जाता है। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में भी वर्णनात्मक शैली देखने को मिलती है। 16 नवम्बर, 1966 को साईलुलाक गाँव में मिज़ो सेना के वरिष्ठ अधिकारियों की बैठक होने वाली थी जिसमें ललदेङा भी शामिल होने वाला था। मिज़ो विद्रोहियों को ईस्ट लुङदार गाँव में भारतीय सेना के आने की खबर भी थी। इसलिए ललदेङा ने भारतीय सेना पर गोलीबारी करने का आदेश दिया था। उन्होंने उस समय चैन की नींद सोने वाले गाँववालों की परवाह किये बिना सुबह के 2 बजे से भोर तक गोलीबारी जारी रखी।[20] इस ऐतिहासिक तथ्य का वर्णन करते हुए लेखिका ने उपन्यास में ईस्ट लुङदार गाँव के रात्रि दृश्य का वर्णन किया -*"अन्य रातों की तरह 15 नवम्बर की रात भी वे एक अच्छा सपना देखने की उम्मीद में सोने चले गए। पूरा गाँव शांत था।... अपने प्यार के कारण चिंतित मन से उसने गहरी सांस ली और तभी दारपुई को धमाके की आवाज सुनाई पड़ी।... अब थोड़ी-थोड़ी देर में ही विस्फोट की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी। निःसंदेह यह गोली चलने की आवाज थी। रोउछुआहा ने तुरंत ही यह अनुमान लगा लिया कि यह ज़रूर भारतीय सेना के खिलाफ ह्रम सिपई की गोलीबारी की आवाज़ है।... लेकिन, समय बीतने के साथ-साथ गोलीबारी की आवाज गाँव के अंदर से आने लगी।"*[21]

उपन्यास में कई प्रसंगों में विभिन्न पात्रों के बीच संवाद दिखाते हुए लेखिका ने कथा की संवाद शैली का भी प्रयोग किया है। इसके साथ ही संवेदनाओं को सघन बनाने के लिए बीच-बीच में गीतों व कविताओं को भी रखा गया है जिससे उपन्यास में कुछ हद तक काव्यात्मकता का भी समावेश हो पाया है।

पाँचवें अध्याय का पाँचवाँ उप-अध्याय **'अन्य विविध-पक्ष'** है, जिसमें अनूदित उपन्यास में अभिव्यक्त अन्य पक्षों का अध्ययन-विश्लेषण किया गया है। चोरी का जन्म, मिज़ो लोगों के बीच प्रतिशोध, मिज़ो समाज में विधवा और गरीब की स्थिति, मिज़ो समाज पर इसाईयत का प्रभाव आदि। इस उप-अध्याय के अंतर्गत अनूदित उपन्यास के माध्यम से मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ो समाज के कुछ अन्य पक्षों और समस्याओं का विश्लेषण किया गया है।

अपने पूर्वजों के समय से मिज़ो जनजाति अपने दरवाजे को बंद करने के लिए केवल एक मोटी-सी लकड़ी का प्रयोग करती आ रही थी, जिसे उनके ईमानदार व्यवहार का प्रतीक माना जा सकता है। लेकिन मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना द्वारा गाँव समूहीकरण जैसे उपायों को अपनाकर अलग-अलग गाँव के लोगों को एक साथ रखा गया, अलग-अलग सोच-विचार उत्पन्न हुए और इस बीच लगातार कर्फ्यू लागू करने के कारण अपने आस-पड़ोस के साथ भी जान-पहचान बनाना मुश्किल हो गया। एक-दूसरे से अपनी जरूरत की वस्तुएँ मांगने में कठिनाई होना अनिवार्य था। इसके चलते सदियों पुरानी मिज़ो ईमानदारी की जगह मिज़ो समाज में बेईमानी और चोरी जैसी बुराइयों का जन्म हुआ। इस तरह ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों के माध्यम से इस उपन्यास में लेखिका दिखाने का प्रयास करती हैं कि किस तरह मिज़ो विद्रोह और सैन्य कार्रवाई के कारण अव्यवस्था और स्वार्थ ने मिज़ो समाज में अपनी जगह बना ली।

मिज़ो विद्रोह के दौरान नागरिकों के बीच विश्वासघात और संघर्ष बढ़ने लगा। व्यक्तिगत संघर्ष अक्सर विश्वासघात और हत्याओं में बदल जाते थे। मिज़ो विद्रोह ने व्यक्तिगत दुश्मनी का बदला लेने का मौका भी लोगों को दिया। जिन लोगों के अपने ही कुछ लोगों के साथ संबंध खराब थे, उन्होंने अपना बदला लेने के लिए भी विद्रोह का सहारा लिया। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में तुआलते गाँव के त्लाङचुआना नामक युवक की हत्या के ज़रिए इस प्रकार के प्रतिशोध का चित्रण किया गया है।

मिज़ो समाज मुख्य रूप से झूम खेती पर निर्भर था। लोग अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए कृषि उपज, पशुधन और वन उत्पादों से आदान-प्रदान करने, जंगलों से सामान इकट्ठा करने, बांस की टहनियाँ इकट्ठा करने आदि पर निर्भर थे। चूँकि अधिकतर मिज़ो कृषि पर निर्भर थे, उनके पास वैकल्पिक स्रोत कम होते थे। अच्छी ज़मीन और मजबूत सामुदायिक समर्थन के बिना लोगों का जीवन संघर्षपूर्ण बन जाता था। खास तौर पर विधवा स्त्रियों को अक्सर अपनी आजीविका के लिए

संघर्ष करना पड़ता था। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में लेखिका माफेली ने पी शाङलोमी और उसके परिवार के माध्यम से मिज़ो समाज में विधवा और गरीबों की स्थिति का चित्रण किया है।

19वीं सदी के अंत में वेल्श मिशनरियों द्वारा ईसाई धर्म की शुरुआत के बाद से मिज़ो समाज पर ईसाई धर्म का गहरा प्रभाव पड़ा। ईसाई धर्म ने सामाजिक एकता, प्रगति और शैक्षिक उन्नति लाने के साथ-साथ राजनीति और संस्कृति को भी प्रभावित किया। 1966 से 1986 के बीच चले मिज़ो विद्रोह के दौरान ईसाई धर्म ने मिज़ो समाज में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। विद्रोह के बीच भी भारतीय सेना द्वारा कर्फ्यू ढीली होने पर चर्च ने विद्रोह की कठिनाइयों के बावजूद धार्मिक सेवाएँ और चर्च सभाएँ आयोजित करना जारी रखा। विद्रोह के कारण मिज़ो लोगों में व्यापक रूप से भय, पीड़ा और विस्थापन की स्थिति पैदा हुई। इस उथल-पुथल, हिंसा और अस्थिरता से पीड़ित मिज़ो लोगों को आराम, उम्मीद और स्थिरता प्रदान करने में चर्च ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास में इससे जुड़े कुछ प्रसंगों का चित्रण किया गया है।

'उपसंहार' के अंतर्गत शोध के निष्कर्षों को प्रस्तुत किया गया है। यह कहा जा सकता है कि लेखिका ने इस उपन्यास में ऐतिहासिक घटनाओं के साथ साहित्यिक कल्पना का सहारा लेते हुए मिज़ो विद्रोह की अवधि के दौरान मिज़ो लोगों की पीड़ा और संघर्ष को केन्द्रीय विषय बनाया है। इस उपन्यास में मिज़ो विद्रोह के दौरान मिज़ोरम के ईस्ट लुङदार गाँव के माध्यम से भारतीय सेना और भूमिगत मिज़ो सेना, दोनों के हमलों के बीच फँसे आम मिज़ो लोगों की असह्य पीड़ा को तथ्यपरक एवं जीवंत रूप से चित्रित करने का प्रयास किया गया है। 'ङ्हिल्ह हर कन तुआर' उपन्यास एम.एन.एफ. या भारतीय सरकार की राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं के बजाय इस संघर्ष के मानवीय पहलुओं पर केंद्रित है। इस उपन्यास में मिज़ो विद्रोह के बीच पिसती आम जनता की स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है। निश्चय ही मिज़ो विद्रोह की पृष्ठभूमि में लिखा गया यह एक महत्त्वपूर्ण मिज़ो उपन्यास है। उम्मीद है इस उपन्यास के अनुवाद के माध्यम से हिन्दी समाज को मिज़ो विद्रोह के

स्वरूप, विद्रोह के दौरान आम जनमानस की स्थिति और विद्रोह के प्रति उनके नजरिए को समझने में सहूलियत होगी।

संदर्भ:

---

[1] Dr. K.C. Vannghaka, Literature Zungzam, Lois Bet Print & Publication, Aizawl, 2014, पृष्ठ सं.25 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[2] B. Lalthangliana, Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature, RTM Press, Aizawl, 1999, पृष्ठ सं. 181 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[3] Dr. K.C. Vannghaka, Literature Zungzam, pp.26 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)
"A kum leh 1937 khan LALI (Lalawmpuii) tih, thawnthu tawi (short story) chu a ziak a. Hei hi mizo novel pahnihnaa chhiar a ni."

[4] B. Lalthangliana, Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature, RTM Press, Chhinga Veng, 1999, pp.207 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)
"Sap ho chuan Samuel Richardson-a te, Henry Fielding a te, Lawrence Stern-a te leh Tobias Smollet-a chu "Novel Tawlailir ke pali (Four wheels of Novel) an ni e, an ti thin a."

[5] Margaret Ch. Zama & C. Lalawmpuia Vanchiau, After Decades of Silence, Voices from Mizoram, A brief Review of Mizo Literature, 2016, Centre for North East Studies and Policy Research, New Delhi, पृष्ठ सं. 57 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[6] C. Lalawmpuia Vanchiau, Rambuai Literature, Lengchhawn Press, Gilzom Offset, Electric Veng, 2014, पृष्ठ सं. 104 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[7] Mizo Studies, July – September 2020, Department of Mizo, Mizoram University, pp.354 (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)
"Within the realm of Mizo literature, the influence of Rambuai in fiction is much larger than that of poetry and drama. While the influence of Rambuai seems gradually diminished in the realm of poetry and drama, but its influence in fiction have been increasing till date since the first Rambuai fiction was published in 1976. So much so that Rambuai fiction may be considered as a sub-genre in Mizo literature; and the way the emergence and development of Rambuai fiction in Mizo literature can be divided into two aspects: Fictions

based on Rambuai that were written under Rambuai circumstance and fictions based on Rambuai that were written after the end of Rambuai"

[8] C. Lalawmpuia Vanchiau, Rambuai Literature, Lengchhawn Press, Gilzom Offset, Electric Veng, 2014, पृष्ठ सं. 87 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[9] वही, पृष्ठ सं. 131 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[10] Malsawmdawngliana & Rohmingmawii, Mizo Narratives: accounts from Mizoram, South Eastern Book Agencies, Guwahati, 2021, पृष्ठ सं.285 (अनुवाद मेरा)

[11] Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, J.P.Offset Printers, Aizawl,2014, पृष्ठ सं. 54, (मूल उद्धरण अंग्रेजी में, अनुवाद मेरा)

[12] Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, Dingdi Press, Aizawl, 2017, पृष्ठ सं.12 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[13] Malsawmdawngliana & Rohmingmawii, Mizo Narratives: accounts from Mizoram, South Eastern Book Agencies, Guwahati, 2021, पृष्ठ सं. 302(अनुवाद मेरा)

[14] Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, Dingdi Press, Aizawl, 2017, पृष्ठ सं.11 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

[15] R. Zamawia, Zofate Zinkawngah- Zalenna mei a mit tur a ni lo, Lengchhawn Press, Aizawl, 2007, पृ.177 (मूल संदर्भ मिज़ो में; अनुवाद हमारा)

[16] Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, MNF General Headquarters, Swapna Printing Works, Pvt. Ltd. Kolkata, 2017, पृ. 848, 899 (मूल संदर्भ मिज़ो में; अनुवाद हमारा)

[17] Mafeli, Nghilh har kan tuar, Samaritan Printers, Mission Veng, Aizawl, 2010, पृ.12,13*

[18] MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, Swapna Printing Works Pvt. Ltd., Kolkata, 2017, पृष्ठ सं. 902 (अनुवाद मेरा)

[19] C.Zama, Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986), Power Printers, New Delhi, पृष्ठ सं.32 (अनुवाद मेरा)

[20] MNF General Headquarters, Documentary of Mizoram War of Independence 1966 to 1986, Swapna Printing Works Pvt. Ltd., Kolkata, 2017, पृष्ठ सं.848 & 899 (अनुवाद मेरा)

[21] माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, आइज़ोल, 2010, पृष्ठ सं. 12 (मूल उद्धरण मिज़ो में, अनुवाद मेरा)

शोध-प्रबंध के महत्वपूर्ण निष्कर्ष:

1. हिन्दी और दुनिया की कई दूसरी भाषाओं में उपन्यास का उद्भव 18वीं-19वीं शताब्दी से माना जाता है, परंतु 1893 में मिज़ोरम में ईसाई मिशनरियों के आने और फिर उनके द्वारा मिज़ो भाषा के लिए लिपि तैयार करने के बाद ही मिज़ो साहित्य का लिखित रूप सामने आना शुरू हुआ। ऐसे में मिज़ो साहित्य की एक महत्वपूर्ण विधा 'उपन्यास' का जन्म 20वीं सदी में जाकर हुआ।
2. मिज़ो साहित्य में पारंपरिक मिज़ो उपन्यास का उद्देश्य है सामाजिक मूल्यों को पहचानना और बनाए रखना। इस दौर के लेखकों ने अपने उपन्यासों में 'त्लोमङाइह्ना' के दो अलग-अलग पक्षों को रेखांकित किया है- पहला मिज़ो त्लोमङाइह्ना, जो एक महत्वपूर्ण मिज़ो सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्य है और जिसका अर्थ है दूसरों की नि:स्वार्थ सेवा या परोपकार और दूसरा त्लोमङाइह्ना या भाईचारे की ईसाई अवधारणा।
3. भयानक रमबुआई (अशांति का काल) ने मिज़ो कथा साहित्य के अंतर्गत 'रमबुआई साहित्य' नामक एक नई साहित्यिक कोटि को जन्म दिया। रमबुआई साहित्य मिज़ो विद्रोह और उस अवधि के दौरान मिज़ोरम के अशांत माहौल को संबोधित करता है। रमबुआई साहित्य का मिज़ो साहित्य के इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण स्थान है।
4. मिज़ो साहित्य में रमबुआई से संबंधित उपन्यासों को दो आधारों पर विभाजित किया गया है– पहला रमबुआई के दौर में लिखे गए रमबुआई पर आधारित उपन्यास और दूसरा रमबुआई के बाद लिखे गए रमबुआई पर आधारित उपन्यास।
5. 1959 में पूरे मिज़ोरम में 'माउताम' नामक भीषण अकाल पड़ा। मिज़ो इसे 'माउताम ट्रामपुई' कहते हैं। 'माउताम' का अर्थ है 'बाँस के फूल का खिलना' और 'ट्रामपुई' का अर्थ है 'अकाल का कहर'। बाँस के इन फूलों और बीजों को खाने से चूहों की प्रजनन क्षमता बढ़ जाती है। परिणामतः चूहों की आबादी में भारी वृद्धि हो गई। ये असंख्य चूहे अनाज चट कर गये और फसलों को बर्बाद कर दिया। इससे मिज़ोरम में अकाल की स्थिति उत्पन्न हो गयी। अकाल अपने-

आप में विद्रोह का कारण नहीं था। मिज़ोरम तब असम राज्य का हिस्सा था। अकाल की इस त्रासद स्थिति में असम सरकार की उपेक्षा से मिज़ो लोगों के मन में असंतोष पैदा हुआ तथा उनके भीतर अलगाववादी भावनाएँ बढ़ने लगीं।

6. 1961 में जब 'माउताम' भीषण अकाल समाप्त हुआ, तब एम.एन.एफ.एफ. (मिज़ो नैशनल फेमाइन फ्रन्ट) के नेताओं ने मिज़ो लोगों में अलगाववादी भावना को और अधिक बढ़ावा देना शुरु किया, इसलिए इस उद्देश्य से एम.एन.एफ.एफ. का नाम बदलकर एम.एन.एफ. (मिज़ो नैशनल फ्रन्ट) कर दिया गया और इसे एक राजनीतिक दल में रूपांतरित कर दिया गया।
7. मिज़ो और हिन्दी, दोनों भाषाएँ दो भिन्न भाषिक परिवारों से संबंध रखती हैं – जहाँ मिज़ो भाषा तिब्बती-बर्मन भाषा परिवार से संबंध रखती है, वहीं हिन्दी आर्य भाषा परिवार की भाषा है। इस कारण दोनों भाषाओं के बीच गहरी भाषिक भिन्नता है। इस भाषिक भिन्नता के कारण मिज़ो से हिन्दी में अनुवाद करते समय अनेक समस्याएँ पैदा होती हैं।
8. मिज़ो भाषा में कई तरह की लयात्मक ध्वनियाँ और टोन होते हैं जिससे उच्चारण के समय लय के उतार-चढ़ाव के कारण शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं, लेकिन हिन्दी में ऐसा नहीं होता। मिज़ो भाषा में कई शब्द ऐसे हैं जिनके उच्चारण के अनुसार अलग-अलग अर्थ होते हैं। ऐसे शब्दों के अनुवाद में कठिनाई होती है। संदर्भ के अनुसार उनके सही अर्थ को पकड़ना जरूरी होता है, वर्ना अर्थ का अनर्थ होने की पूरी संभावना होती है।
9. मिज़ो के कुछ स्थानीय मुहावरों और लोकोक्तियों का हिन्दी में अनुवाद करते समय उनका अपना सांस्कृतिक अर्थ और भाव खो जाता, जिस कारण समस्या उत्पन्न होती है। मुहावरे और लोकोक्तियाँ भाषा की सांस्कृतिक आत्मा होती हैं जो समाज की जीवनशैली, नैतिकता और सामुदायिक सोच से जुड़ी होती हैं। मिज़ो और हिन्दी समाज में सांस्कृतिक भिन्नता के कारण मिज़ो मुहावरे और लोकोक्तियों का हिन्दी में अनुवाद करना कठिन है।
10. हर भाषा अपनी संस्कृति से जुड़ी होती है। मिज़ो भाषा में भी कई ऐसे शब्द हैं जो वहाँ के भूगोल, संस्कृति तथा सामाजिकता के साथ जुड़े होते हैं। इन स्थानीय एवं सांस्कृतिक शब्दों के लिए

हिन्दी में कोई सटीक शब्द नहीं होता जिसके कारण हिन्दी में अनुवाद करते समय कठिनाई उत्पन्न होता है। हिन्दी में अनुवाद करते समय इन मिज़ो शब्दों का हिन्दी में उससे मिलते-जुलते पर्याय शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है और कहीं मूल मिज़ो शब्दों का लिप्यंतरण कर उन्हें अलग से संदर्भ के साथ स्पष्ट करना पड़ता है। परंतु इसके बावजूद, की बार वे मिज़ो संस्कृति के मूल भाव को व्यक्त नहीं कर पाते।

11. भारतीय सेना का डर मिज़ो लोगों का एकमात्र भयानक अनुभव नहीं था। मिज़ो भूमिगत विद्रोहियों की कार्रवाइयों ने लोगों के बीच वॉलन्टियरों के प्रति भय पैदा किया। विद्रोह के दौरान ईस्ट लुङदार गाँव के लोगों को भूमिगत विद्रोहियों द्वारा दी गयी यातना भारतीय सेना द्वारा दी गयी यातना से भी बढ़कर थी।

12. मिज़ो विद्रोह के दौरान सामान्य जनता के बीच अलग-अलग कारणों से भारतीय सेना और भूमिगत विद्रोहियों दोनों से समान रूप से डर बना रहता था। आम जनता केवल भारतीय सेना द्वारा ही नहीं बल्कि भूमिगत सेना द्वारा भी पीड़ित थी, इसलिए मिज़ो विद्रोह के दौरान लोगों की स्थिति के वर्णन के लिए 'तुबओह लेह दोउलुङ इनकारः ओम कन नी' अर्थात 'हथौड़े और निहाई के बीच रहना' मुहावरे का प्रयोग किया जाता है, जिसके लिए हिन्दी में समान भाव का मुहावरा है- दो पाटों के बीच पिसना।

13. मिज़ो विद्रोह के दौरान स्त्रियाँ सबसे अधिक पीड़ित थीं। विद्रोह के दौरान स्त्रियों की भूमिका कई रूपों में दिखाई पड़ती है- जैसे भूमिगत वॉलन्टियरों के रूप में, परिवार की देखभाल करने वाली स्त्री के रूप में, अपने गाँव से एम.एन.एफ. की समर्थक के रूप में तथा सर्वाधिक पीड़ित के रूप में। स्त्रियाँ एम.एन.एफ. और भारतीय सेना के डर के बीच फँसी हुई थीं। कुछ स्त्रियाँ ऐसी भी थीं जो खुद को और अपने परिवार और समाज को सुरक्षित रखने के लिए एम.एन.एफ. या भारतीय सेना की मदद करने के लिए मजबूर थीं।

14. विद्रोह के दौरान मिज़ोरम के कई गाँवों में भारतीय सैनिक बसे हुए थे और गाँववालों को अपनी मर्ज़ी से गाँव के बाहर जाने की इजाज़त नहीं थी और साथ ही एम.एन.एफ. की मदद करने की

अनुमति नहीं थी। एम.एन.एफ. की मदद करने पर गाँव के भीतर कई तरह की समस्या पैदा हो सकती थी।

15. विद्रोह महिलाओं को एक कठिन परिस्थिति में डाल देता हैं जहाँ उन्हें अपने देश और अपनी जाति, अपने गाँव को बचाने के लिए अपनी सबसे कीमती चीज, अपने कौमार्य का त्याग करना पड़ता है, जिसका उनके वजूद पर गहरा असर पड़ता है। विद्रोह में प्रतिभागी न होते हुए भी स्त्रियाँ विद्रोह के विनाशकारी परिणामों की सबसे ज़्यादा शिकार होती हैं।
16. विद्रोहियों को स्थानीय मिज़ो लोगों से अलग करने के लिए भारतीय सरकार ने एक उग्रवाद विरोधी नीति अपनाया जिसे मिज़ो में 'खोखोम' अर्थात् ग्राम समूहीकरण कहा गया। ग्राम समूहीकरण की प्रक्रिया भारतीय सेना द्वारा 1967 से 1970 तक चलायी गयी।
17. मिज़ो लोगों का यह मानना है कि अपने पड़ोसियों से दुश्मनी करने से बेहतर है सात गाँवों से दुश्मनी करना। वे अपने पड़ोसियों का सही मूल्य जानते थे। समाज में मृत्यु होने पर, सभी पड़ोसी शोक संतप्त परिवार को सांत्वना देने के लिए रात में इकट्ठा होते थे, जो मिज़ो समाज की परंपर थी। रात में कर्फ्यू लागू रहने के कारण लोग शोक की स्थिति में भी अपने पड़ोसियों के घर जाने से डरने लगे थे।
18. उपन्यास की भाषा सरल एवं सहज है। इस उपन्यास में मिज़ो लोगों में प्रचलित कुछ हिन्दी शब्दों और कई अंग्रेजी शब्दों का प्रचुरता के साथ प्रयोग किया गया है।
19. उपन्यास में पूर्वदीप्ति शैली, वर्णनात्मक शैली, संवदा शैली तथा काव्यात्मक शैली जैसी विभिन्न प्रकार की कथा शैलियों का सफलतापूर्वक प्रयोग कर उसे अधिक प्रभावशाली, विश्वसनीय एवं रोचक बनाया गया है।
20. मिज़ो विद्रोह के दौरान भारतीय सेना द्वारा गाँव समूहीकरण जैसे उपायों को अपनाकर अलग-अलग गाँव के लोगों को एक साथ रखा गया, अलग-अलग सोच-विचार उत्पन्न हुए और इस बीच लगातार कर्फ्यू लागू करने के कारण अपने आस-पड़ोस के साथ भी जान-पहचान बनाना मुश्किल हो गया। एक-दूसरे से अपनी जरूरत की वस्तुएँ मांगने में कठिनाई होना अनिवार्य था।

इसके चलते सदियों पुरानी मिज़ो ईमानदारी की जगह मिज़ो समाज में बेईमानी और चोरी जैसी बुराइयों का जन्म हुआ।

21. 19वीं सदी के अंत में वेल्श मिशनरियों द्वारा ईसाई धर्म की शुरुआत के बाद से मिज़ो समाज पर ईसाई धर्म का गहरा प्रभाव पड़ा। विद्रोह के कारण मिज़ो लोगों में व्यापक रूप से भय, पीड़ा और विस्थापन की स्थिति पैदा हुई। इस उथल-पुथल, हिंसा और अस्थिरता से पीड़ित मिज़ो लोगों को आराम, उम्मीद और स्थिरता प्रदान करने में चर्च ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

22. इस उपन्यास में मिज़ो विद्रोह के बीच पिसती आम जनता की स्थिति का मार्मिक चित्रण किया गया है। निश्चय ही मिज़ो विद्रोह की पृष्ठभूमि में लिखा गया यह एक महत्त्वपूर्ण मिज़ो उपन्यास है। इस उपन्यास के अनुवाद के माध्यम से हिन्दी समाज को मिज़ो विद्रोह के स्वरूप, विद्रोह के दौरान आम जनमानस की स्थिति और विद्रोह के प्रति उनके नजरिए को समझने में सहूलियत होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ:

माफेली, ङ्हिल्ह हर कन तुआर, समारितन प्रिंटर्स, मिशन वेङ, आईज़ोल, 2010
(Mafeli, Nghilh har kan tuar, Samaritan Printers, Mission Veng, Aizawl, 2010)

सहायक ग्रंथ

हिन्दी ग्रंथ:

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, नागरीप्रचारणी सभा, वाराणसी, 2008
2. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, अनुवाद कला, प्रभात प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2009
3. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, अनुवाद: भाषाएँ-समस्याएँ, ज्ञान गंगा, दिल्ली, 2007
4. एन.ई. विश्वनाथ अय्यर, व्यावहारिक अनुवाद, प्रतिभा प्रतिष्ठान, नयी दिल्ली, 2009
5. कृष्ण कुमार गोस्वामी, अनुवाद विज्ञान की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2016
6. गोपाल राय, हिन्दी उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नयी दिल्ली, 2010
7. जी. गोपीनाथन एवं एस. कंदस्वामी, अनुवाद की समस्याएँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1993
8. डॉ. एच. देङकिमी, हिन्दी और मिज़ोउ भाषा की व्याकरणिक कोटियों का व्यतिरेकी अध्ययन, दि प्रिनट्स होम, आगरा
9. डॉ. जयंती प्रसाद नौटियाल, अनुवाद: सिद्धांत एवं व्यवहार, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2006
10. डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना, डॉ. उदय प्रताप सिंह, भाषा विज्ञान के सिद्धांत और हिन्दी भाषा, मीनाक्षी प्रकशन, मेरठ, 2011
11. डॉ. पूरनचन्द टण्डन, अनुवाद - साधना, अभिव्यक्ति प्रकाशन, दिल्ली, 2007
12. डॉ. भोलानाथ तिवारी, अनुवाद विज्ञान: सिद्धांत एवं प्रविधि, किताबघर प्रकाशन, दिल्ली, 2011
13. डॉ. सुरेश कुमार, अनुवाद सिद्धान्त की रूपरेखा, विद्यानिधि, दिल्ली, 2005
14. मधुरेश, हिन्दी उपन्यास का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2009

अंग्रेजी ग्रंथ:

1. Bijay Kumar Das, A handbook of Translation Studies, Atlantic Publishers and Distributors, New Delhi, 2008
2. C.Zama, Untold Atrocity (The struggle for freedom in Mizoram 1966-1986), Power Printers, New Delhi,
3. Chawngsailova, Mizoram During 20 dark years, EBH Publishers, Guwahati, 2012
4. Col. Lalrawnliana Ex. MNA, Freedom Struggle in Mizoram, J.P.Offset Printers, Aizawl,2014
5. Dr. Chawngsailova, Ethnic National Movement in the role of the MNF, Mizoram Publication Board, Aizawl, 2007
6. Dr. Laltluangliana Khiangte, A study of Mizo Novel, ISPCK, Delhi, 2014
7. Dr. Zoramdinthara, Mizo Fiction: Emergence and Development, Ruby Press & Co, New Delhi, 2013
8. Dr.J.V.Hluna & Rini Tochhawng, The Mizo Uprising: Assam Assembly Debates on the Mizo Movement, 1966-1971, Cambridge Scholars Publishing, UK, 2012
9. Dr.Lalramchuani Sena Samuelson, Mizo Independence Movement, Goodwill Press, Imphal, 2023,
10. JB Bhattacharjee, Roots of Insurgency in North east India, Akansha Publishing, 2007
11. Jeremy Munday, Introducing Translation Studies: Theories and Applications, Routledge, Abingdon, England, 2012
12. Jiri Levy, The art of Translation, John Benjamins Publishing Company, Amsterdam/Philadelphia, 2011
13. John Vanlal Hluna, Church and Political Upheavel in Mizoram, Mizo History Association, Aizawl, 1985
14. Joy L. Pachuau, Being Mizo: Identity and Belonging in North east India, Oxford University Press, 2014

15. Malsawmdawngliana & Rohmingmawii, Mizo Narratives: accounts from Mizoram, South Eastern Book Agencies, Guwahati, 2021
16. Margaret Ch. Zama & C. Lalawmpuia Vanchiau, After Decades of Silence, Voices from Mizoram, A brief Review of Mizo Literature, 2016, Centre for North East Studies and Policy Research, New Delhi,
17. Mona Baker, In Other Words: A Coursebook On Translation, Routledge, Abingdon, England, 2011
18. P. Lalnithanga IAS (Rtd), Emergence of Mizoram, Third Edition, Lengchhawn Press, Aizawl, 2010
19. Prof. LH Chhuanawma, Dr. Lalthakima, Dr. Lal Lawmzuali, Dr. Zonunmawia, Dr. Lalnundika Hnamte, Government and Politics of Mizoram 5th Edition, Southern Book Agencies, Guwahati, 2024
20. R.Kumar & S.Ram, Insurgency in North East India, Commonwealth Publishers, 2013
21. Sarthak Sengupta, Ethnicity in North East India, Gyan Publishing,New Delhi, 2014

मिज़ो ग्रंथ:

1. B. Lalthangliana, Mizo Chanchin (A short Account of Mizo History), Gilzom Offset, Electric Veng, 2021
2. B. Lalthangliana, Mizo Literature (Mizo Thu leh Hla), Gilzom Offset, Electric Veng, 2019
3. C. Lalawmpuia Vanchiau, Rambuai Literature, Lengchhawn Press, Gilzom Offset, Electric Veng, 2014
4. C. Lalawmpuia Vanchiau, Rambuai Literature, Lengchhawn Press, Gilzom Offset, Electric Veng, 2023
5. Documentary of Mizoram War Of Independence 1966 to 1986, MNF General Headquarters, Aizawl, Mizoram, 2017

6. Dr. K.C Vannghaka, Literature Zungzam, Lois Bet Print & Publication, Chanmari, 2014
7. Dr. K.C. Vannghaka, Mizo Novel Zirchianna (A critical Study of Mizo Novel), Lengchhawn Offset, Khatla, 2015
8. Dr. Laltluangliana Khiangte, Mizo thu leh hla chanchin, Department of Mizo, Mizoram University, 2022
9. R. Lalianzuala, Mizo Novel Golden Jubilee (1937-1987) Souvenier, Gilzom Offset, Aizawl, 2024,
10. R. Zamawia, Zofate Zinkawngah- Zalenna mei a mit tur a ni lo, Lengchhawn Press, Aizawl, 2007
11. Zoramthanga, Mizo Hnam Movement History, Dingdi Press, Aizawl, 2017

कोश:

1. Dr. J.T. Vanlalngheta, The Britam Mizo-English Dictionary, Hlawndo Publishing House, Aizawl, 2020
2. प्रो. सी. ई. जीनी, हिन्दी-अंग्रेजी-मिज़ो शब्द-कोश, भारतीय भाषा व साहित्य संस्थान (प्रेमचंद पीठ), आइज़ोल, 2018
3. बृहत् हिन्दी कोश, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, 2014

पत्रिकाएँ:

1. Mizo Studies, July – September 2012, Department of Mizo, Mizoram University
2. Mizo Studies, July – September 2020, Department of Mizo, Mizoram University
3. Lal Rinawma, Mizo Novel lo chhuah leh than zel dan Thu leh Hla, A monthly Literary Journal of the Mizo Academy of Letters, January, 2012

ई-बुक्स:

1. B. Lalthangliana, Ka Lungkham: Introduction to Mizo Literature, RTM Press, Chhinga Veng, 1999 https://indianculture.gov.in/ebooks/ka-lungkham-introduction-mizoliterature-book-year-hmasa-ber-1989

वेबसाईट:

1. https://northeastreview.wordpress.com/2015/05/22/rambuai-literature/
2. https://in.boell.org/sites/default/files/after_decades_of_silence_voices_from_mizoram.pdf

थीसिस :

1. K.C Lalthansanga, Women's perspective of Mizo Insurgency in Rinawmin and Silaimu Ngaihawm by James Dokhuma, Published Ph.D Thesis submitted to MZU, Aizawl, 2018
2. Lalropuia, A critical study of Rambuai in selected Mizo novels, Phublished Thesis submitted to MZU, Aizawl, 2022